इकाई - 1

भाषा : भाषा विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 विषय विवरण
1.3.1 भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण
1.3.2 भाषा व्यवस्था और भाषा-व्यवहार
1.3.3 भाषा संरचना और भाषिक प्रकार्य
1.3.4 भाषाविज्ञान : स्वरूप एवं व्याप्ति
1.3.5 अध्ययन की दिशाएँ -
क. वर्णनात्मक
ख. ऐतिहासिक
ग. तुलनात्मक
घ. अन्य
1.4 पारिभाषिक शब्दावली
1.5 स्वयं अध्ययन प्रश्न के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

1.१ प्रस्तावना -

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

प्रिय मित्रों जब हमें अपनी कोई इच्छा, जरूरत, भाव, विचार या बात दूसरे को बतानी होती है तो हम बोलकर उसे बताते हैं । बोलने को ही भाषा कहा जाता है । संकेत, इशारा और बोलने को भाषा ही कहा जाता है । इसलिए भाषा शब्द का प्रयोग कई अर्थों में होता है । सामान्यत: भाषा उस साधन को कहते है जिसके सहारे एक प्राणी अपने भाव, विचार, अभिप्राय दूसरों तक पहुँचाता है । इस दृष्टि से पशु-पक्षियों की आवाज, तरह-तरह के संकेत और इशारे आदि भाषा ही है तथा मनुष्य अपने मुँह से जो कुछ बोलता है वह भी भाषा ही है ।

भाषा एक ऐसा साधन है जो मूक और मुखर दोनों होता है ।

1) मूक -मूक भाषा के रूप में इसके दो प्रकार बनते है (i) इंगित-(Gesture) (ii) -संकेत (Sign, Signal)

इंगित के अंतर्गत सभी प्रकार की आंगिक चेष्टाएँ आती है । आंगिक चेष्टाओं द्वारा घृणा, प्रेम, क्रोध, प्रसन्नता, सहमति, असहमति, आदि को प्रकट किया जाता है । जैसे आँखों से किसी को चलने का इशारा करना, बैठने के लिए कहना, आने के लिए कहना, दीनता प्रकट करना, क्रोध करना, प्रेम जताना इतनी आदि सारी बातें प्रकट कर सकते है । कविवर बिहारी नैनभाषा के संदर्भ में लिखते है,

कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात ।
भरे भौन में करत हैं नैनन ही सौं बात ।।

किसी को डाँटते समय केवल वाणी के प्रयोग से संतोष नहीं होता । हम आँख और हाथ का भी

प्रयोग करते है । जब हम भाषण देते हैं या अपनी बात पुरजोर रूप में रखते हैं तब मेज पर हाथ पटक कर बात कहते हैं । इस इंगित भाषा को ही **देहभाषा (Body language) कहते हैं** ।

संकेत और प्रतीकों के प्रयोग से भाव को दूसरों तक पहुँचाया जा सकता है । जैसे - सिग्नल की लाल, हरी-पीली बत्तियाँ, स्काऊट, नाविक, सैनिकों के द्वारा तरह तरह के झंडों का प्रयोग, पहाडों की चोटियों पर आग जला कर संदेश पहुँचाना (जैसे सिंहगड के जीतने की खबर मराठा सैनिकों ने घास जलाकर राजगढ़ में स्थित शिवाजी को पहुँचायी), हल्दी, सुपारी बाँटकर न्यौता देना । पत्रिका द्वारा निमंत्रण भेजना, सीटी बजाना, गुलाब का फूल भेंट करना, नारियल देने आदि का प्रयोग संकेत के अंतर्गत आता है ।

मूक भाषा द्वारा भावप्रेषण तभी संभव है जब संदेश प्रदाता और संदेश ग्राहक एक दूजे की चेष्टाओं को या संकेतों को देख सके । बिना दृष्टि के तथा अधिक दूरी होने पर मूक साधकों का प्रयोग संभव नहीं । साथ ही इसका प्रत्येक संकेत का अर्थ पूर्वनिश्चित और दोनों को पूर्वज्ञात होना आवश्यक है ।

2) मुखर - मुखर भाषिक साधन के अंतर्गत मुँह से उच्चारित ध्वनियुक्त साधन आते है । मानव और मानवेतर ये दो इस साधन के प्रयोक्ता होते है । इसे 'वाक्' की संज्ञा प्राप्त है जो दो भागों में बाँटा जाता है - (i) अव्यक्त और (ii)व्यक्त

(रू) <u>अव्यक्त वाक्</u> - इसके अंतर्गत मनुष्येतर प्राणी की ध्वनियों का समावेश होता है । ये जीव-जंतु अपने भावों को विभिन्न ध्वनियों द्वारा दूसरों तक पहुँचाते है । परंतु हमारी समझ में ये ध्वनियाँ नहीं आती । इनका विश्लेषण करना भी हमारे लिए संभव नहीं होता । इसलिए इन्हें अव्यक्त वाक् कहा है ।

(रूरू) <u>व्यक्त वाक्</u> - जबकि मनुष्य की ध्वनियों में स्पष्टता, निश्चितता, पूर्णता होने से विवेचन विश्लेषण, अध्ययन करना संभव है । इसलिए इसे व्यक्त वाक् कहा है । भाषाविज्ञान में इसी भाषा का अध्ययन होता है ।

मनुष्य की भाषा चिंतन, मनन, विचार, कल्पना आदि का भी साधन है । भाषा के कारण ही मनुष्य की सामाजिकता दृढ़ हुई है । वह एक ऐसी जीवनज्योति है जो एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से संबंध स्थापित करती है । यदि मनुष्य के पास भाषा नहीं होती तो मनुष्य भी अपने भावों को स्पष्ट करने में असमर्थ रहकर पशु-पक्षीवत ही होता ।

भाषा के कारण ही मनुष्य इस संसार में सर्वोत्तम प्राणी माना गया है । आज मनुष्य ने भाषा के कारण ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अपना प्रभुत्व स्थापित किया है । मनुष्य केवल भाषा के कारण ही जड़ चेतन-जगत् का स्वामी हुआ है ।

भाषा शब्द संस्कृत के 'भाष्' धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है व्यक्त वाणी । एक प्रकार से इस धातु के अर्थ में ही भाषा का लक्षण विद्यमान है । व्यक्त वाणी का अर्थ है स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यंजना और वह उच्चरित या वाचिक भाषा से ही संभव है । जिसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म अर्थों के बोधक अनन्त ध्वनि संकेत है । इसलिए भाषा मनुष्य की वाचिक भाषा के लिए प्रयुक्त शब्द ही उपयुक्त है ।

1.२ उद्देश्य -

छात्रों, इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. **भाषा के लक्षण, परिभाषा को जान पाएंगे ।**
2. **भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषा का सीमित अर्थ से परिचय पाएंगे ।**
3. **भाषा व्यवस्था और भाषाव्यवहार को समझ पाएंगे ।**
4. **भाषा-संरचना और भाषिक प्रकार्य के महत्त्व को जान पाएंगे ।**
5. **भाषा विज्ञान के स्वरूप और व्याप्ति को बता पाएंगे ।**
6. **भाषाविज्ञान के अध्ययन की दिशाओं से परिचय पाएंगे ।**

भाषाविज्ञान के महत्त्व को जानते हुए अपनी रूचि इस विषय की ओर बढ़ा पाएंगे ।

1.3 विषय-विवरण

भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन भाषाविज्ञान कहलाता है । भाषा संबंधित उत्पन्न जिज्ञासाओं का समाधान भाषाविज्ञान करता है । जैसे - भाषा क्या है ? भाषा कैसे बनती है ? भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई, भाषा के अवयव कौन से हैं ? भाषा का

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

प्रयोग कैसे किया जाता है और विश्व की भाषाओं में परस्पर संबंध क्या है ? आदि प्रश्नों के उत्तर भाषाविज्ञान देता है ।

सर विलियम जोन्स ने 1786 में संस्कृत भाषा का अध्ययन किया । उन्होंने देखा कि संस्कृत, ग्रीक और लैटिन में कई समानताएँ है, उनका अध्ययन तुलनात्मक भाषाविज्ञान का मूल बना । यही अध्ययन आगे चलकर भाषाविज्ञान के रूप में प्रसिद्ध हुआ ।

भाषाविज्ञान शब्द पश्चिम के विद्वानों की देन है । इसके लिए प्राचीन काल में- भारत में अनेक शब्द प्रचलित थे- जैसे शिक्षा, निरूक्त, व्याकरण आदि । तो पश्चिम में इसे ''कम्पेरेटीव ग्रामर'' की संज्ञा दी गयी, बाद में इसे 'कॉम्पेरेटिव फिलॉलाजी' कहा जाने लगा ।

विज्ञान शब्द में तुलनात्मकता का भाव निहित रहता है . इसलिए कम्परेटीव शब्द जा कर फिलॉलाजी शब्द प्रचलित हो गया ।

फिलॉलाजी शब्द 'फिलॉस' और 'लॉगस्' से बना है । जिसका अर्थ है, भाषा प्रेम । फिलॉलाजी का वर्तमान में अर्थ उच्चारणपरक भाषा से है । तो लिंग्विस्टिक शब्द लिखित- उच्चरीत-भाषा के लिए प्रचलित है ।

इस बीच 1817 में डेविज ने ग्लॉसॉलॉजी, 1841 में प्रीचर्ड ने ग्लॉटालॉजी नाम दिये । परंतु ये नाम अधिक नहीं चले। 'साइन्स ऑफ लॅंग्वेज' शब्द अधिक पसंद किया गया जो जर्मन के (स्प्रारवविस्सेनशाफ्ट) Sprachwissenshaft से बना है। रूसी भाषा में इसके लिए 'यजिकाजानिये' शब्द प्रचलित है । 'यजिक' का अर्थ भाषा व 'जानिये' का अर्थ विज्ञान है ।

भाषाविज्ञान व्याकरण, रूप, पदनिर्माण, वाक्यप्रयोग,उच्चारण की शिक्षा देता है । भाषा के प्रयोग और उपयोग की जानकारी देता है । भाषाविज्ञान का संबंध विश्व की समस्त भाषा और बोलियों से है । संस्कृत में भाषाविज्ञान के संबंध में लिखा गया है .

''भाषाया यत्तु विज्ञानं सर्वांग व्याकृतात्मकम्
विज्ञानदृष्टिमूलं तद्, भाषा विज्ञानमुच्यते ।''

भाषा का सर्वांगीण, वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करनेवाला भाषाविज्ञान है ।

1.3.1 भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण

भाषा भावाभिव्यंजना का सशक्त माध्यम है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में रहने के कारण उसकी जरूरतें दूसरे के द्वारा पूर्ण होती है । जरूरतों के लिए एक दूसरे पर निर्भर रहने से सामाजिक बंधन और अधिक दृढ होते हैं। रिश्ते बनते हैं, घर-परिवार और समाज बनता है। यह सब निर्माण करने का कार्य मुख्यत: भाषा के माध्यम से ही होता है। मानव मन की रागात्मकता और सौंदर्यबोध जीवन से लगाव, गीत की लय माधुरी, संस्कृति का निर्माण, टूटे मूल्यों पर आक्रोश, संत्रास, खीझ, नये मूल्यों की खोज, लोकपरंपरा, संस्कृति के प्रति अभिरूचि आदि का प्रकटन का सशक्त माध्यम भाषा है। इसलिए मानव मन की अनुभूतियों, भावों, विचारों का भाषा मूर्त चित्र है।

भाषा, धर्म, चिन्तन, संस्कृति, राष्ट्रीयता ये पाँच तत्त्व ऐसे है जो मनुष्य को एकता के सूत्र में बाँधते है और अलगांव के कारण भी है। अत: भाषा प्रकटीकरण का साधन है, लगाव उत्पन्न करने का सूत्र है और सृष्टि की प्रदीर्घ परंपरा की श्रृंखला है।

क. भाषा की परिभाषा

भाषा शब्द की व्युत्पत्ति 'भाष्' धातु से हुई है ।

'भाष्' धातु का अर्थ है, भाष् - ''व्यक्तायां वाचि'' (व्यक्त या स्पष्ट उच्चरित वाणी)

''भाष्यते'' व्यक्तवाग्रूपेण अभिव्यंजने इति भाषा ''अर्थात-व्यक्त वाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती है, उसे भाषा कहते हैं। ''

भाषा और मनुष्य एक दूसरे के पूरक है । अपने व्यापक रूप में भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से वह सोचते हैं तथा विचारों को प्रकट करते हैं । इस बात को अपनी परिभाषा में विद्वानों ने रेखांकित किया है । भारत तथा पश्चिम में भाषा

को परिभाषित करने का कार्य हुआ है।

(अ) भारतीय परिभाषाएँ :-

भारतीय ज्ञान, विज्ञान, सोच, दर्शन का आधार वेद है, वेद संस्कृत में लिखे गये है। संस्कृत भारतीय ज्ञान की भाषा है। इसलिए हम प्रारंभ में संस्कृत विद्वानों के मतों को जानेंगे पाणिनि-
अपने ग्रंथ अष्टाध्यायी में लिखते हैं -

आत्माबुद्धा समेत्यार्थान् मनोयुङ् विवक्षया।
मन कायाग्निमाहन्ति स प्रेरियति मारूतम्॥

अर्थात आत्मा बुद्धि के द्वारा अर्थों को समझकर मन को बोलने की इच्छा से प्रेरित करती है। मन शरीर की अग्नि शक्ति पर बल डालता है और वह शक्ति वायु को प्रेरित करती है जिससे शब्द वाक् की उत्पत्ति होती है।

पतंजली महाभाष्य में लिखते है,

''व्यक्ता वाचि वर्णा योगं त इमे व्यक्त वाक:।''

अर्थात् वर्णों में व्यक्त वाणी को भाषा कहते है।

आचार्य दण्डी ने काव्यादर्श में लिखा है,

इदमन्धतम: कृतस्नं - जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्द। हवयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।'' (काव्यादर्श 1.4)

यदि सृष्टि के आरम्भ से भाषा (शब्द) की ज्योति न जलती होती तो यह त्रिभुवन घोर अन्धकार में निमग्न हो जाता।

भर्तुहरि ने ''वाक्यपदिय'' में भाषा की परिभाषा इन शब्दों में दी है,

''भाषा दो बुद्धियों के मध्य आदान-प्रदान का माध्यम है। यदि शब्द का आश्रय नहीं होता तो ज्ञान प्रकट नहीं होता।''

''न सोऽस्ति प्रत्ययों लोके य: शब्दानुगमाहते।
अनुबिद्धमिव ज्ञानम् सर्व शब्देन भासते॥''

संस्कृत परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते है कि वाणी का प्रकटन भाषा है। सारा अनुभव तथा ज्ञान शब्दों में ही निबद्ध है। यदि शब्द नहीं होते तो ज्ञान का प्रकाश संभव नहीं है।

हिन्दी परिभाषाओं को जानने से पूर्व हम पश्चिम की परिभाषाओं का इसलिए अध्ययन करेंगे, कि संस्कृत तथा अंग्रेजी का प्रभाव हिन्दी विद्वानों के भाषा विषयक मतों पर पढ़ा है। समझने तथा विवेचन में इससे सुविधा होगी।

(अ) अंग्रेजी परिभाषाएँ :-

प्लेटो ने सोफिस्ट में भाषा और विचार को लेकर लिखा है कि ''विचार आत्मा से मूक वार्तालाप है। जब यह मुखर हो जाते है तब यह भाषा की संज्ञा पात है। '' इसी बात को आधार बनाकर सुप्रसिद्ध भाषाविद् हेन्री स्वीट ने लिखा,

Language may be defined as the expression of thought by means of speech-sounds.

(Henry Sweet - The History of Languago, P-1)

अर्थात् व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति को भाषा कहते हैं।

एडवर्ड सपीर का मानना है,

"Language is a purely human and non-instinctive method of comunicating ideas, emotions and desires by means of a system of voluntarily and symbols. These symbols are, in the first instance, auditory and they are produced by the so-called organs of speech." (Edward sapir, Language P-8)

अर्थात् भाषा एक ऐसी विशुद्ध मानवीय एवं प्रयत्न-साध्य ध्वनि-व्यवस्था है जिसके माध्यम से व्यक्ति जब चाहे तब

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

तब अपने विचारों,भावों, एवं इच्छाओं को दूसरों पर व्यक्त कर सकता है।

ए.एच.गार्डीनर का मत है कि,

"The common definition of speech is the use of articulate sound symbols for expression of thought." अर्थात् विचारों की अभिव्यक्ति के लिए ध्वनि-संकेतो के व्यवहार को भाषा कहते है। (A.H.Gardiner, speech and Language.)

इसी तरह का मत ब्लॉख तथा ट्रैगर ने भी व्यक्त किया है-

"A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a social group co-operates."

(Bloch and Trager, outline of lingustics Analysis, P-5)

अर्थात् भाषा यादृच्छिक ध्वनि-संकेतो की वह व्यवस्था है जिसके सहारे कोई समाज परस्पर व्यवहार करता है।

"Language is purely human and non-instinctive method of communacating ideas, emotions, and desires by means of system of voluntarily produced symbols. These symbols are, in the first instance, auditory & they are produced by the so-called organs of speech."

अर्थात् भाषा एक ऐसी विशुद्ध मानवीय और प्रयत्नसाध्य ध्वनि व्यवस्था है। जिसके माध्यम से व्यक्ति जब चाहे तब अपने विचारों, भावों एवं इच्छाओं को दूसरों पर व्यक्त कर सकता है।

"Language may be defined as an arbitrary system of vocal symbols by means of which human belngs as members of a social group and participants in culture interact and communicative."

-Encyclopoedia of Britanica.

अर्थात् भाषा को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं की वह एक यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था है जिसकी सहायता से किसी समुदाय के लोग संस्कृति का आदान-प्रदान करते हैं।

"The Language is a system of communication by sound, through the organs of speech and hearing among, human beings of a certain group or community using vocal symbols possessing arbitrary conventional meanings." - Dictionary of Linguistics, peaigayor

अर्थात् भाषा एक औच्चरणिक व्यवस्था है, जो वाक् अवयवों से निर्माण होती है और कानों द्वारा ग्राह्य होती है। इसकी सहायता से मनुष्य प्राणियों का एक विशिष्ट समुदाय या वर्ग आदान-प्रदान के लिए प्रयुक्त करता है।

उपरोक्त अंग्रेजी परिभाषाओं से पता चलता है,

(1) भाषा एक व्यवस्था है।

(2) इसका प्रयोग किसी समाज विशेष के लिए आदान-प्रदान के लिए होता है।

(3) भाषा में प्रयुक्त होने वाले ध्वनि प्रतीक यादृच्छिक होते हैं।

(इ) हिंदी परिभाषाएँ -

संस्कृत तथा अंग्रजी विद्वानों के भाषा विषयक अभिलक्षणों तथा परिभाषाओं से अवगत होने के पश्चात् हम हिन्दी भाषा वैज्ञानिकों द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषाओं पर विचार करेंगे-

''भाषा वह साधन है - जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली-भाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचारों को स्पष्टत: समझ सकता है।'' - हिंदी व्याकरण:- कामताप्रसाद गुरू (प्रस्तावना) पृ.1

''हम अपने मन के भाव प्रकट करने के लिए जिन सांकेतिक ध्वनियों का उच्चारण करते है उसे भाषा कहते हैं।''

-आचार्य किशोरीदास वाजपेयी

''मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

ध्वनि-संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते है।''
-डॉ.श्यामसुंदर दास

''जिन ध्वनि-चिहनों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है, उनको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।''-डॉ.बाबूराम सक्सेना

''भाषा यादृच्छिक, रूढ़, उच्चरित संकेत की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय, सहयोग अथवा भावाभिव्यक्ति करते है।''
-डॉ.देवेंद्रनाथ शर्मा

''भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी भाषा-समाज के लोग आपस में विचार-विनिमय करते है।''
-डॉ.भोलानाथ तिवारी

उपरोक्त सभी परिभाषाओं पर विचार करने के बाद हम पाते हैं कि,

(1) भाषा विचार-विनिमय का साधन होती है।
(2) भाषा के प्रतीक ध्वनि युक्त होते है।
(3) इन प्रतीकों का उच्चारण मनुष्य के वाक अवयवों से निश्चित प्रयत्न से होता है।
(4) भाषा में प्रयुक्त प्रतीक यादृच्छिक होते हैं।
(5) भाषा की एक अपनी व्यवस्था होती है।
(6) भाषा का प्रयोग किसी समाज विशेष में होता है।

निष्कर्ष रूप में भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है -

''भाषा यादृच्छिक, उच्चारित ध्वनि-संकेतों की प्रणाली है जिसके द्वारा समाज विशेष के लोग आपसी भावों, विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।''

स्वयं अध्ययन के प्रश्न -

(क) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।
   (1) भाषा शब्द की व्युत्पत्ति बताइए।
   (2) पाणिनि के ग्रंथ का नाम लिखिए।
   (3) हेनरी स्वीट की भाषाविषयक परिभाषा लिखिए।
   (4) भाषा यादृच्छिक ध्वनिप्रतीकों की व्यवस्था है - ऐसा किसने कहा है ?
   (5) भाषा का प्रयोग कहां होता है।

1.3.1 भाषा का स्वरूप-

भाषा के अभिलक्षणों के आधार पर भाषा के स्वरूप को इस प्रकार निर्धारित किया जा सकता है-

1) भाषा मूलत: ध्वनिमूलक होती है - भाषा में अभिव्यक्ति का आधार ध्वनियाँ होती है। भावों-विचारों का प्रेषक (वक्ता) अभिव्यक्ति के लिए ध्वनियों को ही आधार बनाता है और ग्राहक (श्रोता) ध्वनियों के माध्यम से ही ग्रहण करता है और समझता है। ध्वनि के अलावा मूक या अव्यक्त मुखर साधन भाषा के अंतर्गत नहीं आते हैं।

2) भाषा में प्रयुक्त ध्वनियाँ वागेंद्रियों द्वारा निर्मित होती है - भाषा में प्रयुक्त होनेवाली ध्वनियाँ मनुष्य के मुँह से अर्थात् वागेंद्रियों से निर्माण होती है। वागेंद्रियों से तात्पर्य है ओठ, जीभ, दाँत, तालु, कण्ठ के उपयोग से ध्वनि अर्थात् भाषा का उच्चारण किया जाता है। ताली आदि ध्वनियाँ जो वागेंद्रियों द्वारा निर्मित न होने से उनका भाषा में समावेश नहीं किया जाता और मुँह से निकाली सीटी का विश्लेषण विवेचन न होने से वह भी भाषा नहीं है।

3) भाषा प्रतीकात्मक होती है- भाषा में प्रयुक्त ध्वन्यात्मक पारिभाषिक शब्दों को छोड़कर सारे शब्द मूलत: प्रतीक ही होते

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हैं। इसका अर्थ यह कि शब्द और इसके अर्थ का कोई सहज सम्बन्ध भाषा में नही होता। जैसे लड़का और लड़का में कोई सहज संबंध नहीं है। शक्कर और शक्कर नामक वस्तु में कोई सहज संबंध नहीं है। इसलिए संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया-अव्यय आदि सभी शब्द मूलत: प्रतीक ही होते है।

4) भाषा के ये प्रतीक यादृच्छिक (ऐच्छिक)होते है - ऐच्छिक (arbitrary) का अर्थ है बिना सोचे-समझे, सावधानी से निर्माण न करना। भाषा में प्रयुक्त शब्द प्रतीकात्मक होते हैं जो यादृच्छिक हैं। ये शब्द ऐसे ही बन गए और उनका अर्थ प्रचलित हो गया। कारण एक ही वस्तु के भिन्न भाषा में भिन्न शब्द मिलते हैं जैसे हिन्दी में लड़का, अंग्रेजी में Boy मराठी में मुलगा, राजस्थानी में 'छोरा' शब्द मिलता है। यह सब यादृच्छिकता के कारण ही होता है। अपवाद केवल ध्वन्यात्मक शब्द होते हैं लगभग सभी भाषाओं में समान मिलते हैं - भो:, भो, कौआ, काँव-काँव, क्रॉ आदि।

एक बात और ये शब्द प्रारंभ में ऐसे रहे है। पारिभाषिक शब्दों को सोच-समझकर बनाया जाता है, सतर्कता से निर्माण किया जाता है इसलिए वे यादृच्छिक नहीं होते। जैसे घुसपैठिया (घुस-पैठ करनेवाला),ताप मापी (थर्मामीटर), युनिवर्सिटी (विश्वविद्यालय), पाठशाला, विद्यालय, स्टेशन, स्टैंड, (अड्डा) आदि।

5)भाषा की एक व्यवस्था होती है- भाषा की एक व्यवस्था होने से बोलनेवाला जो कुछ कहना चाहता है, सुननेवाला भाषा के माध्यम से वही ग्रहण करता है। यह व्यवस्था व्याकरण कहलाती है। यदि ऐसी व्यवस्था न होती तो लिंग, वचन काल का बोध ही नहीं होता। व्याकरण के कारण शब्दों के रूप बनते है।

जैसे-लड़का (पुल्लिंग एक वचन)

लड़के (पुल्लिंग बहुवचन) — हूँ, है (वर्तमान काल)

लड़की स्त्री लिंग एकवचन लड़कियाँ(स्त्रीलिंग बहुवचन) — होगा,होगी होंगे (भविष्यकाल)

मैं हूँ, तुम हो, वे है (वर्तमानकाल, वचन, रूप)

व्याकरण द्वारा भाषा की इस व्यवस्था का नियमन तथा विश्लेषण और विवेचन होता है। फलत: हमें अन्य भाषा सीखने में मदद मिलती है।

6) भाषा विचार-विनिमय का साधन होती है-भाषा का यह व्यक्तिगत और सामाजिक पहलू है। व्यक्ति अपने अमूर्त मनों भावों को 'शब्द' रूप देकर मूर्तिकरण करता है। आवश्यकताएँ, अनुभव, तर्क, कल्पना, स्वप्न आदि भाषा के कारण ही संभव है। जब ये शब्द मुँह से उच्चरित करता है तो श्रोता के मन में भी वैसे ही भाव, अनुभूति जागृत होती है और एकसापन, अपनापन निर्माण होता है। इसके विपरित अलगाव भी भाषा के कारण ही निर्माण होता है और हम श्रोता से बोलचाल बंद कर देते हैं।

7) भाषा किसी विशेष समाज की होती है- प्रत्येक भाषा का प्रयोग एक विशिष्ट सीमित समाज में ही होता है। वेश, जाति, देश की मर्यादा भाषा पर पड़ती है। इसी दायरे में और मर्यादा में वह बोली तथा समझी जाती है। उस समाज के बाहर भाषा का कोई उपयोग नहीं होता। जैसे राजस्थानी हिन्दी-मारवाडी, ढूँढाडी, मेवाती, विशिष्ट भू-प्रदेश में रहनेवाले समाज द्वारा ही प्रयुक्त होती है, उसके बाहर इसकी संप्रेषणीयता खत्म हो जाती है और हमें मजबूर होकर अन्य भाषा या भाषा के रूप की सहायता लेनी पड़ती है।

भाषा की विशेषताएँ-

भाषा की विशेषताओं के अंतर्गत हम उन विशेषताओं पर सम्यक विचार करेंगे जो सभी भाषाओं पर लागू होती है।

1) भाषा मूलत: ध्वनियों का समूह है - भाषा मुख्यतया उच्चरित एवं श्रोत साधन है। वक्ता के द्वारा मानसिक प्रत्यय का उच्चारण होता है और श्रोता उस मानसिक प्रत्यय को कान द्वारा ग्रहण करता है। दूसरी भाषा का संबंध अर्थवान ध्वनियों से ही है। सोच-विचार की मानसिक भाषा, भाषा के दायरें में नहीं आती।

2) भाषा सामाजिक वस्तु है - भाषा का जन्म समाज के आपसी संपर्क से हुआ है, समाज ही उस भाषा का प्रयोग करता है और उस सामाजिक प्रयोग के कारण ही भाषा का विकास होता है। समाज प्रयोग से वह जीवित रहती है और जब समाज उस भाषा का प्रयोग करना बन्द कर देता है तो समाज में ही भाषा की मौत हो जाती है। इस तरह भाषा का संपूर्ण जीवन समाज से ही संबंधित है अत: भाषा सामाजिक वस्तु है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

3) भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है - पैतृक संपत्ति से तात्पर्य है माता-पिता से पुत्र को अनायास प्राप्त होने वाली संपत्ति जैसे जेवर, मकान, धन, खेत आदि। अमीर का बेटा अमीर और गरीब का बेटा गरीब इसी कारण होता है। वारिस से प्राप्त होने वाली संपत्ति पैतृक संपत्ति है। गोद लेने पर दत्तक पिता की संपत्ति दत्तक पुत्र को प्राप्त हो जाती है। भाषा के बारे में ऐसा नहीं है। हिन्दी भाषी परिवार (दंपति) का बेटा हिन्दी ही बोले ऐसा आवश्यक नहीं। यदि उसका बचपन अन्य भाषा-भाषी स्थान पर व्यतीत हो तो उसे हिन्दी आएगी ही नहीं। पशुओं की संगत में जंगल में बड़ा हुआ व्यक्ति मनुष्य की भाषा बोल नहीं सकता। इस आशय की कहानी भी आपने सुनी होगी। अत: भाषा अनायास सहज रूप में प्राप्त नहीं होती। इसलिए वह पैतृक संपत्ति नहीं है।

4) भाषा अर्जित संपत्ति है - अभी हमने देखा कि भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है अत: भाषा अर्जित संपत्ति है। भाषा का अर्जन व्यक्ति को करना पड़ना है जैसे स्कूल में वह शिक्षा और ज्ञान का अर्जन करता है उसी तरह बचपन में समाज से व्यक्ति भाषा का अर्जन करता है। अत: हम जिस समाज में रहते है उसकी भाषा का अर्जन करते हैं। बचपन में दादी, नानी, माँ, दीदी हमें बोलना सीखाती है। वस्तु और उसके नाम को रटकर हम याद करते हैं। सुनकर वाक्य का अनुकरण कर भाषा बोलते हैं।

5) भाषा का अर्जन अनुकरण से होता है - मनुष्य अनुकरण के द्वारा ही सामाजिक व्यवहार की सारी बातें सीखता है। अधिगम का मुख्य साधन अनुकरण ही है। भाषा का अधिगम (सीखना)अनुकरण से ही होता है। बचपन में हम ध्वनियों को सुनते है और धीरे-धीरे उनका अनुकरण करने लगते हैं। वस्तु, क्रिया, वचन, लिंग, वाक्यरचना, बोलने का ढंग अनुकरण से ही सीखा जाता है। यदि कभी कोई अनुकरण में अपूर्णता रह जाए तो डाँट के भय से गलती को सुधार लिया जाता है।

6) भाषा परिवर्तनशील है -कहावत सुप्रसिद्ध है कि ''कोस कोस पर पानी बदले, तीन कोस पर बानी''। एक जगह लिखा गया है कि भाषा बहता नीर है।जीवन का नाम ही परिवर्तन है। परिवर्तन का रूकना मृत्यु को प्राप्त होना है। संपूर्ण चराचर जगत् परिवर्तनशील है। भाषा भी इसी जगत् का अंश है। भाषा का प्रयोक्ता भी परिवर्तशील है। इसलिए भाषा से परिवर्तन होता है। परिवर्तन को विकास माना गया है। भाषा के सभी अंगो में यथा-ध्वनि,शब्द, वाक्य, अर्थ परिवर्तन होता है। ध्वनि परिवर्तन के कुछ उदाहरण प्रस्तुत है- गृह-घर,दुग्ध-दूध,कृष्ण-क्रिष्ण-किसन।

7) भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता - भाषा के इस चिरपरिवर्तनशीलता के कारण ही जीवंत भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता। भाषा कुछ बातों को छोड़ती है कुछ को अपनाती है। इसलिए भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता।

डॉ.भोलानाथ तिवारी इस संदर्भ में लिखते हैं - ''मृत भाषा का अंतिम रूप तो अवश्य ही अंतीम होता है, पर जीवित भाषा में यह बात नहीं है, जैसा कि अन्य सभी के लिए सत्य है। भाषा के लिए असत्य नहीं है कि परिवर्तन और अस्थैर्य ही उसके जीवन का द्योतक है। पूर्णता और स्थिरता मृत्यु है या मृत्यु ही पूर्णता या स्थिरता है।''

8) भाषाई परिवर्तन की धारा कठिनता से सरलता की ओर जाती है - मनुष्य की चाह होती है कि कम से कम प्रयत्न करे और अधिक से अधिक काम कर लें। इस प्रवृत्ति को प्रयत्नलाघव भी कहते हैं। इसलिए कठिन उच्चारणों को, लेखन को वह त्यागते जाता है और सौकर्य हेतु सरलीकरण करता है। इसी कारण तत्सम रूप तद्भव और देशज में बदल जाते हैं। जैसे क्ष का उच्चारण कठिन लगता है इसलिए वह ध्वनि ख या छ में बदल गयी है। जैसे-रक्षि राखी, क्षत्रिय छत्री या खत्री,ब्राह्मण बामन। अंगरेजी में कुछ ध्वनियाँ अनुच्चरित रहती है। Know-उच्चारण नो। संस्कृत के तीन लिंग, तीन वचन - हिन्दी में केवल दो लिंग, दो वचन है। प्रत्येक भाषा का मानक रूप होता है।

ऐसा कहना आपको आश्चर्यजनक लगेगा इसका कारण हमने पूर्व में यह देखा कि भाषा परिवर्तनशील है, उसका कोई अंतिम रूप नहीं होता। जब ऐसी बात है तो भाषा की संप्रेषण क्षमता बनी कैसी रहती हैं ? यह प्रश्न उपस्थित होता है। इसका उत्तर है-भाषा का एक मानक रूप होता है। भाषा का मानक रूप व्याकरण-बद्धता के कारण स्थिर होता है, प्रयोक्ता जाने-अनजाने इस रूप के अनुरूप प्रयोग की चेष्टा करता है। मानक रूप के कारण ही वक्ता और श्रोता में विचार-विनिमय संभव होता है। बोधगम्यता का आधार भाषा का मानक रूप होता है।

9) प्रत्येक व्यक्ति की अपनी भाषा होती है - व्यक्ति का परिवेश, उसके उच्चारण अवयव और श्रोतेंद्रिय भिन्न-भिन्न होते हैं। हर व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता भी अलग-अलग होती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अलग भाषा होती है। इस कारण व्यक्ति को बिना देखे उसकी आवाज से, लहजे से हम उसे पहचान लेते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

10) प्रत्येक भाषा की अपनी स्वतंत्र पहचान होती है - हम देखते हैं कि भाषा की लगभग सभी विशेषाताएँ किसी भी भाषा में देखी जा सकती है। ये समान विशेषताएँ ही भाषा का वैशिष्ट्य है फिर भी प्रत्येक भाषा की अपनी स्वतंत्र पहचान होती है, अपनी अलग विशेताएँ होती है । तभी वह भाषा अलग होती है, विशिष्ट होती है । प्रत्येक भाषा का अपना शब्द भण्डार, वाक्यगठन, रूपरचना, ध्वनि, अर्थ, लहजा अलग होने के कारण इसी स्तर पर वह अपनी स्वतंत्र पहचान बना लेती है । अगर ऐसा नहीं होता तो वह भाषा अलग ही मानी नहीं जाती ।

भाषा की उपरोक्त दस विशेषताएँ प्रमुख है । इसके अलावा भाषा वैज्ञानिकों के मत से कुछ और विशेषताएँ है जैसे भाषा ध्वनि-प्रतीक युक्त होती है । भाषा विचार संप्रेषण और ग्रहण का माध्यम है । संपूर्ण ज्ञान भाषा के माध्यम से ही होता है । प्रत्येक भाषा की ऐतिहासिक और भौगोलिक सीमा होती है- जिनका विवेचन हमने भाषा को परिभाषित करते समय किया है।

स्वयं-अध्ययन के प्रश्न-

(ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

(1) भाषा .... मूलक है।
(2) भाषा के प्रतीक...........होते हैं।
(3) भाषा .... संपत्ति है।
(4) भाषा........... का माध्यम हैं।
(5) भाषा .... के व्यक्तित्व की पहचान है।

1.3.2 भाषा व्यवस्था और भाषा-व्यवहार-

भाषा अधिगम हेतु सस्यूर ने भाषा व्यवस्था और भाषा व्यवहार नामक अर्थवान युग्म को प्रस्तुत किया है । सस्यूर ने बताया है कि भाषा एक ओर सामाजिक वस्तु है तो दूसरी ओर उसका स्वभाव सतत परिवर्तनशील है । सामाजिक होने के कारण उसका एक पक्ष संस्थागत है । जो भाषा व्यवस्था के द्वारा इन्होंने रखा है । भाषा व्यवस्था को अंग्रेजी में णीछश्रट्ट्ल की संज्ञा है ।

भाषा सतत परिवर्तनशील होने से भाषा का दूसरा पक्ष है-भाषा व्यवहार । जिसे अंग्रेजी में Parole शब्द दिया गया है। हिन्दी विद्वानों ने इसे वाक् शब्द दिया है । जो अंग्रेजी के ञ्ब्बल्ल्त्ह्स का पर्याय है। रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने इसके लिए भाषा व्यवस्था और Parale के लिए भाषा व्यवहार शब्द सुझाए है-जो अधिक उपयुक्त है ।

भाषा व्यवस्था संस्थागत है कारण वह सामाजिक है । भाषा प्रतीकों की व्यवस्था है । जो किसी भी तरह से वक्ता की अपनी इच्छा या प्रतीकों के अपने माध्यम, उच्चारण और लेखन से नियंत्रित नहीं होती । इसलिए भाषा व्यक्ति से जुड़ी रहकर भी व्यक्ति की सीमा से मुक्त होती है । प्रत्येक भाषा का अपना एक मानक रूप होता है । जो व्यवस्था की देन है । उसका एक मूल्य होता है । सस्यूर ने इस मूल्य को शतरंज के खेल के माध्यम से समझाया है ।

शतरंज- में प्रयुक्त होने वाले मुहरें का एक मूल्य होता है। यह मूल्य खेल में उनके प्रकार्य को दर्शाता है। प्यादा एक घर चलता है और दूसरे मोहरों को तीरछे मारता है। तो हाथी सीधे कई घर चल कर सीधे ही दूसरे मोहरे को मारता है । घोड़ा ढाई घर दूसरे मोहरों को फांद कर चलता है । ये मोहरे रूप-आकार में छोटे-बड़े हो सकते हैं । प्लास्टिक,कागज, लकड़ी या धातू के हो सकते है । आवश्यकता केवल भेदक लक्षणों की होती है । इसलिए ये मोहरे बाह्य रूप-रंग के आधार पर खेल में भाग नहीं लेते बल्कि मूल्य के रूप में शामिल होते है । इसलिए यदि कोई मोहर खो जाए तो अन्य वस्तु द्वारा उसका मूल्य देकर काम चला लेते है।

इसी तरह भाषा व्यवस्था की प्रवृत्ति को भी समझा जा सकता है। किसी भाषा की कोई ध्वनि-अथवा उसके नाम की सार्थकता भौतिक उपादानों मे न होकर मूल्य में होती है । जिसे भाषा की व्यवस्था उसे प्रदान करती है । इसलिए हिन्दी में नीला, संस्कृत में नील, अंग्रेजी में ब्ल्यू ये विधान है जो मूल्य को दर्शाते हैं ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

भाषा व्यवहार, भाषा व्यवस्था का व्यक्त रूप होता है। भाषा व्यवस्था का प्रयोगण वक्ता अपनी अनुभूतियों,भावों, मतों को व्यक्त करने के लिए करता है। इससे व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। यह भाषा का व्यक्तिगत रूप है। इस रूप में वक्ता अपने संदर्भ,देश-काल,परिस्थिति अनुरूप भाषा व्यवस्था में परिवर्तन करता है। यह रूप अभिव्यक्ति परक, मूर्त और वैयक्तिक, यथार्थ युक्त होता है। भाषा भी जीवंतता का लक्षण है कि भाषा व्यवस्था और भाषा व्यवहार द्वंद्वात्मक प्रवृत्ति में हो। भाषा व्यवहार के कारण ही भाषा में जीवंतता और परिवर्तन तथा विकास संभव है।

1.3.3 भाषा सरचना और भाषिक प्रकार्य–

भाषा एक व्यवस्था होती है, इस व्यवस्था का निश्चित ढाँचा है। जिसे भाषा की संरचना कहते हैं। भाषाविदों ने यह जानने का प्रयास किया कि भाषा के निर्माणक तत्त्व कौन से हैं। निर्माणक बातों का भाषा के स्वरूप निर्माण में क्या योगदान है ? इस दृष्टि से फ्रांसिसी भाषाविज्ञानी सस्यूर ने काम किया। इन्होंने भाषा को एक संरचना के रूप में स्वीकारते हुए यह निरूपित किया कि भाषाविद् का उद्देदश्य संरचना निर्माण की प्रक्रिया को जानना और उनका वर्णन करना है।

भाषा स्वनों की व्यवस्था है। स्वनों की अनुभूति कान,ज्ञानेंद्रियों से होती है। इससे जो अभिव्यक्त होता है वह श्रोता को बौद्धिक तथा मानसिक प्रक्रिया से अनुभूत होता है। ऐसा करते समय हम स्वनों से शब्द बनाते है, शब्द से पद बनता है और पदों का समूह वाक्य बनता है। इस तरह स्वन,शब्द, पद और वाक्य का अपना निश्चित प्रकार्य है।

जैसे हम हिन्दी की संरचना जाने तो उसका एक स्वन-रूप ''क'' है। इसका अलगपन का एहसास अन्य स्वन यथा 'ख' से तुलना करने पर होता है। अन्य स्वनों को मिल कर एक शब्द बनेगा, जैसे -रूप या कमल, चमक, लपक। इस तरह नवीन शब्दों का निर्माण होता है। जिनका अपना अलग अर्थ होता है। ये शब्द संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि का द्योतन करते हैं। इनमें संबंधतत्त्व जुड़ जाता है अर्थात पद बनने पर लिंग, वचन, काल को सूचित करते हैं।

भाषिक संरचना सुनिश्चित और व्यवस्थापरक होती है। शब्दों का निर्माण शब्दों में जुड़ने वाले प्रत्यय आदि का क्रम सुनिश्चित होता है। जैसे-लड़क्-लड़का-लड़की-लड़के-लड़कियाँ-ये प्रत्यय लिंग और वचन को क्रमश: सूचित करते हैं। इसी व्यवस्था के चलते भाषा की संरचना पूर्वानुमेय होती है। वक्ता इसी संरचना का अर्जन करता है। यह बात मातृभाषा में अधिक होती है। इसी कारण शोरगुल के वातावरण में भी श्रोता वक्ता के आशय को समझ लेता हैं।

भाषा संरचना का व्यवस्थित क्रम होता हैं। जैसे राम घर जाता है। इस वाक्य में राम के स्थान पर लड़का,मोहन,घोड़ा जैसी अनेक पुल्लिंग संज्ञाओं का प्रयोग किया जा सकता है। स्त्रीलिंग का प्रयोग नहीं हो सकता। यही विशेषता ध्वनि, व्याकरण स्तर पर भी प्राप्त होती है। जैसे-मैं से प्रारंभ होने वाले वाक्य में होना क्रिया का वर्तमानकालीक रूप हैं आएगा,अन्य नहीं।

भाषिक संरचना सृजनात्मक और उत्पादक होती है। एक बार भाषा का पूर्ण रूपेण अर्जन हो जाने पर मनुष्य ऐसे असंख्य वाक्यों के अवबोधन और प्रयोग में समर्थ हो जाता है जो, पहले कभी न सुने हो या न बोले हो। यह अर्जनशीलता उसकी सृजनात्मक शक्ति को प्रेरणा देती है।

भाषा की संरचना कठोर, स्थिर न होकर गत्यात्मक होती है। जो उसे बहुआयामिता (ultidimentionality) प्रदान करती है। भाषा एकांतिक संरचना न होकर बहुआयामी संरचना होती है, जैसे घर शब्द हम लें तो इसके आयाम बनेंगे- स्वनिक संरचना, व्याकरणिक संरचना अर्थगत लक्षण अन्य भाषिक इकाईयों से संबंध और स्वन प्रक्रिया। घर में, घर को, घरेलु, घर पर, घर आदि।

इसलिए भाषा अध्येता विश्लेषण,वर्णन, अध्ययन कर भाषा संरचना को कुछ स्तरों में विभाजित करता है।

भाषिक कथन के दो पक्ष होते हैं -(i)-रूप-(ii)-अर्थ।

सस्यूर ने प्रजनक (Generative) व्याकरण में भाषा के तीन प्रमुख संघटक बनाएँ हैं। (i) वाक्य, (ii)-अर्थ-(iii)-स्वन प्रक्रिया।

संपूर्ण भाषा संरचना को इस प्रकार बताया जा सकता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

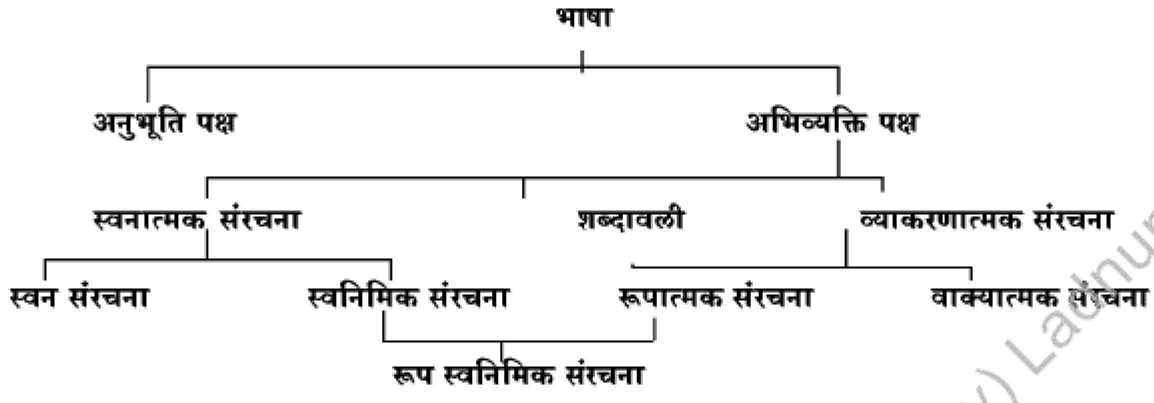

स्वनिमिक और वाक्यात्मक संरचना को आधुनिक भाषाविज्ञान में महत्त्व दिया गया है। अर्थ को गौणता मिली है। कारण इन दोंनो का अध्ययन ज्ञान-विज्ञान की अन्य शाखाओं में भी होता है। स्वन भौतिक विज्ञान का विषय है। स्वन का उत्पादन मानवमुख हर बार नवीन ढंग से करता है। इस सूक्ष्म अंतर का अध्ययन भौतिकी में ही संभव है।

अर्थबोध में मानवमन, उसका परिवेश, संस्कृति,सभ्यता एक साथ सक्रिय होते है। इसलिए अर्थ का अध्ययन मनों या दर्शन शास्त्र के विषय है। यह अध्ययन इतना गहन और सूक्ष्म है कि बाहरी रूप में अध्ययन करना संभव नहीं। इसलिए इन्हें संरचना में गौण माना गया है।

(ग) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए।

(1) भाषा सामाजिक व्यवस्था कैसे है ?
(2) भाषा व्यवहार भाषा-व्यवस्था का व्यक्त रुप कैसे होता है ?
(3) भाषिक संरचना की सृजनात्मकता को समझाइए।
(4) प्रजनक व्याकरण के प्रमुख संघटक बनाईए।
(5) आधुनिक भाषा विज्ञान में अर्थ को गौणता कैसे मिली ?

1.3.4 भाषा विज्ञान स्वरूप एवं व्याप्ति-

<u>भाषा विज्ञान का नामकरण-</u> भाषविज्ञान-शब्द पश्चिम से भारत में आया है। भारत में प्राचीन काल में भाषाविषयक अध्ययन के लिए अलग-अलग शब्द प्रचलित थे। जैसे-शिक्षा,निरूक्त,व्याकरण प्रातिशाख्य। ये भाषा के किसी एक अंग से संबंधित थे। भाषाविज्ञान और व्याकरण को पहले एक ही माना जाता था। तुलना पर बल होने से सन् १७८६ में सर विलियम जोन्स ने इसे कम्पेरेटीव ग्रामर कहा (तुलनात्मक व्याकरण)। केवल तुलना ही न होने से इसे तुलनात्मक और ऐतिहासिक भाषाविज्ञान कहा गया। कुछ लोगों ने इसे 'कम्पेरेटीव फिलॉलॉजी' कहा। इसके लिए ग्लॉसॉलॉजी ग्लॉटॉलॉजी शब्द भी आए। जर्मनी में इसे Sprach wisseushaft कहा जाता रहा। मैक्समूलर ने इसे Science of Language कहा जो जर्मनी शब्द का ही अनुवाद है। Sprach का अर्थ है Language तथा wissushaft का अर्थ है Science। आजकल शब्द चल रहा है Linguistice जो फ्रेंच Linguistique का रूपांतरण है। इसका मूल शब्द Lingua है जो भाषा सूचक है।

हिन्दी में भाषा विज्ञान नाम प्रचलित हो गया है। डॉ.श्यामसुंदरदास हिन्दी विषय भाषाविज्ञान पर लिखनेवाले पहले व्यक्ति है और उन्होंने भाषा विज्ञान शब्द ही प्रयुक्त किया है।

भाषा विज्ञान में भाषा और विज्ञान दो शब्द है जिसका अर्थ है भाषा का विज्ञान। विज्ञान शब्द विशिष्ट ज्ञान का सूचक है। ''भाषाया: विज्ञानम् इति भाषाविज्ञानम्।''

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

भाषा विज्ञान की परिभाषा-

भारतीय और पाश्चात्य दोनों विद्वानों की परिभाषाएँ इस प्रकार है -

भाषाविज्ञान भाषा की व्युत्पत्ति, उसकी बनावट उसके विकास तथा ह्रास की वैज्ञानिक व्याख्या करता है - डॉ.श्यामसुंदरदास ।

भाषा विज्ञान का सीधा अर्थ है भाषा का विज्ञान और विज्ञान का अर्थ है विशिष्ट ज्ञान । इस प्रकार भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषा विज्ञान कहलाएगा । - डॉ. देवेंद्रनाथ शर्मा

भाषा विज्ञान वह विज्ञान है जिसमें भाषाओं सामान्य रूप से या किसी एक भाषा का विशिष्ट रूप से प्रकृति,संरचना, इतिहास, तुलना, प्रयोग आदि की दृष्टि से सिद्धान्त निश्चित करते हुए वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है- डॉ.अम्बा प्रसाद सुमन ।''

''भाषा विज्ञान उस शास्त्र को कहते है जिसमें भाषा मात्र के भिन्न-भिन्न अंगो का विवेचन तथा निरूपण किया जाता है''-डॉ.उदयनारायण तिवारी।

''भाषा विज्ञान भाषा संबंधी समस्त तथ्यों एवं व्यापारों (Phenomenon) से संबंध रखता है, उसमें संसार की भाषाओं के गठन, इतिहास, परिवर्तन, भाषाओं के पारस्परिक संबंध उनके पार्थक्य कारणों एवं नियमों आदि समस्त विषयों पर विचार होता है''- डॉ.रामेश्वर दयालु

''भाषा विज्ञान वह विज्ञान है जिसमें भाषा अथवा भाषाओं का एककालिक, बहुकालिक, तुलनात्मक, व्यतिरेकी अथवा अनुप्रायोगिक अध्ययन-विश्लेषण तथा तद्विषयक सिद्धांतो का निर्धारण किया जाता है'' - डॉ.भोलानाथ तिवारी

अब हम पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषा को देखेंगे। पाश्चात-जगत में फिलॉलॉजी और लिंग्विस्टिक्स दोनों नामों से अध्ययन हुए है।

<u>मैक्यमूलर</u> :- ''भाषा विज्ञान जिसको फिलालॉजी कहना ही सही है, भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन है। ''

<u>मेरिओपेई</u> :- ''भाषा विज्ञान भाषा और भाषाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।''

<u>ब्लूमफिल्ड</u> :- ''जिसमें लिखित भाषा का अध्ययन किया जाता है उसे फिलालॉजी और जिसमें बोलचाल की भाषा का अध्ययन किया जाता है उसे लिंग्विस्टिक कहते हैं।''

<u>आर एच. रॉबिन्स</u> :- ''भाषा विज्ञान को भाषा के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''

उपर्युक्त सभी विद्वानों ने भाषा विज्ञान के भिन्न-भिन्न अंगो और-स्वरूपों का मनोवैज्ञानिक विवेचन-तथा निरूपण किया है ।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन ही भाषा विज्ञान है।

भाषा विज्ञान के अंग

भाषा विज्ञान भाषा संबंधी समस्त तथ्यों एवं व्यवहारों से संबंध रखता है। उस में संसार की भाषाओं के गठन, इतिहास, परिवर्तन भाषाओं के पारस्परिक संबंध, उनके पार्थक्य के कारणों एवं नियमों आदि सभी विषयों पर विचार होता है। भाषा, भाषा के विविध रूप, भाषा के परिवार भाषाई समाज, भाषा की प्रकृत्ति, स्वन, पद, वाक्य, अर्थ, कोश, व्युतपत्ति आदि भाषा विज्ञान के अध्ययन के अंग है।

डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा भाषा विज्ञान के छह अंग मानते हैं तो डॉ.भोलानाथ तिवारी चार अंगो को स्वीकार करते हैं। भाषा कहने से सामन्यत: चार बातों का बोध होता हैं। वे हैं-ध्वनि, शब्द, (पद) वाक्य और अर्थ।

विभिन्न विद्‌वानों के मतों को ध्यान में रखते हुए भाषाविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र को दो भागों में विभाजित कर विचार किया जाता है।

<u>प्रधान अंग-</u>भाषाविज्ञान के अंगो को भाषाविज्ञान की शाखाएँ भी कहा जाता है । स्वन,पद,वाक्य से भाषा का शरीर

गठन होता है तो अर्थ भाषा में जान डालता है ।

1.स्वन विज्ञान-(Phonetics)

स्वनविज्ञान का पुराना नाम ध्वनि विज्ञान है । अंग्रेजी में इसके लिए Phonetics शब्द प्रचलित है । भाषा की लघुतम इकाई स्वन है । भाषा मूलत: स्वनात्मक होती है । भाषा का मूल आधार स्वन होने से इसमें स्वन उत्पादन, स्वनयंत्र, उच्चारण अवयव का निर्माण, स्वनों का स्वर और व्यंजन में विभाजन, वर्गीकरण, स्वन परिवर्तन की दिशाएँ, स्वन परिवर्तन के कारण स्वन नियम आदि का अध्ययन किया जाता है। स्वनविज्ञान मनुष्य के वागेंद्रियों द्वारा निर्मित सभी स्वनों का अध्ययन करता है।

साथ ही संवहन (Trancemission)तथा श्रोता द्वारा ग्रहण (Reciving) का भी वैज्ञानिक विश्लेषण करता है। स्वन विज्ञान की तीन शाखाएँ हैं - औच्चराणिक, संवहनिक और श्रोतिकी।

स्वनिमिकी (Phonemics)- स्वनिमिकी का पुराना नाम ध्वनिग्राम विज्ञान है। इसमें किसी भाषा विशेष के अर्थवान स्वनों का अध्ययन किया जाता है । इसमें स्वनिम का निर्धारण, परिभाषा, स्वनिम के प्रकार, के साथ-साथ भाषास्वन संस्वन, स्वनिम के पार्थक्य का अध्ययन किया जाता है। सूचक, वितरण के आधार पर स्वनिमों की संख्या का निर्धारण किया जाता है। अर्थभेदकारी स्वन ही स्वनिम कहलाता है। प्रत्येक भाषा में स्वनिमों की संख्या अलग-अलग है कम से कम पंद्रह, अधिकतम पचास संख्या होती है ऐसा रॉबिन्स का मत है।

2.रूप विज्ञान (Morphology)-

इसका पुराना नाम पद विज्ञान है। भाषा की लघुतम इकाई स्वन है तो अर्थ की दृष्टि से भाषा की लघुतम इकाई शब्द है। शब्द को अर्थतत्त्व कहा जाता है। शब्दों का संग्रह शब्दकोश कहलाता है। परंतु ये कोशगत अर्थवान शब्द वाक्य में प्रयुक्त नहीं हो सकते। वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए इनका रूप बदलता है। अर्थात, लिंग, वचन, कारक, पुरूष, काल, सूचक तत्त्वों को जोड़ना पडता है जिन्हें प्रत्यय कहा जाता है। इन प्रत्ययों को भाषा विज्ञान में संबंधतत्त्व कहते है। अत: अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का योग रूप या पद है। इसका अध्ययन करनेवाला शास्त्र रूपविज्ञान है।

रूपविज्ञान की एक और शाखा हैं- रूपिमविज्ञान, जिसे Morphemics कहते है। रूप के अर्थवान खण्डों को रुपिम कहते है । शब्द स्वतंत्र अर्थवान इकाई है तो रूपिम लघुतम इकाई । रूपविज्ञान में किसी भाषा के रूपों का विश्लेषण कर अर्थ और वितरण के आधार पर उसके रूपिमों और संरूपो का निर्धारण करना तथा दो या अधिक रूपिमों के संयोग से घटित होनेवाले स्वनात्मक या स्वनिमिक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है । इसमें तीन बातों का अध्ययन होता है-रूपिमों का निर्धारण, संरूपों का निर्धारण और रूपस्वनिमिक परिवर्तनों का अध्ययन ।

3.वाक्य विज्ञान (Syntax)-

भाषा की पूर्ण इकाई वाक्य है। वाक्य के माध्यम से ही हम अपनी बात श्रोता-पाठक के सम्मुख रखते हैं। वाक्य की परिभाषा आवश्यक तत्त्व,वाक्य के प्रकार, वाक्य रचना की पद्धति,निकटस्थ अव्यय आदि बातों का अध्ययन वाक्य विज्ञान में होता है । साथ ही वाक्य परिवर्तन के कारण और दिशाओं का निर्धारण होता है। वाक्य विज्ञान के तीन भाग है ।

क) वर्णनात्मक वाक्य विज्ञान - इसमें वाक्य रचना का सामान्य विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

ख) ऐतिहासिक वाक्य विज्ञान - इसमें वाक्य का ऐतिहासिक विकासक्रम प्रस्तुत किया जाता है।

ग) तुलनात्मक वाक्य विज्ञान - दो या अधिक भाषाओं के वाक्यों का तुलनात्मक अध्ययन होता है।

4.अर्थ विज्ञान (Symantics)-

अर्थ भाषा की आत्मा है । भाषा साधन के द्वारा वक्ता अपनी मानसिक प्रतीति अर्थ को संप्रेषित करता है । अर्थ विज्ञान में अर्थ बोध के तथा बाधक कारण, अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ, अर्थ परिवर्तन के कारण, अर्थबोध के नियमों का अध्ययन किया जाता है । आर्थिम Symantene का निर्धारण भी अर्थ विज्ञान करता है ।

गौण अंग - भाषा विज्ञान में उपरोक्त मुख्य अंगों के अलावा गौण अंगों का भी समावेश होता है । प्रयोगिक या

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के ये अंग है ।

i) व्युत्पत्ति विज्ञान (Etymology) -

व्युत्पत्ति का अर्थ है- विशिष्ट उत्पत्ति । शब्द का मूल (प्रकृत्ती) और उसमें किन प्रत्ययों का योग हुआ इसकी जानकारी देनेवाला शास्त्र ''व्युत्पत्ति विज्ञान'' है । ब्लूमफिल्ड के मत से ''शब्द के रूप में भाषिक रूप का इतिहास निर्देश करते हुए प्राचीन अभिलेखों के आधार पर जहाँ वह शब्द मिलता है, उसका विकास बताया जाता है और एक भाषा से दूसरी भाषाओं में स्थानांतरित होने तथा मूल उत्पत्ति का स्रोत दर्शाया जाता है । (The analogists believed that the origin and the true meaning of words could be traced in their shape the investigation of this they called etymology) यास्क मुनि का निरूक्त व्युत्पत्ति शास्त्र का प्राचीनतम भारतीय ग्रंथ है।

व्यत्पत्ति शास्त्र के द्वारा शब्दार्थ के मर्म तक पहुँचा जा सकता है, शब्द की आत्मा से साक्षात्कार किया जा सकता है।

शब्द की व्युत्पत्ति देते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है-

1) भाषा विज्ञान का अच्छा ज्ञान होना अनुसंधाता के लिए आवश्यक है।
2) उक्त भाषा की संस्कृति साहित्य का भी ज्ञान आवश्यक है।
3) पूर्व कार्य का ज्ञान होना चाहिए ताकि पूर्ववर्तियों की गल्तियों से बचा जा सके

ii) कोश विज्ञान (Dexlcography) -

कोश विज्ञान में उन सिद्धांतों का विवेचन किया जाता है जिनके आधार पर कोशों का निर्माण होता है । कोश में शब्दो का क्रम, अर्थ का निर्धारण, अर्थ का क्रम, मुहावरों और कहावतों पद्धति की शब्दों की व्याकरणिक कोटियों का निर्धारण आदि का ज्ञान कराया है । शब्द कोश में शब्दों की व्युत्पत्ति भी प्रायः दी जाती है । यास्क मुनि ने १००० ई.पू.में निघण्टुओं की रचना की जिनमें कठिन तथा अप्रचलित वैदिक शब्दों का संकलन किया गया है । कोशों के विविध प्रकार है- भाषा कोश, पर्यायवादी कोश, मुहावरा व लोको क्ति कोश,व्यक्ति कोश, पुस्तक कोश, साहित्य कोश, पारिभाषिक कोश, व्युत्पत्ति कोश, बोली कोश, कथा कोश, चरित्र कोश, सूक्ति कोश, विश्व कोश. विलोम कोश, प्रयोग कोश, उच्चारण कोश आदि है ।

कोश निर्माण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है शब्द संकलन में सातत्य शुद्ध वर्तनी, शब्द क्रम, व्याकरण, अर्थ, व्युत्पत्ति, उच्चारण आदि ।

iii) भाषिक भूगोल (Linguishc Geography) -

भाषिक भूगोल में भाषाओं के क्षेत्र विस्तार अथवा भौगोलिक सीमाओं पर विचार किया जाता है । भाषा तथा बोलियों का सीमांकन करते समय बोलने वालों की संख्या सीमावर्ती भाषाओं पर आपसी प्रभाव का भी अंकन किया जाता है । प्राप्त जानकारी के आधार पर मानचित्र श्ऱ्ड्यीक का तैयार करना भाषिक भूगोल में आता है । भाषिक भूगोल को भाषा भूगोल भी कहा जाता है ।

iv)लिपिविज्ञान (Graphonomy) -

ध्वनि प्रतीकों का चिन्हों के माध्यम से अंकित करना ही लिपि है। लिपि के कारण ही भाषा भिन्न देश काल के लिए सुरक्षित रहती है। यदि लिपि नहीं होती तो प्राचीन भाषाएँ आज लुप्त हो गई होती। भाषा अपने मूल रूप में स्वनों पर आधारित है तो लिपि उन स्वनों का अंकन है। लिपि विज्ञान के अंतर्गत लिपि का निर्माण, लिपि का विकास, लिपि की वैज्ञानिकता, संशोधन, विकास का इतिहास, लिपि का भविष्य और मानकलिपि निर्धारण के तत्त्व आदि का अध्ययन किया जाता है।

v) शैली विज्ञान (Stylistics) -

साहित्य में भाषागत प्रयोगों का अध्ययन शैली विज्ञान है । शैली विज्ञान साहित्यिक एवं भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से एक संगम स्थली है । रचनाकार के व्यक्तित्व की खोज शैली विज्ञान के द्वारा की जाती है । यह एक आलोचना प्रणाली बन गई है ।

vi) अनुवाद विज्ञान (Science of Translation) -

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

एक भाषा का आशय दूसरी भाषा में परिवर्तित करना अनुवाद कहलाता है। अनुवाद को भाषांतरण भी कहते है। स्रोत भाषा (मूल भाषा) से लक्ष्य भाषा (अनुवाद की भाषा) में रूपांतरण अनुवाद है। अर्थ,भाव, प्रसंग, देशकाल, संस्कृति आदि को ज्यों का त्यों रूपांतरित करना कठिन कार्य है। ज्ञान-विज्ञान के प्रचार से हम एक - दूसरे के निकट आ गये हैं अत: अपनी भाषा में सामग्री अनुवाद से ही प्राप्त हो सकती है। अनुवाद की परिभाषा, स्वरूप, अनुवाद के सोपान, अनुवादक के गुण, अनुवाद के प्रकार, सफल अनुवाद की बाधाएँ आदि का अध्ययन, विवेचन करनेवाला शास्त्र अनुवाद विज्ञान है।

इसके अलावा समाज भाषा विज्ञान, मनोभाषा विज्ञान, मशिनी भाषा विज्ञान आदि भाषा विज्ञान की गौण शाखाएँ हैं। कुल मिलाकर भाषा विज्ञान एक समृद्ध विज्ञान है।

घ) स्वय अध्ययन के प्रश्न -

संक्षेप में उत्तर लिखिए।

1) भाषा विज्ञान के प्रधान अंगो के नाम लिखिए।
2) स्वन और स्वनिम का अंतर बताइए।
3) भाषा विज्ञान के गौण अंगों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4) भाषा भूगोल से क्या तात्पर्य है।
5) भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन क्या कहलाता है ?

1.3.5 भाषा विज्ञान के अध्ययन की दिशाएँ -

भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करना भाषा विज्ञान का कार्य है। भाषा विज्ञान उस अर्थ में विज्ञान नहीं है। जिस अर्थ में हम गणित अथवा रसायन या भौतिकी को लेते है। भाषा विज्ञान इसलिए विज्ञान है कि उसके भी अपने नियम है और कार्य कारण भाव है। उनके अपवाद भी है। इसलिए यह शुध्द विज्ञान नहीं है और न दर्शन, मनोविज्ञान के समान अनुभव पर आश्रित शास्त्र है। अत: भाषा विज्ञान इन दोनों के मध्य का विज्ञान है।

भाषा विज्ञान अध्ययन की प्रमुख दिशाएँ इस प्रकार बतायी जा सकती हैं - वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक, संरचात्मक, प्रायोगिक आदि। ये पाँच दिशाएँ भाषा विज्ञान के प्रकार माने गये हैं। इसलिए इन्हें कुछ लोग भाषा विज्ञान की शाखाएँ भी कहते हैं।

क) वर्णनात्मक (Descriptive) -

वर्णनात्मक भाषा विज्ञान में किसी एक भाषा का किसी विशिष्ट काल से संबंधित स्वरूप का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। यह विवेचन भाषा की संरचना पर स्वन,स्वनिम, रूप-रूपिम पर पूर्णत: केंद्रित होता है। इसलिए भाषा के अर्थतत्त्व की उपेक्षा हो जाती है। अमेरिका में इस पद्धति का अधिक विकास हुआ है। वर्णनात्मक शाखा व्याकरण के अधिक निकट है।

वर्णनात्मक में भाषा के एक निश्चित कालखंड में स्थित स्वरूप का ही अध्ययन होता है। इसलिए इसे समकालिक या सांकालिक अथवा स्थित्यात्मक भी कहते हैं।

इसमें किसी भाषा के उच्चारित रूप का अध्ययन होता है। इसलिए केवल जीवित अथवा प्रयोगणशील भाषा या बोलियों का ही अध्ययन किया जाता है। जिन भाषाओं का कोई साहित्य नहीं है अथवा जिनके प्रयोक्ता अशिक्षित, अनपढ है, सुदूर अलग-थलग रहते हैं। उनकी भाषा, बोलियों का अध्ययन वर्णनात्मक शाखा में होता है। जो भाषाएँ आज प्रयुक्त नहीं होती, मृत है, उनका अध्ययन साहित्य के आधार पर करते हैं। श्रवण,परीक्षण, निष्कर्ष के कारण इसके तथ्य प्रामाणिक होते हैं। अत: अनुमान और कल्पना को कोई स्थान नहीं मिलता अध्येता की पूर्वाग्रह और संस्कारों की दीवारें ढह जाती है। इसलिए ग्लीसन लिखते हैं-'' यदि इस पद्धति से एक भाषा पर दो भाषा विज्ञानी अलग-अलग कार्य करेंगे तो भी उनके निष्कर्ष प्राय: समान होंगे। यदि कोई भिन्नता दिखायी दें तो वह सूचक द्वारा दी गयी सामग्री की भिन्नता से उत्पन्न है। वर्णनात्मक भाषा विज्ञान का उदाहरण सुप्रसिद्ध संस्कृत वैयाकरणी महर्षि पाणिनि की रचना ''अष्टाध्यायी'' है।

ग्लीसन ने इस शाखा को भाषा विज्ञान की 'मूल शाखा' कहा है। (Basic Branch of Linguistics Science) इस

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

शाखा के पश्चिमी अन्य भाषा विज्ञानी है ऑटोजस्परसन, ब्लूमफिल्ड, हेन्री स्वीट और जॉर्ज ग्रियर्सन । भारतीय विद्वानों में डॉ. तारपोरवाला और डॉ. सिद्धेश्वर वर्मा प्रमुख हैं।

ख) ऐतिहासिक (Historical) -

काल के परिप्रेक्ष्य में भाषा के क्रमिक विकास का इतिहास इस शाखा में प्रस्तुत किया जाता है । वर्णनात्मक भाषा विज्ञान में किसी भाषा के काल विशेष के स्वरूप का अध्ययन किया जाता है, तो ऐतिहासिक में एक ही भाषा के विभिन्न कालों के स्वरूप का अध्ययन किया जाता है । तात्पर्य यह कि भाषा का आदिरूप, मध्ययुगीन रूप, वर्तमान रूप में आए क्रमिक परिवर्तनों का अध्ययन इसमें होता है । जैसे वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत प्रथम प्राकृत, द्वितीय प्राकृत, तृतीय प्राकृत और वर्तमान हिन्दी का क्रमिक विकास ऐतिहासिक भाषा विज्ञान का विषय होगा । भाषा के इस विकास का वर्णन और इसके कारण तथा दिशा ओं का विश्लेषण, विवेचन ऐतिहासिक भाषा विज्ञान प्रस्तुत करता है, इसलिए इस शाखा को गत्यात्मक भाषा विज्ञान (Dynamic Linguistics) कहते हैं ।

भाषा के विभिन्न अंग-स्वन, रूप, वाक्य, अर्थ के विकास के विभिन्न सोपानों का विशद अध्ययन किया जाता है और भाषा परिवर्तन के सामान्य सिद्धांत, नियम, दिशाएँ बतायी जाती हैं। अध्ययन का आधार लिखित आलेख, भित्तिलेख, मुद्रा, सिक्के, शिलालेख आदि होते हैं । ऐतिहासिक पद्धति के कारण भाषा के नए, पुराने भेदों को समझने में सुविधा होती है ।

ऐतिहासिक भाषा विज्ञान लिखित साहित्य के आधार पर अध्ययन करता है । इसलिए इसकी कुछ सीमाएँ भी है । कारण उच्चरित रूप का यथातथ्य ज्ञान नहीं होता ।

डॉ. आर. जी. भांडारकर ने 'विलसन फिलॉलॉजिकल लेक्चर्स में मराठी, बंगाली, पंजाबी, सिंधी, खडीबोली हिन्दी में प्रयुक्त तद्भव शब्दों का विकास क्रम प्रस्तुत किया है । पश्चिम के रॉबर्ट लीज और ग्लीसन इस पद्धति को अपनाने वाले भाषा विज्ञानी है । ऐसे भाषा विज्ञानी को इतिहास, भूगोल, नवीन विज्ञान, पुरातत्त्व, पुरालिपिशास्त्र का गहन अध्येता होना आवश्यक है । डॉ. जलज की 'ऐतिहासिक भाषा विज्ञान' पर हिन्दी में पुस्तक प्रकाशित हुई है।

ग) तुलनात्मक (Comparative) -

तुलना के लिए कम-से-कम दो भाषाओं को अध्ययन का आधार बनाना पड़ता है । यह तुलना एक ही काल की दो भाषाओं की अथवा भिन्न-भिन्न काल की दो भाषाओं में की जा सकती है। तुलना-स्वन, रूप रचना, वाक्यगठन, आदि भाषाई संरचना से संबंधित किसी भी पक्ष पर की जा सकती है। तुलनात्मक भाषा विज्ञान वर्णनात्मक से निकट का संबंध रखता है। साथ ही ऐतिहासिक से भी। भाषा परिवार के निर्धारण मे यह पद्धति अत्यंत उपयुक्त है। इसी पद्धति के कारण विश्व के एक छोरे से दूसरे छोर पर बोली जानेवाली ग्रीक लैटीन, संस्कृत में निकटता स्थापित हुई और भारोपिय नामक परिवार बना। पितृवाचक, मातृवाचक और भ्रातृवाचक शब्दों में साम्य मिलता है। १७८६ में सर विल्यम जोन्स ने लैटीन, ग्रीक संस्कृति की संरचना मे आश्चर्य जनक समानता को प्रस्तुत किया। तभी इस शाखा की नींव पड़ी। भाषा विज्ञान का प्रारंभिक नाम ही तुलनात्मक भाषा विज्ञान रहा है। (Comparative Philology) जर्मन विद्वान श्लाईश्वर, सर विलियम जोन्स, इस पद्धति के भाषा विज्ञानी है ।

घ) संरचनात्मक (Structural) -

वर्णनात्मक भाषा विज्ञान का विकसित रूप संरचनात्मक भाषा विज्ञान है। डॉ. भोलानाथ तिवारी इसे वर्णनात्मक भाषा विज्ञान में ही रखते है। सस्यूर संरचनात्मक भाषा विज्ञान के जनक है। अर्थ का त्याग कर भाषा संरचना का विश्लेषण के माध्यम से अध्ययन किया जाता है । इस पद्धति में रूप संबंधी समुच्चयों और रूपविन्यास का क्रमात्मक अनुक्रम (Sequences) का रूप (Form) और अर्थमूलक सहपरिवर्तन (Covariance) का अध्ययन किया जाता है । जैसे मैं, मेरा, मेरे, मेरी, मुझे, का संबंध क्रिया के अलग-अलग रूपों में व्यक्त होता है। जैसे मैं जाता हूँ, मुझे जाना है, मेरा मन जाना चाहता है आदि। इसके अध्येता ब्लूमफिल्ड, जॉर्ज ट्रेगर हॅरिस आदि है।

च) प्रायोगिक (Applied) -

इसे अनुप्रयुक्त या व्यावहारिक पद्धति भी कहते है । इसमें भाषा के जीवन्त रूप का अध्ययन किया जाता है जो क्षेत्र

से जुड़ा होता है। स्वन, शब्द, मुहावरें, कहावते आदि प्रयोगण की दशाओं का भी इसमें अध्ययन किया जाता है। इस भाषा विज्ञान के अनेक लाभ है। जैसे देशी-विदेशी भाषाओं को सिखाने की सरलतम पद्धति की खोज करना, अनुवाद कार्य करना, पारिभाषिक शब्दावलियों का निर्माण, टंकन, दूरमुद्रक और कम्प्युटर के की बोर्ड में सुधार, औच्चरणिक दोषों को दूर करना इसका कार्य है। भाषा समाज, भाषा भूगोल का भी ज्ञान इससे होता है। भाषा विज्ञान की यह आधुनिक शाखा है। भाषा शिक्षण, कोशविज्ञान, व्युत्पत्ति विज्ञान, अनुवाद विज्ञान की समस्याओं को सुलझाने का काम इससे होता है।

इन पाँच के अलावा एक और शाखा-व्यतिरेकी पद्धति की है जिसे अंग्रेजी में (Comtrasitve) कहते है। व्यतिरेकी का अर्थ है - विरोधी अथवा विशेष। इस पद्धति में दो भाषाओं की तुलना करके उनके स्वन, रूप वाक्य, अर्थ आदि के व्यतिरेक्ती तत्त्वों को भाषा शिक्षण तथा अनुवाद के लिए ज्ञात कराया जाता है। भाषा को शीघ्र सीखने - सिखाने की विधि को खोजने के लिए यूरोप तथा अमेरिका में इस को अपनाया गया। चार्ल्ससी और रॉबर्ट लेडों ने इस पद्धति का प्रारंभ किया। १९५६ में प्रकाशित रॉबर्ट लेडो की पुस्तक। लिग्विस्टिक्स ए फ्राँस कल्चर इस पद्धति का प्रस्तावन करने वाली पुस्तक है ।

च) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में लिखिए ।

1) वर्णनात्मक-ऐतिहासिक, तुलनात्मक भाषा विज्ञान के संदर्भ में क्या है ?
2) ग्लीसन ने किस शाखा को भाषा विज्ञान की ''मूल शाखा'' कहा है ?
3) काल के परिप्रेक्ष्य में भाषा का क्रमिक विकास का इतिहास कौन सी शाखा में होता है ?
4) संरचनात्मक भाषा विज्ञान के जनक कौन हैं ?
5) भाषा विज्ञान की आधुनिक शाखा कौन सी है ?

1.4 पारिभाषिक शब्दावली

वाक्-संकेत साधन, प्राय: औच्चणिक ।

पैतृक-वंश परंपरा से प्राप्त वस्तु।

अर्जित-स्वयं के परिश्रम से प्राप्त वस्तु।

स्वनिमिक-स्वनिम से संबांधित (अर्थ परिवर्तन करने वाला, 'स्वन' स्वनिम है।)

रूप- लिंग,वचन,काल, पुरूष के कारण 'शब्द में आया परिर्वतन रूप कहलाता है।'

1.5 स्वयं अध्ययन के प्रश्नों के उत्तर

क) 1) भाषा शब्द की व्युत्पत्ति 'भाष' धातु से हुई है।
2) पाणिनि के ग्रंथ का नाम ''अष्टाध्यायी'' है।
3) हेन्री स्वीट के मत से, व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति भाषा है।
4) भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की व्यवस्था है- ऐसा डॉ. भोलनाथ तिवारी ने कहा है।
5) भाषा को प्रयोग समाज विशेष में होता है।

ख) 1) उच्चारण
2) यादृच्छिक
3) अर्जित
4) विचार सम्प्रेषण और ग्रहण
5) व्यक्ति

ग) 1) भाषा सामाजिक है। कारण भाषा व्यवस्था संस्थागत होती है। भाषा प्रतीकों की एक व्यवस्था है, जो वक्ता की अपनी इच्छा या अपने प्रतीकों के माध्यम, उच्चारण-लेखन से नियंत्रित नहीं होती। सामाजिक व्यवस्था के कारण प्रत्येक भाषा का अपना एक मानक रूप होता है। इस मूल्य भाषा का सामाजिक व्यवस्था है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2) भाषा व्यवहार भाषा व्यवस्था का व्यक्त रूप होता है। भाषा व्यवस्था का प्रयोग वक्ता अपनी अनुभूतियों,भावों,मतों को अभिव्यक्त करने के लिए करता है। जिससे उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इस व्यक्तिगत रूप में वक्ता अपने संदर्भ, देशकाल, तथा परिस्थिती के अनुरूप परिवर्तन लाता है। इसलिए यह अभिव्यक्तरूप मूर्त, वैयक्तिक, यथार्थ, होता है।

3) भाषिक संरचना एक व्यवस्था होती है। जो भाषा का एक सुनिश्चित ढाँचा है। इस संरचना पर जब वक्ता का अधिकार प्राप्त हो जाता है। तब वह भाषा के असंख्य वाक्यों का अर्थ समझ लेता है। जिनका उसने प्रयोग कभी न किया है। साथ ही नवीन प्रयोग भी वह करने लगता है। इसलिए भाषिक संरचना को कठोर-स्थिर न मानकर गत्यात्मक और सृजनात्मक माना है। मातृभाषा में यह बात स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

4) प्रजनक व्याकरण की स्थापना सस्यूर ने की है । सस्यूर के मन से प्रजनक व्याकरण में तीन प्रमुख संघटक होते हैं। (i) वाक्य (ii) दूसरा अर्थ (iii) रचनाप्रक्रिया।

5) आधुनिक भाषा विज्ञान में रचन और रचनिमिक संरचना तथा वाक्य संरचना पर अधिक विचार हुआ है। भाषा में होनेवाले ये परिवर्तन भौतिक और विश्लेषणपरक होते हैं। अर्थ मानसिक प्रतीत है, मन मनुष्य का परिवेश, संस्कृति, सभ्यता से ये जुडे होते है। जिनका अध्ययन दर्शनशास्त्र में होता है। इसलिए आधुनिक भाषाविज्ञान में अर्थ को गौणत: प्राप्त हुई है।

घ) 1) भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन भाषा विज्ञान कहलाता है।

2) भाषा विज्ञान के प्रधान, अंग-स्वनविज्ञान, रूपविज्ञान वाक्यविज्ञान, अर्थ विज्ञान हैं ।

3) भाषा विज्ञान के गौण अंग है-व्युत्पत्तिविज्ञान, कोशविज्ञान, भाषिक भूगोल, लिपि विज्ञान, शैलीविज्ञान और अनुवादविज्ञान ।

4) भाषा भूगोल से तात्पर्य है भाषा तथा बोलियों का सीमांकन कर मानचित्र (नक्शा) तैयार करना ।

च) 1) वर्णनात्मक ऐतिहासिक, तुलनात्मक भाषा विज्ञान के संदर्भ में काल अथवा समय होता है ।

2) ग्लीसन ने वर्णनात्मक भाषा विज्ञान को भाषा विज्ञान की मूल शाखा कहा है ।

3) काल के परिप्रेक्ष्य में भाषा का क्रमिक विकास ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक भाषा विज्ञान के होता है।

4) संरचनात्मक भाषा विज्ञान के जनक सस्यूर है। जिस में भाषिक संरचना का विश्लेषण किया जाता है।

5) भाषा विज्ञान की आधुनिक शाखा प्रायोगिक भाषा विज्ञान है ।

1.6 इकाई का सारांश -

मनुष्य एक बुद्धिमान, विचारशील और सामाजिक प्राणी है। हृदयगत भावों तथा चिंतन-मनन को शाब्दिक संज्ञा प्रदान कर सुकरता से स्मरण में रखता है। अपनी मानसिक प्रतीति, इच्छा, विचार, भाव दूसरे को कहता है, जिसका साधन भाषा है। भाषा के कारण ही उसकी इच्छाओं की पूर्ति दूसरे के कारण सहजता से पूर्ण होती है। भाषा के कारण ही मनुष्य सामाजिक प्राणी बना तथा कल्पना और प्रतिभा शक्ति का विकास संभव हुआ है। इससे मनुष्य सभी प्राणियों में श्रेष्ठ बना है। पशु-पक्षियों के पास भाषा न होने से वे अपना विकास नहीं कर पाए ।

भाषा के दो रूप होते हैं । मूक तथा मुखर । मूक भाषा से आंगिक चेष्टाएँ, इशारे, संकेत आते है । स्काऊट, सैनिक, झंडे अथवा रोशनी की सहायता से संकेत भेजते हैं ।

भाषा का दूसरा रूप मुखर है । भाषा शब्द की व्युत्पत्ति 'भाष' धातु से हुई है । जिसका अर्थ ही है ''व्यक्ताधामवाचि,'' वाणी द्वारा व्यक्त अभिव्यक्ति को भाषा कहा जाता है । भाषाविज्ञान में इसी भाषा का अध्ययन होता है ।

भाषा में दो पक्ष होते हैं - वक्ता तथा श्रोता का । वक्ता वाणी द्वारा जो अभिव्यक्त करें, श्रोता कानों से सुनकर वही अर्थ ग्रहण करे तब भाषा कहलाती है ।

पतंजली नें ''महाभाष्य'' में मनुष्य की व्यक्त औच्चरणिक वाणी को ही भाषा माना है । भर्तृहरि नें ''वाक्य पदिय'' में लिखा है- भाषा बुद्धियों के मध्य आदान-प्रदान का माध्यम है। यदि शब्द का आश्रय नहीं होता तो ज्ञान प्रकट नहीं होता।

प्लेटो के मत से विचार आत्मा से मूक वार्तालाप है । जब यह मुखर होता है तो भाषा की संज्ञा पाता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हेन्री स्वीट ने व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति को भाषा माना है ।

एडवर्ड सपीर ने भाषा को मानवीय प्रयत्न साध्य ध्वनि व्यवस्था कहा है, जिससे वक्ता श्रोता तक अपनी बात को पहुँचा सकता है ।

हिन्दी विद्वानों में कामता प्रसाद गुरू ने भाषा को ऐसा साधन माना है । मनुष्य दूसरों तक अपने विचार भाषा के माध्यम से भली भाँति प्रकट करता है।

बाबूराम सक्सेना ने ध्वनि चिह्नों द्वारा मनुष्य के परस्पर विचार विनिमय को भाषा कहा।

भोलानाथ तिवारी के मत से भाषा उच्चारण अवयवों के उच्चारित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी भाषा-भाषी लोग आपस में विचार- विनिमय करते हैं।

इन परिभाषा ओं के आधार पर भाषा का स्वरूप, निर्धारक तत्त्व हमारे सामने आते हैं ।

भाषा विचार -विनिमय का साधन होती है। भाषा कें प्रतीक ध्वनियुक्त होते हैं । इन प्रतीकों का उच्चारण मनुष्य के वाक्-अवयवों से निश्चित प्रयत्न से होता है । ये प्रतीक यादृच्छिक होते हैं । भाषा की एक व्यवस्था होती है। भाषा का प्रयोग किसी समाज विशेष में होता हैं।

भाषा की प्रमुख विशेषताएँ जो सभी भाषाओं पर समान रूप से लागू होती है जो इस प्रकार बतायी जा सकती है - भाषा मूलत: ध्वनियों का समूह है । भाषा एक सामाजिक वस्तु है । भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है। इसलिए वह अर्जित संपत्ति है। भाषा का अर्जन समाज से अनुकरण द्वारा होता है । भाषा परिवर्तनशील है । भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता । भाषाई परिवर्तन की धारा कठिनता से सरलता की और जाती है । प्रत्येक व्यक्ति की अपनी भाषा होती है और प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट पहचान होती है । प्रत्येक भाषा को ऐतिहासिक और भौगोलिक सीमा होती है ।

सुप्रसिद्ध भाषाविद् सस्यूर ने भाषा अधिगम हेतु भाषा व्यवस्था और भाषा व्यवहार युग्म को प्रस्तुत किया । भाषा के उन्होंने दो पक्ष माने हैं - एक संस्थागत, जो सामाजिक पक्ष है । वक्ता अपनी इच्छा से इसमें परिवर्तन नहीं कर सकता । व्यवस्था के कारण ही प्रत्येक भाषा का मानक रूप बनता है । समाज द्वारा निर्मित भाषा व्यवस्था को अंग्रेजी णीछश्रट्ट्ल में कहते हैं । भाषा व्यवहार वक्ता द्वारा प्रयुक्त भाषा का पक्ष हैं । अंग्रेजी में इस कें लिए सीड्ढद्धख्र्ल शब्द प्रयुक्त होता है जो प्रख्लल्त्तम का पर्याय है । वक्ता अपने संदर्भ, देश-काल,परिस्थिति के अनुरूप भाषा व्यवस्था में परिवर्तन करता है । जिसके कारण भाषा में जीवंतता बनी रही है ।

भाषाई व्यवस्था का एक निश्चित ढाँचा होता है जिसे भाषा की संरचना कहते हैं । संरचना के द्वारा भाषा के निर्माणक तत्त्व जाने जाते हैं। सस्यूर ने भाषाई संरचना को जानने का काम किया है। भाषिक संरचना से शब्द के रूप संज्ञा, विशेषण, क्रिया अव्यय का बोध होता है । इनमें संबंध तत्त्व जुड़ जाने पर लिंग, वचन, काल का दयोतन होता है । उपसर्ग, प्रत्यय से शब्द बनते है । कर्ता, कर्म, क्रिया से वाक्य बनना है । इस आधार पर सस्यूर ने प्रजनक व्याकरण की परिकल्पना प्रस्तुत की ।

भाषा का अध्ययन करने वाला शास्त्र भाषाविज्ञान कहलाता है।''भाषाया : विज्ञानम इति भाषाविज्ञानम्''। भाषा विज्ञान शब्द पश्चिम से भारत में आया। इससे पूर्व भारत में व्याकरण, निरूक्त, शिक्षा आदि शब्द प्रचलित थे। व्याकरण में किसी एक भाषा का ही अध्ययन होता है जबकि भाषा विज्ञान में नियम और सिद्धांत दुनिया की समस्त भाषाओं पर लागू होते हैं।

भाषा विज्ञान के लिए अनेक शब्द प्रचलित रहे हैं -काम्प्यारेटिव ग्रामर, काम्प्यरेटिव, फिलॉलॉजी, सायन्स ऑफ लंग्वेज, लिंग्विस्टिक्स और हिन्दी में भाषाशास्त्र भाषिकी, भाषाविज्ञान शब्द प्रचलित हैं ।

डॉ.श्यामसुन्दरदास के मन से भाषा विज्ञान भाषा की, व्युत्पत्ति, बनावट, विकास, ह्रास की वैज्ञानिक व्याख्या करता हैं। डॉ. बाबुराम सक्सेना के मन से भाषाविज्ञान भाषा का विश्लेषण कर उसका दिग्दर्शन कराता है।

डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा के मत से भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषाविज्ञान है।

भोलानाथ तिवारी के मत से भाषा विज्ञान वह विज्ञान है। जिसमें भाषा अथवा भाषाओं का एककालिक, बहुकालिक, तुलनात्मक व्यतिरेकी अथवा अनुप्रायोगिक अध्ययन विश्लेषण तथा तद्विषयक सिद्धान्तों का निर्धारण किया जाता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

पश्चिम के विद्वानो में मारिओ पेई, ब्लूम फिल्ड और रॉबिन्स ने भी भाषा विज्ञान को परिभाषित किया है।

भाषा विज्ञान भाषा के सभी अंगो और व्यवहारों का अध्ययन और विश्लेषण करता है। भाषा विज्ञान करता है। भाषा विज्ञान के प्रधान अंग स्वनविज्ञान (ध्वनि विज्ञान) स्वानिमिकी, रूप विज्ञान, वाक्यविज्ञान अर्थविज्ञान है । इन प्रधान अंगो को डॉ. भोलानाथ तिवारी ने स्वीकारा है। भाषाविज्ञान के गौण अंग-भाषा विज्ञान के प्रायोगिक अथवा अनुप्रयुक्तता को दर्शाते हैं। शब्द की व्युत्पत्ति से संबंधित-व्युत्प्रत्तिविज्ञान, कोशनिर्माण संबंधी कोश विज्ञान भाषा का भौगोलिक सीमाकंन मानचित्र निर्माण करने वाला भाषिक भूगोल,भाषा के ध्वनिचिह्नों को स्थायित्व देने वाला तथा भाषा लेखन से संबंधित लिपिविज्ञान, साहित्यगत भाषाई प्रयोगों का अध्ययन-विश्लेषण करनेवाला शैलीविज्ञान, एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा में रूपान्तरित करनेवाला अनुवादविज्ञान के अलावा सामाज भाषा विज्ञान मनोभाषाविज्ञान, मशीनीभाषा विज्ञान आदि अनेक भाषाविज्ञान की शाखाएँ हैं।

भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करना भाषाविज्ञान का प्रमुख कार्य है। भाषा विज्ञान के अध्ययन की प्रमुख दिशाएँ हैं - वर्णनात्मक- इसमें किसी एक भाषा का किसी विशिष्ट काल से संबंधित स्वरूप का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। यह विवेचन भाषा की, संरचना पर केंद्रीत होता है। भाषा के उच्चरित रूप का अध्ययन होता है। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान व्याकरण के निकट होता है। पाणिति का ग्रंथ 'अष्टाध्यायी' इसका उदाहरण है। ग्लीसन भाषाविज्ञान की मूलशाखा इसे कहते हैं।

भाषा विज्ञान के अध्ययन की दूसरी पद्धति ऐतिहासिक है। इसमें भाषा कें क्रमिक इतिहास का विवेचन होता है। ऐतिहासिक भाषाविज्ञान से भाषा परिवर्तन के सामान्य सिद्धांत,नियम, दिशाओं का दिग्दर्शन होता है। भाषा के नये-पुराने भेदों को इस पद्धति के कारण सुकरता से समझा जा सकता है। इस शाखा में लिखित साहित्य के आधार पर अध्ययन होता है।

भाषा विज्ञान के अध्ययन की तीसरी दिशा है तुलनात्मक । इसमें एक काल की, भिन्न कालों की तथा कम से कम दो भाषाओं की तुलना की जाती है। यह तुलना भाषाई संरचना के स्तर पर होती है। तुलनात्मक पद्धति के कारण ही १७८६ में सर विलियम जोन्स ने लैंटिन-ग्रीक और भारतीय संस्कृत की संरचना में आश्चर्यजनक समानता को खोजा।

भाषा की संरचना स्तर पर अध्ययन करनेवाली शाखा सस्यूर द्वारा निर्मित संरचनात्मक है। इस में अनुक्रम (Sequencs) तथा रूप (Form) और अर्थमूलक सहपरिवर्तन (Covqtinace) का अध्ययन किया जाता है। अध्ययन की पाँचवी शाखा प्रायोगिक भाषा विज्ञान है। इसमें देशी-विदेशी भाषा-अध्यायन-अध्ययन की सरलतम पद्धति की खोज की जाती है। तथा अनुवादकार्य पारिभाषिक शब्दावली निर्माण, मशीन की दृष्टि से की बोर्ड में सुधार आदि कार्य संपन्न होते हैं। इसके अलावा व्यतिरेकी पद्धति भी है। तुलना के द्वारा दो भाषाओं के विरोधी अथवा विशेष तत्त्वों को खोजा जाता है। भाषा और भाषाविज्ञान का अध्ययन हमारे व्यक्तित्त्व विकास के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

1.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न -

1) भाषा की परिभाषा देते हुए भाषा का स्वरूप निर्धारित कीजिए ।
2) भाषा शब्द की व्युत्पत्ति देते हुए भाषा की विशेषताओं का सोदाहरण परिचय दीजिए ।
3) मूक भाषा, मुखर भाषा की विशेषताएँ लिखिए ।
4) भाषाविज्ञान की परिभाषा देते हुए, भाषाविज्ञान के प्रधान अंगो का परिचय दीजिए ।
5) भाषा विज्ञान के प्रमुख और गौण अंगो का विवेचन कीजिए ।

टिप्पणियाँ लिखिए ।

क) भाषा अर्जित संपत्ति है ।
ख) भाषा व्यवहार और भाषा व्यवस्था
ग) भाषा संरचना
घ) ऐतिहासिक भाषाविज्ञान

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई 2
स्वनविज्ञान

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विषय विवरण

2.3.1 स्वन विज्ञान का स्वरूप और शाखाएँ

2.3.2 वाग अवयव और उनके कार्य

2.3.3 स्वन की अवधारणा

2.3.4 स्वनों का वर्गीकरण

2.3.5 स्वनगुण

2.3.6 स्वनिक परिवर्तन

2.3.7 स्वनिम विज्ञान

2.3.7.(1)स्वनिम की अवधारणा

2.3.7.(2)स्वनिम के भेद

2.3.7(3)स्वनिमिक विश्लेषण

2.4 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

2.5 सारांश

2.6 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

2.१ प्रस्तावना -

भाषा मूलत: उच्चारणमूलक होती है। भाषा का जब हम विश्लेषण करते हैं तब स्वन के आगे विश्लेषण संभव नहीं होता। इस कारण भाषा की लघुतम इकाई स्वन सिद्ध होती है। स्वन का अध्ययन भाषा विज्ञान की जिस शाखा में होता है उसे ''स्वनविज्ञान'' कहते है। स्वनविज्ञान के लिए अंग्रेजी में सस्द्धछल्न्त्नव शब्द हैं इसके अंतर्गत स्वन के सभी अंगों का, निर्माण, वर्गीकरण,परिवर्तन, कारण और दिशाओं का अध्ययन होता हैं।

स्वन निर्माण के संबंध में पाणिनिय शिक्षा में लिखा गया है-

आत्मा बुद्ध्या समे त्यार्थान्, मनो युङ्क्ते विवक्षया ।
मन: कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारूतम ।।
मारूत स्तूरसि चरन, मन्द्रं जनयति स्वरम ।
सोदीर्णो मूर्ध्नयभिहतो वक्त्रामापद्य मारूत: ।
वर्णाज्जयते तेषां विभाग : पञ्चधा स्मृत : ।। (पाणिनिय शिक्षा-६-९)

अर्थात् बुद्धि के साथ आत्मा अर्थो (वस्तुओं) को देखकर बोलने की इच्छा से मन को प्रेरित करती है, मन, शारीरिक शक्ति पर दबाब डालता है जिससे वायु में प्रेरणा उत्पन्न होती है, प्रेरित वायु (श्वासवायु) फेफड़े में चलती हुई ध्वनि को उत्पन्न करती है फिर, बाहर की ओर जाकर तथा मुख के उपरिभाग से अवरूद्ध होकर मुख में पहुँचती है और पंचधा विभक्त ध्वनियों को उत्पन्न करती है।

स्वन निर्माण -

मानसिक प्रत्यय (Concept) **स्वन रूप में प्रकट होता है। आत्मा, बुद्धि,मन, वायु के योग से उच्चारण से प्रत्यय प्रकटीकरण होता है। यही प्रकटीकरण भाषा है। बिना चेतना के भाषा संभव नहीं इस कारण पत्थर बोल नहीं सकते, सुन नहीं सकते। चेतना है पर बुद्धि नहीं तो भाषा संभव नहीं जैसे पशु-पक्षियों के पास ध्वनियाँ तो है पर भाषा नहीं हैं। मनुष्य में इन**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

दो बातों के अलावा जब तक चाहता नहीं तब तक वह बोलता नहीं। चाहना मन का व्यापार है और कोई चाहता है पर हवा को बाहर ठीक ढंग से नहीं निकाल सकें तो भी बोलना संभव नहीं। मनुष्य में ये चारों बातें है इसलिए भाषा है। भाषा के कारण ही संस्कृति,ज्ञान, सूचन, निर्देश मनुष्य को संभव हो सका है।

श्रोता-वक्ता व्यापार, वक्ता का मानसिक प्रत्यय, शब्द बिंब निर्माण स्वन उच्चारण, उच्चारण का कानों से ग्रहण - बिंब निर्माण- मानसिक प्रत्यय (अर्थ बोध) श्रोता को। अत: भाषा सीखना, प्रयोग करना उच्चारण-स्वन निर्माण करना है। सही उच्चारण ही सही अर्थ का प्रेषण बनता है।

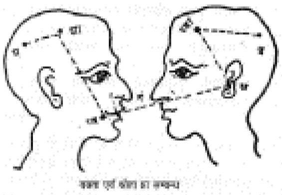

2.२ उद्देश्य -

प्रिय छात्रो, इस इकाई को पढ़ने पश्चात आप-

1) जान पाएँगे कि भाषा से तात्पर्य है, वागेंद्रियों से ध्वनि का निर्माण करना अर्थात् बोलना।

2) ध्वनि का भाषा विज्ञान में मर्यादित अर्थ है। अर्थवान उच्चारणयुक्त वर्ण।

3) ध्वनि के लिए भाषा विज्ञान में स्वीकृत शब्द स्वन है। स्वनविज्ञान में भाषास्वन,संस्वन, स्वनिम के तुलनात्मक विश्लेषण से परिचित होंगे।

4) स्थान, प्रयत्नकरण के आधार पर स्वन वर्गीकरण को प्रस्तुत करते हुए स्वानिक परिवर्तन की दिशाएँ और कारणों को आप समझा सकेंगे।

5) स्वन औन स्वनिम के अन्तर को बताते हुए स्वनिम निर्धारण, स्वनिम के भेद और स्वनिमिक विश्लेषण बता सकेंगे।

6) इस अध्ययन से सही स्वन निर्माण भाषा के लिए अनिवार्य तत्त्व की आवश्यकता जान सकेंगे।

2.3 विषय-विवरण

2.3.1 स्वन विज्ञान-स्वरूप और शाखाएँ -

स्वन विज्ञान स्वन के संबंध में जानकारी देता है। स्वन संबंधित विशेष जानकारी जिसमें दी जाती है उसे स्वन विज्ञान कहते है। अंग्रेजी में इसके लिए (फोनेटिक्स) Phonetics अथवा Phonology शब्द प्रचलित हैं। इन शब्दों का मूल ग्रीक शब्द (फोन) Phone है जिसका अर्थ है स्वन या ध्वनि। ics अथवा Logy का अर्थ विज्ञान (Science) है।

भाषा विज्ञान का नियम है कि एक ही अर्थवाले दो शब्द भाषा को स्वीकार्य नहीं होते। इसलिए इन दोनों में यह अंतर आया है। फोनेटिक्स् में स्वन की परिभाषा, भाषा स्वन, वागअवयव, स्वन वर्गीकरण, स्वनलहरियों का मुँह से निकलकर हवा के द्वारा कान तक पहुँचना और श्रोताद्वारा सुना जाना आदि का विचार होता है। तो फोनोलॉजी में भाषाविशेष के स्वनों के प्रयोग, वितरण, इतिहास तथा परिवर्तन का अध्ययन किया जाता है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी इस संदर्भ में लिखते हैं, - ''प्राय: फोनेटिक्स का प्रयोग ध्वनि के भाषा-निरपेक्ष अध्ययन के लिए किया जाता है। जिसमें सामान्य रूप से ध्वनियों का उच्चारण, वर्गीकरण आदि आते हैं, फोनालॉजी का प्रयोग भाषा विशेष की ध्वनियों की व्यवस्था के लिए प्रयुक्त होता है। '' (भाषाविज्ञान-डॉ.भोलानाथ तिवारी पृ. २४१)

स्वन विज्ञान के लिए संस्कृत में 'शिक्षा' नामक संज्ञा प्रचलित है। हिन्दी में स्वन विज्ञान यह नाम पारिभाषिक शब्दावली आयोग द्वारा स्वीकृत हुआ है। फोनिम के लिए स्वनिम का प्रयोग मान्य है।

भाषा के शुद्ध उच्चारण को लेकर पतंजली लिखते हैं, ''एक शब्द का शुद्ध ज्ञान और प्रयोग मनुष्य के लिए स्वर्ग प्राप्ति के समान होता हैं।''

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वैदिक काल में छह वेदांगों में शिक्षा उर्फ स्वनविज्ञान का अत्याधिक महत्त्व था। कारण उस समय ज्ञान उच्चरित होकर कानों से ग्रहित होकर स्मरण में रखा जाता था। इसलिए सही उच्चारण और सही अर्थ का ज्ञान अनिवार्य था।

डॉ.उदयनारायण तिवारी स्वनविज्ञान को इन शब्दों में परिभाषित करते हैं ,- ''स्वन विज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें वागेंद्रियों द्वारा उत्पादित स्वनों का सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक अध्ययन किया जाता हैं।''

स्वन विज्ञान की शाखाएँ -

स्वन के तीन पक्ष हैं - उत्पादन (उच्चारण),संवहन-तथा ग्रहण (श्रवण) ये तीन स्वन विज्ञान की शाखाएँ हैं।

1) औच्चरणिक स्वन विज्ञान (Articulatory Phonetics) -

स्वन विज्ञान की इस शाखा में उच्चारण अवयव, उच्चारण की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। वक्ता द्वारा उत्पादक स्वनों के वर्गीकरण, विश्लेषण का भी अध्ययन होता है।

2) सांवहनिक स्वन विज्ञान (Acoustic Phonetics) -

इसे सांचारिकी अथवा तरंगिकी स्वन विज्ञान भी कहते। वक्ता के द्वारा उच्चरित स्वन लहरियों का संचारण का अध्ययन इसमें होता है। यदि श्रोता और वक्ता के मध्य कोई बाधा-दिवार,काँच आदि आ जाए तो श्रोता को सुनायी नहीं देता। कारण स्वनों का संवहन नहीं होता। इस आधार पर ध्वनिरहित कक्ष का निर्माण (Sound Proof Cabin) किया जाता है। स्वन लहरियों के अध्ययन में कायनोग्राफ, स्पेक्टोग्राफ, ऑसिलोग्राफ, कार्डिओग्राफ की सहायता ली जाती है। यह विषय भौतिकशास्त्र और अभियांत्रिकी में आता है।

3) श्रौतिकी स्वन विज्ञान (Auditory Phonetics) -

श्रावणिक या ग्रहणमूलक स्वन विज्ञान-वायु मंडल में संचरित होने वाली स्वन तरंगे कर्णपटल को प्रभावित करती है। हमारा कान तीन भागों में बँटा है, बाह्य कर्ण, मध्यवर्ती कर्ण, भीतरी कर्ण।

बाह्य कर्ण के दोन भाग है - एक जो आँखों से दिखायी देता है और टेढ़ामेढ़ा है, दूसरा भाग कर्ण नलिका का होता है। इस नलिका के भीतरी छिद्र पर एक झिल्ली होती है जो बाह्यकर्ण को मध्यवर्ती कर्ण से जोडती है।

मध्यवर्ती कर्ण लघु आकारवाली कोठरी है, जिसमें तीन छोटी-छोटी हड्डियाँ होती है, जिसका एक सिरा बाह्य कर्ण की झिल्ली से जुड़ा रहता है। दूसरी ओर उसका संबंध भीतरी कर्ण के बाहरी छिद्र से होता है।

भीतरी कर्ण में शंखनुमा एक अस्थिसंपुट होता है। इसके दोनों ओर झिल्लियाँ होती है। इसके बीच खोखले भाग में द्रवपदार्थ भरा होता है, यही से श्रावणी सिरा प्रारंभ होती है जो मस्तिष्क से जुड़ी होती है।

वक्ता द्वारा उच्चारित स्वन लहरियाँ वायु द्वारा वहन होकर श्रोता के कानों के पर्दे पर टकराती है। कर्णपटल में कंपन उत्पन्न होता है, ये कंपन अस्थियों द्वारा भीतरी कर्ण के द्रव पर निर्माण होता है और श्रावणी सिरा के द्वारा मस्तिष्क में पहुँचती है और हमें सुनाई देता हैं। इस विज्ञान में श्रवण प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है।

स्वनविज्ञान का उपयोग शुद्ध उच्चारण सीखने सिखाने में, सुनकर वैसे ही स्वन का निर्माण करने ''स्पीच थेरेपी'' के लिए होता है। स्वन संचरण तकनिक का अध्ययन, संचार शीघ्रता के लिए, मशिनों के निर्माण के लिए इस शाखा के अध्ययन का उपयोग होता है। रेडिओलॉजी, अभियांत्रिकी , वैद्यक में इस शाखा का उपयोग है। श्रवण प्रक्रिया,श्रवण दोष, श्रवण उपचार के लिए श्रावणिक स्वन विज्ञान उपयोगी है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए

1) स्वन विज्ञान के लिए अंग्रेजी मे कौनसा शब्द प्रचलित है ?
2) पतंजली के मत से मनुष्य भाषा स्वन का निर्माण कैसे करता है ?
3) डॉ.उदयनारायण तिवारी ने स्वन विज्ञान की कौनसी परिभाषा दी है ?
4) स्वन विज्ञान की तीन शाखाओं का संक्षेप में परिचय दीजिए।
5) स्वनविज्ञान के अध्ययन से कौन से लाभ होते हैं ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2.3.2 वाग् अवयव और उनके कार्य

स्वन उच्चारण में कंपन का अतिशय महत्त्व है। जैसे घण्टे पर चोट लगते ही कंपन और ध्वनि उत्पन्न होती हैं, वैसे ही मनुष्य स्वरतंत्रियों को कंपित कर वाग्अवयवों से स्वन का निर्माण करता है। हमारे विभिन्न उच्चारण अवयव तथा श्वास-उच्छ्वास की क्रियाओं से वायु संचरणशील होकर ध्वनि तरंगे उत्पन्न करती है, जो कान द्वारा ग्राह्य होती है।

शरीर के जिन अवयवों से स्वन का उत्पादन होता है, उन्हें उच्चारण अवयव, ध्वनियंत्र, स्वनयंत्र, वाग्यंत्र, कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे ऑर्गेन्स ऑफ स्पीच (Organs of Speech) कहते है।

भाषा स्वन का मूल आधार वायु है। उच्छ्वास के रूप में फेंफडों से बाहर निकलने वाली हवा भाषा स्वन उत्पन्न करती है। शरीर के जिन अंगो में वायु सक्रिय हो स्वनों का निर्माण करती हैं, उन अंगों का समावेश स्वनयंत्र के अंतर्गत किया जाता है।

क. स्वनयंत्र के अवयव

स्वन उच्चारण के प्रमुख अवयव इस प्रकार बताये जा सकते हैं -

1) फेंफडे (Lungs)
2) भोजननली (Gullet, Food Pipe)
3) श्वासनली (Wind Pipe)
4) स्वरयंत्र (Larynx)
5) स्वरतंत्री (Vocal Chords)
6) स्वरयंत्रमुख (काकल) (Glottis)
7) स्वरयंत्रावरण (अभिकाकल) (Epiglottis)
8) कण्ठपीटक (Adam's Apple)
9) कण्ठमार्ग (गलबील) (Pharynx)
10) कण्ठ (गटर) (Gutter)
11) अलिजिह्वा (कौवा) (Uvula)
12) नासिका विवर (Nazal Cavity)
13) मुखविवर (Mouth Cavity) कोमलतालु, कठोरतालु, मूर्द्धा, वर्त्स, दाँत
14) जीभ (Tongue) जिह्वानोंक, जिह्वाग्र, जिह्वामध्य, जिह्वापश्च, जिह्वामूल
15) ओठ

इन अवयवों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है...

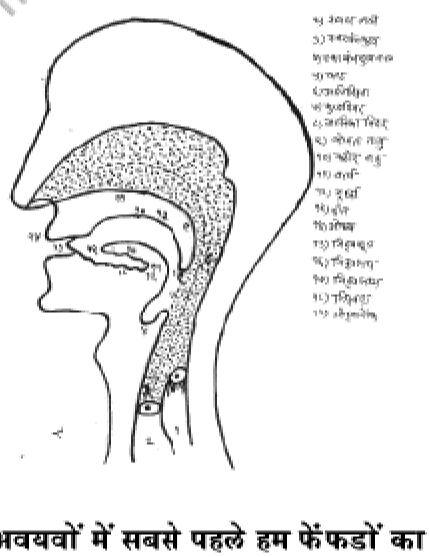

1) फेंफडें (Lungs) - मित्रों, वाग्अवयवों में सबसे पहले हम फेंफडों का परिचय लेंगे। कारण स्वन उत्पादन का मूल स्थान फेंफडे हैं। स्वन उत्पादन के लिए आवश्यक वायु उच्छ्वास के रूप में फेंफडे से बाहर आती है, जो स्वन रूप में परिवर्तित होती है। मुनष्य आजीवन सोते-जागते श्वास लेता है, उच्छ्वास छोड़ता है। श्वास से रक्तशोधन होता है और उच्छ्वास से दूषित हवा बाहर निकलती है। प्राणवायु शरीर ग्रहण करता है, कार्बन वायु छोड़ता है। बाहर छोड़ने वाली हवा का

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अर्थात श्वसनक्रिया का उपजात (by Product) भाषा स्वन निर्माण है। इसलिए फेंफडा कोई प्रत्यक्ष काम करने वाला उच्चारण अवयव नहीं है, अपितु स्वन उत्पादन करने वाली हवा का उद्गम स्थान है।

2) श्वास नली (Wind Pipe) - फेंफडों सें निर्गत हवा और आगत हवा श्वासनली के द्वारा जाती आती है। फेंफडों से कण्ठ तक की यह एक लम्बी नली है। जो कोई स्वतंत्र स्वन उत्पन्न नहीं करती। यह केवल स्वन उत्पन्न करने वाली हवा को स्वरयंत्र में भेजती है। यदि कोई छोटी वस्तु या पानी की बूँद इसकी ओर चली जाती है तो छींक के माध्यम से श्वासनली पुन: बाहर फेंक देती है।

3) भोजन नली (Gullet,food Pipe) - श्वासनलिका के पीछे भोजन नलिका है। श्वसन नलिका और भोजन नलिका को अलग अलग करने के लिए एक मजबूत झिल्ली की दिवार होती है। गले में श्वास नलिका आगे की ओर है, भोजन नलिका पीछे की ओर है। भोजन नलिका आमाशय तक जाती है। पेट भर जाने के उपरान्त आमाशय की हवा इस रास्ते बाहर निकलती है जिसे डकार कहते हैं। खाँसी,हिचकी, खराश जैसी ध्वनियाँ श्वास और भोजन नलिका का संयुक्त परिणाम है। भोजन निगलते समय नीचे झुककर श्वासनली बंद हो जाती है। (कृपया, कुछ न खाते हुए निगलने की क्रिया करें जिससे भोजन नली के खुलने-बंद होने को जान पाएँगे)

4) स्वरयंत्र (Larynx) - अभिकाकल के कुछ नीचे और श्वास नली के ऊपर स्वरयंत्र है। फेंफडे से निकली हुई हवा स्वरयंत्र से होकर ही बाहर जाती है। स्वननिर्माण में इसका प्रमुख योगदान है। इसे कण्ठपीटक भी कहते है। कारण इसका आकार अण्डाकार, छोटी डिबियानुमा होता है। दुर्बल लोगों में गले में यह उभरा हुआ दिखायी देता है। बोलचाल में उसे टेंटुआ कहते है। प्रत्येक ध्वनि का निर्माण यहीं से होता है। इसमें दो महीन झिल्लियाँ होती है, जिन्हें स्वरतंत्रियाँ कहते हैं। यह एक ईश्वरी वरदान है जो दुनिया की किसी भी तरह की ध्वनि का निर्माण कर सकती है। जैसे मिमिक्री में कोई कलाकार तरह-तरह की आवाजे-पशु-पक्षी, मनुष्य, मशीन, की निकालकर श्रोताओं का मनोरंजन करता है। यह करने के लिए इसी का अभ्यास करता है, स्वर साधना में इसी पर नियंत्रण करना होता है जिसे सूर साधना कहते हैं।

5) स्वरतंत्री (Vocal Chords) - स्वरतंत्र मे पतली झिल्ली के बनें दो लचिले परदें होते हैं जिन्हें कपाट भी कहते हैं। स्वरतंत्री को स्वर रज्जू भी कहते हैं। स्वन उत्पादन में इसकी विविध स्थितियाँ बनती हैं। जब स्वरतंत्री सिमट जाती है और वायु अंदर से धका देकर बाहर निकलती है तब होनेवाले स्वन 'सघोष' इसके विपरित जब वायु को बाहर आने में कोई बाधा नहीं पडती तब उत्पन्न होने वाले स्वन 'अघोष' कहलाते हैं। कुछ लोग स्वर रज्जू को स्वनओष्ठ भी कहते है। कारण इनका आकार ओठों की तरह होता हैं।

स्वरतंत्रियाँ श्वासनलिका के अंत में कण्ठ में आगे से पीछे को दो महीन झिल्लियों से निर्मित लचिला जोड़ा है।

रूक-रूक कर बोलने वाले, हकलाने वाले इन तंत्रियों को उचित रीति से खोलने और बंद करने में असमर्थ रहते हैं।

स्वरतंत्रियों की अवस्थाएँ स्वरतंत्रियाँ, स्वन उत्पादन करते समय सिमटती हैं , खुलती है, झुकती हैं, बंद करती है - जैसी लगभग एक दर्जन अवस्थाएँ धारण करती हैं। इनमें से प्रमुख चार है- जो इस प्रकार है।

i) पहली अवस्था (अघोष उच्चारण)

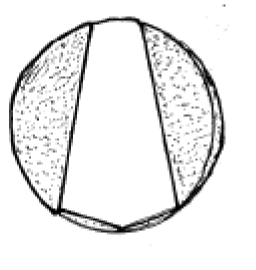

पहली अवस्था में स्वरतंत्रियाँ शिथिल रहती है। दोनों में अधिक दूरी हो जाती है। श्वास-उच्छ्वास की क्रिया अबाध रूप से चलती रहती है। इस अवस्था में अघोष स्वन का निर्माण होता हैं। प्रत्येक वर्ग के पहला और दूसरा वर्ण अघोष है (क,ख/च,छ/ट,ठ/त,थ/प,फ)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

ii) दूसरी अवस्था(घोष उच्चारण)

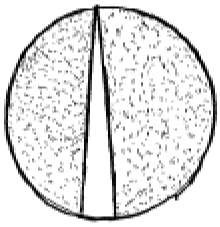

इस अवस्था में स्वरतंत्रियाँ एक दूसरे के निकट आकर सट जाती है और निश्वास को धक्का देकर बाहर निकलना पड़ता है। ऐसे में स्वर यंत्र मुख बहुत सँकरा हो जाता है। हिन्दी के सभी स्वर और सभी वर्ग के तीसरे, चौथे, पंचम वर्ण घोष है । जैसे ग,घ,ङ/ज,झ,ञ/ड,ढ,ण/द,ध,न/ब,भ,म/स्वरतंत्रियों के कंपन को कानों में ऊँगली डालकर या टेटूँआ पर ऊँगली रखकर अनुभव किया जा सकता है ।

iii) तीसरी अवस्था (क्लीक् ध्वनियाँ)

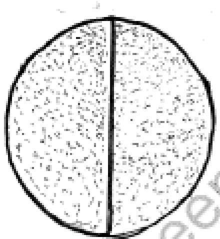

इस अवस्था में स्वरतंत्रियाँ आपस में जुटकर, तनकर खड़ी हो जाती है । श्वास निश्वास में क्षण भर के लिए बाधा उत्पन्न हो जाती है । इस अवस्था में भीतर हवा लेते समय की ध्वनियाँ अर्थात् क्लीक् ध्वनियाँ निर्माण होती है ।

संसार में कुछ बोलियों में श्वास को भीतर लेते समय स्वनों का निर्माण किया जाता है। जिन्हें क्लीक् ध्वनियाँ कहते हैं। क्लीक् के लिए कोई वर्णमाला उपलब्ध नहीं है। जब कि इसका प्रयोग सर्वत्र होता है । घृणा,ग्लानि,विस्मय भाव व्यक्त करने के लिए इनकी सहायता ली जाती है । राजस्थानी और मराठी में क्लीक् ध्वनियाँ मिलती हैं। हिन्दी में क्लीक् ध्वनियाँ नहीं है। चाय की चुस्की, खाते समय की आवाज और चुंबन की सित्कार क्लीक् ध्वनियाँ है। मारवाड़ी का हबोड़ना क्लीक ही है। मराठी में दु:ख प्रदर्शित करने के लिए - च्,च्,च् प्रयुक्त होने वाली ध्वनि क्लीक् है।

iv) चौथी अवस्था (फुसफुस स्वन)

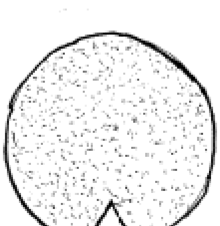

स्वरतंत्रियों के दोनों परदे मिल जाते है। परंतु नीचे की ओर का लगभग एक चौथाई भाग खुला रहता है, इस अवस्था में फुसफुसाहट की ध्वनियाँ उत्पन्न होती है । कान के पास मुँह ले जाकर की जाने वाली कानाफुसी इसका उदाहरण है । अंग्रेजी में इस व्हिस्पर्ड साऊंड (Whsipered Sound) कहते है। हिन्दी में इन्हें जाप,जपित, उपांशु भी कहते हैं।

स्वरतंत्रियों के कारण स्वरात्मक स्वनों का उच्चारण संभव होता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

6) स्वरयंत्रमुख (काकल) (Glottis)-

स्वरतंत्रियों के बीच के खुले भाग को स्वर यंत्र मुख या काकल कहते हैं। ''संगीत दर्पण'' में इसे शरीर की वीणा कहा है। काकल गले का भीतरी हिस्सा है जिसके आगे मुख की सीमा आरंभ होती है। इसी से होकर वायु अंदर-बाहर आती-जाती हैं। हिन्दी का 'ह' स्वन काकल्य है।

7) स्वरयंत्रावरण (अभिकाकल) (Epiglottis)- स्वरयंत्रमुखावरण

श्वास नली के द्वारा पर आवरण के रूप में जीभ के आकार का छोटा सा कोमल परदा अभिकाकल है। इसका मुख्य कार्य भोजन को श्वासनली में न जाने देना है। यदि असावधानी से कभी कोई कण श्वासनली की ओर बढ़ जाता हैं तो भीतर से वायु प्रवाह उसे बाहर फेंक देता हैं। मौखिक संगीत में सूर साधने में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती हैं। आ के उच्चारण में जीभ के साथ वह जितना पीछे हटता है इ के उच्चारण में उतना ही आगे बढ़ता है।

8) कण्ठपीटक (Adom's Apple)-

गले में उभरा हुआ भाग कण्ठपीटक कहलाता है। इस स्थान पर श्वासनली और भोजननली है। विविध प्रकार की आवाजें बनाने में यह अंग सहायता करता है। इस हिस्से को उपर से दबाने पर श्वासनली पर दबाव पड़कर श्वास का मार्ग अवरूद्ध हो जाता है। यहीं से साँस फूलने की स्थिति निर्माण होती है।

9) कण्ठमार्ग (गलबील, ग्रसनिका) (Pharynx)-

नासिका विवर और स्वरयंत्रावरण के बीच जिह्वामूल के खाली स्थान को गलबील कहते है। यह एक तरफ नासिका विवर से मिलता है तो दूसरी तरफ मुख विवर से। ध्वनि उच्चारण में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। ग्रसनीकृत ध्वनियों का निर्माण यहाँ से होता है। बोलचाल में इसे नाक में बोलना कहते है।

10) कण्ठ (Gutter)-

कोमल तालु के नीचे, काकल के ऊपर के अवयव को कण्ठ कहते हैं। यहाँ से उत्पन्न होने वाली ध्वनियाँ-कण्ठ्य ध्वनियाँ कहलाती है। (क वर्ग-कण्ठ्य है)। अंगूठे के द्वारा इसकी कोमलता अनुभव की जा सकती है।

जागते समय कण्ठ्य पर नियंत्रण रहता है परंतु नींद में नियंत्रण नहीं रहता। इस कारण खर्राटे की आवाज सुनायी देती है, जिसे कुण्ठित ध्वनि भी कहते है।

11) अलिजिह्वा (Uvula)-

इसे अलिजिह्वा, घण्टी, शूण्डीका या कौवा भी कहते हैं। यह कोमल तालु का अंतिम भाग है। जो गले में पूंछ के समान लटकता रहता है। यहीं से नासिका विवर और मुखविवर के रास्ते अलग फूटते हैं। स्वन उत्पादन में इसकी तीन अवस्थाएँ होती है।

पहली अवस्था-अलिजिह्वा पहली अवस्था में तनकर खड़ा हो जाता है और नाक के मार्ग को बंद कर देता है। परिणामत: सारी साँस मुख विवर से बाहर निकलती है। इस स्थिति में निर्नुनासिक ध्वनियाँ उत्पन्न होती है।

दूसरी अवस्था - इस अवस्था में कौवा ढीला, शिथिल, गिरा हुआ रहता है। सारी हवा नासिका विवर से बाहर निकलती है। सामान्यत: श्वास लेने की यह अवस्था होती है। इस अवस्था में हूं, हैं, ध्वनियों का उच्चारण होता है। साथ ही अनुनासिक स्वन उत्पन्न होते हैं। ईंट,ऊँट, आँख आदि।

तीसरी अवस्था-कौवा इसमें मध्यम अवस्था में रहता है। इससे कुछ वायु मुख विवर में और कुछ नासिका विवर से निकलती है। इसमें सानुनासिक उच्चारण होता है।

कौवे की आवश्यकता अधिकांश भाषाओं के उच्चारण में होती है। फ्रेंच का 'र' तो अरबी के नुक्ता (क,ख,ग,) अलिजिह्वीय उच्चारण है।

12) नासिका विवर (Nazalcavity)-

मुख और नाक के बीच का रिक्त स्थान नासिका विवर कहलाता है। श्वास और निश्वास इसी राह से आते-जाते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

यहाँ से उत्पन्न होने वाले स्वन नासिक्य कहलाते हैं। प्रत्येक वर्ग का पाँचवाँ वर्ण-ङ,ञ,ण,न,म, यहाँ से उच्चारित होने वाले स्वन है।

13) मुख विवर (Mouth Cavity)-

कौवा के एक ओर नासिका विवर तो दूसरी ओर मुख विवर है। मुख विवर स्वन उत्पादन का महत्त्वपूर्ण अंग है। मुख विवर में कोमल तालु, मूर्धा, कठोर तालु, वर्त्स,दाँत, जीभ, ओंठ आते हैं। इन स्थानों पर जीभ द्वारा हवा को रोककर स्वन का निर्माण किया जाता है।

तालु-मुख विवर के ऊपर की ओर तालु है। जो कण्ठ से प्रारंभ होकर दाँतों तक फैला है। इसका आकार महिराब की तरह है। तालु के चार भाग है- जो इस प्रकार हैं -

कोमल तालु Saft Palote, Velum-तालु का अंतिम भाग जो कोमल माँस से व्याप्त है, कोमल तालु कहलाता है जो वाग् अवयव का सक्रिय अंग है। कोमल तालु, मुख विवर और नासिका विवर के बीच किवाड का काम करता है। मुख विवर से हवा को भीतर लेते समय कोमल तालु ऊपर उठता है और नासिका विवर से हवा को निकालते समय नीचे झुक जाता है। कुंठित ध्वनि, कोमल तालु के फड़फड़ाने से निर्माण होती है, जिसे खर्राटे कहते है। जीह्वा पश्च इससे मिल कर कण्ठय् स्वनों का निर्माण करता है।

कठोरतालु-(Hard Palate)कोमल तालु के खत्म होने से वर्त्स तक के फैले हुए मेहराबनुमा आकार के भाग को कठोर तालु कहते है। यह उच्चारण स्थान। इस स्थान को जीभ स्पर्श कर हवा को रोक कर तालव्य स्वनों का निर्माण करती है। हिन्दी के तालव्य स्वन-च,छ,ज,झ,ञ,है।

मूर्धा -ऊपर की दंतपंक्ति के निकट कठोर तालु के अंत तक विद्यमान खुरदरे भाग को मूर्धा कहते हैं। अंग्रेजी में इसे Cerevrum कहते है। हिन्दी के ट वर्ग की ध्वनियाँ -ट,ठ,ड,ढ,ण तथा उष्म मूर्धन्य स्वन ष,ऋ निर्माण होती है।

वर्त्स-वर्त्स को मसूढे भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे eeth ridg कहते है। ऊपर के दाँतों के मूल से कठोर तालु तक यह फैला है। जीभ इस स्थानकों स्पर्श कर र,ल, ल्ह, न्ह, स्वन निर्माण करती हैं।

14) जीभ-जिह्वा (Tongue)-

उच्चारण अवयवों में जीभ सब से महत्त्वपूर्ण है। जीभ के बिना स्वन का उच्चारण करना असंभव है। जीभ मुखविवर के मध्य नीचले भाग में होती हैं। जीभ अंदर जाती है, बाहर निकलती है, ऊपर उठती है, नीचे झुकती है, उलटती है, कांपती है, इस कारण हम तरह-तरह की ध्वनियाँ उच्चारण करने में सक्षम होते हैं। जीभ अशक्त होने के कारण बच्चे देरी से बोलते हैं। भाषा और भाषाविज्ञान के लिए प्रयुक्त होनेवाले नाम जीभ से ही संबंधित है। जैसे संस्कृत वाणी, अरबी में जबान, लॅटीन Lingue अंग्रेजी में टंग (Tongue) आदि नाम इस बात कें द्योतक हैं। डॉ.सुधाकर कलावडे के मतानुसार जीभ मुखरूपी घर की मालकीन है। जो सुकुमार और लचकदार है। वह मुख से बाहर दो-पाँच सेंटीमीटर और-पीछे साढ़े तीन-सेंटीमीटर हट सकती हैं। जीभ ही अधिकतर व्यंजनो का निर्माण करने में सहायक होती है।

जीभ के भाग-जीभ के निम्न भाग है-

1) जिह्वानोंक (Tip of the tongue)-

जिह्वा के अग्र नुकीले बिंदु को जिह्वा नोक कहते है। इसे अग्र बिंदु भी कहा जाता है। स्वन उत्पादन में जिह्वा नोंक का सर्वाधिक सहयोग होता है। जिह्वा के इस भाग द्वारा सामने वाले दाँतों का स्पर्श कर दंत्य स्वन (त,थ,द,ध,न) का उच्चारण किया जाता हैं। मूर्धा को स्पर्श कर मूर्धन्य (ट,ठ,ड,ढ,ण) उच्चारित होते है। वर्त्स स्वन न,र,ल,स भी जिह्वा नोंक स्पर्श से उत्पन्न होते हैं।

२) जिह्वाग्र (Front of the tongue)-

जिह्वा नोक के पास वाले जीभ के आगे के भाग को जिह्वाग्र कहते हैं। आराम के समय कठोर तालु के नीचे पड़ा रहता है। इसकी सहायता से तालव्य स्वनों का च,छ,ज,झ,ज,का निर्माण होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3) जिह्वा मध्य (Middle of the tongue)-

जीभ के मध्य के तीसरे भाग को जिह्वा मध्य कहते हैं। कुछ लोग इसे जिह्वाफलक भी कहते हैं।

4) जिह्वापश्च (Back of the tongue)-

जिहवा के पिछले चौथे हिस्से को जिह्वा पश्च कहा जाता है। जो कोमल तालु के नीचे पड़ता है। यह हिस्सा कोमल तालु की ओर ऊपर उठ कर पश्च स्वरों का निर्माण करता है। आ,ओ,और, व्यंजन कण्ठय स्वन, क,ख,ग,घ,उत्पन्न किये जाते हैं।

5) जिह्वामूल (Root of the tongue)-

जीभ का अंतीम हिस्सा जिह्वामूल है। कौवे के पीछे का भाग जिह्वामूल है। यह ग्रसनी की दिवाल के सामने होता हैं। जिह्वामूलीय स्वन विसर्ग और क़,ख,ग,घ, निर्माण होते हैं।

6) ओठ (Lips)-

उच्चारण अवयव का अंतीम अवयव ओंठ है। ये बाहरी वाक्अवयव है। ओठ वस्तुतः मुख विवर के आवरण और आच्छादन है। नीचे का ओठ अधर कहलाता है। ओंठ और अधर मिल कर हवा को रोकते हैं और ओष्ठ्य स्वन, प,फ,भ,म. का निर्माण होता है। कुछ लोग इन्हें द्वयोष्ठ्य भी कहते हैं।

जब नीचे का ओठ अर्थात् अधर ऊपर की दंत पंक्तियों को छूता है तब दंतोष्ठ्य व फस्वनों का निर्माण होता है। स्वर निर्माण के समय ओठों का आकार परिवर्तित होता है। वर्तुलाकार, लंब वर्तुलाकार, अर्ध वर्तुलाकार और उदासिन, ऐसे स्वर के प्रकार बनते हैं। इसका विवेचन हम स्वन वर्गीकरण के समय करेंगे।

स्वय अध्ययन के प्रश्न -

ख. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में लिखिए।

1) स्वन का उत्पादन किसका बाय प्रॉडक्ट है ?
2) घोष - अघोष, क्लीक्, फुसफुस स्वन किस के कारण निर्माण होते हैं?
3) स्वन निर्माण में जीभ का महत्त्व पर विवेचन कीजिए।
4) द्वयोष्ट्य और दंतोष्ट्य स्वनों के उदाहरण बताईए।
5) हिन्दी स्वनों के उदाहरण लिखिए।

2.3.3 स्वन की अवधारणा

भाषा की लघुतम और अनिवार्य इकाई स्वन है। भाषा विज्ञान में स्वन का अर्थ उन ध्वनियों से है जिनका प्रयोग मनुष्य वार्तालाप में करता है और जिन्हें लिखित रूप में प्रकट करने के लिए लिपि चिन्हों का प्रयोग करता है। डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना के मत से मानव जिसके द्वारा बोलता है अथवा जो वायु मुख विवर से निकलकर वागेंद्रियों के द्वारा कुछ वाणी प्रकट करती है उसे ध्वनि कहते हैं।

मनुष्य के स्वरयंत्र से निकली ध्वनि मुख के प्रयत्नों के अनुसार विविध रूपों में ही जाती है और मनुष्य के श्रोतेंद्रियों द्वारा ग्रहण होती है। ट्रान्समीटर पर ब्राडकास्ट हुई आवाज तब तक गृहित नहीं होती जब तक उसका ग्रहण रेडियों न करें।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ध्वनि की परिभाषा इस प्रकार करते है, ''भाषाध्वनि वह ध्वनि है जिसे मनुष्य अपने मुँह के नियत स्थान से निश्चित प्रयत्न द्वारा किसी ध्येय को स्पष्ट करने के लिए उच्चरित करे और श्रोता उसी अर्थ में ग्रहण करें।''

बाबू श्यामसुन्दरदास के अनुसार -''भाषा ध्वनि संकेतों का समूह मात्र है। इसी से ध्वनि में अर्थ, शब्द और भाषा सभी का अन्तर्भाव हो जाता है। ध्वनि का यह अर्थ बड़ा व्यापक है।''

सामन्यतया भाषा विज्ञान में ध्वनि अथवा स्वन का प्रयोग तीन अर्थो में किया जाता है

1) भाषा स्वन (Speech Sound)
2) स्वनिम या ध्वनिग्राम (Phonem)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

3) स्वन सामान्य (वर्ण) (Alfabate)

1) **भाषास्वन (Speech Sound)-**

भाषा में प्रयुक्त सभी प्रकार के स्वनों को भाषा स्वन कहते हैं। सुनीति कुमार चटर्जी के मत से भाषा स्वन वह है जिसमें संवहन क्षमता, श्रोतगुण और वार्गेंद्रियों से निसृत होते हैं। (Speech sound is sound of definite acoustec quality produced by the organs of speech A given speech sound is in capable of Variations)

ध्वनि का व्यापक अर्थ है पशु-पक्षी की आवाजें, वस्तुओं पर आघात-प्रहार से निर्मित आवाज, पानी में कंकड फेंकने से उत्पन्न आवाज, चुटकी, ताली, सीटी ये सभी ध्वनियाँ है। भाषाविज्ञान में मनुष्य के मुख से निकलनेवाली व्यक्त वाक्(आवाज) जो अर्थवान हो उसका ही विचार किया जाता है। इसमें लिपिबद्ध भाषा का विचार नहीं होता केवल उच्चरित का ही होता है।

भाषा स्वन का एक और लक्षण है कि उनका उच्चारण अन्य भाषी ठीक से नहीं कर पाता।

मनुष्य के कण्ठ से उत्पन्न, अर्थवान, श्रोतगुण संपन्न ध्वनि ही भाषास्वन है।

2) **स्वनिम या ध्वनिग्राम (Phonem)-**

स्वनिम किसी भाषा विशेष की वह लघुतम इकाई है जो अर्थभेद घटित करती है।

स्वनिम को समझने के लिए हमें स्वनरूप पर विचार करना पड़ेगा। मनुष्य जब भाषा का उच्चारण करता है तब प्रत्येक बार बाद वाले स्वन पहले वाले से स्थान और प्रयत्न की दृष्टि से कुछ अलग हो जाते हैं। तात्पर्य यह कि एक ही स्वन का वैसा का वैसा उच्चारण दूसरी बार नहीं किया जा सकता। यह उच्चारणगत अन्तर इतना अल्प होता है कि इसे पकड़ने के लिए यंत्र की सहायता लेनी पड़ती है। अंतर का कारण स्वन का परिवेश भिन्न होता है। एक उदाहरण से बात स्पष्ट करेंगे बालू जल्दी से बाल्टी खरीदने बाजार गया जो कल ही खो गयी थी।

इस वाक्य में ल स्वन की आवृत्ति हुई है। 'ल' वर्त्स पार्श्विक स्वन है। परंतु यहाँ उसका उच्चारण रूप बदलते दिखायी देता है। जैसे

बालू-का 'ल' - वर्त्स पार्श्विक (मूल रूप में उच्चरित)
जल्दी-का 'ल' - समीपवर्ती द स्वन के प्रभाव से कुछ दंत्य हो गया है।
बाल्टी- का 'ल' -ट ध्वनि के कारण तालव्य हो गया है।
कल ही- का 'ल'-ह के प्रभाव से महाप्राणवत् हो गया है। जबकि उपरोक्त ल अल्पप्राण है।

उच्चारणगत इस अंतर को भाषा विज्ञान में संस्वन (Allophone) कहते है। इसके लिए वर्णमाला में लिपिचिन्ह नहीं होता। जबकि स्वनिम भाषा की लघुतम सार्थक इकाई है और उसीके लिए लिपिचिह्न निर्माण होता है। जैसे कल-शब्द का पहला स्वन बदल देंगे वहाँ लिखेंगे च तो शब्द बनेगा चल, अर्थ बदल जाएगा। इसलिए क और च अलग-अलग स्वनिम है। (इस संदर्भ में विस्तृत विवेचन आगे करेंगे)

३) **स्वनसामान्य (वर्ण) (Alfabate)-**

स्वनसामान्य का संबंध वर्ण से है जो स्वन का संकुचित परंतु व्यावहारिक अर्थ है। स्वनसामान्य में प्राय: दो प्रकार के स्वन होते हैं - स्वर और व्यंजन जिसे हम सब जानते है।

इस तरह स्वन के तहत भाषास्वन, स्वनिम और स्वनसामान्य ये तीन रूप भाषा विज्ञान में होते हैं। जिसका अध्ययन स्वनविज्ञान में किया जाता है।

ध्यान में रखने योग्य बातें -

1) **ध्वनि के लिए भाषाविज्ञान में स्वन शब्द का प्रयोग होता है।**
2) **स्वन से तात्पर्य-मनुष्य के उच्चारण अवयव द्वारा 'उत्पन्न अर्थवान',श्रोतगुण संपन्न ध्वनि है।**
3) **स्वन के तीन रूप होते हैं - i) भाषास्वन ii) स्वनिम (संस्वन) तथा iii)स्वनसामान्य (वर्ण)**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2.3.4 स्वनों का वर्गीकरण

मनुष्य के कण्ठ और मुख विवर से विभिन्न स्वनों का उच्चारण होता है। उच्चरित स्वनों की विविधता का बोध गायक के आरोह-अवरोह, कोमल-कठोर के उच्चारण से होता हैं। अन्यत्र खुशी, हँसी, विनोद, क्रोध, घृणा आदि भावों की अभिव्यक्ति के समय हमारे उच्चारण बदल जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का विशिष्ट व्यक्तित्त्व होने के साथ ही विशिष्ट उच्चारण भी होता है। इसी से वह पहचाना जाता है। भाषा सीखने के लिए उसका सही उच्चारण कैसे, कहाँ से, किसलिए किया जाए इसे ध्यान में रखकर स्वन वर्गीकरण प्रस्तुत हुआ है।

पाणिनि ने शिक्षा में स्वनवर्गीकरण के पाँच आधार बताएँ हैं - स्वर,काल,स्थान, प्रयत्न और अनुतान।

आधुनिक भाषाविज्ञानी स्थान, करण, प्रयत्न और श्रवणीयता को स्वनवर्गीकरण का आधार मानते हैं। इन्हीं आधारों की चर्चा अब हम करेंगे।

1) स्थान (Place of articulation)-

नि:श्वास को अर्थात फेंफड़ो से बाहर निकलने वाली वायु को जिस स्थान पर बाधित किया जाता है, रोका जाता है अथवा अवरूद्ध किया जाता है उसे स्वननिर्माण का स्थान कहा जाता है। स्वरयंत्र से लेकर ओंठों तक इसके अनेक स्थान है।

स्वर के अग्र,पश्च, मध्य ये भेद स्थान पर आधारित है।

जीभ के अग्रभाग द्वारा निर्माण होनेवाले स्वर अग्र स्वर कहलाते है - वे हैं-इ,ई,ए,ऐं।

जिह्वा के पश्चभाग द्वारा निर्माण होनेवाले पश्च स्वर है- आ,आँ,उ,ऊ,ओ,औ।

जिह्वा के मध्य भाग द्वारा निर्मित मध्य स्वर है -अ।

स्वन उत्पादन के निम्न स्थान है -

स्वरयंत्र, उपाली जिह्वा,अलिजिह्वा, मूर्धा, कण्ठ,तालु वर्त्स, दाँत,ओंठ-ये ही स्वननिर्माण के स्थान है।

काकल्य -

मुख विवर खुला रहता है। स्वरयंत्र से निकलनेवाली हवा कण्ठद्वार से घर्षण कर बाहर निकल जाती है। इसे स्वरयंत्रमुखी अथवा काकल्य ध्वनि कहते है। 'ह' तथा विसर्ग स्वनों का उच्चारण यहाँ से होता है।

जिह्वामूलीय (उपालीजिह्वा)

जिह्वामूल और कण्ठ के पिछले हिस्से के स्थान पर उच्चरित स्वन जिह्वामूलीय कहलाते हैं। हिन्दी में प्रयुक्त अरबी स्वन क़,ख़,ग़, (नुक्तावाले) इस श्रेणी के है।

कण्ठ्य -

जिह्वा का पश्च भाग कोमल तालू को स्पर्श कर हवा को रोकता है तब कण्ठ्य स्वन निर्माण होता है। आधुनिक भाषाविज्ञानी इसे कोमल तालव्य कहना अधिक उचित मानते हैं। यहाँ से उच्चरित स्वनों के तीन रूप हैं-कण्ठ, जिह्वापश्च के सहयोग से क,ख,ग,कण्ठ और नासिका के सहयोग से ङ, केवल कण्ठ से अ,आ,उच्चरित होते हैं।

तालव्य-

जिन स्वनों के निर्माण में जिह्वाग्र तालु को स्पर्श कर हवा को अवरूद्ध करता है तब तालव्य स्वन निर्माण होते हैं। च,छ,ज,झ,ञ

य,

इ, (स्वर) ये सब तालव्य है।

मूर्धन्य-

जिन स्वनों के उच्चारण में जिह्वानोंक उलटकर मूर्धा का स्पर्श कर हवा को रोकती है तब निर्माण होनेवाले स्वन मूर्धन्य कहलाते हैं। ऋ,ष,ट,ठ,ड,ढ,ण(नुक्ता वाले ड़,ढ़,भी इसी में आते हैं।)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वर्त्स्य-

जब जिह्वा नोंक दाँत के ऊपरी हिस्से मसूढे को स्पर्श कर हवा को अवरूद्ध कर देती है, तब निर्माण होनेवाले स्वन वर्त्स्य कहलाते है। ल,र,स,वर्त्स्य स्वर है।

दन्त्य-

जब जिह्वानोंक ऊपर की दन्तयपंक्तियों को स्पर्श कर हवा को अवरूद्ध करती है, तब निर्माण होनेवाले स्वन दन्तय कहलाते हैं। त,थ,द,ध,न,लृ दंत्य स्वन है।

ओष्ठ्य-

इन स्वरों का उच्चारण ओठों के स्थान पर हवा को रोकर किया जाता है। ओष्ठ्य स्वन है- प,फ,ब,भ,म,। ओष्ठ्य स्वनों के दो भेद हैं -

दंत्योष्ठ्य और द्वयोष्ठ्य- दंत्योष्ठ्यस्वन वे हैं - जब अधर ऊपर की दंतपंक्तियों को स्पर्श कर हवा को रोकता है। 'व' इस प्रकार का स्वन है। कुछ लोग फ को भी इसमें शामिल करते हैं।

द्वयोष्ट्य पूर्व में लिए ओष्ठ्य के उदाहरण द्वयोष्ट्य स्वन है। कारण यहाँ अधर और उत्तर मिलकर हवा को रोकते हैं।

2) प्रयत्न-

स्वनों के उच्चारण में कण्ठ से लेकर ओठों तक मुखविवर के भीतर और कण्ठ से बाहर स्वरतंत्रियों के प्रयत्न कियेजाते हैं, जिन्हें क्रमश: भीतरी और बाहरी ऐसे दो प्रयत्न कहते हैं।

''लघुसिद्धान्त कौमुदी''में कहा गया है- ''यत्नों द्विद्या आभ्यान्तरो बाह्यश्च:''

भीतरी प्रयत्न

भीतरी प्रयत्न को आभ्यंतर प्रयत्न भी कहते हैं। जो इस प्रकार है-

अ) पूर्णत:अवरोधी -

नि:श्वास को पूर्णतया भाषण अवयव के स्थान पर रोका जाता है। इस स्थिति में जो स्वन उच्चरित होते हैं उन्हें पूर्ण अवरोधी कहते हैं। अंग्रेजी में ये Non Continuant कहते हैं - इसके दो प्रकार है स्पर्श-ईषात्सपृष्ट

स्पर्श को स्पृष्ट भी कहते हैं। नि:श्वास, ओंठ, दाँत,जीभ कोमल तालु,तालु को स्पर्श कर हवा को रोकती हैं तब उच्चरित होनेवाले स्वन स्पर्श कहलाते हैं। स्पर्श वर्णों की संख्या पच्चीस है। क,च,ट,त,प वर्ग के पाँच-पाँच वर्ण स्पर्श है। जो क्रमश: कण्ठ्य, तालव्य,मूर्धन्य, दन्त्य और ओष्ठ्य के स्थानों से उच्चरित होते हैं।

दूसरे है ईषत्सपृष्ट - अर्थात् हलकासा स्पर्श-स्थान और करण का हलकासा स्पर्श होता है। इस स्थिति में अर्धस्वर निर्माण होते हैं, जिन्हें अंतस्थ भी कहते हैं (य,र,ल,व)

ब) निर्अवरोधी -

इन स्वनों के उच्चारण में हवा अवरूद्ध नहीं होती।

१) विवृत- विवृत का अर्थ है खुला हुआ। स्वरों के उच्चारण के समय मुख विवर में कहीं भी अवरोध उत्पन्न नहीं होता। जिह्वा स्वर रेखा की सीमा तक ऊपर उठती है। इस अवस्था में स्वरों का उच्चारण होता है।

2) ईषत्विवृत- इसे आधा खुला कहेंगे। इस अवस्था में ऊष्म व्यंजन- स,श,ष का निर्माण होता है।

संवृत- इसका विवेचन हम स्वर वर्गीकरण में करेंगे।

बाह्य प्रयत्न-

मुखविवर से बाहर के अर्थात्-स्वरतंत्रियों के होनेवाले प्रयत्न बाह्य प्रयत्न कहे जाते है। स्वन उत्पादन में बाह्य प्रयत्न के ग्यारह भेद है जिनका परिचय इसका प्रकार हैं -

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1) विवार- विवार का अर्थ है विवृत्त। अर्थात् खुला होना। स्वरतंत्रियाँ पूरी तरह से हट जाती है तब विवार प्रयत्न होता हैं। विवार मे अघोष ध्वनियाँ उत्पन्न होती है।

2) संवार-संवार का अर्थ है- संवृत्त अर्थ(त बंद। यह विवार के विपरित अवस्था है। संवार मेंं घोष ध्वनियाँ उत्पन्न होती है।

3) श्वास-स्वरतंत्रियों की दो अवस्थाएँ होती है- खुली (विवृत्त), बंद (संवृत्त)। खुली स्थिति में श्वास -नि:श्वास की क्रिया निरंतर बाधारहित रूप से चलती है। नि:श्वास का बाधारहित बाहर निकलना श्वास प्रयत्न के अंतर्गत आता है।

4) नाद-स्वरतंत्रियाँ मिलकर नि:श्वास में बाधा उत्पन्न करती हैं और नाद निर्माण होता है।

5) अघोष-श्वास प्रयत्न में घर्षण का अभाव अघोष कहलाता है। व्यंजनों में अघोष पाया जाता है। प्रत्येक वर्ग का पहला दूसरा वर्ण अघोष है। (उदाहरण हमने पूर्व में लिया है।)

6) घोष-स्वरतंत्रियों में होनेवाले घर्षण का दूसरा नाम घोष है। सभी स्वर घोष हैं वर्णमाला के तृतीय, चतुर्थ, पंचम वर्ण घोष है। (इनके उदाहरण पूर्व में हमने लिये हैं।)

7) अल्पप्राण-प्राण का अर्थ है - वायु और अल्प से तात्पर्य है थोड़ा। जिन स्वनों के उच्चारण में अल्पवायु का प्रयोग हो वे स्वन अल्पप्राण कहलाते हैं। प्रत्येक वर्ग के प्रथम, तृतीय और पंचम वर्ण अल्पप्राण है जैसे -

क,ग,ङ,
च,ज,ञ,
ट,ड,ण,
त,द,न,
प,ब,म,

8)महाप्राण- अल्पप्राण की तुलना में लगभग दुगुना वायु का प्रयोग इन स्वनों के निर्माण में होता है। (आप अल्पप्राण और महाप्राण स्वन का उच्चारण करें। ऐसा करते समय मुँह के आगे हथेली रखे और अनुभव करें कि हवा किन स्वनों के उच्चारण में अधिक बाहर निकलती हैं।) प्रत्येक वर्ग का द्वितीय और चतुर्थ वर्ण महाप्राण हैं।

ख,घ,
छ,झ,
ठ,ढ,
थ,ध,
फ,भ,

अंग्रेजी लिखते समय रोमन लिपि में '' को जोड़ा जाता है। कारण देवनागरी की तरह इसमें महाप्राण वर्णों के लिए चिन्ह नहीं है।

9) उदात्त- उदात्त का अर्थ है ऊपर उठा हुआ अर्थात आरोही स्वर।

10) अनुदात्त-अनुदात्त का अर्थ है नीचे गिरा हुआ अर्थात, अवरोही स्वर।

11) स्वरित- स्वरित का अर्थ है सम अर्थात् जो न आरोही हो और न अवरोही।

3) करण- वागेंद्रियों में करण उन इंद्रियों को कहा जाता हैं , जो गतिशील होती है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर जो इंद्रियाँ स्वन उत्पादन में सहायता करती है। उन्हें करण कहा जाता है। ये इंद्रियों चार हैं - अधर, जिह्वा, कोमलतालु, स्वरतंत्री

अ) अधर- नीचे का ओठ अधर कहलाता है, इसे अधरोष्ठ भी कहते हैं। ऊपर का ओठ स्थिर रहता है परंतु नीचे का कभी ऊपर के ओठों को स्पर्श करता है (द्वयोष्ट्य) तो कभी ऊपर की दंतपंक्तियों को,ऐसी स्थिति में (दंत्योष्ट्य) स्वनों का निर्माण होता है। इसलिए यह करण है।

ब) जिह्वा- जिह्वा सबसे अधिक गतिशील है, स्वन निर्माण के समय आगे-पीछे, ऊपर नीचे, उलटकर, टकराकर स्वनों को उत्पन्न करती हैं। (जिस की चर्चा हमने जिह्वा के भाग की जानकारी के समय की है।)

क) कोमलतालु- कोमलतालु स्थान है और करण भी। जब जिह्वापश्च का इससे स्पर्श होता हैं, तो कण्ठ्यस्वन (क

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वर्ग) उत्पन्न होते हैं। यहाँ पर कोमलतालु स्थान हैं। जब वह नीचे ऊपर जाकर अनुनासिक वर्ण के उच्चारण में सहायक बनता है इसलिए यह करण है।

ड) स्वरतंत्री- वागेंद्रिय में स्वरतंत्रियाँ भी करण है। कभी खुलकर, कभी बंद होकर, कभी कंपन के द्वारा स्वन निर्माण करने की क्षमता रखती है। इस तरह स्थान, प्रयत्न और करण से स्वन निर्माण होते है।

4) श्रवणीयता- श्रवणीयता के अनुसार भी कुछ विद्वानों ने स्वरवर्गीकरण प्रस्तुत किया है। श्रवणीयता से तात्पर्य है, ऐसे स्वन जो दूसरे स्वनों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट सुनाई दें। दूर से भी वह भली प्रकार सुन ले। (इस कारण हम किसी को पुकारते समय ओ,ए, आदि स्वर स्वनों का अंत में प्रयोग होनेवाले शब्दों की सहायता लेते है- जैसे भैय्याऽऽ, सुनीएऽऽ ओऽऽ, आदि)

श्रवणीयता के आधार पर स्वनों के तीन वर्ग बनाएँ-गये हैं जो इस प्रकार हैं स्वर व्यंजन और अंतस्थ।

अ) स्वर- स्वर ऐसी ध्वनियाँ है जिनका उच्चारण करते समय मुखविवर या तो बहुत कम या बहुत अधिक खुला रहता है। बाहर निकलनेवाली वायु मुखविवर में कहीं भी बाधित हुए बिना बाहर निकल जाती है। स्वरों के उच्चारण में जिह्वा आदि उच्चारण अवयव मुख विवर के किसी भी स्थान को स्पर्श नहीं करती।

ब) व्यंजन- व्यंजन वे ध्वनियाँ है, जिनके उच्चारण में स्वरतंत्री से बाहर निकलनेवाली वायु कहीं न कहीं मुख तथा नासिका के संधिस्थल या मुख विवर में कहीं बाधित होकर मुख या नासिका से निकलती है। जिह्वा तालु-आदि स्थानों को स्पर्श करते हैं। इसलिए व्यंजनों को सामान्यतया स्पर्श तथा स्फोट ध्वनियाँ भी कहा जाता है।

क) अंतस्थ- शब्दों में कभी-कभी किसी कम परिस्फुट स्वर के बाद तुलना मे अधिक परिस्फुट स्वर आ जाने से पहला स्वर अत्याधिक ह्रस्व उच्चरित होता है ऐसे स्वर को अंतस्थ स्वर कहते है। जिन्हें अर्धस्वर भी कहा जाता है।

अंतस्थ को अर्धस्वर भी कहते है। ये स्वर और व्यंजन के बीच के स्वन है। इन्हें अर्धस्वर इसलिए कहा जाता है कि इनके उच्चारण का आरंभ स्वर-स्थिति से होता है। तत्पश्चात् वे व्यंजन की स्थिति में चले जाते हैं। अर्धस्वर को संघर्ष विहीन सप्रवाह भी कहते है। अर्धस्वर य् और व् दो माने गये है। आजकल विद्वान र्, और ल् को भी अंतस्थ मानते हैं।

स्वर और व्यंजन में अन्तर

स्वन के दो प्रमुख भेद हैं- स्वर और व्यंजन। जिन स्वनों के उच्चारणों में नि:श्वास बिना किसी रूकावट के मुँह से बाहर निकलती है तब उन्हें स्वर-स्वन कहते है।

स्वर के उच्चारण में निश्वास अबाध रूप से बाहर निकलता है।

व्यंजन के उच्चारण में निश्वास अवरूद्ध होता है।

स्वर अधिक मुखर होते है, इसलिए स्पष्ट सुनाई देते हैं।

व्यंजनों मे ऐसी मुखरता नहीं है।

स्वर का निरन्तर उच्चारण किया जा सकता है, व्यंजनों में ऐसा करना संभव नहीं है। जैसे अ,आ का उच्चारण गायक कर लेता है पर क का उच्चारण सतत नहीं हो सकता।

स्वर-स्वन बिना किसी व्यंजन स्वन की सहायता से उच्चरित होते हैं।

व्यंजनों के उच्चारण में स्वर की सहायता लेनी पड़ती है।

स्वर-स्वन सघोष है, व्यंजन सघोष-अघोष है।

स्वरों के उच्चारण मे जीभ विभिन्न मात्रा में उपर उठती है। इसलिए स्वर रेखा जीभ के उपर उठने की सीमा होती है। व्यंजनों की ऐसी कोई रेखा नहीं है।

ऑसिलाग्राफ जैसे यंत्रों की सहायता से स्वर और व्यंजन की लहरों में अतंर दिखाई देता है।

स्वरों का वर्गीकरण

हिन्दी में स्वर दस है- अ,आ,इ,ई,उ,ऊ,ए,ऐ,ओ,औ। जबकि वैदिक और लौकिक संस्कृत में तेरह स्वर-स्वन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

मिलते हैं-वे इस प्रकार है- अ,आ,इ,ई,उ,ऊ,ऋ,ॠ,ऌ, ए,ऐ,ओ,औ ।

अं,और अः स्वर न होकर व्यंजन है । इनका स्वतंत्र प्रयोग न होकर स्वरों के पीछे होता है। इसलिए ये पराश्रयी स्वन है ।

डॉ.मंगलदेवशास्त्री स्वर की परिभाषा ''तुलनात्मक भाषा शास्त्र '' में इस प्रकार देते है- ''स्वर ऐसी सघोष आवाज को कहते है-जिस के उच्चारण में वायु के प्रवाह की गति मुख में बिना किसी रूकावट के होती है और किसी प्रकार का सुनने मे आनेवाला मौखिक अवयवों का घर्षण नहीं होता है ।''

इसी तरह की बात डॉ.बाबुराम सक्सेना ने लिखी है-''स्वर वह सघोष ध्वनि है जिसके उच्चारण में श्वास नलिका से आती हुई श्वास धारा प्रवाह से अबाध गति से मुख से निकलता जाता है और मुख विवर में ऐसा कोई संकोच नहीं होता कि किंचित मात्र भी संघर्ष या स्पर्श हो ।''

स्वर वर्गीकरण के निम्न आधार है ।

1) जिह्वा के विभाग
2) जिह्वा की ऊँचाई
3) ओठों की स्थिति
4) उच्चारण समय
5) कौवे की स्थिति
6) जिह्वा के चल-अचल होने की स्थिति के आधार पर।
7) स्वर तंत्रियों की स्थितियों के आधार पर।

इनका परिचय संक्षेप में इस प्रकार है -

1) जिह्वा के विभाग-अ,इ,उ,ए,ओ आदि स्वरों के भेद स्वरों के प्रमुख आधारों के कारण बन जाते हैं। स्वर स्वन के उच्चारण के समय यह देखा जाता है कि जीभ का अगला, बीच का या पिछला कौन सा भाग किस ऊँचाई तक उठता है। उसकी इस क्रिया के आधार पर स्वरों को वर्गीकृत किया जाता है -

अ) जिह्वा के अग्रभाग द्वारा निर्मित होनेवाले अग्र स्वर इ,ई,ए,ऐ ।
ब) जिह्वा के पश्चभाग द्वारा निर्मित होनेवाले पश्चस्वर ऑ,आ,उ,ऊ,ओ,औ ।
क) जिह्वा के मध्यभाग द्वारानिर्मित होनेवाले केंद्रीय स्वर है -अ ।

2) जिह्वा की ऊँचाई- निःश्वास वायु जब मुखविवर से बाहर निकलती है तो उसमें अवरोध तो नहीं किया जाता किन्तु जिह्वा को ऊपर उठाकर निःश्वास के बाहर निकलने के रास्ते को थोड़ा संकीर्ण कर दिया जाता है । यह संकीर्णता कहीं कम होती है कहीं अधिक इस आधार पर स्वरों के भी चार भेद हो जाते हैं -विवृत्त, अर्धविवृत्त, अर्धसंवृत्त तथा संवृत्त-

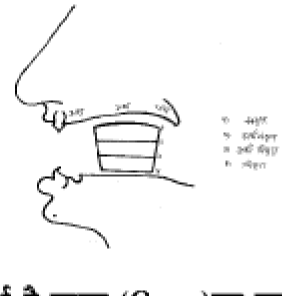

अ) विवृत-(Open) : विवृत का अर्थ है खुला (Open)इन स्वनों के उच्चारण में जीभ और मुँखविवर के ऊपरी भाग में अधिकतम स्थान खुला रहता है उसे विवृत कहते है । आ, ऑ-विवृत स्वर है ।

ब) अर्धविवृत-(Half Open) : विवृत की तुलना में आधा ऊपर उठता है, इसलिए मुखविवर आधा खुला (Half Open) रहता है । इस स्थिति में अर्धविवृत स्वरों का उच्चारण होता है- ऐ,औ,अ,अर्धविवृत स्वर है ।

क) अर्धसंवृत (Half Close)- इन स्वरों के उच्चारण में जीभ अर्धविवृत से कुछ और ऊपर उठती है और मुखविवर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

आधा सँकरा हो जाता है । इन्हें अर्धसंवृत स्वर कहते है । ए,ओ,अर्धसंवृत स्वर है ।

ड) संवृतस्वर (Close)- जीभ मुखविवर में इतनी ऊपर उठ जाती है कि तालु और ऊपर उठे जीभ की दूरी कम हो जाती है । यही स्थान स्वर रेखा का है । ऐसी स्थिति में उच्चरित स्वर संवृत कहलाते है । इ,ई,उ,ऊ, संवृत स्वर है ।

3) ओठों की स्थिति के अनुसार - जिह्वा की तरह ओठों का स्वन उत्पादन में और नि:श्वास का नियमन करने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है । इसलिए स्वर उच्चारण के समय ओठों के आकार में हुए परिवर्तन के अनुसार स्वरों का वर्गीकरण किया गया । इनके निम्न प्रकार है -

क) वृत्ताकार-उ
ख) पूर्ण वृत्ताकार- ऊ
ग) अवृत्ताकार / अर्धवृत्ताकार - आ
घ) लंबवृत्ताकार-ए,इ
च) उदासिन - अ

छात्रों को चाहिए कि इनका उच्चारण स्वयं करें । ऐसा करते समय आप अपना मुँह शीशे के सामने रखे । जीभ के ऊपर उठने तथा ओठों की स्थिति का निरीक्षण करें जिससे आपका सही उच्चारण होगा और बात समझ में आएगी ।

4) उच्चारण समय -

स्वर के उच्चारण में लगने वाले समय को मात्रा कहते है । इस दृष्टि से स्वरों के कुल तीन भेद है -

क) ह्रस्व स्वर-इनके उच्चारण में एक मात्रा का समय व्यय होता है, जैसे-अ,इ,उ,ऋ,ऌ ।

ख) दीर्घ स्वर-इनके उच्चारण में दो मात्रा का समय व्यय होता है जैसे आ,ई,ऊ,ए,ऐ,ओ,औ,ॠ

ग) प्लुत स्वर-इन के उच्चारण में तीन मात्रा का समय लगता है । ओ३म् में ओ इसी प्रकार का स्वर है । यह स्वर त्रैमात्रिक होता है । प्लुत स्वर के बाद अ ऽ अथवा अ ३ लिखा जाता है। पुकारने में, जयकारे में प्राय: प्लुत स्वर का प्रयोग होता है ।

5) कौए की स्थिति-

कौवा अथवा अलिजिह्वा की स्थिति के आधार पर स्वरों के दो भेदों होते हैं । निरनुनासिक स्वर-जिन स्वरों के उच्चारण के समय कौवा ऊपर उठकर नासिका विवर को बंद कर लेता है और नि:श्वास मुख से ही निकलता है तब निरनुनासिक स्वर (मौखिक) उत्पन्न होते हैं । अ,आ,इ,ई,उ,ऊ,ए ऐ ओ औ ।

ब) अनुनासिक स्वर-इनके उच्चारण में कौवा नासिका विवर और मुखविवर दोनों की राह खुली रखता है जिससे कुछ हवा नाक से भी बाहर निकलती है । इस स्थिति में अनुनासिक स्वर उत्पन्न होते है - अं,आं,उं,इं,ऊं,एं,ऐं, आदि ।

6) जिह्वा के चल-अचल होने की स्थिति के आधार पर -

अ) मूलस्वर -ऐसे स्वरों के उच्चारण में जिह्वा अचल रहती हैं - अ,आ,इ,ई,उ,ऊ

ब) संयुक्त स्वर- ऐसे स्वरों के उच्चारण में जीभ की स्थिति बदलती है , अर्थात जीभ चल रहती है - जैसे ए अ,इ,ऐ अ,ई, ओ अ,उ, औ अ,ऊ

7) स्वर तंत्रियों की स्थिति के आधार पर-

घोष स्वर- इनके उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ एक-दूसरे के निकट आती है । वायु घर्षण से बाहर निकलती है । हिन्दी के सभी स्वर घोष है।

अघोष स्वर - ये स्वर अवधी, ब्रज बोलियों में मिलते हैं ।

जैसे - अवधी में जाति, का इ अघोष स्वर है । अघोष स्वर के नीचे छोटा वृत्त होता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(जिह्वा के भाग)

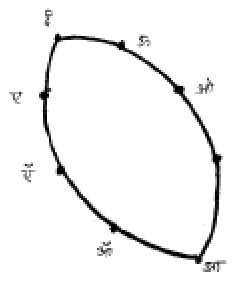

(मान स्वर) (Cardinals Vowels)

मान स्वर को प्रधान स्वर या आदर्श स्वर भी कहते हैं जो कल्पित, अमूर्त स्वन होते हैं। ये विश्व की किसी भी भाषा के स्वनों के निर्धारण की कसौटी है। मान स्वरों की संख्या आठ है।

स्वरों के मानक बिंदुओं की कल्पना सर्वप्रथम ए.जे. एलिस ने (1944) की। अब्राहम बेल ने 1967 में इसके लिए कार्डीनल शब्द का प्रयोग किया। लंदन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेनियल जोन्स और उनके सहयोगियों ने मान स्वर नामक वैज्ञानिक प्रणाली का अविष्कार किया।

मान स्वर की उपयोगिता यह है कि, जब कोई व्यक्ति विदेशी भाषा सीखना चाहता है, भाषा के उच्चारण बिना अध्यापक के सीखना चाहता है तब यह प्रणाली उपयोगी होती है।

मान स्वर निर्धारण के लिए दो बातें ध्यान में रखी गयी। मुखविवर कितना खुला रहता है और जिह्वा का कौनसा भाग उठता है। इस आधार पर मुँह के भागों को चार हिस्से में बाँटा गया - विवृत्त, अर्धविवृत, अर्थसंवृत, संवृत। इसका चित्र इस प्रकार है।

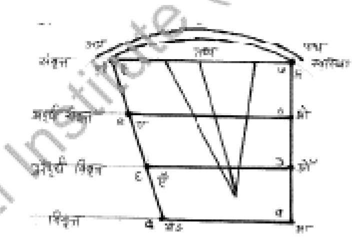

मान स्वरों का विवरण इस प्रकार है -

1) ई-(रू) - आवृत्तमुख, दृढ अग्र, संवृत, निरनुनासिक

2) ए-(ल) - आवृत्तमुखी, दृढ अग्र, अर्थसंवृत, निरनुनासिक

3) ऍ-(न)-आवृत्तमुख, शिथिल, अग्र, अर्धवृत्त, निरनुनासिक

4) अ ऽ-(ि)- ऑ(अ से कुछ अधिक) स्वल्पमुखी - अग्र, विवृत्त, अवृत्तमुखी, निरनुनासिक

5) आ-(ा)- पश्च, विवृत्त, अवृत्तमुखी, निरनुनासिक

6) ओ-(द्ध)- पश्च, अर्थविवृत्त, वृत्तमुखी, निरनुनासिक

7) ओ-(ा)- पश्च, अर्धसंवृत्त, दृढ, वृत्तमुखी

8) ऊ-(ट्ट)- पश्च - संवृत, वृत्तमुखी, निरनुनासिक - दृढ ॥

गौण मान स्वर (Secondary Cardinal Vowel) - इन्हें अप्रधान मानस्वर भी कहा गया है। ये सात माने गये हैं। जिह्वा को प्रधान मानस्वरों की स्थिति में रखते हुए यदि हम होठों की स्थिति बदल दें तो गौण मानस्वर उच्चरित होते है। जैसे

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ई,ए, ऐ तथा अ के उच्चारण के समय ओठ प्रसृत अवस्था में रहते हैं, किन्तु गौण मानस्वर में यह स्थिति वृत्तमुखी हो जाती है। यही बात ऊ, ओ, ऑ और आ के उच्चारण के समय दिखायी देती है । इनसे मिलते जुलते स्वर कुछ भाषाओं में मिलते हैं ।

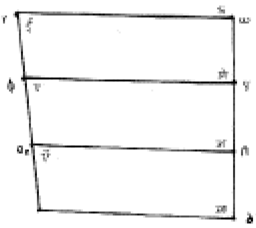

व्यंजनों का वर्गीकरण -

स्वन वर्गीकरण के अंतर्गत इनका परिचय पहले आ चुका है, एक दृष्टि में वह इस प्रकार है-उच्चारण स्थान, प्रयत्न, करण तथा श्रवणीयता के आधार पर हमने यह भेद किया है जैसे स्थान के आधार पर-काकल्य, जिह्वामूलीय, कण्ठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, वर्त्स्य, दन्त्य, ओष्ठ्य प्रयत्न के आधार दो उपभेद आभ्यंतर और बाह्य-

वाह्यप्रयत्न में विवार, संवार, श्वास, नाद, अघोष, घोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, तथा स्वरित ये ११ भेद किये जाते हैं।

आभ्यंतर प्रयत्न के अनुसार व्यंजनों के आठ भेद होते है - स्पर्श, स्पर्शसंघर्षी संघर्षी, अनुनासिक, पार्श्विक, लुंठित, उत्क्षिप्त, और अर्ध स्वर। इनका परिचय हम अब लेंगे।

1) स्पर्श व्यंजन (Contact Sounds)- स्पर्श व्यंजन उन ध्वनियों को कहते हैं, जिनमें जिह्वा का मुखविवर के ऊपरी भाग में कहीं न कहीं स्पर्श होता है।

संस्कृत में क् से म् तक के २५ वर्णों को स्पर्श माना गया है। इनके पाँच वर्ग हैं। कण्ठ्य (क वर्ग), तालव्य (च वर्ग), मूर्धन्य (ट वर्ग), दन्त्य (त वर्ग) और ओष्ठ्य (प वर्ग) ये स्पर्श ध्वनियाँ हैं।

2) स्पर्श संघर्षी (Offricate or Semi Plosive)- स्पर्श संघर्षी स्वनों के उच्चारण में स्पर्श के साथ नि:श्वास वायु के मार्ग में हल्कासा संघर्षण होता है, अर्थात् वायु प्रवाह स्वच्छन्द रूप से न निकलकर स्पर्श करता हुआ निकलता है, जिससे एक प्रकार की संघर्ष ध्वनि उत्पन्न होती है। च,छ,ज,झ स्पर्श संघर्षी ध्वनियाँ है। परंतु देवेन्द्रनाथ शर्मा का मानना है कि "ये वस्तुत: स्पर्श संघर्षी न होकर स्पर्श ही है। स्पर्श संघर्षी के उदाहरण होंगे याच्ञा और ज्येष्ठ के च्ञ और ज्ये जिनके उच्चारण में स्पर्श के साथ घर्षण भी होता है। संस्कृत के पच्यते शब्द में 'च्य' स्पर्श संघर्षी का उदाहरण है।" (भाषा विज्ञान की भूमिका-देवेन्द्रनाथ शर्मा- पृ.0200-201)

3) संघर्षी (Fricative or Spirant)- जिन व्यंजनों के उच्चारण में नि:श्वास बहुत अधिक संघर्ष के साथ नि:सृत होती है तथा जिनमें उष्म ध्वनि होती है, वे संघर्षी व्यंजन है जैसे- स्,श्,ष्,ह्, तथा विसर्ग (:)। फारसी की ख़्, ग़्, ज़्, फ़, ध्वनियों भी संघर्षी ही है। संघर्ष की प्रधानता के कारण ही इन ध्वनियों को संघर्षी कहते हैं।

4) अनुनासिक (Nasal Stops)- मुख और नासिका दोनों से उच्चरित ध्वनि अनुनासिक कहलाती है। वर्णमाला में वर्गाक्षरों में अंतिम वर्ण (पंचम वर्ण) अनुनासिक है जैसे ङ,ञ, ण, न, म्, आदि।

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार, "हिन्दी में संस्कृत के पाँच अनुनासिक व्यंजनो के स्थान पर दो-न् और म् का ही प्रयोग विशेष होता है। ङ् केवल कुछ शब्दों के मध्य में मिलता है ण् कुछ तत्सम शब्दों में जब वह (ण्) सस्वर हो और ञ का व्यवहार बिलकुल भी नहीं होता है।" (हिन्दी भाषा का इतिहास धीरेन्द्र वर्मा- पृ. 176)

5) पार्श्विक (Lateral)- जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिह्वानोंक ऊपर उठकर कठोर तालु के किसी भाग को स्पर्श कर के वायुप्रवाह को अवरूद्ध कर दें और नि:श्वास-वायु दोनों पार्श्वो से बाहर निकलती है तब उन ध्वनियों को पार्श्विक कहते है। जैसे ल्, ल्ह,

6) लुंठित या लोडित (Rolled)-जब मुखद्वार जिह्वा के अग्रभाग से दो तीन बार शीघ्र खुलता और बंद होता है, उस समय उच्चारण

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

होनेवाली ध्वनि लुंठित ध्वनि है। जैसे र ध्वनि लोड़ित है। न्ह भी इसी प्रकार की ध्वनि है।

7) उत्क्षिप्त (Flapped)- ऐसे व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा तालु के किसी भाग को झटके से स्पर्श करके अलग हो जाती है उन्हें उत्क्षिप्त ध्वनि कहते हैं। ड़्, ढ़्, ऐसी ध्वनियाँ है। मारिओ पेई इसे लुंठित का ही एक भेद मानते है।

8) अर्धस्वर (Semi Vowels)- कुछ ऐसी ध्वनियाँ भी मिलती है जो व्यंजनों में गिनी जाती है। किन्तु उनमें स्वर और व्यंजन दोनों के गुण विद्यमान रहने के कारण उन्हें न पूर्णतया स्वर कहा जा सकता है औरन व्यंजन। ऐसी ध्वनियों को अर्धस्वर कहा जाता है। ये स्वर और व्यंजन के बीच की स्थिति होते हैं। जैसे य्,व् अर्थात ये व्यंजन कभी स्वर की तरह तथा कभी व्यंजन की तरह उच्चारित होते हैं।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न -

ग. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए।

1) भाषाविज्ञान में सामान्यतया स्वन का प्रयोग किन अर्थों में किया जाता है?

2) स्थान के आधार पर स्वनों का वर्गीकरण कीजिए।

3) बाह्य प्रयत्न के आधार पर स्वनों का वर्गीकरण कैसे किया जाता हैं ?

4) स्वर और व्यंजन का अंतर संक्षेप में बताइए।

5) स्वर वर्गीकरण के कौन-कौन से आधार है ?

2.3.5 स्वन (ध्वनि) गुण (Sound quality) Sound attributes

भाषा विज्ञान में विद्वानों ने ध्वनिगुणों पर भी विचार किया है। किसी ध्वनि के उच्चारण में कम समय लगता है, किसी में अधिक कोई अधिक बलपूर्वक बोली जाती है तो किसी के बोलने में कम बल का प्रयोग होता है, कोई ऊँची उच्चरित होती है तो कोई नीची, ये सब बातें ध्वनि गुण कहलाती है। इन्हें ध्वनि लक्षण भी कहा जाता है। अर्थात् किसी ध्वनि उच्चारण में बलाघात, स्वराघात, वृत्ति आदि की गणना होती है, सही ध्वनिगुण है।

भाषा वैज्ञानिकों द्वारा ध्वनिगुण की परिभाषा इस प्रकार दी है -''स्थान और प्रयत्न के अलावा जो तत्त्व ध्वनियों के उच्चारण को प्रभावित करते हैं उन्हें ध्वनिगुण कहते है।''

स्वनगुण सामान्यत: चार पाये जाते है 1) मात्रा 2) स्वराघात 3) बलाघात 4) और वृत्ति-इन ध्वनिगुणों पर संक्षेप में विचार करेंगे।

1) मात्रा या परिमाण (Quantity)-

किसी स्वन के उच्चारण में लगनेवाले समय के परिमाण (लम्बाई) को ध्वनि का काल परिमाण या मात्रा कहते है।

ध्वनिगुण की दृष्टि से ह्रस्व और दीर्घ मात्राएँ महत्त्वपूर्ण है तथा तीसरी प्लुत।

एक ह्रस्व स्वर के उच्चारण में लगनेवाले समय को एक मात्रा काल माना गया है। परम्परागत रूप में ह्रस्व एक मात्रा की, दीर्घ दो मात्राओं की और प्लुत तीन मात्राओं के स्वन हैं। प्लुत का सूचन प्राय: 3 के अंक द्वारा अथवा 'ऽ' द्वारा होता है।

जैसे ओ 3 म जैसे -तन (ह्रस्व 1 मात्राएँ) तान (दीर्घ-2 मात्राएँ) सुख-सूख; कुल-कूल मात्राओं का प्रयोग अर्थभेद की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। प्लुत में तीन मात्रा से भी अधिक समय लग सकता है। किसी को दूर से पुकारने में भी नाम का अंतिम स्वर प्लुत है।

2) स्वर का सुरतान या लय (Pitch)-

लयात्मक आघात को स्वराघात, सुर या अनुतान भी कहते हैं। सुर का संबंध स्वरतंत्रियों से है। सुर में आवाज सरगम की तरह ऊँची-नीची होती है। भाषा ध्वनि का उच्चारण स्वर के आधार पर ही होता है। ऊँचे सुर में प्रति सेकेंड कम्पनों की संख्या अधिक होती है और नीचे सुर में कम होती है। इसी आरोह-अवरोह की दृष्टि से स्वर के तीन भेद किये गये हैं - उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित। कायमोग्राफ नामक (Kymograph) यंत्र पर इस प्रकार की स्वर लहरियों के उतार-चढ़ाव को देखा जा सकता है।

उदात्त का अर्थ है उठा हुआ इसलिए ऊँचे सुर को 'उदात्त' कहा गया है। इसके विपरित अनुदात्त जो उदात्त नहीं है। अर्थात नीचे है और स्वरित दोनों से युक्त स्वर है। अर्थात यह उच्चरित या ध्वनित है। संगीत तथा कविता गान में इनका बहुत महत्त्व है। स्वरित का आरंभ उदात्त सुर से होता है, शेष भाग अनुदात्त स्वर में उच्चरित होता है। वैदिक भाषा में स्वराघात स्वनिमिक होता था और स्वर परिवर्तन से अर्थपरिवर्तन हो जाता था। वाक्य में भी सुर या बोलने के ढंग से विभिन्न अर्थ एवं-भंगिमाएँ प्रकट की जाती है। प्रश्न आश्चर्य, संदेह आदि सुर से प्रेषित होते हैं।

3) बलाघात या बलात्म स्वराघात (Stress accent)-

बोलते समय शब्दों के उच्चारण में सदैव समान बल नहीं दिया जाता। किसी स्वन का उच्चारण अधिक बल से किया जाता है। किसी का कम बल से। बलात्मक स्वराघात से अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। विशेष अर्थाभिव्यक्ति के लिए ही इसका प्रयोग किया जाता है। बलाघातयुक्त स्वन अधिक जोर से सुनाई पड़ता है। बलाघात का प्रयोग प्राय: भाषा के उच्चरित रूप में ही होता है, लिखित रूप में नहीं होता। इसलिए जिन स्वनों पर बलाघात रहता है वे आस पास के स्वनों की अपेक्षा अधिर मुखर होते है। भाषाविज्ञान में सामान्यत: इसके लिए स्वराघात और बलाघात शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसके तीन भेद है - बलात्मक स्वराघात, संगीतात्मक स्वराघात तथा रूपात्मक स्वराघात।

बलात्मक स्वराघात में किसी स्वन पर विशेष बल देकर उच्चारण किया जाता है। इस स्थिति में बल सीधे फेफड़ों पर पड़ता है। फेफड़ा नि:श्वास वायु को तेजी से बाहर करता है, इसलिए स्वन तेजी से सुनायी पड़ता है। सामान्यत: सघोष स्वनों की अपेक्षा अघोष स्वनों पर बलाघात अधिक रहता है।

संपूर्ण गेय साहित्य में संगीतात्मक स्वराघात पाया जाता है। संगीत में आरोह-अवरोह के समय स्वरों में उतार चढ़ाव देखा जाता है, उसी प्रकार शब्दों और वाक्यों में अथवा कविता की पंक्तियों के उच्चारण में जो ध्वनिगत उतार-चढ़ाव होता है उसे संगीत्मक स्वराघात कहते हैं। सुर संगीतशास्त्र के लिए उपयोगी होता है।

रूपात्मक स्वराघात का संबंध प्रत्येक मनुष्य के भिन्न स्वरतंत्रियों से निकलनेवाली आवाज से है।इसलिए बिना देखे भी हम उस व्यक्ति को कण्ठस्वर से उसकी आवाज से पहचान सकते है। भाषाविज्ञान के अध्ययन में रूपात्मक स्वराघात का विशेष महत्त्व नहीं है।

4) वृत्ति (Speed)-

यहाँ वृत्ति का आशय उच्चारण की गति से है। स्वन के उच्चारण में जिस प्रकार मात्रा, सुर, बलाघात का महत्त्व है उसी प्रकार वृत्ति का भी। इसके मुख्यत: तीन भेद हैं - द्रुत,मध्यम और विलम्बित।

पाणिनि ने अपने ग्रंथ शिक्षा (श्लोक २२) में कहा है कि स्वयं अभ्यास के लिए द्रुत, दूसरे से बात करने के लिए मध्यम और अध्यापन के लिए विलम्बित वृत्ति उचित होती है।

द्रुत वृत्ति में उच्चारण तीव्र गति से होता है। अत्याधिक तेज बोलने के कारण कभी-कभी कथन का आशय स्पष्ट नहीं हो पाता। प्राय: आवेश में लोग इस वृत्ति का उपयोग अनायास करते नजर आते हैं। नित्य पठन-पोथी, मंत्र, स्तोत्र आदि का पाठ भी अभ्यास के कारण तेजी से किया जाता है। परंतु द्रुत गति यह वृत्ति केवल अपने अभ्यास के लिए ही सर्वथा उपयोगी होती है।

उच्चारण की मन्द गति को विलम्बित वृत्ति कहा जाता है। सोच-सोच कर एक-एक शब्द का उच्चारण किया जाता है ताकि श्रोता प्रत्येक शब्द का अर्थ ग्रहण कर सके (उदा.आसाराम बापू के प्रवचन)कभी कभी अध्यापकों द्वारा विद्यार्थियों को नोटस् की सुविधा हो इसलिए विलम्बित वृत्ति का प्रयोग किया जाता हैं। कुछ कठिन, गहन विषयों को समझाने के लिए भी इसी प्रकार बात कहीं जाती है ताकि श्रोता उसे अच्छी तरह समझ सके।

द्रुत और विलम्बित के मध्य की स्थिति मध्यम वृत्ति कहलाती है। आपसी संवाद की दृष्टि से यह वृत्ति उत्तम होती है। श्रोता तथा वक्ता दोनों ही सरलता से अपना कार्य सुनने का, अर्थ ग्रहण करने का तथा कहने का कर सकते हैं।

उपर्युक्त तीन गुणों के अलावा देखा जाता है कि सभी स्वरों के अनुनासिक और निरनुनासिक रूप होते हैं। अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में वायु आंशिक रूप से नासिका विवर के भी बाहर निकलती है। हिन्दी में अनुनासिकता स्वनिमिक है। पाव-पाँव, अचल-अँचल में अर्थ भिन्नता स्पष्टतया दिखायी देती है। कँगना, भाँवर, खिंचना, नींद, धुँध, पूँछ, केंकडा,

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

सैंधव, चोंच, चौंसठ शब्दों में प्रयुक्त अ,आ,इ,ई,उ,ऊ,ए,ऐ, ओ,औ-सानुनासिक है । तो - अरूण, आम, इमली, ईख, उतावला, ऊपर, ऐनक, ऐश, ओखली औषधि में निरनुनासिक है ।

इन ध्वनिगुणों के अलावा ''काकु'' की गणना भी ध्वनिगुणों में की जाती है ।एक ही शब्द के भिन्न - भिन्न लहजे में बोलने के कारण, प्रश्न, विस्मय, निषेध, आज्ञा, उद्‌गार आदि की अभिव्यक्ति होती है (जैसे गोली ? गोली ! गोलीऽ ऽ, आदि)किंतु यह वक्ता के भावों की व्यंजना तक ही सीमित होती है अर्थ परिवर्तित करने की क्षमता इसमें नहीं होती ।

इसप्रकार स्वन गुणों का ज्ञान होने से भावों की अभिव्यक्ति करने में सहजता, सरलता होती है । जहाँ जिस गुण की आवश्यकता हो उसका प्रयोग वक्ता कर सकता है । बिना स्वन-गुण को जाने भाषा का समुचित व्यवहार संभव ही नही है ।

2.3.6 स्वनिक परिवर्तन

परिवर्तन जीवन का नियम है । जीवन्तता की पहचान है । जगत् का हर पदार्थ समय के साथ परिवर्तित होता रहता है । मनुष्य भी इसका अपवाद नहीं है । शिशु, बालक, किशोर,युवा, प्रौढ़ और वृद्ध उसके जीवन के पड़ाव हैं । मनुष्य के द्वारा प्रयुक्त भाषा भी परिवर्तनशील है । भाषा के सभी अंग-स्वन, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ में परिवर्तन होता है । यहाँ पर हम स्वन परिवर्तन पर विचार करेंगे । पहले हम स्वन परिवर्तन की दिशाएँ जानेंगे ।

संस्कृत में लिखा गया है,

वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च,

द्वौ या ऽ परौ वर्णविकारनाशौ ।

अर्थात् संस्कृत के आचार्य ध्वनिपरिवर्तन के मुख्यत: चार प्रकार मानते हैं -

(1) वर्ण का आगम (2) वर्ण का लोप (3) वर्ण का विपर्यय या व्यत्यय (4) वर्ण का विकार परंतु आधुनिक भाषाविज्ञानी इनके अलाव जिन दिशाओं को मानते है वे इस प्रकार हैं-

स्वन परिवर्तन की दिशाएँ

(1) आगम :-

शब्द के आदि मध्य या अन्त में किसी नए स्वन (स्वर, व्यंजन, अक्षर) का आना ही आगम कहलाता है । इसके विभिन्न रूप दिखायी देते हैं । आगम को अंग्रेजी में Insertion कहते हैं ।

<u>स्वरागम</u> - जब कोई स्वर स्वन किसी शब्द के पूर्व, मध्य अथवा अंत में जुड़ जाता है तो स्वरागम कहलाता है ।

<u>आदि स्वरागम</u> - प्रारंभ में स्वर का आगमन । जैसे - स्तुति अस्तुति, स्पष्ट अस्पष्ट, स्त्रीइस्त्री, स्टेशनइस्टेशन, स्टोअरइस्टोअर ।

<u>मध्य स्वरागम</u> - जहाँ शब्द के मध्य में स्वर का आगमन होता है जैसे मरममर्म , वर्षबरस, कृपाकिरूपा, शर्मशरम, पाजेबपाईजेब, हुक्महुकूम ।

<u>अन्त स्वरागम</u> - शब्द के अंत में स्वर का आगमन होता है, जैसे - दवादवाई, स्वप्नसपना ।

व्यंजनागम - शब्द के पूर्व में व्यंजन स्वन का आगमन आदि व्यंजनागम कहलाता है ।

जैसे - ओठहोंठ, अस्थिहड्डी, अंसलीहँसली, उल्लासहुलास ।

मध्य व्यंजनागम - शब्द के - मध्य में व्यंजन का आगमन मध्य-व्यंजनागम कहलाता है ।

जैसे- समुद्रसमुंदर, श्यापशराप, वानरबंदर, सुनरसुंदर, तकतलक ।

अंत्य व्यंजनागम शब्द के अंत में व्यंजन का आगमन होता है-भौंभौंह, रंगरंगत, उमराउमराव ।

<u>अक्षरागम</u> - अक्षर से आशय है स्वरयुक्त व्यंजन । इसके भी तीन प्रकार है ।

आदि अक्षरागम - गुंजा घुंघची,स्फोटविस्फोट

मध्य अक्षरागम - खल खरल, जेल जेहल

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अन्त्य अक्षरागम - आँखआँखडी, डफडफली, बाँहबहियाँ, बेटीबिटियाँ

(2) लोप :- (Elision)

आगम के विलोम की दिशा लोप की है। जिस प्रकार शब्दों में कुछ स्वनों का आगमन होता है उसीप्रकार कुछ स्वनों का लोप भी होता है। उच्चरित भाषा में लोप की प्रवृत्ति अधिक दिखायी देती है। प्रयत्नलाघव तथा बलाघात के कारण लोप होता है। लोप के प्रकार भी आगम की तरह ही है।

स्वरलोप - स्वरस्वन का लोप होना स्वर लोप कहलाता है। आदि, मध्य, अंत्य ये स्वरलोप के प्रकार है।

आदिस्वरलोप - अनाजनाज, अगरगर, एकदशग्यारह।

मध्यस्वरलोप - गरदनगर्दन, खुरजाखुर्जा, डेपुटीडिप्टी

अंत्य स्वर लोप-रीति-रित, पद्धति-पद्धत

व्यंजनलोप - जब किसी शब्द के प्रारंभ में, मध्य में, अंत्य में किसी व्यंजन का लोप हो जाता है, तब व्यंजनलोप होता है।

आदिव्यंजनलोप - स्कंधकंधा, स्फूर्तिफूर्ति, स्मशानमशान।

मध्यव्यंजनलोप - कोकिल कोयल, घरद्वार घरवार, प्रिय पिय, कर्म काम, गर्भिणी गाभिन।

अंत्यव्यंजनलोप - निम्ब नीम, आम्र आम, सत्व सत, व्याघ्र बाघ।

अक्षरलोप - स्वर युक्त व्यंजन का लोप अक्षरलोप है। इसके तीन प्रकार है।

आदि अक्षरलोप - त्रिशूल शूल, उमराव राव, नेकटाय टाय, आदित्यवार इतवार।

मध्यअक्षर लोप - फलाहारफलार, भांडागारभंडार, गेहूँचनागोचना।

अन्त्यअक्षरलोप - द्विशाखिका बैसाखी, भातृजाया भावज, नीलमणि नीलम।

समअक्षरलोप - जब किसी शब्द में एक ही अक्षर दो बार आता है तो एक का लोप हो जाता है।

नाककटा नकटा, खरीददार खरीदार, नंद दुलारे नंदुलारे, कृष्णनगर कृष्णगर, पार्टटाईम पार्टाईम।

(3) विपर्यय :- (Metathesis)

शीघ्रता से बोलने के कारण कई बार शब्द के दो स्वन उलट-पुलट हो जाते है,इसे विपर्यय कहते है। 1871 में पाश्चात्य भाषाशास्त्री पिशेल ने विपर्यय पर चर्चा की है।

स्वरविपर्यय - जब किसी शब्द में कोई स्वर आगे से पीछे या पीछे से आगे चला जाता है तो स्वरविपर्यय होता है, जैसे कुछकछु,अंगुलीउंगली, जानवरजनावर, लज्जालाज, पागलपगला।

व्यंजनविपर्यय - लखनऊनखलऊ, डूबनाबूडना, अमरूदअरमूद, महाराष्ट्रमरहट्टा, कीचड चिकड, जलेबीजबेली।
अक्षरविपर्यय - कोलतार-तारकोल, मतलब-मतबल,दालचावल-चाल-दावल।

(4) समीकरण :- (Assmilation)

शब्द में जब एक स्वन दूसरे स्वन को अपने समान बना लेता है तो उसे समीकरण कहते है। कुछ विद्वान उसे सावर्ण्य - या सवर्णीकरण भी कहते हैं। इसके दो प्रकार हैं -

(i) पुरोगामी समीकरण (Progressive Assmilation)- जब पहलेवाला स्वन बादवाले को प्रभावित कर अपने समान बना लेता है तब पुरोगामी समीकरण होता है।

स्वरसमीकरण - जुल्मजुलूम, (ल-अ-ऊ), हुक्महुकूम, सूरजसुरूज।
व्यंजन समीकरण - पत्रपत्ता,चक्रचक्का,भद्भद्दा, लग्नलग्ग।

(ii) पश्चगामी समीकरण (Regressive Assmilation)- जहाँ बादवाला स्वन अपने पूर्ववाले स्वन को अपने समान

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बना लेता है तब पश्चगामी समीकरण होता है ।

पश्चगामी स्वर समीकरण - अंगुली ऊंगली, श्वसुर ससुर, इक्षु उखु ।

पश्चगामी व्यंजनसमीकरण - कर्म कम्म, शर्करा शक्कर, यजमान जजमान, दण्ड डण्डा

(5) विषमीकरण :- (Dissimilation)

समीकरण के विपरित यह स्थिति है । इसलिए इसे असावर्ण्य भी कहते हैं। विषमीकरणम में दो समान स्वन असमान हो जाते हैं । विषमीकरण का कारण संभवतया यह है कि समान स्वनों का बार-बार उच्चारण करने की अपेक्षा भिन्न स्वनों का उच्चारण सरल लगता है ।

विषमीकरण के भी पुरोगामी और पश्चगामी दो भेद है ।

(i) पुरोगामी विषमीकरण - जब दो समान स्वनों में से पहलेवाला अक्षुण्ण रहे और दूसरा बदल जाए तो पुरोगामी विषमीकरण होता है । इसके भी स्वर और व्यंजन ऐसे दो भेद है ।

स्वर विषमीकरण - पुरूष पुरिस, भित्ति भीत, अष्टमी अट्ठमी ।

व्यंजन विषमीकरण - कंकण कंगन, काक काग, लांगुली लंगुर

(ii) पश्चगामी विषमीकरण - यदि बादवाला स्वन अक्षुण्ण रहे और पहलेवाला बदल जाए तो बादवाले स्वन से असमानता के कारण पश्चगामी विषमीकरण होता है । इसके भी स्वर और व्यंजन दो भेद है -

पश्चगामी स्वर विषमीकरण- नूपुर नेऊर, मुकुल बऊर, मुकुट मौर ।

पश्चगामी व्यंजन विषमीकरण - नवनीत लवनी, दरिद्र दलिद्दर ।

यदि दो महाप्राण स्वन एकसाथ आए तो उनमें से एक अल्पप्राण हो जाता है - इससे उच्चारण में सरलता आती है । अत: यह प्रयत्न संबंधी विषमीकरण होता है ।

(6) मात्राभेद :- (Difference of lenth)-

मात्राभेद से तात्पर्य है जब किसी शब्द में ह्रस्व से दीर्घ या दीर्घ से ह्रस्व मात्रा हो जाती है तब मात्राभेद दिशा बनती है ।

ह्रस्व से दीर्घ होना - जिह्वा जीभ, अद्य आज, दुग्ध दूध ।

दीर्घ से ह्रस्व - आश्चर्य अचरज, आषाढ़ असाढ़, ऑगष्ट अगस्त, आभीर अहिर ।

(7) घोषत्व :- (Vocalization) - devocalization)-

स्वनों में दो प्रकार है - घोष-अघोष । व्यंजन-अघोष-सघोष दोनों होते हैं ।

स्वर-केवल घोष होते है । व्यंजनों में प्रत्येक वर्ग का पहला-दूसरा वर्ण अघोष होता है तो तीसरा चौथा,पाँचवा वर्ण घोष है ।

घोषीकरण - शकुन सगुन, शाक साग, भक्त भगत, काक काग ।

अघोषीकरण - मदद मदत, गगन गकन, मेघ मेख, अज्ञातक अचानक ।

(8) प्राणत्व :- (Spiration)-

स्वन के उच्चारण में लगने वाली हवा को प्राणत्व कहते है ।

अल्पप्राणीकरण (Deaspiration) : जब यह प्राण अल्प लगता है तो अल्प प्राणीकरण होता है जिसे अंग्रेजी में श्लीक्ष्यरूह्णी-रूद्धछछ कहते है । प्रत्येक वर्ग का पहला, तीसरा, पाँचवाँ स्वर अल्पप्राण है । भीख भीक, सिंधु हिंदु, भगिनी बहिन।

महाप्राणीकरण (Aspiration) - महाप्राण स्वन दूसरा और चौथा है- 1,3,5 स्वन यदि 2,4 में परिवर्तित हो जाए तो महाप्राणीकरण होता है । गृह घर, वृश्चिक बिच्छु, हस्त हाथ ।, शुष्क-सूखा, परशु-फरसा, सर्व-सब, पत्थर-फत्थर ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(9) उष्मीकरण :- (Assibabilation)-

स्पर्शस्वन अर्थात क, च, ट, त वर्ग के स्वन स, श, ष में परिवर्तित हो जाए तो उष्मीकरण की प्रवृत्ति कहलाती है। इसी आधार पर भाषा परिवार का शतम् और केन्तुम परिवार बना है। केन्तुम वर्ग की क स्वन शतम् वर्ग में परिवर्तित हो जाती है। जैसे लैटिन कैन्टुम संस्कृत में शतम हो जाता है। ग्रीक डेका संस्कृत में दश हो जाता है।

(10)अनुनासिकी करण :- (Nazalization)-

निरनुनासिक स्वन जहाँ कालान्तर में अनुनासिक हो जाती है वहाँ अनुनासिकीकरण होता है। जैसे - सत्य साँच, श्वास साँस, अश्रु आँसू, वक्र बाँका।

(11)संधिकरण :- (Sandhization)-

जब शब्दों के मध्यवर्ती व्यंजन पहले स्वर में परिवर्तित होकर अपने समीपवर्ती स्वरों के साथ संधि कर लेते हैं तब यह दिशा होती हैं।

नयन नईन नैन, शत सऊ सौ, भ्रमर भौंरा, आत्म आप।

(12)भ्रामक व्युत्पत्ति :- (Populer etymalagy)-

जब विदेशी अथवा अपरिचित शब्दों का उच्चारण स्वेच्छा से होने लगता है तब शब्द में विचित्र विकार घटित होते है। उसे भ्रामक व्युत्पत्ति कहते हैं।

चोळमंडलम कोरोमंडल, इन्तकाल अंतकाल, लाइब्रेरी रायबरेली लार्ड लाट, एडवांस अठवांश, सुप्रीम कोर्ट सुग्रीव कोर्ट।

इस तरह स्वनविकार की दिशाएं प्रस्तुत की जा सकती है। संसार की भाषाओं में अनेक दिशाएं दिखायी देती है। इनमें से प्रमुख का विवेचन हमने किया है।

स्वन परिवर्तन के कारण

स्वन परिवर्तन के कारण दो प्रकार के है - आंतरिक और बाह्य ... स्वनपरिवर्तन वक्ता और श्रोता दोनों स्तरों पर होता है। आंतरिक कारणों के अंतर्गत प्रयत्नलाघव, अनुकरण की अपूर्णता, बलाघात, भावावेश, प्रमाद और त्वरा उच्चारण- आदि आते हैं। बाह्य कारणों में व्यक्तिगत भिन्नता, राजनीतिक और सामाजिक स्थितियाँ, भौगोलिकता और श्रवणेंद्रियों की भिन्नता आदि आते हैं।

<u>आंतरिक कारण -</u>

(1) प्रयत्न लाघव (मुखसुख)(Economy of effort) स्वनपरिवर्तन का सर्वाधिक प्रमुख कारण प्रयत्नलाघव है। कम से कम श्रम में अधिक से अधिक लाभ उठाना मनुष्य का स्वभाव है। यही स्वभाव भाषा के क्षेत्र में काम करता है। लघुप्रयत्न कर अधिकतम भावों को व्यक्त कर मुख को सुख देने का प्रयास मनुष्य करता है। जिन शब्दों के उच्चारण मुश्किल होते हैं उन शब्दों के स्वन उच्चारित नहीं होते। जैसे - अंगरेजी के कुछ शब्दों के स्वन अनुच्चरित रहते है जिन्हें सायलेंट स्वन कहते है। जैसे alk (टॉक),Know (नो), Psycology (सायकॉलॉजी)। उच्चारण की सुविधा के लिए कुछ स्वन जोड़ दिये जाते हैं - स्कूल-इस्कूल, स्टेशन-इस्टेशन, स्नान-अस्नान, ब्राह्मण-बामन। प्रयत्न लाघ व के कारण शब्द के लघुरूप भी बनते है - जैसे उपाध्याय - ओझा - झा, सपत्नी - सौत।

सूत्रात्मकता या संक्षिप्तता भी प्रयत्नलाघव का परिणाम है। जैसे इंका (इंदिरा काँग्रेस), भाजपा (भारतीय जनता पार्टी), एलपीजी (गॅस), बीबीसी (ब्रिटीश ब्रॉडकास्टींग कारपोरेशन) श्क्रू (ऑल इंडिया रेडियो)

उपाधियों के नाम-B.A., B.Com, M.A.,B.E. आदि

पदों के नाम डी.एस.पी., व्ही. सी., सब रजिस्ट्रार,

व्यक्तियों के नाम - RK (राधाकृष्णन), RD (रामदेव), राजू (राजेश), नीलू (नीलम) ये सभी मुख सुख के उदाहरण है।

आगम, लोप, विपर्यय, समीकरण, विषमीकरण आदि स्वन की दिशाएँ इसी कारण घटित होती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(2) अनुकरण की अपूर्णता- भाषा अनुकरण के द्वारा सीखी जाती है। स्वरयंत्र की विभिन्नता के कारण अनुकरण पूर्णता नहीं हो पाता। एक ही स्वन का उच्चारण दो या दो से अधिक व्यक्ति एक जैसा नहीं कर पाते। परंतु उनका अंतर इनका सूक्ष्म होता है कि वह आसानी से समझ में नहीं आता। यह सूक्ष्म या सामान्यसा अंतर कालांतर में ज्यादा प्रभावशाली बनकर भाषा में परिवर्तन उपस्थित कर देते हैं। अपूर्ण उच्चारण कई बार अज्ञान के कारण भी होता है। निश्चित या सही ज्ञान के अभाव में अनेक शब्द-अशुद्ध उच्चरित हो जाते है, जिससे स्वन में परिवर्तन हो जाता है। जैसे - ब्रिज-बिरज,हनुमान-हलुमान, मंदिर-मंदर, मंत्र-मंतर, ओमनमोसिद्धम् - ओनामासीधम, कॉफी-काफी, आदि।

अनुकरण की अपूर्णता वाग्यंत्र की भिन्नता के कारण भी होती है।

विदेशी स्वनों के उच्चारण में प्राय: विकार आ जाता है।

जैसे कलेक्टर-कलट्ट्र, डॉक्टर-डागदर, गोस्वामी गोसाई, बंदोपाध्याय-बॅनर्जी आदि ये अपूर्ण अनुकरण से आए हुए परिवर्तन है।

(3) बलाघात - किसी शब्द को बोलने में जिन स्वनों का उच्चारण बलपूर्वक किया जाता है वे सबल होकर रह जाती है परंतु उनके समीप के स्वन निर्बल होकर परिवर्तित या लुप्त हो जाते है। जैसे आभ्यंतर भीतर, निम्ब नीम, बिल्व बेल, कुष्ठ कोढ़ आदि।

(4) भावावेश-प्रेम, घृणा, आश्चर्य, क्रोध आदि भावों के समय व्यक्ति स्वनों का उच्चारण विशिष्ट करता है। जैसे - रामरामू, (प्रेम), राम्या रामूडा (क्रोध), बेटी बिटिया, बहू बहुरिया, जीजी जीजी, दीदी दीदियाँ, दीद्दी।

(5) अज्ञान अशिक्षा- वक्ता की असावधानी, अज्ञान, अशिक्षा के कारण भी शब्दों के स्वन परिवर्तित हो जाते है। इससे वर्णविपर्यय या विषमीकरण, समीकरण हो जाता है। जैसे - पुलिस पुलस, जलेबी जबेली, डूबना बूड़ना, मार्केट मर्कट, चार्जशीट चारशीट, लैंटर्न लालटेन, हॉस्पिटल अस्पताल, रिपोर्ट रपट, कम्सदेयर हुकूमसदर, इतकाल अंतकाल, स्वादिष्ठ स्वादिष्ट, घनिष्ठ घनिष्ट, श्याप श्राप आदि हो जाता है।

(6) त्वरा उच्चारण- कुछ लोग अतिशीघ्रता से बोलते है, जिससे अनेक शब्दों के रूप परिवर्तित हो जाते हैं। अक्षर विपर्यय संबंधी स्वन परिवर्तन का कारण यही त्वरा उच्चारण है, इससे स्वनिक परिवर्तन हो जाता है। शीघ्रता से बोलने के कारण शब्द एक -दूसरे में मिल जाते हैं, कितनी ही संधियाँ हो जाती हैं। किंतु लिखित भाषा में प्राय: उनका पता तक नहीं चलता।

मास्टर साहब मास्साब, थैंक यू थैंक्यू, जब ही जभी, द्विवेदी दूबे, डू नाट डोन्ट, कॅन नॉट कान्ट, दूध दो दूद्धो, कहना कैना आदि।

(7) प्रतिध्वनिप्रवृत्ति - कुछ लोग जब बोलते हैं तो उनकी बोलचाल में कुछ प्रति ध्वन्यात्मक शब्द अनायास आ जाते हैं जैसे - नाश्ता - वाश्ता, अडोस-पडोस, रोटी-वोटी आदि।

(8) लिपि की अपूर्णता - लिपि की अपूर्णता के कारण भी शब्द का सही उच्चारण असंभव हो जाता है और स्वन-परिवर्तन घटित हो जाता है। रोमन लिपि के कारण हिन्दी के शब्द ऐसे हो गए - मिश्र - मिश्रा, गुप्त - गुप्ता, अशोक-अशोका, सहस्त्र-सहस्त्रा, याज्ञिक-यामिक आदि परिवर्तन घटित हुए है।

(9) श्रुति Glide - स्वन-विकार का दूसरा मुख्य कारण श्रुति है। एक स्वन के उच्चारण के बाद दूसरे स्वन का उच्चारण करने में जो अंतर आता है उसे भाषाविज्ञान में श्रुति कहते हैं। यह परिवर्तन संयुक्त व्यंजनों में अधिक दृष्टिगोचर होता है। इन्द इन्दर, चन्द चन्दर, श्रुति के दो भेद हैं।

क. पूर्वश्रुति - इसे आदि स्वरागम भी कहते है -स्टूलइस्टूल, स्टेशन इस्टेशन।

ख. पर श्रुति - अंत में आगम होता है। प्रसाद परसाद, कर्म करम, धर्म धम्म।

(10) उपमान - अंध सादृश्य प्रचलित शब्द ने स्वनों के समान उससे मिलते-जुलते शब्द का उच्चारण जब होने लगता है तब उपमान कारण घटित होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

दु:ख के सादृश्य पर सु:ख। निर्गुण सर्गुण,स्वर्गनर्क

पैंतिस सैंतिस, (अनुनासिकता का आगमन)

देहात - देहाती वैसे ही शहर - शहराती हो गया।

इस प्रकार स्वन परिवर्तन के आभ्यंतर कारणों का संक्षेप में परिचय दिया जा सकता है।

बाह्य कारण - स्वन परिवर्तन के बाहरी कारण भी है। ये बाह्य कारण वक्ता के चारों ओर के परिवेश से संबंध रखते है। इसलिए वक्ता का इन कारणों पर नियंत्रण नहीं रहता। स्वन परिवर्तन के बाह्य कारण निम्नलिखित है -

(1) भौगोलिक कारण-

स्वन उच्चारण पर भौगोलिक परिस्थितयों का प्रभाव पड़ता है। ऐसा माना जाता है कि जलवायु, भूमि और भोजन मनुष्य के उच्चारण अवयव पर प्रभाव डालते है। शीतप्रधान वातावरण के व्यक्ति बोलते समय मुख कम खोलते है, इसलिए उनका दंत्य स्वनों का उच्चारण स्पष्ट नहीं होता - त वर्ग ट वर्ग में परिवर्तित हो जाता है। अंग्रेजी में 'त' नहीं है।

मानव वागेंद्रियों से स्वनों का उच्चारण करता है। उसकी रचना पर भौगोलिक वातावरण का प्रभाव पडता है। भूमि की उर्वरकता अथवा अनउर्वरकता और उससे उत्पन्न जीवन-यापन, खानपान की सुविधा-असुविधा का परिणाम मनुष्य के शरीर पर होकर भाषा को प्रभावित करता है। यदि कोई देश मैदानी है यातायात की सुविधा है तो संपर्क अधिक गहन होता है और उच्चारण में एकरूपता बनी रहती है। जबकि पहाडी घने जंगल के या बडी नदी के दूसरे किनारे पर रहनेवाले लोगों का संपर्क कम होने से स्थानीय और व्यक्तिगत प्रवृत्तियाँ उभरकर स्वन विकार द्वारा बोली भेद को जन्म देती है।

स्वन विकास अनेक रूपों में होता है-अघोषीकरण, सघोषीकरण, अल्पप्राणीकरण, महाप्राणीकरण। जैसे-सिंधहिंद, सप्तहप्त, स-का-श आदि परिवर्तन भौगोलिक है। भौगोलिक प्रभाव के कारण शब्दों के अर्थो में भी परिवर्तन होता है - जैसे उष्ट्र का मूल अर्थ भैंसा था। रेगिस्तान में एक नये पशु को देखा तो उसे उष्ट्र कहा, जिसका अर्थ ऊँट हो गया।

(2) राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ-

राजनीतिक और सामाजिक स्थितियाँ स्वन विकार में सहायता पहुँचाती है। सुख-शांति, वैभव-विलास, संपन्न-समाज में भाषा का उच्चारण व्यवस्थित, शुद्ध रूप में होता है जबकि युद्ध, कलह, अकाल, अशांति, दरिद्रता में स्वन परिवर्तन तेजी से होता है। लोक शीघ्रता से जल्दी-जल्दी बोलते है, फलत: निर्बल ध्वनियाँ लुप्त हो जाती है। फुसफुस स्वन अधिक मात्रा में उच्चरित होती है।

सामाजिक उन्नति और अवनति भी भाषा पर विशेष प्रभाव डालती है। पढ़े-लिखे और अनपढ़, शहराती और देहाती के शब्दों में अंतर आता है। जैसे यजमान-जजमान, गाय-गैय्या, पंडित-पंडा, कृष्ण-किसन आदि।

राजनीतिक और सामाजिक कारणों से लोग अन्य भाषा का प्रयोग करने लगते हैं तो उसकी स्वन व्यवस्था यहाँ की भाषा को प्रभावित करती है। मुसलमानों के आगमन के कारण अरबी, फारसी, तुर्की भाषाएँ भारत की राजभाषाएँ बनीं और हिन्दी में नुक्तावाली स्वन का आगमन हुआ। तत्पश्चात अंग्रेजी राजभाषा बनी, अंग्रेजी के प्रभाव से ऑ स्वन का हिन्दी में आगमन हुआ।

(३) ऐतिहासिक - (कालपरिवर्तन)-

इतिहास अर्थात् काल कमिक विकास स्वन परिवर्तन में योगदान देता है। किसी भी भाषा का उपलब्ध क्रमिक इतिहास देखने पर स्वन विकारों का पता चल जाता है। वैदिक स्वन संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश से गुजरते हुए वर्तमान भाषा में आ गए है। द्रविडों के संपर्क के कारण संस्कृत में मूर्द्धन्य स्वन आए। जैसे अग्नि अग्गि आग, कर्मकम्मकाम आदि परिवर्तन ऐतिहासिक है। विदेशी भाषाओं के कारण यहाँ के भाषाओं की शब्दावली, उच्चारण तथा वर्ण योजना में भी अंतर हुआ। जैसे- मुंबई-बम्बई-बॉम्बे, कालीकता- कैलकटा-कलकत्ता-कोलकाता आदि उदाहरण काल परिवर्तन के हैं।

(4) सांस्कृतिक भिन्नता -

वक्ताओं की सांस्कृतिक भिन्नता भी स्वन परिवर्तन का एक कारण है। शिक्षा, धर्म, संस्कारों की भिन्नता ध्वनिप्रयोग

में स्पष्टता दिखायी देती है। जैसे- भाषा का विधिवत अध्ययन करनेवाले तथा अशिक्षित व्यक्ति के उच्चारण में अंतर होता है। इसके पीछे उसकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है। मुस्लिमों के सांस्कृतिक परिवेश से जुडे शब्द जैसे मस्जित, रोजा, नमाज, वजु, तसबीर, मजार, पीर, मन्नत, औलिया आदि तो खिश्चनों के कारण चर्च गिरिजाघर, मसीहा, होली क्रॉस, नन, पादरी, फादर, सिस्टर, प्रे,गॉड शब्द अपने विशिष्ट धार्मिक-सांस्कृतिक परिवेश को लेकर उपस्थित होते हैं।

सामाजिक व्यवहार - जैसे -नमस्ते, नमस्कार, प्रणाम, जयहिंद, राम-राम, जयश्रीकृष्ण, गुडमॉर्निंग, गुड डे, थैंक यू, सॉरी, प्लीज, आदि शिष्टाचार संस्कृतियों के कारण भारतीय समाज में विकसीत हुए।

खान पान की चीजे, फर्निचर, पहनावा इनमें देशी-विदेशी शब्द घुलमिल गये है। इसतरह भाषा का विकास परिवर्तन के माध्यम से होता है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न -

घ. टिप्पणियाँ लिखिए।

(1) स्वनगुण। (2) स्वनिक परिवर्तन के प्रकार।

(3) आंतरिक कारण। (4) सांस्कृतिक भिन्नता।

2.3.7 स्वनिम विज्ञान

स्वनिम शब्द संस्कृत के 'स्वन' धातु से बना है जिसका अर्थ है ध्वनि या आवाज करना। भाषा विज्ञान की प्रगति में स्वनिम विज्ञान का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस विज्ञान को ध्वनिग्राम विज्ञान, ध्वनितत्त्वविज्ञान या वर्ण विज्ञान भी कहते। अंग्रेजी में इसे Phonemics कहते हैं। फोनिम को ही हिन्दी में स्वनिम शब्द है।

स्वनिम विज्ञान में किसी भाषा या बोली के स्वनिम या संध्वनि का निर्धारण होता है।

मनुष्य के वागयंत्र में अनंत स्वनों के उत्पादन की क्षमता होती है परंतु वह सब का प्रयोग नहीं करता। क्योंकि किसी भी भाषा में मूलभूत स्वनों की संख्या पचास से अधिक नहीं पायी जाती है। न्यूनतम पन्द्रह और अधिकतम पचास निर्धारित की गयी है। भाषा की इन्हीं मूलभूत स्वनिमों का विश्लेषण और निर्धारण स्वनिम सिद्धांत के अंतर्गत होता है। अर्थात वह किसी भाषा की सार्थक स्वनों का पता लगाता हैं। यहाँ सार्थक से तात्पर्य उन स्वनों से है जो शब्दों में अर्थभेद करने में समर्थ हो।

स्वनिम उच्चरित भाषा की विशेषता है लिखित भाषा की अपनी अलग इकाई है। जिसे लेखिम कहा जाता है।

प्रत्येक भाषा की अपनी विशेष स्वनिम व्यवस्था होती है। एक भाषा के स्वनिम दूसरी भाषा के स्वनिम से अलग और स्वतंत्र होते हैं। जैसे हिन्दी का 'क' अंग्रेजी 'क' से भिन्न है। इसी कारण अपरिचित भाषा के उच्चारण में हमें कठिनाई महसूस होती है। हम दूसरी भाषा का उच्चारण अपनी भाषा के उच्चारण के आधार पर करते हैं। जैसे अहिंदी भाषी लोग जब हिन्दी भाषा बोलते हैं तो वह मराठी है, बंगाली है या दक्षिण भारतीय है, यह आसानी से पहचान में आता है। इतना ही नहीं एक ही व्यक्ति के उच्चारण में ध्वनि भेद मिलता है। एक ही विशेष ध्वनि का कई बार उच्चारण एक व्यक्ति के द्वारा होता है तो उसके प्रत्येक बार के उच्चारण में थोड़ा-सा अन्तर अवश्य आ जाता है। ध्वनि उच्चारण के ढंग अथवा लहजे से व्यक्ति पहचाना जाता है। व्यक्ति भेद से स्वन भेद स्वाभाविक ही है।

प्रत्येक व्यक्ति में स्वनिम की धारणा निहित होती हैं। स्वनिम का ज्ञान दो स्वनों के अन्तर के ज्ञान पर निर्भर करता है। इसलिए स्वनिम कोई स्थिर तत्त्व नहीं है। अलग-अलग व्यक्तियों के स्वनिम समुदाय भिन्न हो सकते हैं। स्वनिम की धारणा श्रवण पर अधिक निर्भर करती है। कौनसी ध्वनि, कौनसा स्वनिम है इसे कान ही बता सकते हैं अर्थात् स्वनिम का निर्धारण वक्ता नहीं श्रोता ही कर सकता है।

जब कोई भाषा विदेशी शब्दावली को ग्रहण करती है तो उसके स्वनिमों को अपनीं भाषा की प्रकृत्ति के अनुसार अपने स्वनिमों में ढाल लेती है। अरबी, फारसी, अंग्रेजी के सैंकडों शब्द हिन्दी में आए है और हिन्दी की ही प्रवृत्ति में ढल गये है''।

स्वनिम परिवार के सदस्यों को सह स्वन या संस्वन (संध्वनि) Allophone कहा जाता है। स्वनिम विज्ञान में इनके

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

लिए विशिष्ट चिन्हों का प्रयोग किया जाता हैं। स्वनिम को दो खड़ी रेखाओं के बीच लिखतें हैं तथा संस्वन को कोष्ठक में। जैसे हिन्दी क वर्ग के स्वनिमों को इस प्रकार लिखा जाएगा -

/क/ क्षक'द्य क्षक'द्य क्षक'द्य क्षक'द्य क्षक'द्य

/ ख / क्षख'द्य क्षख'द्य क्षख'द्य क्षख'द्य क्षख'द्य

/ ग / क्षग'द्य क्षग'द्य क्षग'द्य क्षग'द्य क्षग'द्य

/ घ / क्षघ'द्य क्षघ'द्य क्षघ'द्य क्षघ'द्य क्षङ्ग'द्य

अब हम स्वनिम की अवधारणा पर विचार करेंगे

2.3.7.(1) स्वनिम की परिभाषा

पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों ने स्वनिम की अवधारणा को परिभाषित किया है। पहले हम पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं से अवगत होंगे।

डेनियल जोन्स -"A Phoneme is a family of sounds in a given language which are related in character and are used in such away what no one member ever occure in a word in the some phonetic context as any other member "

अर्थात्- ''स्वनिम किसी भाषा की ऐसे स्वनों का एक परिवार होता है, जो अपने स्वभाव में परस्पर सम्बद्ध होती है और जिनका प्रयोग इस प्रकार होता है कि जिस स्वनात्मक संदर्भ में एक सदस्य आता है, वहाँ दूसरे सदस्य का प्रयोग नहीं हो सकता ''(An out line of English Phonetics - the Phoneme - P.No - 10)

ब्लॉक और ट्रेगर - "A Phoneme is a class of phonetically similar sounds contrasting mutually exclusive with all similar cllesses in the language"

अर्थात्- ''स्वनिम स्वनात्मक दृष्टि से समान स्वनों का समूह है, जो किसी भाषा विशेष के उसी प्रकार के अन्य समस्त समूहों से व्यतिरेकी तथा अन्योपजीवी होता है। ''(An out line of Lingusitcs analysis P.No - 4)

एच.ए.ग्लीसन -"We may difine aphoneme as a minimum feature of the expersson system of a spocan language by which one thing that may said is distinguisted from any other thing which might have been said a phoneme is a class of sound which are phonetically similar and show certion charcterisitic patterrnsns of distribution in language or diolect under consideration."

अर्थात्- ''स्वनिम बोलचाल की भाषा के उच्चरित रूप की वह न्यूनतम विशेषता है जिसके द्वारा किसी कथित बात का कही जानेवाली किसी अन्य बात से अंतर स्पष्ट किया जाता है। स्वनिम, स्वनात्मक दृष्टि से किसी भाषा अथवा बोली में समान स्वनों का समूह है जिसके वितरण का एक ढाँचा होता है।'' (An introduction to descriptive lingyistice- P.No - 161-162)

अब हम कुछ भारतीय विद्वानों के मत देखेंगे

डॉ.कैलाशनाथ पाण्डेय ''भाषा विज्ञान का अनुशीलन'' में लिखते हैं ''जिन ध्वनियों को हम बार-बार उच्चरित करते हैं, उनमें से सभी महत्त्वपूर्ण नहीं होती। ऐसी स्थिति में प्रत्येक अध्येता के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह इस प्रकार प्रमुख ध्वनियों को चुने जो सभी ध्वनियों अथवा ध्वनि समूह का प्रतिनिधित्त्व करती हो। ऐसी प्रतिनिधिभूत-ध्वनियों को ही ध्वनिग्राम कहा जाता है।''

डॉ.बाबूराम सक्सेना-''स्वनिम ऐसी मिलती-जुलती ध्वनियों (स्वनों) के समूह को कहते हैं जो एक दूसरे से शब्दार्थ भेदकारी वैषम्य प्रदर्शित न करें। ''

द्वारिका प्रसाद सक्सेना ''जब किसी एकही ध्वनि का उच्चारण किसी एक वाक्य में भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता हैं , किंतु उनके लिए एक ही लिपिचिन्ह प्रयुक्त होता हैं ,तब उन सजातीय ध्वनियों के समूह को स्वनिम (Phoneme)कहते हैं ''उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि स्वनिम ध्वनियों का परिवार है और वितरण की क्षमता रखता है। जो भाषा विशेष का होता है। स्वनिम सार्थक होता है। सरल शब्दों मे कहे तो स्वनिम किसी भाषा विशेष की वह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

लघुतम इकाई है जो अर्थभेद करने में सक्षम है । स्वनविज्ञान की जिस शाखा द्वारा किसी भाषा के स्वनिमो का पता लगाकर उनका विश्लेषण एवं वर्गीकरण प्रस्तुत किया जाता है उसे स्वनिम विज्ञान कहते हैं ।

2.3.7.(2) स्वनिम के भेद

स्वनिम के दो भेद हैं । जो स्वन के आधार पर किये गये हैं- एक खंड स्वनिम तो दूसरा खण्डेतर स्वनिम ।

खण्ड स्वनिम का विश्लेषण स्वतंत्र इकाई के रूप में किया जाता हैं । इनके उच्चारण में मात्रा, सूर आदि गुणों की आवश्यकता नहीं होती । ये स्वतंत्र होती हैं । किसी भाषा की स्वर और व्यंजन स्वन खण्ड स्वनिम कहलाती है । हिन्दी में स्वर स्वनिम दस है और व्यंजन स्वनिम ३५ है । खंड स्वनिम व्यक्त होता है । (अ,इ,उ,ऊ आदि स्वर क, ख, ग, घ आदि व्यंजन इसी वर्ग में आते हैं ।)

खण्डेतर स्वनिम - बिना इनके खण्ड स्वनिम का उच्चारण असंभव है । ये खंड स्वनिम सहायक रूप में ही प्रयुक्त हो सकते हैं, स्वतंत्र रूप में नहीं । ये सब भाषाओं में एक से नहीं होते। खंड की अपेक्षा ये अव्यक्त है । सूर, आघात, विवृत, मात्रा,अनुनासिकता आदि के कारण भाषा में अर्थभेद उत्पन्न होता हैं तो खण्डेतर स्वनिम कहलाते हैं । अर्थात् जिन स्वनिमों को स्वर और व्यंजनो में अलग किया जा सकता ये खण्डेतर स्वनिम है । मात्रा,बलाघात, स्वराघात, अनुनासिकता, संगम (विवृत) आदि के कारण होनेवाले अर्थभेद अर्थात् खंडेतर स्वनिम होते हैं। जिनके उदाहरण इस प्रकार है -

1) मात्रा - कल-काल,पिता-पीता, बहु-बहू (मात्रा के कारण अर्थभेद)
2) बलाघात - किसी का उच्चारण हल्का और बलाघात शून्य होता है, किसी का बलाघात युक्त । हिन्दी और आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में बलाघात स्वनिमिक नहीं है । इसलिए उच्चारण चाहे जैसा हो अर्थबोध हो ही जाता है ।
3) स्वराघात- स्वर परिवर्तन से अर्थ बदल जाता है परंतु हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में स्वराघात का स्वनिमिक महत्त्व नहीं है ।
4) अनुनासिकता - हिन्दी में प्राय: सभी स्वरों के अनुनासिक प्रयोग मिलते हैं - इससे अर्थभेद होता है । हंस-हँस, सास-साँस ।
5) विवृत या संगम- वाक्य में प्रयुक्त शब्दों के बीच, अर्थ की स्पष्टता के लिए दिये गये क्षणिक विराम को (मौन को) संगम कहते है ।
   खाली-खा ली, तुम्हारे - तुम हारे आदि ।

काकु अर्थात् विशिष्ट लहजे में बोलने से भी अर्थभेद होता है- अच्छा, बस आदि शब्दों के उच्चारण के लहजे में अंतर करने से आश्चर्य, प्रश्न, निषेध आदि की अभिव्यक्ति होती है ।

2.3.7(3) स्वनिमिक विश्लेषण

स्वनिम विज्ञान के कुछ सिद्धांत ऐसे है जिसकी सहायता से किसी भाषा विशेष के स्वनिम अलग किये जा सकते है । स्वनिम को छाँटने की या अलग करने की प्रक्रिया स्वनिम-विज्ञान की भाषा विज्ञान को उपोदेयता मानी जा सकती है । स्वनिमों संबंधी विश्लेषण के अन्तर्गत कुछ सिद्धान्तों की चर्चा भाषा वैज्ञानिकों द्वारा की गयी है । स्वनिम विज्ञान की सम्पूर्ण प्रक्रिया इन्ही सिद्धान्तों को मानकर चलती है । वे इस प्रकार है -

ध्वनियों की प्रवृत्ति है कि वे आपसी वातावरण के कारण प्रभावित होती है । जीवित भाषाओं में ध्वनियों का उच्चारण स्वतंत्र रूप से या अलग-अलग कभी नहीं होता है । ध्वनियों का उच्चारण क्रम से ही होता है । ऐसी स्थिति में ध्वनियाँ समीपस्थ ध्वनियों से प्रभावित होती है। परंतु उन्हें लिपिबद्ध नहीं किया जा सकता ।

ध्वनि में साम्य की प्रकृति होती है । स्वनिम विज्ञान को जाननेवाला उस ध्वनि समूहों को भलीभाँति जानता है । इसलिए वह घोष-अघोष के आधार पर उस वर्ग की ध्वनि को सहज ही बता पाता है । जैसे क-ग,प-ब, और च स्वनिम है । ये जोडियाँ अघोष तथा घोष दोनों है तब वह च अघोष का घोष रूप ज यह क्रम बता पाता है । कारण भाषा के ध्वनि समूह की प्रवृत्ति साम्य की ओर होती है ।

एक ही ध्वनि का उच्चारण बार-बार करने से उच्चारण भिन्न होता । कारण मनुष्य का वागयंत्र एक समान ध्वनियों को उत्पन्न नहीं करता अर्थात् ध्वनियाँ परिवर्तनशील होती है, ध्वनियाँ अगर निरर्थक है तो उनके लिए स्वतंत्र स्वनिम नहीं बनाएँ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जाते । कल,काल,कील,केला में क[1] क[2] क[3] क[4] ध्वनियाँ है और वे अलग रूप में निरर्थक है । क्योंकि एक-एक करके उनका शब्दों में प्रयोग किया जाए तो अर्थ में परिवर्तन नहीं होता । इसलिए क ध्वनियाँ यहाँ अभेद है । दूसरा भाषा-भाषी इसे उच्चरित करता है तभी इसका अंतर हमें ज्ञात होता है ।

किसी भाषा का ध्वनिक्रम उस भाषा की अस्पष्ट ध्वनियों को स्पष्ट करने में सहायक होता है । अर्थात् इसके अनुसार प्रत्येक भाषा का अपना ध्वनिक्रम होता है । जो योजनाबद्ध होता है । ध्वनिक्रम में स्वर-व्यंजन, व्यंजन-स्वर होता है । इसके द्वारा उस भाषा के शब्द के संदिग्ध वर्णो को बताया जा सकता है । जैसे-हिन्दी व्यंजनों में प्रत्येक उच्चारण स्थान से सम्बधित एक वर्ग है । कोमल तालव्य - क वर्ग तालव्य,च वर्ग -मूर्धन्र्य, ट वर्ग-दन्त्य- त वर्ग और ओष्ठ्य-प वर्ग इसके बाद चार अंतस्थ और फिर उष्म-श,ष,स,और अंत में ह । इसके आधार पर स्वनिमों का निर्धारण किया जा सकता है ।

इसी प्रकार किसी भाषा के स्वनिमों और संस्वनों को जानने के लिए आधार वितरण का सिद्धान्त है । इसे मुक्त वितरण भी कहा जाता है । जब दो ध्वनियाँ एक ही स्थिति में आए और एक दूसरे के स्थान पर प्रयुक्त होने लगे और तब भी अर्थ परिवर्तन न हो तो दोनों को एक ही स्वनिम के अंतर्गत माना जाएगा । कानून-क़ानून, क़ागज-कागज में (क़-क) अर्थ की दृष्टि से परिवर्तन न होने से ये दोनों मुक्त वितरण है ।

परिपूरक वितरण का स्वरूप सह अस्तित्त्व की भावना से मिलता-जुलता है । दो या दो से अधिक ध्वनियाँ जो परस्पर अविरोधी हो, दोनों ध्वनियों के स्थान अलग-अलग होते हुए एक के स्थान पर दूसरे नहीं आ सकते ये दोनों विरोधी नहीं है । ऐसी ध्वनियाँ परिपूरक वितरण कहलाती हैं ।

इसके विपरित जब दो ध्वनियाँ एक ही स्थिति में आए और अर्थ में परिवर्तन लाये तो उन्हें व्यतिरेकी कहा जाता है । अर्थात् यहाँ-दो स्वनिम एक-दूसरे के पूरक नहीं होते हैं। इसलिए ध्वन्यात्मक संदर्भ में एक का ही प्रयोग होता है । यदि उसकी जगह दूसरे का प्रयोग किया जाए तो अर्थ संप्रेषण में बाधा आएगी या अर्थ ही विपरित हो जाएगा । जैसे-काम-कान इनमें म् तथा न् ध्वनियाँ व्यतिरेकी वितरण में है । व्यतिरेकी वितरण द्वारा किसी भाषा के (ध्वनिग्रामों) स्वनिमों का पता लगाया जा सकता है और शेष दो वितरणों द्वारा संध्वनियों का ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्वनिम के विश्लेषण द्वारा हम किसी भाषा के स्वनिमों का निर्धारण कर सकते है ।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न -

च. एक वाक्य में उत्तर लिखिए -

1) स्वन और स्वनिम में अंतर कौन सा है ?
2) स्वनिम की परिभाषा दीजिए।
3) खण्डेतर स्वनिम के उदाहरण बताइए ?
4) किसी भाषा के अधिकतम स्वनिम कितने होते है ?
5) संस्वन को जानने का आधार क्या हैं ?

2.4 स्वयं अध्ययन प्रश्न के उत्तर

क) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए ।

1) स्वन विज्ञान स्वन के संबंध में जानकारी देता है । स्वन संबंधी विशेष जानकारी जिसमें दी जाती है। उसे स्वनविज्ञान कहते हैं । इसके लिए अंग्रेजी में Phanetic वा Phonology शब्द का प्रयोग किया जाता है ।

2) मनुष्य के द्वारा भाषा स्वन के निर्माण के बारे में पतंजली लिखते हैं एक शब्द का शुद्ध ज्ञान और प्रयोग मनुष्य के लिए स्वर्गप्राप्ति के समान होता हैं ।

3) डॉ.उदयनारायण तिवारी के मतानुसार, स्वनविज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें वागेंद्रियों द्वारा उत्पादित स्वनों का सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक अध्ययन किया जाता है ।

4) स्वन विज्ञान की तीन शाखाएँ हैं -

1) औच्चरणिक स्वनविज्ञान - इसमें उच्चारण अवयव, उच्चारणकी प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2) सांवहनिक स्वन विज्ञान इसे सांचरिकी अथवा तरंगिकी स्वनविज्ञान भी कहते हैं। वक्ता के द्वारा उच्चरित स्वर लहरियों का संचारण का अध्ययन इसमें होता है।

3) श्रोतिकी स्वन विज्ञान- इसमें श्रवण प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है । ये तीनों स्वन विज्ञान की शाखाएँ है।

5) स्वनविज्ञान के अध्ययन के कारण शुद्ध उच्चारण सीखना, संचरण प्रक्रिया को जानना तथा स्पीच थेरेपी के लिए उपयोगी है। इससे श्रवण प्रक्रिया निर्दोष हो सकती है।

ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में लिखिए।

1) स्वन का उत्पादन बाहर छोडनेवाली हवा (उच्छ्वास) का अर्थात् श्वसन क्रिया का उपजात या बाय प्रॉडक्ट है।

2) घोष-अघोष, क्लीक्, फुसफुस स्वन स्वरतंत्री की विभिन्न अवस्थाओं के कारण उच्चरित होते हैं। स्वरतंत्रियों के शिथिल अवस्था में घोष स्वरतंत्रियों के एक-दूसरे के निकट आकर सट जानेसे अघोष, और आपस में जुटकर तनकर खडी हो जाने की स्थिति में क्लीक ध्वनियाँ निकलती हैं। तो स्वरतंत्रियों के दोनों परदे मिल जाते हैं परंतु नीचे की ओर का एक चौथाई भाग खुला रहता है तब फुसफुस ध्वनियाँ निकलती हैं।

3) स्वननिर्माण में जीभ का अत्याधिक महत्त्व है। जीभ के बिना स्वन का उच्चारण नहीं हो सकता। जीभ के द्वारा ही अधिकतर व्यंजनों का निर्माण होता है। जीभ के जिह्वानोंक,जिह्वाग्र, जिह्वामध्य,जिह्वापश्च, जिह्वामूल आदि भाग है। स्वन उत्पादन में जिह्वानोंक का सर्वाधिक उपयोग होता है। जिह्वानोंक के द्वारा दोनों को स्पर्श कर दंत्यस्वन (त,थ,द,न) मूर्द्धा को स्पर्श कर मूर्धन्य (ट,ठ,ड,ढ,ण,) तो वर्त्स्य स्वन न,र,ल,स,भी इसी द्वारा निर्माण होते हैं। जिह्वाग्र से तालव्य स्वन, जिह्वापश्च से आ,ओ, और व्यंजन कंठ्य स्वन उत्पन्न किये जाते है।

4) द्वयोंष्ट और दंत्योंष्ट्य स्वनों के उदाहरण प,फ,ब,भ,म द्वयोष्ट्य स्वन है तो दंतोष्ट्य व और फ स्वन है।

5) च,छ,ज,झ,य,श, हिन्दी के तालव्य स्वन है।

ग) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1) सामान्यतया भाषाविज्ञान में स्वन का प्रयोग तीन अर्थो मे किया जाता है- भाषा स्वन, स्वनिम या ध्वनिग्राम तथा स्वन सामान्य जिन्हें वर्ण भी कहा जाता है।

2) फेंफडों से बाहर निकलने वाली वायु को जिस स्थान पर बाधित किया जाता है उसे स्वननिर्माण का स्थान कहा जाता है। स्थान के आधार पर स्वनों वर्गीकरण किया जाता है। जैसे-काकल्य, जिह्वामूलीय, कण्ठ, तालव्य, मूर्धन्य, वर्त्स्य, दन्त्य, ओष्ठ्य, आदि।

3) मुखविवर से बाहर के अर्थात् स्वरतंत्रियों के होनेवाले प्रयत्न बाह्य प्रयत्न कहे जाते है। बाह्य प्रयत्न के आधार पर स्वनों का वर्गीकरण के ग्यारह भेद हैं, जो इस प्रकार हैं - विवार,संवार,श्वास, नाद,अघोष,घोष,अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित।

4) स्वर और व्यंजन में अंतर इस प्रकार है- स्वर के उच्चारण में निश्वास अबाध रूप से बाहर निकलता है। तो व्यंजन के उच्चारण में निश्वास अवरूद्ध होता है। स्वर अधिक मुखर होते हैं, इसलिए स्पष्ट सुनाई देते हैं। व्यंजनों में ऐसी मुखरता नहीं है। स्वर का उच्चारण निरंतर किया जा सकता है, व्यंजन का उच्चारण सतत नहीं हो सकता आदि।

5) स्वर वर्गीकरण के अनेक आधार है- जिह्वा के विभाग, जिह्वा की ऊँचाई, ओठों की स्थिति, उच्चारण समय, कौऐ की स्थिति, जिह्वा के चल-अचल होने की स्थिति तथा स्वरतंत्रियों की स्थिति स्वर वर्गीकरण के आधार हैं।

घ) टिप्पणियाँ लिखिए।

1) स्वनगुण - भाषा विज्ञान में स्वनगुण पर भी विचार किया जाता है। किसी स्वन के उच्चारण में लगनेवाला समय, बोलते समय लगनेवाला बल, उसका उच्चरित होने का ढंग ये सब बातें स्वनगुण के अंतर्गत आती हैं। इसी के आधार पर स्वनगुणों की चर्चा की गयी है। सामान्यता ये चार पाये जाते हैं। मात्रा, स्वराघात, बलाघात और वृत्ति। ये तत्त्व ध्वनियों के उच्चारण को प्रभावित करते हैं।

2) स्वनिक परिवर्तन के प्रकार - स्वनिक परिवर्तन के प्रमुख चार प्रकार माने गये हैं। 1) वर्ण का आगम 2) वर्ण का लोप 3)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वर्ण का विपर्यय या व्यत्यय तथा 4) वर्ण का विकार। आधुनिक भाषाविज्ञानी इसके अलावा समीकरण, विषमीकरण, मात्राभेद, घोषत्त्व, प्राणत्त्व, उष्मीकरण, अनुनासिकीकरण, संधिकरण, भ्रामक व्युत्पत्ति को भी शामिल करते हैं।

3) भौगोलिक कारण - स्वन परिवर्तन के कारण दो प्रकार है - आंतरिक और बाह्य। आंतरिक कारणों कें अंतर्गत प्रयत्नलाघव, अनुकरण, अपूर्णता, बलाघात, भावावेश, अज्ञान, अशिक्षा, त्वरा उच्चारण, प्रतिध्वनिप्रवृत्ति, लिपि की अपूर्णता, श्रुति, उपमान, बताये जा सकते हैं।

4) सांस्कृतिक भिन्नता-परिवर्तन के बाह्य कारण वक्ता के परिवेश से संबंधित होते हैं - वक्ता की और श्रोता की सांस्कृतिक भिन्नता स्वन परिवर्तन का मुख्य कारण है। मुस्लिम समाज में नमाज,अजान, रोजा, मुल्ला, औलिया, मजार तो हिन्दु समाज में आरती, पूजा, उपवास, व्रत, पुजारी, भगवान-भक्त शब्दों का विशिष्ट अर्थ है। यही बात क्रिश्चन, सिक्ख, जैन आदि में दिखाई देती हैं। रहन-सहन,खान-पान, पोषाख, रीति-रिवाज आदि का प्रभाव स्वनों पर पड़ता है।

च) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1) स्वन भाषा में प्रयुक्त ध्वनि है तो स्वनिम अर्थ भेदकारी ध्वनि है।

2) ''स्वनिम ऐसी मिलती-जुलती ध्वनियों का समूह होता है जो एक दूसरे से शब्दार्थ भेदकारी वैषम्य प्रदर्शित न करें। बाबूराम सक्सेना''

3) खण्डेतर स्वनिममात्रा-बलाघात-स्वराघात अनुनासिकता नजीम है।

4) किसी भाषा के अधिकतम स्वनिम ५० ते ६० तक होते हैं।

5) संस्वनों को जानने का आधार मुक्त वितरण है।

2.5 इकाई का सारांश

हम अपने मानसिक भाव, विचार, इच्छाएँ, कल्पनाएँ श्रोता तक भाषा के माध्यम से अर्थात, भाषा की ध्वनियों को मुँह से उच्चरित कर पहुँचाते हैं। संस्कृति, ज्ञान, सूचन, निर्देशन, भाषा की ध्वनियों से संभव हो सका है और श्रोता भी वक्ता द्वारा उच्चरित ध्वनियों को कानों से ग्रहण कर बिम्ब निर्माण कर मानसिक प्रत्यय-अर्थबोध पाता है।

भाषा की लघुतम इकाई ध्वनि अर्थात् वर्ण और भाषा वैज्ञानिक शब्दों में स्वन है। स्वनविज्ञान, भाषाई ध्वनियों का वैज्ञानिक अध्ययन विश्लेषण, वर्गीकरण, स्वन उत्पादन प्रक्रिया उच्चारण आदि का वैज्ञानिक अध्ययन करता है।

स्वन के तीन पक्ष है- उच्चारण, संवहन,ग्रहण। इसलिए स्वन विज्ञान की तीन शाखाएँ बनती है।

औच्चरणिक स्वनविज्ञान में हम उच्चारण अवयव का परिचय पाते हैं। स्वन उत्पादन का आधार फेंफडों से बाहर निकलनेवाली हवा (उच्छ्‌वास) है। यह हवा श्वासनली से होकर स्वरयंत्र में आती है। स्वरयंत्र में दो झिल्लियाँ होती हैं, जिन्हें स्वरतंत्रियाँ कहते हैं। स्वरतंत्री की पहली अवस्था से अघोष स्वनों का उत्पादन होता है। ये स्वन व्यंजन होते हैं। क से लेकर प तक के व्यंजन वर्ग के पहला और दूसरा स्वन अघोष है। (क, ख आदि)

स्वरतंत्रियों की दूसरी अवस्था में निर्गत हवा स्वरतंत्रियों से टकराकर बाहर निकलती हैं। इससे कंपन (घोष) उत्पन्न होता है। हिन्दी के सभी स्वर तथा व्यंजनों के पाँचों वर्ग के तीसरा चौथा पंचम वर्ण घोष हैं।

तीसरी अवस्था में स्वरतंत्रियाँ हवा की राह रोक देती है। इसलिए हवा भीतर लेते समय की ध्वनियाँ उत्पन्न होती है। जिन्हें क्लीक् ध्वनियाँ कहते हैं।

चौथी अवस्था में स्वरतंत्रियों का लगभग एक चौथाई भाग खुला रहने से फुसफुस ध्वनियाँ निर्माण होती है।

स्वरयंत्रमुख का अर्थ है- स्वरतंत्रियों के बीच का खुला भाग यहाँ से ह -काकल्य ध्वनि का निर्माण होता है। स्वरयंत्रावरण को अभिकाकल कहते है, इससें सुर साधा जाता है।

नासिकाविवर और स्वरयंत्रावरण के बीच जिह्वामूल के खाली स्थान को गलबिल कहते हैं। ग्रसनीकृत स्वनों का निर्माण यहाँ से होता है। कण्ठ कोमल तालु के नीचे का हिस्सा है। यहाँ से कण्ठ्य ध्वनियाँ निर्माण होती है। हिन्दी का 'क' वर्ग कण्ठ्य है। अलिजिह्वा कोमलतालु का अंतिम भाग है। अलिजिह्वा के कारण अरबी के नुक्ता स्वनों का निर्माण होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अनुनासिक, निर्नुनासिक स्वन भी निर्माण होते हैं। कारण अलिजिह्वा मुखविवर और नासिकाविवर के मार्ग को खोलते बंद करते हैं।

कठोर तालु वर्त्स से लेकर कोमल तालु तक का खुरदरा हिस्सा है। जीभ के स्पर्श से हवा को रोक कर तालव्य स्वनों का निर्माण होता है। च,छ,ज,झ,ञ,य,श।

मूर्धा उपर की दंतपंक्ति के निकट कठोर तालु के अंत तक के खुरदरे भाग को मूर्धा कहते है। यहाँ से ट,ठ,ड,ढ,ण, मूर्धन्य ध्वनियाँ निर्माण होती हैं।

ओंठ हवा को रोक कर व्यंजन स्वनों का निर्माण करते हैं - प,फ,ब,भ,म,ओष्ठ्य व्यंजन है।

जिह्वा भाषा उच्चारण में महत्त्वपूर्ण अवयव है। जीभ आगे आती है, पीछे जाती है, नीचे झुकती है ऊपर उठती है और वर्तुलाकार भी होती है। इसके आधार पर स्वरों का वर्गीकरण हुआ है। अग्र,मध्य,पश्च, विवृत्त, अर्धविवृत्त, संवृत्त, अर्धसंवृत्त, स्वर जिह्वा के भागों के कारण होते है।

स्वन के तीन अर्थ होते है- 1) भाषास्वन, अर्थात भाषा में प्रयुक्त सारी ध्वनियाँ 2) स्वनिम- अर्थभेद घटित करनेवाली किसी भाषा विशेष की वह स्वनात्मक लघुत्तम इकाई 3) स्वनसामान्य स्वर और व्यंजन इसमें आते हैं।

स्वन वर्गीकरण के आधार

स्थान-उच्छवास को जहाँ रोका जाता है उसे स्थान कहते हैं।

अग्रस्वर, मध्यस्वर, पश्चस्वर।

कण्ठ्य - तालव्य, वर्त्स्य, दन्त्य, ओष्ट्य और अलिजिह्विय

व्यंजन - स्थान के आधार पर व्यंजनों के भेद हैं -

प्रयत्न-स्वरतंत्रियों की विभिन्न अवस्थाओं के निर्माण को प्रयत्न कहते हैं। बाहरी और भीतरी ये दो प्रयत्न होते हैं। बाहरी प्रयत्नों में विवार,संवार,श्वास, नाद, अघोष, घोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित भीतरी से स्पर्श ध्वनियाँ निर्माण होती हैं।

तीसरा आधार करण है। करण गतिशील इंद्रियाँ होती हैं। अधर,अर्थात नीचे का ओंठ, जीभ, कोमल तालु और स्वरतंत्रियाँ करण हैं।

चौथा आधार श्रवणीयता है। इसकें आधार पर स्वर व्यंजन, अंतस्थ , अर्थात अर्धस्वर बनते हैं।

स्वन गुण कों ध्वनिलक्षण भी कहते हैं। स्थान और प्रयत्न के अलावा जो तत्त्व स्वन उच्चारण को प्रभावित करते हैं उन्हें स्वनगुण कहते हैं। मात्रा, अर्थात् उच्चारण में लगनेवाला समय के आधार पर ह्रस्वर-दीर्घ-प्लुत स्वनगुण हैं। दूसरा स्वनगुण सुर, ताल अथवा लय हैं। आरोह-अवरोह के आधार पर सुर, ताल के उदात्त, अनुदात, स्वरित ये तीन भेद होते हैं। वैदिक संस्कृत में इससे अर्थपरिवर्तन घटित होता था। बलाघात का अर्थ है - उच्चारण करते समय किसी ध्वनि पर बल पडता हैं इससे अंग्रेजी भाषा में अर्थ परिवर्तन घटित होते हैं। बलाघात के तीन भेद होते हैं- बलात्मक स्वराघात, संगीतात्मक स्वराघात, रूपात्मक स्वराघात।

वृत्ति का अर्थ है - उच्चारण की गति। स्वयं अभ्यास के लिए द्रुत, दूसरे से बात करने के लिए मध्यम और समझाने अध्यापन करने के लिए विलंबित वृत्ति होती है।

स्वनगुण के ज्ञान से भावों की अभिव्यक्ति में सहजता और सरलता आती है। बिना इन गुणों को जाने भाषा का सही व्यवहार वक्ता नहीं कर सकता।

स्वनपरिवर्तन-स्वनपरिवर्तन का अर्थ है शब्द में किसी वर्ग में आया परिवर्तन। यह परिवर्तन चार रूपों में होता है - आगम, लोप, विपर्यय और वर्णविकार। स्वन परिवर्तन की दिशओं का आधार ये चार बातें है। स्वनपरिवर्तन की दिशाओं को संक्षेप में एक चार्ट में आपके सामने प्रस्तुत किया जा रहा है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

दिशा	स्वरूप	उदाहरण
आगम	स्वर का आगम-स्वरागम	प्रारंभ में -स्पष्ट-अस्पष्ट,स्त्री-इस्त्री, मध्य में- मर्म-मरम, पाजेब-पाईजेब अन्त में- दवा-दवाई,स्वप्न-सपना
	व्यंजन का आगमन	प्रारंभ में-ओठ-होंठ,अस्थि-हड्डी मध्य में-शाप-सराप,सुनर-सुन्दर अन्त में-भौं-भौंह,रंग-रंगत
	अक्षरागम-स्वर-व्यंजन दोनों का आगमन	प्रारंभ में-गूँजा-घूँघची,स्फोट-विस्फोट मध्य में-खल-खरल,जेल-जेहल अन्त में-डफ-डफली,आँख-आँखडी
लोप लुप्त होना	स्वर का लोप	प्रारंभ में -अनाज-नाज,अगर-गर मध्य में-गरदन-गर्दन,डेपुटी-डिप्टी अन्त रीति-रीत,पद्धति-पद्धत
	व्यंजन का लोप	प्रारंभ में-स्कंध-कंधा,स्फूर्ति-फूर्ति मध्य में-कोकिल-कोयल,प्रिय-पिय अन्त में-निंब-निम,सत्व-सत
	अक्षर लोप	प्रारंभ में-त्रिशूल-शूल,उमराव-राव मध्य में-फलाहार-फलार,भांडागार-भंडार अन्त में-भ्रातृजाया-भावज,नीलमणि-नीलम
	सम अक्षर	नाककटा-नकटा,खरीददार-खरीदार
विपर्यय	स्वर का स्थानपरिवर्तन होना व्यंजन का स्थान परिवर्तन अक्षर का स्थान परिवर्तन	कुछ-कछु,अँगुली-ऊँगली डूबना-बूटना,जलेबी-जबेली कोलतार-तारकोल,मतलब-मतबल
समीकरण (सावर्ण्य)	पुरोगामी-पहलेवाला स्वन बादवाले को अपने समान बना लेता है।	जुल्म-जुलुम,हुक्म,हुकूम (स्वर) पत्र-पत्ता,चक्र-चक्का (व्यंजन)
	पश्चगामी-बादवाला स्वन पहलेवाले को अपने समान बना लेता हैं।	अँगूली-ऊँगली,श्वसुर-ससुर(स्वर) शर्करा-शक्कर,दण्ड-डण्डा(व्यंजन)
विषमीकरण	समीकरण के विपरित	
पुरोगामी		पुरूष-पुरिस,भित्ति-भीत(स्वर) कंकण-कंगन,काक-काग(व्यंजन)
पश्चगामी		नुपूर-नेऊर,मुकुट-मौर (स्वर) नवनीत-लवनी,दरिद्र-दलिद्दर (व्यंजन)
मात्राभेद	ह्रस्व से दीर्घ होना	जिह्वा-जीभ,दुग्ध-दूध
	दीर्घ से ह्रस्व	आषाढ-असाढ,आभीर-अहिर
घोषत्त्व	अघोष का घोष होना घोषीकरण घोष का अघोष-अघोषीकरण	काक-काग,शाक-साग मेघ-मेख,मदद - मदत
प्राणत्त्व	उच्चारण में लगनेवाली हवा अल्पप्राणीकरण-महाप्राण,	भीख-भीक,भगिनी-बहिन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

	से अल्पप्राण	
	महाप्राणीकरण अल्पप्राण	
	का महाप्राण	गृह-घर, हस्त - हाथ
उष्मीकरण	स,श,ष में परिवर्तित होना	केंतुम-शतम्, डेका, दश
अनुनासिकीकरण	अनुनासिक स्वन होना	सत्य-साँच, अश्रु-आँसू
संधिकरण	दो शब्दों का एक शब्द होना	भौंह-भौं,सऊ-सौ
भ्रामक व्युत्पत्ति		इन्तकाल-अन्तकाल, लायब्ररी रायबरेली

स्वन परिवर्तन के कारण

स्वन परिवर्तन के कारणों के दो प्रकार हैं - आंतरिक और बाह्य। आंतरिक कारण मोटे रूप में वक्ता के आंतरिक कारण होते हैं। तो बाह्य कारण भौगोलिक, राजनीतिक, सामाजिक और श्रोता से संबंधित होते हैं। इन कारणों से भाषा के ध्वनिस्तर पर परिवर्तन होता हैं।

कारण	स्वरूप	उदाहरण
प्रयत्नलाघव	कम प्रयत्न करना। कठिन, क्लिष्ट स्वनों का उच्चारण न करना। शब्दों को संक्षिप्त करना आदी।	स्टेशन सटेशन इस्टेशन उपाध्याय ओझा झा बी.ए.,एम.ए.,आर.जी.,बी.जे.पी.,इंका, नीलू आर्ट
अनुकरण की अपूर्णता	वाग अवयव की भिन्नता, श्रोतेंद्रीय के कारण स्वनों का अनुकरण पूर्ण नहीं हो पाता।	मंत्रमंतर, ब्रज बिरज अहमदाबाद अमदाबाद डॉक्टर डाक्दर, वाराणसी बनारस
बलाघात	बल के कारण स्वन के इर्द गिर्द के स्वन निर्बल होकर लुप्त हो जाते हैं।	बिल्व-बेल,आभ्यंतर-भीतर
भावावेश	भावों की तीव्रता को व्यक्त करना	राम-रामू,रामूडा, राम्या, बेटी-बिटियाँ
अज्ञान,अशिक्षा	अज्ञान और अशिक्षा के कारण वर्णविपर्यय विषमीकरण, समीकरण हो जाता है।	जलेबी-जबेली,लैंटर्न-लालटेन, रिपोर्ट-रपट हास्पिटल,अस्पताल शाप-श्राप
त्त्वरा उच्चारण	शीघ्रता से बोलना	मास्टरसाहब-मास्साब, चुरमा-चुमा, थैंकयू-थैंकू,कॅननाट-कान्ट
प्रतिध्वनिवृत्ति	प्रतिध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग	घर-बार,अडोस-पडोस,चाय-वाय आलू-चालू
लिपि की अपूर्णता	अन्य भाषा को हम लिखित रूप में सिखते है पर दूसरी भाषा में वे लिपिचिन्ह न होने से स्वनपरिवर्तन घटित होता है।	गुप्त-गुप्ता,राम-रामा,दिल्ली-देहली
श्रुति	स्वन उच्चारण का अनार	इंद्र-इंदर,स्टूल-इस्टूल,कर्म-करम, प्रसाद-परसाद
उपमा	अंध सादृश्यता	स्वर्ग-नर्क,दु:ख-सु:ख, देहाती-शहराती बाह्य कारण
भौगोलिक	भौगोलिक परिस्थितियाँ जीवनयापन, पद्धति,संपर्क	उष्ट्र-ऊँट, (भैंसा-से-ऊँट) सिंध-हिंद

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

राजनीतिक	अशांति,युद्ध ,अकाल से	यजमान जजमान,कृष्ण किसन
सामाजिक	फुसफुस स्वनों का विकास	किसन किशुन
परिस्थितियाँ	होता है।	
	अन्य देशों से संपर्क बढता है और विदेशी भाषाओं का आगमन होता है।पढ़े-लिखे -अनपढ़ में अंतर आता है।	नुक्ता का आगमन और एँ आँ का आगमन
कालपरिवर्तन	संस्कृत,पालि,प्राकृत,अपभ्रंश से ऐतिहासिक विकास क्रम	बॉम्बे-बम्बई-मुम्बई , कर्म-कम्म-काम
सांस्कृतिक	सांस्कृतिक परिवेश भिन्नता	
भिन्नता	वक्ता और श्रोता में नवीन शब्दों का आगमन करता है।	चर्च,मदरसा,नन
	धार्मिक शब्द,	मौलवी-मज़ार
	सामाजिक व्यवहार	नमस्कार,प्रणाम,गुडडे, थैंकयू,प्लीज
	खान-पान	हलवा,कुल्फी,बटर,ब्रेड,सॉफ्ट ड्रिंक
	वस्तुएँ	टेबल,सोफा,मिक्सर, लैंप
	पहनावा	पैंट,शर्ट,टॉप,टाय,पाजामा,कुरता

स्वनिम विज्ञान

स्वनिम विज्ञान को ध्वनिग्राम विज्ञान भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे फोनिमिक्स कहते हैं। स्वनिम विज्ञान में किसी भाषा या बोली के स्वनिम, संस्वन का ''निर्धारण'' होता है। स्वनिम परिवार के सदस्यों को संस्वन कहा जाता हैं। संस्वन और स्वनिम को दर्शाने के लिए अलग-अलग चिन्हों का प्रयोग किया जाता हैं। स्वनिम के लिए दो तिरछी देखाएँ (//)और संस्वन को कोष्ठक द्वारा [ ] निर्देशित किया जाता है। डेनियल जोन्स-स्वनिम को इस तरह परिभाषित करते हैं- ''स्वनिम किसी भाषा के ऐसे स्वनों का एक परिवार होता है जो अपने स्वभाव में परस्पर संबद्ध होती है और जिनका प्रयोग इस तरह होता है कि एक ध्वन्यात्मक संदर्भ में जो स्वन आता है वहाँ दूसरे स्वन का प्रयोग नहीं हो सकता।''

ध्वनिविज्ञान की जिस शाखा द्वारा किसी भाषा के स्वनिमों का पता लगाकर-उनका विश्लेषण और वर्गीकरण किया जाता है उसे स्वनिमविज्ञान कहते है।

स्वनिम के दो भेद हैं- (i) खण्ड स्वनिम-इसमें स्वर और व्यंजन सभी स्वन आते हैं। (ii) खण्डेतर स्वनिम-खण्डय स्वनिम के सहायक बनकर आते हैं। मात्रा, बलाघात,स्वराघात, अनुनासिकता, संगम,लहजा आदि खण्डेतर स्वनिम के उदाहरण हैं।

किसी भाषा के स्वनिमों और संस्वनों को जानने के लिए वितरण के सिद्धान्त को अपनाया जाता हैं। मुक्त वितरण में दो ध्वनियाँ एक ही स्थिति में आने पर अर्थ परिवर्तन न करें तो वे संस्वन कहलाएगी, जैसे-कागज़-कागज।

परिपूरक वितरण में दोनों ध्वनियों का स्थान अलग-अलग होता है पर वे एक दूसरे के स्थान पर नहीं आती। परंतु व्यतिरेकी में अर्थ बदल जाता है। इसलिए व्यतिरेकी वितरण द्वारा स्वनिमों का ज्ञान होता हैं और अन्य द्वारा संस्वन का।

2.6 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

प्रश्न के उत्तर दीजिए

1. वागअवयव का परिचय दीजिए। 2.स्वर वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।
3. स्वनिम की परिभाषा देते हुए निर्धारण पद्धतियों का सोदाहरण परिचय दीजिए।
4. स्वन की परिभाषा देते हुए स्वन परिवर्तन की दिशाओं का विवेचन कीजिए।
5. स्वन परिवर्तन का स्वरूप देकर स्वन परिवर्तन के कारणोंपर सोदाहरण प्रकाश डालिए।

टिप्पणियाँ लिखिए

1. स्थान के आधार पर व्यंजन वर्गीकरण 2. जिह्वा और स्वर वर्गीकरण 3. स्वरतंत्रियाँ
4. स्वन-स्वनिम संस्वन में अंतर
5. स्वनिम के भेद

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई 3

रूपविज्ञान और वाक्य विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 विषय विवरण

3.3.1 रूप प्रकिया का स्वरूप

3.3.2 रूपिम की अवधारणा और भेद

3.3.क. मुक्त-आबद्ध

3.3.ख. अर्थदर्शी और संबंधदर्शी

3.3.ग. संबंधदर्शी रूपिम के भेद और प्रकार्य

3.४ वाक्य की अवधारणा

3.4.1 अभिहितान्वयवाद और अन्विताभिधानवाद

3.4.2 वाक्य के भेद,

3.4.3 वाक्य विश्लेषण

3.4.4 निकटस्थ अवयव विश्लेषण

3.4.5 गहन संरचना और बाह्य संरचना

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

3.6 स्वयं अध्ययन प्रश्न के उत्तर

3.7 सारांश

3.8 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

3.१ प्रस्तावना -

अर्थ संप्रेषण का सर्वोत्तम साधन भाषा है । उच्चारण की दृष्टि से भाषा की लघुतम इकाई स्वन है और अर्थवत्ता की दृष्टि से शब्द है । क, च, ट, त, प, स्वन है किन्तु इनका कोई अर्थ नहीं परंतु जब,कल, चल, टल, पल, आदि स्वन समूह अर्थ को प्रकट करते हैं तो ये समूह शब्द कहलाते हैं ।

शब्द अर्थतत्त्व है परंतु इनका ज्यों का त्यों वाक्य में प्रयोग नहीं हो सकता । वाक्य भाषा की महत्तम इकाई है । कारण वाक्यों से भाषा बनती है । जैसे मैं पुस्तक पढ ये तीन शब्द है । पर ये तीनों एक साथ आने पर भी सही अर्थ नहीं दे पा रहे हैं । सही अर्थ के लिए मैं पुस्तक पढूँगा या मैं पुस्तक पढूँ ? ऐसा करना होगा। वाक्य के शब्दों में यह जो परिवर्तन होता है उसका जिस विज्ञान में अध्ययन किया जाता है उसे रूपविज्ञान कहते है ।

कोश में दिये हुए शब्दों के अर्थ होते हैं पर जब वे वाक्य में प्रयुक्त होते हैं तो उस शब्द के रूप बदलते हैं । जैसे -'पढ़' धातु के रूप हैं - पढ़ना, पढ़ता है, पढ रहा है, पढ रहा होगा, पढ़ा,पढ़ेगा , पढ़ूँ,पढ कर, पढ़ता, पढ़ने को आदि अनेक शब्द बनते हैं, जिन्हे रूप कहते हैं ।

शब्द से अर्थ है विभक्ति विहीन अर्थ । जिसे प्रातिपदिक भी कहते है तो रूप का अर्थ है- विभक्तियुक्त । इस संदर्भ में पाणिनि लिखते हैं - ''सुप्तिङ्न्तं पदम्'' (अष्टाध्यायी 1/4/141)

शब्द (अर्थतत्त्व) + विभक्ति (संबंधतत्त्व) बनकर रूप बनता है । रूप में अर्थ और संबंध दोनों तत्त्व होते हैं । रूप को अंग्रेजी में orph कहते है ।

रूपों का समूह वाक्य कहलाता है । वाक्य भाषा की पूर्ण सार्थक इकाई है । भाषा का प्रयोग, भाषा का समझना वाक्य में ही होता है । वाक्य के आधार पर विद्वानों ने संसार की भाषाओं को वर्गीकृत किया है। जिसे वाक्यमूलक अथवा

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

रूपात्मक या आकृतिमूलक वर्गीकरण कहते हैं। (मॉर्फालॉजिकल क्लासिफिकेशन)

इस प्रकार योगात्मक अयोगात्मक, श्लीष्ट -प्रश्लीष्ट वाक्य आकृति के आधार पर बनते हैं। इसका विवेचन इस इकाई का लक्ष्य है।

३.२ उद्देश्य -

प्रिय छात्रों,इस इकाई को पढ़ने के बाद आप,

1) रूपतत्त्व और उसकी प्रक्रिया को जान पाएंगे ।
2) रूप-संरूप-रूपिम के साम्य-वैषम्य को समझ पाएंगे।
3) अर्थतत्त्व में संबंधतत्त्व के कारण लिंग, वचन, कालगत अर्थ को समझ पाएँगे ।
4) रूपिम निर्धारित करते हुए उसके प्रकारों को जान पाएँगे ।
5) वाक्य का महत्त्व उसकी आवश्यकता से अवगत होंगे।
6) वाक्य विश्लेषण को समझते हुए वाक्य के भेद और उसकी संरचना को जान पाएंगे ।
7) साथ ही आप वाक्य निर्माण कर अर्थ संप्रेषण का साधन भाषा का सही प्रयोग और उसकी बारिकियाँ समझ सकेंगे ।

3.3 विषय विवरण

3.3.1 रूप प्रक्रिया का स्वरूप

प्रिय छात्रों रूप प्रक्रिया जानने से पूर्व हमने प्रस्तावना मे रूप को समझने का प्रयास किया । अब हम रूप की परिभाषा पर विचार करेंगे ।

मारिओ पेई रूप की परिभाषा इस प्रकार देते हैं , "The word may be defined, from the mechanical stand-point, as a succession of speech sounds conventionally arranged, it may also be defined from the semantic end as the most elementary speech unit of meaning."

(Morio Pei- The story of Language -Page No.115)

अर्थात ''रचना की दृष्टि से शब्द परम्परा से एक विशेष क्रम में बँधे ध्वनि समूह को रूप कहते हैं। अर्थ की दृष्टि से रूप भाषा की सब से छोटी सार्थक इकाई है ।''

द्वारिका प्रसाद सक्सेना के मतानुसार - ''इस शब्द का रूप कहते है जो विभक्ति, प्रत्यय या परसर्ग का संयोग ग्रहण कर तथा वाक्य में प्रयुक्त होकर अर्थबोध एवं भावबोध में समर्थ होता है ।''

शब्द और रूप के अन्तर को हम एक उदाहरण से समझेंगे ।

राम ने रावण को मारा । इसमें राम + ने रावण + को मारा में मूल धातु 'मार' और संबंधतत्त्व आ है जो पुल्लिंग, भूतकाल, एकवचन को व्यक्त करता है । इसमें राम रावण मार अर्थतत्त्व है तो, ने, को, आ संबंधतत्त्व है ।

प्रत्यय दो प्रकार के होते है -(i) एक व्युत्पादक (शब्दसाधक) (ii)दो व्याकरणिक (पदसाधक)

जो प्रत्यय धातु (प्रकृति)अर्थात शब्द के मूल रूप में जुड़कर शब्द का निर्माण करते हैं, उन्हें व्युत्पादक (शब्दसाधक) कहते हैं । जैसे 'हिंस्' धातु में 'अच्' प्रत्यय लगकर सिंह शब्द बना हैं । हिंस् का अर्थ है मारना, घायल करना, वध करना मूल शब्द है- हिंस् । वर्ण विपर्यय से सिंह शब्द बना । इसलिए यहाँ शब्द साधक प्रत्यय 'अच्' है । ''सिंह: वने: गर्जति'' इस वाक्य में सिंह: का विसर्ग कर्तासूचक है । वने का ए अधिकरण कारक सूचक है । गर्जति की 'ति' वर्तमानकाल, अन्यपुरूष, एकवचन सूचक है । इसलिए ये तीनों पदसाधक प्रत्यय (संबंधतत्त्व) है । इन्हे व्याकरणिक प्रत्यय भी कहते है ।

संबंधतत्त्व के प्रकार

भिन्न-भिन्न भाषाओं की संबंधतत्त्व को दर्शानेवाली भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ है । इन पद्धतियों के आधार पर अयोगात्मक, योगात्मक अश्लिष्ट, योगात्मक और प्रश्लिष्ट योगात्मक ये चार पद्धतियाँ बनती हैं । अयोगात्मक में संबंधतत्त्व नहीं होते । इसे शून्य संबंधतत्त्व कहते हैं। जैसे कमल चल । अश्लिष्टयोगात्मक में संबंधतत्त्व अर्थतत्त्व में तिलतंदुलवत जुड़ते हैं । जैसे

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

उदारता पवित्रता, तो श्लिष्ट योगात्मक मे संबंधतत्त्व अर्थतत्त्व में घुल-मिल जाते हैं। जैसे सुंदर सौदर्य, इहऐहिक। प्रश्लिष्ट योगात्मक में संबंधतत्त्व घुल-मिल जाते हैं। जैसे मैं जाता हूँ के लिए गच्छमि शब्द का गच्छामि प्रयोग होता है।

चीनी भाषा अयोगात्मक है। इसलिए शब्द के स्थान से ही संबंधतत्त्व स्पष्ट हो जाता है। हिन्दी -अंग्रेजी में भी ऐसा ही होता है। जैसे मोहन दिपक मार-दिपक मोहन मार, मेंढ़क साँप खाता है - साँप मेंढ़क खाता है।

(1) स्वतंत्र संबंधतत्त्व- कई भाषाओं में संबंधतत्त्व अर्थतत्त्व के साथ न जुड़कर अपनी पृथक सत्ता बनाएँ रखकर कार्य करते हैं। जैसे अंग्रेजी के to,on,upon,of by from in आदि तो हिन्दी मे, नें, को, से, में, पर, के लिए आदि ।

(2) प्रत्यय- संबंधतत्त्व अर्थतत्त्व के आदि, मध्य या अन्त में कहीं भी जुड़ सकते हैं। जैसे-प्रारंभ में जुड़नेवाले प्रत्यय पुरप्रत्यय अर्थात् उपसर्ग कहलाते हैं। जैसे प्रदेश- अपमान, दुर्जन, सुलभ ऐसे संस्कृत में बाईस उपसर्ग है। अंग्रेजी में भी इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं - Call-recall, ceive-Recive, turn-Return आदि।

मध्यप्रत्यय अर्थतत्त्व के मध्य में जुड़नेवाली संबंधतत्त्व को मध्य प्रत्यय कहते हैं - संथाली भाषा मध्यप्रत्यय प्रधान है। जैसे- मंझिमुखिया-मपंझि-मुखियागण। हिन्दी की प्रेरणार्थिक क्रियाएँ-मध्यप्रत्यय के उदाहरण है। जैसे- लिखना-लिखाना, (आ) लिखवाना (वा)

अन्त्यप्रत्यय इन्हें विभक्ति प्रत्यय भी कहते हैं जो -अर्थतत्त्व के अंत में जुड़ता है। जैसे- लिंग सूचक प्रत्यय आ-इ है।

लड़क-आ-लड़का, लड़क-इ- लड़की, सिंह -सिंहनी

(3) स्वन प्रतिस्थापन-

इनके तद्धित और कृत दो प्रकार हैं। स्वन के दो प्रकार है - स्वर और व्यंजन। स्वनप्रतिस्थापन भी संबंधतत्त्व का कार्य करते हैं। पहले हम स्वर का उदाहरण लेंगे। जैसे अरबी-क-त-ब, किताब - (पुस्तक),कुतुब (पुस्तकें) हिन्दी में,चल-चला।

व्यंजन प्रतिस्थापन के उदाहरण में अंग्रेजी के उदाहरण प्रस्तुत है-

Send (भेजना), Sent (भेजा),-d के स्थान पर t के प्रतिस्थापन से वर्तमानकालिक क्रिया भूतकालिक हो गयी।

(4) शब्द प्रतिस्थापन -

कभी-कभी एक शब्द के स्थान पर पूर्णतया नया शब्द आ जाता है। इसे हम शब्दादेश कह सकते है। यह नया आनेवाला शब्द संबंधतत्त्व का कार्य करता है। जैसे- हिन्दी में जाना (क्रिया) वर्तमानकाल में है तो गया भूतकाल है। अंग्रेजी और संस्कृत में भी ऐसा ही होता है। जैसे go>went अस् (होना), बभूव (हुआ) उदाहरण है।

(5) स्वनगुण -

स्वनगुण तीन है-मात्रा, सुर,बलाघात। ये तीनों संबंधतत्त्व को सूचित करते हैं। मात्राएँ दो होती है-ह्रस्व, दीर्घ-हिन्दी की प्रेरणार्थक क्रियाएँ मात्रा भेद के उदाहरण हैं। जैसे सुनना स्वयं द्वारा सुनने की क्रिया करना, सुनाना-दूसरे को सुनाने की क्रिया का बोध, सुर-चीनी भाषा सुरप्रधान है। सुर परिवर्तन से एक ही शब्द के भिन्न अर्थ होते हैं। संस्कृत-इंद्रशत्रु-सुरपरिवर्तन के कारण शत्रु इंद्र के बदले इंद्र की शत्रु अर्थ हो गया और स्वयं मारा गया।

बलाघात -

बल के कारण संज्ञा क्रिया में परिवर्तित हो जाती है, अंग्रेजी बलाघात प्रधान भाषा है। जैसे-कण्डक्ट ढछ्ध्ट्टत्त (संज्ञा-चरित्र) Condu'ct (क्रिया-संचालन करना)

(6) शून्य संबंधतत्त्व -

कई बार केवल अर्थतत्त्व ही संबंधतत्त्व सूचित करता है। संस्कृत में जैसे-अवन्-वह-उसका,अवन पोगिराना वह जाता है।

हिन्दी में आज्ञार्थक क्रियाएँ-इस श्रेणी की हैं - जा-तू जा,चल-तू चल

Jain Vishwa Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हिन्दी में वचन तथा लिंग सूचक ऐसे शब्द है- एक वचन-लिंगवचन, स्त्री-लिंग-पुल्लिंग दोनों का द्योतन करते हैं मक्खी, छिपकली, शक्कर आदि।

(7) शब्दस्थान -

वाक्य में शब्द के स्थान से भी संबंधतत्त्व का बोध होता है। समास में स्थान का महत्त्व है। जैसे मल्लग्राम-मल्लों का गाँव-ग्राममल्ल-गाँव का मल्ल।

चीनी भाषा का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

वो-ता-नी - मैं तुझे मारता हूँ।

नी-ता-वो- तू मुझे मारता हैं।

(8) आवृत्ति -

शब्द की आवृत्ति से भी संबंधतत्त्व प्रकट होता है। जैसे - हिन्दी में दिन-दिन का अर्थ हर दिन होता है।

ऊपर बताये संबंधतत्त्वों के प्रकारों के विवेचन से ऐसा नहीं मानना चाहिए कि कोई एक भाषा संबंधतत्त्व के किसी एक रूप को ही अपनाती है। भाषा कई प्रकार के संबंधतत्त्वों का उपयोग करती है , कर सकती है, मात्राएँ कम-ज्यादा हो सकती है। इसलिए उपरोक्त प्रकारों में उदारहण देते समय किसी एक भाषा -विशेष का ही उल्लेख किया गया है।

अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का संयोग -अभी हमने संबंधतत्त्वों के विभिन्न प्रकार देखें। अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का पारस्परिक संबंध सभी भाषाओं में एक जैसा नहीं होता। हमे इस बात का पता चलता है। इन दोनों के परस्पर संयोग के निम्नप्रकार दिखायी देते हैं -

(1) पूर्ण संयोग-अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व एक दूसरे में घुल-मिल जाते हैं। जैसे- अरबी का शब्द है, क्,त्,ल,जिसका अर्थ है मारना। इससे शब्द बनें कतल-उसने मारा, कुतिल-वह मारा गया,कातिल् हत्यारा, किल्ल-दुष्मन, कितल-चोट, कत्ल-आघात आदि अनेक रूप बनें है। अंग्रेजी का एक उदाहरण द्रष्टव्य है-Foot पाँव, Feet-दोनों पाँव।

(2) अपूर्ण संयोग-अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व मिले हुए दिखते हैं पर अलग-अलग भी झलकते हैं। जैसे नाई-नाईन,सिंह-सिंहनी

अंग्रेजी में Ask-asked

(३) दोनों स्वतंत्र -अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व दोनों अलग-अलग दिखायी देते हैं। हिन्दी अंग्रेजी के उदाहरण हमने पूर्व में लिये है। एक वाक्य देखिए राम ने रावण को बाण से मार डाला। ने, को, से अलग-अलग है।

(4) प्रत्येक -अर्थतत्त्व के साथ संबंधतत्त्व का प्रयोग- संसार की कुछ भाषाएँ ऐसी है जिनके प्रत्येक अर्थतत्त्व के साथ संबंधतत्त्व जुड़ता है इससे एक प्रकार की संगीतात्मकता का आगमन होता है। आफ्रिका की बान्टू परिवार की भाषा का उदाहरण प्रस्तुत है-

मुन्तुमुलोटु-मु-अर्थात एकवचन सूचक प्रत्यय

न्तु-आदमी

लोटु-सुंदर

एक सुंदर आदमी।

शब्द विभाग

शब्द के बारे में पतंजली में लिखा है - 'स्फोट : शब्द' इसे व्याख्यायित करते हुए वे आगे लिखते हैं - कान से प्राप्त, बुद्धि से ग्राह्य, प्रयोग से स्फुटित होनेवाली-आकाश व्यापी ध्वनि शब्द है। भर्तृहरि के मत से संसार का कोई ऐसा ज्ञान नहीं जिसकी प्रतीति शब्द के बिना संभव हो। संसार का समस्त ज्ञान शब्द से ही जाना जा सकता है। अंग्रेजी विद्वानों ने भी इसी तरह की बात कही है। उल्मेन के मत से ''शब्द भाषा की लघुत्तम, महत्त्वपूर्ण इकाई है।'' (The smallest significant Unit of language)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

स्वीट के मत से ''लघुत्तम अर्थवान इकाई शब्द है'' (An Ultimate Sense Unit)

पामर के मत से ''भाषा की ऐसी लघुत्तम इकाई जो अर्थवान उच्चारण के रूप में काम कर सके उसे शब्द कहते हैं।'' (The smallest speech Unit Capable of functioning as a complete Utterance)

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मत से-''अर्थ के स्तर पर भाषा की लघुत्तम, स्वंतत्र इकाई शब्द है।''

संस्कृत के वैयाकरण यास्क मुनि ने शब्द अथवा पद के चार विभाग माने हैं -

चत्त्वारि पद्जानाति नामाख्यातोपसर्ग निपाताश्च।

अर्थात् 1) नाम (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण), 2) आख्यात (क्रिया), 3) उपसर्ग (पूर्व-प्रत्यय) तथा 4) निपात (अव्यय)

(1) नाम - नाम को हिन्दी में संज्ञा कहते हैं, अंग्रेजी में इस Noun कहते हैं। जिस पद से व्यक्ति वस्तु, स्थान,भाव, जाति,द्रव्य आदि का बोध होता हो उसे संज्ञा कहते हैं। इस परिभाषा के आधार पर संज्ञा के पाँच प्रकार बनते हैं।

व्यक्तिवाचक संज्ञा, जो व्यक्ति, वस्तु, स्थान का बोध कराती है - रमेश, आम, दिल्ली,

जातिवाचक संज्ञा-जो संज्ञा उस जाति के सभी प्राणियों अथवा वस्तुओं का बोध कराती है उसे जातिवाचक संज्ञा कहते हैं - मनुष्य, पशु, शहर, गाँव, पेड, पुस्तक।

भाववाचक संज्ञा मानसिक भाव दशा का बोध कराती है मनुष्यता, सुंदरता, पढ़ाई, देवत्त्व, अपतत्त्व,परायापन, बचपन आदि।

द्रव्यवाचक संज्ञा द्रव्य का बोध कराती है- पानी, दूध, तेल, घी, सोना,चांदी तांबा।

समूहवाचक संज्ञा समुदायका बोध कराती है-परिवार,सेना, भीड, सभी आदि।

नाम के अंतर्गत ही सर्वनामों का विचार होता है जिसे अंग्रेजी में Pronoun कहते हैं। संज्ञा के बदले जिनका प्रयोग होता है उन्हें सर्वनाम कहते है। सर्वनामों की रचना, वक्ता, श्रोता, अन्य के आधार पर हुई है। इसे पुरूष कहते हैं -

पुरूष	एकवचन	बहुवचन	लिंग
उत्तम (First person)	मैं	हम	स्त्री/पुरूष दोनों के लिए प्रयुक्त
मध्यम (Second person)	तू,आप	तुम,आप	स्त्री/पुरूष दोनों के लिए प्रयुक्त
अन्य (Third person)	यह,वह	ये,वे	स्त्री/पुरूष दोनों के लिए प्रयुक्त

पुरूषवाचक सर्वनामों के लिंग का निर्धारण क्रियापदों से होता है।

क) निश्चयवाचक सर्वनाम - निश्चित बोध-व्यक्ति अथवा वस्तु का ये बोध कराते हैं। यहे, वह, ये, वे।

ख) अनिश्चयवाचक सर्वनाम- संकेत या निर्देश करानेवाले ये सर्वनाम निश्चित व्यक्ति अथवा वस्तु का बोध नहीं कराते । कोई, कुछ, किसी।

ग) संबंधवाचक सर्वनाम- व्यक्ति या वस्तु में संबंध का बोध करानेवाला। मेरा, तुम्हारा, मेरी,मेरे,तुम्हारे,तुम्हारी।

घ) प्रश्नवाचक सर्वनाम - प्रश्न का बोध होता है-क्या, कौन, कैसे, कहाँ, क्यों, किसलिए ?

च) निजवाचक सर्वनाम-वे होते है जो स्वयं का प्रदर्शन करते है, स्वयं, खुद,आप.

विशेषण-

जो पद संज्ञा की विशेषता बताकर अर्थ को मर्यादित तथा निश्चित कर देते हैं उसे विशेषण कहते हैं। विशेषण विशेष्य

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

की विशेष्यता प्रकट करता है। जैसे- लाल गुलाब। लाल-विशेषण, गुलाब-विशेष्य।

विशेषण के अर्थ केअनुसार पाँच भेद हैं ।

गुणवाचक विशेषण गुण निर्दिष्ट करनेवाला -काला,पतला,सफेद, मैला,बदमाश।

परिमाण वाचक विशेषण जो मात्रा या परिमाण बनाएँ - थोड़ा, तनिक, जरा सा।

संख्यावाचक विशेषणपूर्ण या अपूर्ण संख्या को सूचित करता है, आधा, एक, डेढ़, पहला,दूसरा,तीसरा, चौथा, सैंकडा।

व्यक्तिवाचक विशेषण - गाँव, व्यक्ति आदि का बोध कराते हैं- हिंदुस्तानी,भारतीय, बंबईया, राजस्थानी, मारवाडी, कनोजिया, देहाती, शहराती।

सार्वनामिक विशेषण - निजवाचक सर्वनामों को छोड़ कर सभी सर्वनाम इस श्रेणी में आते है। जैसे इस लड़की का नाम मीना है।

(2) आख्यात -

आख्यात को क्रिया कहते हैं। क्रिया के लिए अंग्रेजी में Verb शब्द का प्रयोग होता है। क्रियाबोधक शब्द क्रियापद कहलाता है। क्रिया का मूल रूप 'धातु' कहलाता है। जैसे पढ़ लिख,चल,खा इनके क्रमशः क्रियापद रूप है- पढ़ना, लिखना, चलना, खाना

क्रिया के दो रूप होते हैं- सकर्मक और अकर्मक

इन दोनों के पुनः दो-दो भेद होते हैं-पूर्ण और अपूर्ण। क्रियापद पर काल, वचन, लिंग, वाच्य का प्रभाव पड़ता है।

पाणिनि ने शब्द के दो भेद किये हैं सुबन्त और तिड़न्त। सुबन्त में संज्ञा, तो तिड़न्त में क्रिया का समावेश होता है।

(3) उपसर्ग -

उपसर्ग का अर्थ है अर्थ तत्त्व के प्रारंभ में जुड़नेवाला संबंधतत्त्व और अन्त में जुड़नेवाले को प्रत्यय कहते हैं। उपसर्ग के बारे में हमने प्रारंभ में चर्चा की है-जैसे- प्र,परा,अनु,अप,अव,सु, आदि बाईस उपसर्ग है। तो प्रत्यय के दो प्रकार होते हैं-तद्धित, और कृदन्त।

(4) निपात -निपात का अर्थ है अव्यय जिन पदों पर लिंग वचन काल का प्रभाव नहीं पड़ता वे अव्यय कहलाते है। ये अविकारी होते हैं। अव्यय के प्रमुख चार भेद हैं -

(अ) क्रियाविशेषण - ये अव्यय क्रिया की विशेषता को प्रकट करते हैं। ये कालवाचक, स्थानवाचक रीतिवाचक, परिणामवाचक,प्रश्नवाचक, सकारात्मक, नकारात्मक और हेतु बोधक होते है। प्रत्येक के क्रमशः दो-दो उदाहरण इस प्रकार हैं -आजकल, कभी,आगे,पिछे, तेज,धीरे,थोडा,कुछ,कहाँ, कैसे,हाँ,जरूर, नहीं न, इसलिए, क्योंकि।

(ब) संबंधवाचक -विभिन्न पदों के बीच संबंध दर्शानेवाले ये अव्यय होते हैं। के लिए, से, को,

(क) समुच्चयबोधक -दो पद या वाक्य जोड़ने का काम करते हैं। और, किंतु, परंतु अथवा, इसलिए, अतः।

(ड) विस्मयादिबोधक -इसे निपात भी कहते हैं। विस्मयादि बोधक मानसिक भावों को प्रकट करते हैं। जैसे -छीः, ओह ! अरे, वाह, अहा, अच्छा, ऐसा, हाय आदि।

इस तरह हिन्दी में शब्द के चार पद भेद हैं। नाम,(संज्ञा,सर्वनाम,विशेषण) आख्यात (क्रिया) उपसर्ग (पूर्व प्रत्यय) तथा निपात (अव्यय)।

वर्तमान में अंग्रेजी व्याकरण के आधार पर हिन्दी पदों के आठ विभाग माने जाते हैं। जो इस प्रकार हैं-

1) संज्ञा 2) सर्वनाम 3) विशेषण 4) क्रिया 5) क्रियाविशेषण 6) संबंधसूचक 7) समुच्चयसूचक 8) विस्मयादिसूचक। इन्हें हमने उपरोक्त चार भागों में समाहित कर विवेचन प्रस्तुत किया है।

संबंधतत्त्व के कार्य

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वाक्य में जब संबंधतत्त्व प्रयुक्त होते हैं, तब शब्दतत्त्व और संबंधतत्त्व जुडकर रूप बनते हैं और आपसी संबंध स्थापित करते हैं तब लिंग, वचन, पुरूष, कारक, काल, वाच्य आदि की प्रतीति कराना ही संबंधतत्त्व का कार्य है।

संबंधतत्त्व के कार्य को ही वैयाकरणियों ने व्याकरणिक कोटियाँ कहा हैं।

(1) लिंग (Gender) -लिंग का अर्थ है चिन्ह। चेतन-अचेतन को चिन्हित करने के लिए लिंग योजना की गयी। चेतन के दो प्रकार किये गये पुरूष-स्त्री। पुरूष के लिए पुल्लिंग तथा स्त्री के लिए स्त्रीलिंग और अचेतन के लिए नपुंसकलिंग, ऐसे तीन भेद किये गये। संसार की सभी भाषाओं में ऐसा होता तो समझने की दृष्टि से आसानी होती परंतु ऐसा नहीं हुआ। लिंग विभाजन स्वाभाविक (उपरोक्त) न रहकर व्याकरणिक हो गया है।

संस्कृत में नारी के लिए दारा-स्त्री,कलत्र तीन शब्द प्रचलित हैं। परंतु लिंग की दृष्टि से दारा-पुल्लिंग,स्त्री-स्त्रीलिंग तथा कलत्र-नंपुसक लिंग है। अंग्रेजी में चार लिंग है -वहाँ पर उभयलिंग यह चौथा लिंग विधान है। बेबी, फ्रेंड,उभयलिंगी शब्द है। तो चीनी-जपानी में लिंगभेद ही नहीं है।

अपभ्रंशकाल से नंपुसक लिंग समाप्त हो गया जिसका प्रभाव हिन्दी पर पड़ा। हिन्दी में पुल्लिंग और स्त्रीलिंग ये दो ही लिंग हैं। अन्य भारतीय भाषाओं के जैसे -बंगला, उड़िया असमिया में तिब्बती बर्मी, के प्रभाव से लिंगभेद नहीं है।

अर्थतत्त्व में प्रत्यय जुड़कर लिंग परिवर्तन होता हैं। जैसा- लड़का-लड़की

(2) वचन (Number) - विश्व के पदार्थों को दो भागों में बाँटा जाता है- एक और अनेक जिसे वचन कहते हैं। इस आधार पर वचन दो बनते हैं - एकवचन और बहुवचन। एक खिड़की, अनेक-खिड़कियाँ,लड़की-लड़कियाँ, लड़का-लड़के

परंतु संस्कृत, ग्रीक, अरबी भाषाओं में द्विवचन का भी प्रयोग मिलता हैं। स्वाभाविक युग्मों के लिए द्विवचन का प्रयोग किया जाता है। पादौ-अक्षिणों आदि। इसके अलावा साथ रहनेवालों के लिए भी प्रयोग होता था-मातापितरौ (माता-पिता), इंद्राग्नि (इंद्र-अग्नि) तो विरूद्ध जोड़े के लिए प्रयोग होने लगा जैसे जया-जयौ, (जय-पराजय), लाभालाभौ(लाभ और हानि)। द्वंद्व समास में भी द्विवचन का प्रयोग होने लगा, राम-श्याम,भाई-बहन,सीता-राम, राधे-श्याम।

हिन्दी में एक और अनेक (बहुवचन) ऐसे दो वचन है। प्रत्यय (ए,ओ,आ,इया) गण,लोग, वृन्द, समूह, जन और शून्य प्रत्यय के प्रयोग से बहुवचन का सूचन होता है।

(3) पुरूष (Person) - वक्ता,श्रोता और अन्य के आधार पर पुरूष की कल्पना की गयी है। पुरूष का प्रयोग सर्वनामों में होता हैं। पुरूष का वचन से भी संबंध है।

हिन्दी में पुरूष तीन है- अ) उत्तम पुरुष (मैं) ब) मध्यम पुरूष (तुम) क) अन्य पुरूष (वह)। (पुरूष के बारे में पहले चर्चा हुई वह देखें।)

(4) कारक (Case) - कारक का अर्थ है करनेवाला। ''क्रियान्वयित्त्व कारकत्त्वम्'' अर्थात (वाक्य की) किया से जिसका अन्वय (सीधा सम्बध) हो वह कारक है। संस्कृत में विभक्ति और कारक दो शब्द इसके लिए है। दोनों का भिन्नार्थक द्योतन इस प्रकार होता है कि कारकत्त्व (नाम, सर्वनाम, विशेषण) से क्रिया का संबंध दयोतित करनेवाली शक्ति का नाम है, जबकि विभक्ति नामपद से जुड़नेवाले प्रत्यय को कहते हैं। उसके कारण एक कारक दूसरे से विभक्त हो जाता है। इसलिए उसे विभक्ति कहते हैं। हिन्दी में कारक कर्ता,कर्म करण ,संप्रदान अपादान संबंधकारक, अधिकरण तथा संबोधन ये आठ है।

नं.	कारक का नाम	चिन्ह	व्याख्या	उदाहरण
1)	कर्ता	शून्य, ने	क्रिया के करनेवाले का बोध होता है	मनोज ने रोटी खाई (ने) मोनू पुस्तक पढती है। (शून्य)
2)	कर्म	शून्य, को	जिस पर क्रिया होती है।	दिलीप मोहन को पत्र लिखता है। (को) कमल घर चल। (शून्य)

3)	करण	से	जिसकी सहायता से क्रिया की जाय अर्थात् उपकरण	चाकू से आम काटा।	(से)
4)	सम्प्रदान	को,के लिए	क्रिया का स्थान	बच्चे खेलने के लिए मैदान गये	(के लिए)
5)	अपादान	से	अलग का भाग	पेड़ से डाली टूटी	(से)
6)	संबंध	का,की,के, (का,की) रा,री,रे	कर्ता का कर्म से संबंध	विजय की दुकान, दिनेश का घर	
7)	अधिकरण	में पर	क्रिया का आधार अधिकरण	मंदिर में भगवान रहते हैं।	(में)
				मुंडेर पर कौवा बोल रहा है।	(पर)
8)	सम्बोधन	हो,ओह,अरे,अजी	कर्ता का संबोधन	अरे, क्या कर रहे हो, अजी सुनते हो।	(अरे,अजी)

विभिन्न भाषाओं में कारकों की संख्या भिन्न-भिन्न है। जैसे, हिन्दी में आठ, अंग्रेजी में दो, संस्कृत में सात तक यह संख्या पायी जाती है।

(5) काल (Tense and Mood) -

काल का संबंध क्रिया से है। अर्थात् क्रिया से ही काल का अनुमान होता है। वह कब हो रही है इसकी सूचना काल से मिलती है।

काल के मुख्य तीन भेद माने गये हैं - वर्तमान काल, भूतकाल, तथा भविष्यकाल।

इसमें काल के साथ अर्थ (Mood) का भी भाव मिला हुआ दिखायी देता है। संस्कृत के दस लकारों में यह बात स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। उसमें क्रिया से केवल कार्य की पूर्णता-अपूर्णता का ही बोध नहीं होता अपितु निश्चय, संदेह, संभावना, आज्ञा, इच्छा आदि भाव भी प्रकट होते हैं जो इस प्रकार है -

1)	लट्- (वर्तमान काल-Present Tense)	मैं पत्र लिखता हूँ।
2)	लोट् -आज्ञा (Imperative Mood)	तुम जाओ।
3)	विधिलिंङ् - विधि (Potential or Subjunctive mood)	मैंने पत्र लिखा है।
4)	लङ् अनद्यतन भूत (Past Imperfect tense)	विजय पत्र लिख रहा था।
5)	लिट् - परोक्ष भूत - (Past Perfect tense)	विजय ने पत्र लिखा था।
6)	लुङ् - सामान्य भूत (Aorist)	मैंने पत्र लिखा।
7)	लुट् - अनद्यतन भविष्य (Future)	मैंने पत्र लिखा होगा।
8)	लृट् - सामान्य भविष्य (Simple Future)	मैं पत्र लिखूंगा
9)	आशीर्लिङ् - आशी: (Benedictive)	दूधो नहाओ, पूतो फलो, आपकी यात्रा सफल हो।
10)	लृङ् - (क्रियातिपत्ति) - (Conditional)	पढोगे तो पास होओगे।

(6) वाच्य (Voice)-

वाच्य् द्वारा यह पता चलता है कि वाक्य में क्रिया द्वारा निर्दिष्ट कार्य स्वयं कर्ता ने किया है या वह उससे प्रभावित हुआ है। इसी आधार पर वाच्य के दो भेद है कर्तृवाच्य (Active Voice) तथा कर्मवाच्य (Passive Voice)

कर्तृवाच्य में क्रिया कर्ता के लिंग, वचन के अनुसार चलती है। जैसे- मनोज रोटी खाता है।

कर्मवाच्य में कर्म के लिंग, वचन के अनुसार क्रिया का रूप बदलता है।

दिनेश ने रोटी खायी।

वाच्य का तीसरा भेद भी है - भाववाच्य - जिसमें क्रिया के भाव को प्रधानता मिलती है। मुझसे रोटी खायी गयी।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इन तीनों वाच्यों को क्रमश: कर्तरि प्रयोग, कर्मणी प्रयोग तथा भावे प्रयोग भी कहते है। इस प्रकार संबंधतत्त्वों के कार्य स्पष्ट होते हैं।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क. एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1) रूप की मारिओं पेइ द्वारा, प्रदत्त परिभाषा दीजिए।
2) रूप में कौन से दो तत्त्वों का योग होता हैं।
3) शून्य संबंधतत्त्व का एक उदाहरण लिखिए।
4) अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व दोनों अलग दर्शाने वाला उदाहरण लिखिए।
5) निपात का क्या अर्थ हैं।

3.2.3 रूपिम की अवधारणा और भेद

प्रिय छात्रों ,पूर्व में हमने शब्द तथा रूप के बारे में चर्चा की है। आप यह जानते है कि शब्द को अर्थतत्व कहते है जो स्वतंत्र इकाई है। इसके विपरित रूप वाक्य का एक अंग है। अर्थतत्त्व और संबधतत्त्व के योग से बनता है और इसमें व्याकरणीय प्रयोग के अनुसार अर्थप्रतीति कराने की शक्ति होती है। रूप स्वतंत्र नहीं होता वह आकांक्षा लिए हुए होता है।

शब्द और रूप के अंतर को डॉ.राजमल बोरा ने अर्थानुशासन में इसतरह बताया है -

1) शब्द और रूप दोनों सार्थक है। इसमें शब्द का अर्थ अधिक व्यापक है। जबकि रूप का अर्थ व्याकरणिक तथा तुलनात्मक दृष्टि से सीमित है।

2) किसी शब्द का रूप हम पहचान लेते हैं तो इसका अर्थ यह है कि उसके व्याकरण से संबंधित अनुशासन को जान गये है।

3) एक ही शब्द का प्रयोग अनेक रूपों में संभव है। रूप बदलता है तो अर्थ बदलता है ।

4) व्याकरण के आधार पर शब्द अनुशासित रहते हैं और इस तरह से अनुशासित शब्द रूप होते हैं।

5) हम किसी भी भाषा के व्याकरण का अध्ययन करें, तो उसके अंतर्गत हमे उस भाषा में पाये जानेवाले शब्दसमूह के रूपों की पहचान का आधार मिलेगा।

(अर्थानुशासन - डॉ. राजमल बोरा - पृ.15-16)

अब हम रूपिम की परिभाषा देखेंगे -

रूपिम पर विचार करने से पहले रूप और रूपिम का अंतर देखेंगे संबंधतत्त्वयुक्त प्रतिपदिक या धातु ही रूप है। रमेश पुस्तक पढ़ेगा इस वाक्य मे तीन रूप है - रमेश, पुस्तक तथा पढ़ेगा। इसमें पढ़ेगा रूप ऐसा है जिसके पढ्-ए-ग्-आ चार सार्थक खंड हो सकते हैं। पढ् मूल रूपिम, ए-अन्य पुरूष एकवचन का संबधतत्त्व, ग्-सामान्य भविष्यत् का सूचक, संबंधतत्त्व, आ पुलिंग एकवचन का सूचक संबंधतत्त्व। शेष दो रूपों-रमेश, पुस्तक को भी खंडों में विभक्त किया जा सकता है - र+मे+श, पु+स्त+क परंतु ये सार्थक खंड नहीं है। रूपिम का निर्णय पदगत उच्चरित ध्वनियों के आधार पर नहीं, बल्कि रूपों के सार्थक खंडों के आधार पर किया जाता है। उपरोक्त वाक्यों में रूप (Morph) तो तीन ही है, किंतु रूपिम (Morpheme) छह है - रमेश[1] पुस्तक[2] पढ्[3] ए[4] ग्[5] आ[6]। इससे स्पष्ट है कि रूप के सार्थक खंडों को रूपिम कहते हैं।

रूपिम की परिभाषा

अंग्रेजी परिभाषा :-

मारिओ पेई -"Morpheme may be described as a meaningful series of phonemes which is not further divisible save with destruction or alteration of meaning -(Mario Pei-Invitation to Linguistics)"

अर्थात् - रूपिम ऐसा सार्थक स्वनिम समूह है जिसका आगे खंण्डी करण अर्थ को नष्ट या परिवर्तित किये बिना संभव न हो।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इस दृष्टि से रूपिम भाषा की लघुतम सार्थक इकाई है।

ब्लाक - इस संदर्भ में कहते हैं - ''कोई भी भाषीय रूप चाहे मुक्त अथवा आबद्ध हो और जिसे और अल्पतम या न्यूनतम अर्थ मुक्त (सार्थक) रूप में खण्डित न किया जा सके, रूपिम होता है।''

ग्लीसन के अनुसार ''रूपिम लघुतम उपयुक्त व्याकरणिक अर्थवान रूप है।''

अब हम हिन्दी विद्वानों के मतों का परामर्श लेंगे।

डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार, ''भाषा या वाक्य की लघुतम् सार्थक इकाई रूपिम है।''

डॉ.उदयनारायण तिवारी के मत से, ''पदग्राम (रूपिम)वस्तुत: परिपूरक वितरण या मुक्त वितरण में आए हुए सहपदों (संरूपों) का समूह है।''

रूपिम किसी भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई है। शब्द स्वतंत्र इकाई है, रूपिम लघुतम इकाई है। रूपिम जब शब्द का पर्याय होता है तभी स्वतंत्र होता है।

रूपविज्ञान की जिस शाखा में किसी भाषा के रूपों का विश्लेषण कर अर्थ और वितरण के आधार पर उसके रूपिमों और संरूपों का निर्धारण करते हुए दो या उससे अधिक रूपिमों के योग से घटित होनेवाले स्वनात्मक अथवा स्वनिमिक परिवर्तन का अध्ययन किया जाता है उसे रूपिम विज्ञान (Morphemics) कहते है।

जिस तरह स्वनिमविज्ञान की आधारभूत इकाई स्वनिम है, उसी तरह रूपिम विज्ञान की आधारभूत इकाई रूपिम है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्वनिमों की तरह ही रूपिमों का अध्ययन किसी भाषा विशेष के संदर्भ में ही संभव है।

संरूप (Allomorph) -

एक ही रूपिम के एक से अधिक समान अर्थवाले परंतु परिपूरक वितरण वाले रूपों को संरूप कहते हैं।

इस परिभाषा में दो बातें हैं- अ= रूपिम - का समानार्थी होना आवश्यक है। ब) दूसरी बात यह है कि ये रूप परिपूरक वितरण में आते हैं। इन रूपों में टकराव नहीं होता। एक - दूसरे के पूरक का काम करते हैं। जैसे -

मैं घर जाता हूँ।

हम घर जाते हैं।

तुम घर जाते हो।

वह घर जाता है।

वह घर जाती है।

वे घर जाते / जाती हैं।

उपरोक्त वाक्यों में हो (ना) क्रिया के वर्तमानकालीक रूप प्रयुक्त हुए हैं। जिनका अर्थ होना है। ये रूप परिपूरक वितरण में है। कारण उत्तमपुरूष, एकवचन मैं के साथ हूँ रूप ही आता है। बहुवचन में है अनुस्वार हो जाता है। मध्यम पुरूष एकवचन में हो आता है। बहुवचन में है हो जाता है। अन्य पुरूष में है आता है। ये सभी रूप एक दूसरे के बदले प्रयुक्त नहीं हो सकते। जैसे मैं घर जाता है, ऐसा प्रयुक्त नहीं होता। अत: आपस में टकराव नहीं होता। इनका अर्थ एक ही है। इसलिए हो रूपिम के ये सभी संरूप है।

3.3.3 रूपिम के भेद

रूपिम के भेदों के चार आधार है- प्रयोग के आधार पर, रचना के आधार पर, अर्थद्योतन और संबंधद्योतन के आधार पर तथा खंडीकरण के आधार पर। इनका क्रमश: परिचय इस प्रकार है -

1) प्रयोग के आधार पर- वाक्य में रूपिम के प्रयोग की स्थिति को ध्यान में रखते हुए प्रयोग के आधार पर रूपिम के तीन रूप बनते हैं - मुक्त रूपिम, आबद्ध रुपिम तथा मुक्तबद्ध रुपिम

अ) मुक्त रूपिम - (Free Morpheme) : मुक्त रूपिम वे होते हैं जिनका वाक्य में स्वतंत्र रूप से या अकेले प्रयोग

किया जा सकता है। जैसे - नीरज कल से पुस्तक पढ़ रहा है। इस वाक्य में नीरज और पुस्तक मुक्त रूपिम है। ये रूपिम स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होते हैं और अर्थाभिव्यक्ति भी स्वतंत्र रूप से हो जाती है। हर वाक्य में प्राय: इनकी उपस्थिति मिल जाती है। कारण वाक्य में ये बिना किसी अन्य रूपिम की सहायता से प्रयुक्त हो सकते है अन्य उदाहरण है - डाकघर, कलियुग, स्नानगृह, आकाश पाताल आदि।

ब) बद्ध रूपिम - (Bound Morpheme) -जो रूपिम वाक्य में अकेले न आकर हमेशा किसी दूसरे रूपिम के साथ जुड़कर ही आ सकते हैं उन्हें बद्ध रूपिम कहते हैं। लिंग, वचन, कारक के द्योतक प्रत्यय बद्ध रूपिम है। ऐसे रूपिम स्वतंत्र प्रयुक्त नहीं हो सकते अर्थात् अर्थ की अभिव्यक्ति करने में ये स्वतंत्र नहीं होते। अर्थ की अभिव्यक्ति में सहयोग अवश्य ही करते हैं। जैसे लड़की का (ई) (लिंगद्योतक), लड़कों का ओ (वचनद्योतक) उसे (ए)कारक द्योतक बद्ध रूपिम है। इसीप्रकार सुंदरता (ता), कमाऊँ (आऊ) दीनता, मधुरता, लालिमा आदि बद्ध रूपिम के उदाहरण है।

क) मुक्तबद्ध रूपिम - (Free Bound Morpheme) जो रूपग्राम देखने में स्वतंत्र पर अर्थ की दृष्टि से बद्ध अर्थात् सदैव किसी दूसरे पर निर्भर होते हैं वे मुक्तबद्ध रुपिम कहलाते हैं।

जैसे हिन्दी के ने, को, से, में आदि कारक प्रत्यय / मुक्तबद्ध रूपिम के उदाहरण है जो सदैव दूसरे पर ही आश्रित होते हैं जैसे - निधि ने, मोनू को, कलम से, आदि मुक्तबद्ध रुपिम है। ये किसी दूसरे रुपिम के आश्रित होते हैं।

2) रचना के आधार पर- इस आधार पर रूपिम को तीन वर्गों में बाँटा गया है - मूल रूपिम, संयुक्त रूपिम तथा मिश्रित रूपिम।

अ) मूल रूपिम - इनकी रचना मात्र अर्थतत्त्व के माध्यम से होती है। उसमें संबधतत्त्व का योग नहीं होता - जैसे - भलाबुरा, सुख दुख ये दोनों रूपिम मात्र अर्थतत्त्व से निर्मित है। इनको प्राकृत तत्त्व भी कहते हैं। पेड़, पुस्तक, घड़ा, कपड़ा आदि भी मूल रूपिम ही है।

ब) संयुक्त रूपिम - ये दो या दो से अधिक रूपिमों से बनते हैं, जिनमें एक अर्थ तत्त्व होता है शेष संबंधतत्त्व होते हैं। जैसे लड़कियाँ गीत गायेंगी। इस वाक्य में लड़कियाँ और गायेंगी संयुक्त रूपिम है। क्योंकि इनकी रचना में स्त्री और गाना अर्थतत्त्वों के साथ इयाँ (लड़की+इयाँ)तथा येंगी (गा+येंगी) संबंधतत्त्वों का योग है।

क) मिश्रित रूपिम - इन रूपिमों की रचना में दो या दो से अधिक अर्थतत्त्वों का योग होता है अर्थात् दो या दो से अधिक रूपिमों का संयोग होते हुए भी उनकी पहचान एक ही रूपिम के तौर पर हो जैसे महाविद्यालय (महा+विद्यालय), लोकसभा (लोक+सभा), राष्ट्रपति (राष्ट्र+पति) विधानसभाध्यक्ष (विधान+सभा+अध्यक्ष) आदि इनकी रचना दो या तीन-तीन स्वतंत्र रूपिमों से हुई है।

3) अर्थद्योतन और संबंध द्योतन के आधार पर- इन रूपिमों में अर्थ तत्त्व अथवा संबंध तत्त्व से भावाभिव्यक्ति होती है। इन रूपिमों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है -

अर्थदर्शी तथा संबंधदर्शी-

अ) अर्थदर्शी रूपिम - ये रूपिम वाक्य में मात्र अर्थतत्त्व के प्रदर्शक के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इस वर्ग में किसी अर्थ का बोध करानेवाले शब्द आते हैं। जैसे - निधि, मोहन, कुर्सी, घोड़ा, प्रेम (संज्ञा रूपिम), मैं, तुम, वह (सर्वनाम), गाना, हँसना, रोना, जागना, खाना(क्रिया रूपिम) काला, बुरा, सुंदर, पवित्र (विशेषण रूपिम), तथा यहाँ, वहाँ, अब, कब आदि अव्ययदर्शी रूपिम हैं। जिन्हें भाषाविज्ञान में 'अर्थतत्त्व' के नाम से भी जाना जाता है। ऐसे रूपिमों की संख्या सभी भाषाओं में अत्यधिक होती है। व्याकरण की दृष्टि से इन्हें प्रकृति या धातु कहते हैं।

ब) संबंधदर्शी रूपिम - इसके अन्तर्गत लिंग, वचन, कारक, काल, क्रियार्थ, पुरूषवाक्य आदि का बोध करानेवाली व्याकरणिक इकाइयाँ आती हैं। ये किसी स्वतंत्र अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं करते। इन्ही को सम्बन्ध तत्त्व भी कहते हैं।

3.3.5 संबंधदर्शी रूपिम के भेद और प्रकार्य (Functaional Monpheme)

रूपों में जात तत्त्व संबंध को सूचित करता है किसी स्वतंत्र अर्थ को नहीं दर्शाता उसे संबंधदर्शी रूपिम कहते हैं। कुछ लोग इसे कार्यद्योतक रूपिम भी कहते हैं। इनके माध्यम से व्याकरणिक संबंध स्थापित होता है। इसलिए ये संबंधतत्त्व हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

संबंधदर्शी रूपिम के भेद

1) लिंग - लड़का-आ-पुल्लिंग, लड़की-ई -स्त्रीलिंग।
बालक-पुल्लिंग, बालिका-स्त्रीलिंग

2) कारक- कर्ता,कर्म,करण,अपादान, सम्प्रदान के विभक्ति चिन्ह
जैसे लड़की ने गाय को रोटी दी।
मीना के लिए फल खरीदे।

3) वचन - लड़का-एकवचन, लड़के-अनेकवचन
लड़की-एकवचन,लड़कियाँ - (इयाँ) अनेकवचन

4) काल - क्रिया का मूलरूप+ता+होना क्रिया के रूप -वर्तमानकाल क्रिया का मूलरूप+रहना क्रिया, का रूप + होना क्रिया का रूप आदि प्रत्यय काल कालसूचक होते हैं, जिनसे वर्तमान, भूत,भविष्य,अपूर्णवर्तमानकाल का पता चलता हैं।

5) पुरूषसूचक- उत्तम पुरूष,मध्यम पुरूष, अन्य पुरूष के चिन्ह हैं।
जैसे मैं हूँ, हम हैं, तुम हो, आप है, वह हैं, वे हैं। पूर्व में संबंधतत्व का विवेचन हुआ है। ये सारे संबंधतत्त्व संबंधदर्शी रूपिम है।

4) खण्डीकरण के आधार पर-

इस आधार पर रूपिम के दो प्रकार बनते हैं।

क) खण्ड रूपिम - (Segmental Morpheme)

जिन रूपिमों के खण्ड किए जा सकते हैं, अथवा अलग किया जा सकता है उन्हें खण्ड रूपिम कहते हैं।

रेलगाडी	-	रेल+गाडी	कुचाल	-	कु+चाल
डाकघर	-	डाक+घर	प्रसिद्ध	-	प्र+सिद्ध
लताएँ	-	लता+एँ			

ख) खण्डेतर - (अखण्ड) रूपिम- (Supra-Segmental Morpheme)

ऐसे रूपिमों के टुकडे या खण्ड नहीं किए जा सकते, अलग नहीं किया जा सकता इसलिए ये अखण्ड रूपिम कहलाते हैं।

बलाघात सुर और सुरलहर इस तरह के रूपिम होते हैं।

रूपस्वानिमिकी- (Morpho phonemics)

दो या उससे अधिक रूपिमों के योग से जो रचनात्मक या स्वानिमिक परिवर्तन घटित होता है उसका अध्ययन रूपस्वानिमिकी में होता है। जैसे-

घोडा+दौड	=	घुडदौड
मीठा+आई	=	मिठाई
सत्+जन	=	सज्जन
कवि+ओं	=	कवियों

मोटे रूप से देखने पर रूपस्वनिमविज्ञान संस्कृत के व्याकरण के संधि से समानता रखता है परंतु इसका क्षेत्र इतना ही मर्यादित नहीं है। इन दोनों के अंतर को इस तरह प्रस्तुत करेंगे।

1) घोडा+दौड़ में संधि की कोई स्थिति नहीं है। रूप स्वनिमगत परिवर्तन से घुडदौड़ शब्द निष्पन्न हुआ है।

2) सन्धि दो शब्दों में से पहले के अंतिम स्वन और दूसरे के प्रारंभिक स्वन के मध्य घटित होता है। जब कि रूप स्वनिम

परिवर्तन जुड़नेवाले दो रूपिमों में कही भी घटित हो सकता है जैसे- घोडा-घुड बना - ओ - ड में परिवर्तित हुआ ।

3) रूपस्वानिमिक परिवर्तन अर्थतत्त्व और सम्बन्धतत्त्व के मध्य भी घटित होता है । संधि में ऐसा नहीं होता है ।

लड़की + ओं - लड़कियों - की दीर्घ - ह्रस्व में परिवर्तित होना य स्वन का आगमन

लड़का + ओं - लड़कों - आ का लोप ओं का आगमन ।

इस तरह रूप स्वानिमिक परिवर्तन का क्षेत्र अधिक व्यापक है ।

महत्त्वपूर्ण बात यह है कि 'रूपिम नामक इकाई की खोज पश्चिम में 19 वीं शताब्दी में हुई जबकि भारत में 8 वीं शताब्दी में ही पाणिनि ने इस तत्त्व की खोज की है । इस बात से प्राचीन भारतीय भाषाविदो की असाधारण प्रतिभा और सूक्ष्म दृष्टि का ज्ञान हमें होता है । आर.एच.रॉबिन ने इस संदर्भ में पाणिनि को कृतज्ञता यापित करते हुए लिखा है -

"Recognition of the status of the morpheme in linguistic analysis was one of the achievements of the ancient Indian Linguistics of whom Panini is the most famous and this is one of the debts Western Linguistics Scholarship owes to Indian Work which became known in Europe during the course of the 19th Century."

- R. H. Robines PP 202

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ख. संक्षेप में उत्तर लिखिए ।

1) रूप,रूपिम,संरूप में अन्तर बताइए ।

2) रूपिम की कोई एक परिभाषा लिखिए ।

3) मुक्त और मुक्तबद्ध रूपिम को समझाइए ।

4) रचना के आधार पर कौन से रूपिम होते हैं ।

5) खण्ड रूपिम के दो उदाहरण बनाइए ।

3.4 वाक्य की अवधारणा

पदों का समूह वाक्य कहलाता है । पूर्ण भावाभिव्यक्ति करानेवाले पद-समूह ही वाक्य होता हैं। भाषा संप्रेषण का साधन है। बिना वाक्यों के संप्रेषण (इच्छित बात का प्रेषण)संभव नहीं। हमारा सोचना, समझना, बात करना,लिखना आदि सब कुछ वाक्यों के माध्यम से ही होता है। यहाँ तक कि जब हम भावावेश के उत्तेजित क्षणों में बोलते हैं, तो एक शब्द ही बोला जाता है परंतु वह शब्द पूर्ण वाक्य होता है। जैसे की व्यक्ति घर के आँगन में साँप को देखे और चिल्लाए, ''साँप... साँप'' उसका चिल्लाना पूर्ण वाक्य का काम करता है - यहाँ साँप है। इस अर्थ की प्रतीति सुननेवाले को होती है।

आधुनिक शिक्षाशास्त्रियों ने इस सच्चाई को ध्यान में रखकर ही भाषा अधिगम प्रक्रिया वाक्य से शुरू की है। छोटे बच्चे का पहला पाठ कमल चल, भगन घर चल। बाद में बच्चे वाक्यों को तोड कर कमल और बाद में क म ल से सीखते हैं। वर्णमाला से शब्द और शब्द से वाक्य ऐसी अध्ययन प्रक्रिया चलते रहती है।

वाक्य की परिभाषा -

भारतीय व्याकरण में भर्तृहरि ने वाक्य की महत्ता को ''वाक्यपदीय'' ग्रंथ में इन शब्दों में बताई है।

पदे न वर्णा: विद्यंते वर्णेष्णवयवा : च न ।

वाक्यात् पदानाम अत्यंत प्रविवेको न कश्यन ।।

अर्थात् पद में वर्ण और वर्णों में अवयव नहीं होते। वाक्य से पृथक पदों की कोई निजी पहचान नहीं होती। इस प्रकार भर्तृहरि के मत से भाषा की पूर्ण इकाई वाक्य ही है ।

पतंजली ने वाक्य के लक्षण इस प्रकार बताए हैं -

क) क्रिया, अव्यय, कारक और विशेषण जहाँ एकत्र हो - उसे वाक्य कहते हैं ।

ख) जहाँ चारों पदों के साथ क्रिया विशेषण भी हो ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

ग) जहाँ विशेषण सहित क्रिया हो ।

घ) जहाँ एक क्रिया हो - (एक तिङ्)

कात्यायत के मत से - साकांक्ष पदों का समूह वाक्य होता है ।

(पद समूहो वाक्य अर्थ समाप्तौ)

आचार्य विश्वनाथ के मतानुसार - योग्यता, आकांक्षा और आसत्ति की यो युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। (वाक्यं स्याद्योग्यताकांक्षासक्तियुक्त:पदोच्चय: ।)

वाक्य एक पद भी हो सकता है और पद समूह भी । वाक्य क्रिया युक्त और क्रिया विहीन भी होता है। पद के बिना वाक्य का अस्तित्व नहीं है । व्यवहार में वाक्य ही बोला जाता है । इस तरह वाक्य अभिव्यक्ति की एक स्वत:पूर्ण इकाई है ।

अंग्रेजी परिभाषाएँ -

"Sentence is a word or set of words revealing an intelligible purpose - A.H.Gardinor"

अर्थबोध कराने वाला शब्द या शब्द समूह वाक्य हैं ।

We can than define the sentence as the form is which the Verbal image is expressed and understood through the medium of sounds -Bendreya

वाक्य एक प्रक्रिया है जिसमें शब्द बिम्ब ध्वनियों के माध्यम से व्यक्त होते हैं ।

Sentence is an expression of a thought or feelings-George

वाक्य भाव या विचार की अभिव्यक्ति है ।

Syntax may be roughly defined as the principles of arrangement of the construction formed by the process of derviation and inflaction words in larger construction of various kinds-Glison.

इस तरह पश्चिम के मतानुसार वाक्य भाषा की मुख्य इकाई और लघुतम पूर्ण विचार है ।

हिन्दी परिभाषाएँ -

संस्कृत तथा अंग्रेजी परिभाषाओं के अध्ययन के पश्चात अब हम हिन्दी विद्वानों के मतों की चर्चा करेंगे -

डॉ.बाबूराम सक्सेना- ''भाषा का अवयव वाक्य है अथवा भाषा वाक्यों का समूह है ।'' वाक्य हमारी बात या वक्तव्य का एक अवयव है । ''

डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा के मतानुसार - ''भाषा की न्यूनतम, पूर्ण, अर्थवान इकाई वाक्य है ।''

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी के मतानुसार ''भाषा की लघुतम, पूर्ण, सार्थक इकाई वाक्य हैं ।''

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मतानुसार वाक्य पूरी बात की तुलना में अपूर्ण होते हुए भी अपने आप में पूर्ण, लघुतम, स्वतंत्र भाषिक इकाई है ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भाषा की इकाई वाक्य है, शब्द समूह या पद नहीं । इसलिए मेरे मत से वाक्य भाषा का चरम अवयव है ।

भारतीय दर्शनशास्त्र में वाक्य और पद के महत्व को लेकर शुरू से ही विवाद रहा है । इस विवाद के कारण दो मत सामने आते हैं - अभिहितान्वयवाद अर्थात पदवाद - यह वाद पदों को महत्त्व देता है, तो दूसरा मत अन्विताभिधान वाद कहलाता है ।

3.4.1 अभिहितान्वयवाद - अभिहितान्वयवाद के प्रवर्तक आचार्य कुमारिल भट्ट है । इनके मत को ही अभिहितान्वयवाद कहा जाता है । ''अभिहितानां पदार्थानाम् अन्वय:'' / पद अपने अर्थ को कहते हैं और उनका वाक्य में अन्वय हो जाता है। इस अन्वय से एक विशिष्ट प्रकार का वाक्यार्थ निकलता है । इस वाद को ''पदवाद'' भी कहा जाता है । इस वाद में पदों का महत्त्व है और पद समूह ही वाक्य है । पद के बिना वाक्य का कोई अस्तित्व नहीं है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अन्विताभिधानवाद -

इस वाद के प्रवर्तक आचार्य कुमारिल भट्ट के शिष्य आचार्य प्रभाकर गुरू है। इनका मत 'अन्विताभिधानवाद' है। इसका अर्थ है - ''अन्वितानां पदार्थानाम् अभिधानम'' वाक्य में पदों के अर्थ समन्वित रूप से विद्यमान रहते हैं। इस वाद में वाक्य का महत्त्व है, अत: यह 'वाक्यवाद' है। 'अन्विताभिधानवाद' के अनुवार पदों की स्वतंत्र सत्ता नहीं है। वे वाक्य के अन्वय है और वाक्य विश्लेषण से उनका अर्थ निकलता है। आधुनिक भाषाविज्ञान भी इसी मत का समर्थन करता है। पद तथा वाक्य के महत्त्व को इन दो विभिन्न मतों ने अपनी दृष्टि से देखा है जिससे वाक्य की परिभाषा प्रभावित हुए बिना नहीं रही। प्राचीन वैयाकरण पतंजलि और यूनानी दार्शनिक डायोनिशस थैंक्स ने वाक्य की परिभाषा इन शब्दों में दी है -

पूर्ण अर्थ की प्रतिति करानेवाले शब्द समूह को वाक्य कहते है ।

पतंजलि का समय इ.पू.द्वितीय शताब्दी तथा थ्रैक्स का समय उससे लगभग सौ साल बाद का माना जाता है। ये दो विभिन्न विचारक अपने मतों में अद्‌भूत समानता रखते हैं। ये दोनों अर्थ की प्रतिति करानेवाली इकाई 'शब्द समूह' को मानते है। इससे स्पष्ट है कि अर्थ की प्रतीति शब्द से नहीं 'शब्द-समूह' से होती है, अर्थात् वाक्य से होती है।

वाक्य के भेद -

वाक्य भेद के पाँच आधार है - आकृतिमूलक, रचना के आधार पर, अर्थ के आधार पर, क्रिया के आधार पर, शैली के आधार पर।

(1) आकृति के आधार पर -

आकृति का अर्थ है रूपतत्त्व अर्थात् अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का योग। संसार की भाषाओं को इस आधार पर वर्गीकृत किया गया है। आकृति के आधार पर वाक्य के चार भेद घटित होते है। जो इस प्रकार है -

अ) अयोगात्मक -

इसमें सभी पदों की सत्ता स्वतंत्र होती है। पदों का निर्माण अर्थ और संबंध तत्त्व के योग से नहीं होता।स्थान से ही व्याकरणिक संबंधों का ज्ञान होता है। जैसे - चीनी भाषा का एक उदाहरण द्रष्टव्य है- वो - ता - नी - मै तुमको मारता हूँ। नी-ता-वो (तुम मुझे मारते हो), इन दोनों वाक्यों में सभी रूप अर्थसंबंधरहित है। हिन्दी का वाक्य कमल पर चल। इसी प्रकार का है।

ब) योगात्मक - इसमें संबंधतत्त्व के योग से रूपों का निर्माण होता है। जिसे हम समास प्रधानभाषा कहते हैं। योगात्मक तीन रूप है -

(i) प्रश्लिष्ट योगात्मक - जब अनेक शब्दों के योग से एक ऐसा सामासिक पद बन जाए कि वह वाक्य का काम करने लगे, तब प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्य बनते हैं। कर्ता, क्रिया एक ही पद में समाहित होते हैं। दक्षिण अमरिका की चेरो की भाषा और बास्क भाषा में इसके उदाहरण मिलते हैं। चेरो की नाधोलिनन (हमारे पास नाव लाओ) यह वाक्य नातें न (लाना) अमोरबोल (नाव) निन (हम) शब्दों के योग से बना है। कुछ बोलियों में इसके उदाहरण मिलते हैं। हिन्दी की एक बोली भोजपुरी का एक उदाहरण प्रस्तुत है। सुनलेहलिंहा (मैंने सुन लिया है।)

(ii) अश्लिष्ट योगात्मक (प्रत्यय प्रधान) - ऐसे वाक्यों के पदों में पूर्व,मध्य और अन्त आदि सभी स्थानों पर प्रत्ययों (योजकों) का योग रहता है। प्रत्यय जोड़कर शब्द तथा वाक्य बनाएँ जाते हैं। मूल शब्द तथा प्रत्यय स्पष्ट दिखाई देते हैं। अर्थात् ऐसे वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय अथवा अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व अश्लिष्ट ढंग से मिले हुएँ होते हैं। प्रकृति और प्रत्यय जुड़े होने पर भी तिल-तडुन्लवत (तिल-चावल की तरह) अलग-अलग देखे जा सकते हैं। तुर्की, द्रविड आदि प्रत्यय प्रधान भाषाओं की वाक्य रचना इसी प्रकार की है। जैसे-तुर्की राव-घर,राव लेर-अनेक घर, राव लेरिम-मेरे घर। प्रत्यय प्रधान की यह विशेषता एस्पैरेन्तों भाषा (जागतिक कृत्रिम भाषा) में भी देखी जाती है।

(iii) शिलष्ट योगात्मक (विभक्ति प्रधान) -

इस प्रकार के वाक्यों में विभक्तियों की प्रधानता होती है। ऐसे वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय मिले हुए (श्लिष्ट) होते हैं। इनमें प्रकृति (धातु,शब्द) और प्रत्यय को अलग-अलग करना कठिन होता है। संस्कृत, ग्रीक, लैटिन इसी प्रकार की

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भाषाएँ हैं। संस्कृत-राम+सु=राम: पठ + ति = पठति, विद्या + सु =विद्या।

2) रचना के आधार पर-

व्याकरण संबंधी रचना के आधार पर वाक्य के तीन भेद है- साधारण वाक्य, संयुक्त वाक्य और मिश्र वाक्य।

साधारण या सरल वाक्य में केवल एक कर्ता तथा एक क्रिया होती है। जैसे-मैं घर गया, मुझे किताब चाहिए।

संयुक्त वाक्य-

इस के खण्ड आसानी से किये जा सकते हैं। कुछ सरल वाक्यों अथवा सरल और मिश्र वाक्यों को जोडने से इसप्रकार के वाक्यों की रचना होती है। जैसे-मैं कॉलेज जाऊँगा और दो घण्टे पढ़ाई करूंगा। वह बहुत तेज दौड़ा और गिर गया।

मिश्रवाक्य -

इसमें एक प्रधान वाक्य तथा एक या अनेक आश्रित उपवाक्य होते हैं। मिश्र वाक्य में प्रथम वाक्यांश के बाद दूसरे की आकांक्षा बनी रहती है। जैसे-मैं चाहता हूँ कि तुम खूब पढाई कर, डॉक्टर बनों।

भिखारी ने कहा कि मैं बहुत भूखा हूँ।

3) अर्थ के आधार पर- भाव,वृत्ति या अर्थ के आधार पर वाक्या के नौ भेद बनते हैं। विधान, निषेध आदि ही अर्थ या भाव हैं।

क)	विधिसूचक (कथन)	-	निधि रामायण पढ़ती है।
ख)	निषेधसूचक	-	तुम खेलने मत जाओं।
ग)	आज्ञासूचक	-	जाओं, पढ़ाई करो।
घ)	इच्छासूचक	-	जीवन में ढ़ेर सारी खुशिया पाओं।
च)	संभावनासूचक	-	शायद आज वर्षा हो।
छ)	सन्देहसूचक	-	तुम भीड़ में खो न जाओ।
ज)	प्रश्नार्थक	-	तुम कहाँ गये थे ?
झ)	विस्मयादिबोधक	-	अरे ! तुम तो कल आनेवाले थे।
त)	संकेतार्थ	-	तुम आते तो मुझे अच्छा लगता।

इन उपर्युक्त प्रकारों के अतिरिक्त सुर (लहजा) के द्वारा भी विभिन्न अर्थों या भावों को व्यक्त किया जा सकता है।

4) क्रिया के आधार पर -

भाषा में क्रिया का महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक वाक्य में क्रिया प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप सें विद्यमान रहती है। संस्कृत, बंगला आदि भाषाओं में बिना क्रिया के भी वाक्य मिलते हैं। परंतु सामान्य रूप से वाक्य क्रिया से युक्त ही होता है। क्रिया से युक्त और उसके अभाव पर वाक्य के दो भेद होते हैं, क्रियायुक्त वाक्य, क्रियाहीन वाक्य।

अ) क्रियायुक्त वाक्य -

सामान्यतया सभी भाषाओं में एक वाक्य में एक क्रिया होती है। अधिकांश वाक्य इसीतरह के होते हैं। जैसे मैं पुस्तक पढ़ता हूँ। बच्चे स्कूल जाते हैं।

आ) क्रियाहीन वाक्य - इनमें क्रिया नहीं होती। ऐसे वाक्य क्रियापद के न होने पर भी पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं। प्रसंगानुसार श्रोता क्रिया का अपनी ओर से अध्याहार कर लेता है। वार्तालाप में इसप्रकार के वाक्य प्राय:प्रयुक्त होते हैं । अनेक मुहावरे और लोकोक्तियाँ इसके उदाहरण हैं। (यथा राजा तथा प्रजा, खोदा पहाड़ निकली चूहियाँ) । समाचार पत्रो कें शीर्षकों में ऐसे वाक्यों का प्रयोग होता है। (भीषण गर्मी-डकैती से लोगों मे घबराहट, स्कूली छात्र अथवा आदि।) विज्ञापनों में भी क्रिया का प्रयोग नहीं रहता। फ्लैट बुकिंग पर बाईक मुफ्त, ठण्डा-ठण्डा,कूल-कूल)

5) शैली के आधार पर- शैली के आधार वाक्य के तीन भेद हैं -

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

शिथिलवाक्य, समीकृत वाक्य तथा आवर्तक वाक्य

शैली से आशय रचना शैली से है।

अ) शिथिल वाक्य -

इस में वक्ता अपने मनमाने ढंग से बात कहता है। ऐसे वाक्य होते हैं जिनकें माध्यम से वक्ता बिना किसी अलंकरण का सहारा लिए सीधे-सादे ढंग से विचार व्यक्त करता है उन्हें शिथिल वाक्य कहा जाता है।

ब) समीकृत वाक्य -

इसमें संतुलन और संगति का ध्यान रखा जाता है। साम्यमूलक अथवा वैषम्यमूलक संगति के द्वारा वक्ता जब अपने भावों को व्यक्त करता है। तो उसे समीकृत वाक्य कहते हैं। जैसे-जैसा देस वैसा भेस। कर भला तो हो भला।

क) आवर्तक वाक्य- जिन वाक्यों से वक्ता या लेखक श्रोता या पाठक के मन में जिज्ञासा जगाते हैं और फिर अपना मंतव्य प्रकट करते हैं। उन्हें आवर्तक वाक्य कहते हैं। श्रोता की जिज्ञासा अंतिम वाक्य सुनने पर ही पूर्ण होती है। यदि, अगर आदि लगाकर वाक्य को लंबा किया जाता हैं। जैसे-यदि तुम जीवन में सफलता पाना चाहते हो, अपने पैरों पर खडे होकर सबसे आगे बढ़ना चाहते हो, यश,संपन्नता, कीर्ति सुख पाना चाहते हों तो शिक्षा पाना तुम्हारे लिए अनिवार्य है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1) पदों का समूह .... कहलाता है।
2) भर्तृहरि के ग्रंथ का नाम .... है।
3) आचार्य विश्वनाथ के मतानुसार .... से युक्त पदों का समूह वाक्य होता हैं।
4) कुमारिल भट्ट ....वाद के प्रवर्तक है।
5) आकृति का .... अर्थ है।

वाक्य के प्रकार पहचानों

1) मैं घर गया।
2) डॉक्टर ने कहा कि तुम बहुत बीमार हो।
3) अब पुस्तक पढो।
4) विजय कहाँ गया है?
5) यथा राजा तथा प्रजा।

3.4.3 वाक्य विश्लेषण

प्रत्येक भाषा की वाक्य रचना अलग-अलग होती है अत: संसार की भाषाओं के वाक्य एक से नहीं होते। वाक्य विश्लेषण के स्वरूप को जानने पर उसकी संरचना समझने में आपको सहायता मिलती हैं और अर्थग्रहण में भी सहजता आती है।

वाक्य विश्लेषण के तीन आधार है जो इस प्रकार है-क) उद्देश्य और विधेय ख) उपवाक्य ग) अग्र और पश्च वाक्य

क) उद्देश्य और विधेय

वाक्य का वह खंड जिसको कुछ कहा जाता है उसे उद्देश्य कहते हैं। प्राय: कर्ता उद्देश्य होता है जैसे मुकेश जाता हैं। मैं खाता हूँ। मीना पढ़ नहीं रही है। इन वाक्यों में उद्देश्य कर्ता है।

उद्देश्य अधिकतर संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि होते हैं। उद्देश्य का विस्तार विशेषण सार्वनामिक विशेषण होता है। जैसे

संज्ञा- मोहन घर जाता है।

सर्वनाम - मैं नहीं जाता।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

विशेषण - बुद्धिमान सफलता प्राप्त करतें है ।

क्रियार्थक संज्ञा-

घूमना एक अच्छा व्यायाम है -

उद्देश्य का विस्तार

विशेषण से -गरीब लड़का चला गया ।

संबंध विशेषण- भारत का खिलाड़ी जीत गया ।

समानाधिकरण - बादशाह औरंगजेब क्रूर था ।

इस तरह उद्देश्य का विस्तार होता हैं ।

पड़ोस में रहनेवाले शर्माजी का बड़ा बेटा दिलीप बाजार गया । इस वाक्य में दिलीप का विस्तार अधोरेखित वाक्य में है ।

विधेय-

यदि कर्ता उद्देश्य है तो क्रिया विधेय है । विधेय में किया तथा क्रिया का विस्तार कर्म से होता हैं - जैसे कमल-पढ़

(उद्देश्य) (विधेय)

कमल पुस्तक पढ़ । विधेय का विस्तार कर्म से कमल तुलसीदास द्वारा लिखी रामचरितमानस पुस्तक पढ़ ।

विधेय का भी विस्तार इस तरह होता है -

क्रियाविशेषण- तुम क्या कर रहे हो ?

विशेषण- बच्चा रोते-रोते खा रहा है ।

क्रिया का विस्तार- करण,सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण, कारक के अनुसार भी होता है जैंसे दीपिका ने पेन से लिखा । (करण)

मैनें यह साईकिल नीरजा के लिए खरीदी । (संप्रदान)

मोहन जी साइकिल से गीर पड़े (अपादान)

कौआ डाल पर बैठा था । (अधिकरण)

ख) उपवाक्य (Clause) -

उपवाक्य को अंग्रेजी में क्लॉज कहते है । यदि कोई वाक्य एक से अधिक वाक्य से मिलकर बना हों तो वे वाक्य मुख्य वाक्य के उपवाक्य हैं । जैसे

जब वह आया, मैं पढ़ रहा था । इसमें दो वाक्य है वह आया (उद्देश्य विधेय) मैं पढ़ रहा था। (मैं उद्देश्य पढ़ - विधेय)। इन दो वाक्यों से मिलकर उपरोक्त वाक्य बना है ।

उपवाक्य के दो प्रकार होते हैं - i) प्रधान या मुख्य उपवाक्य (Main or Principal Clause) ii) आश्रित उपवाक्य (Subordinote Clause) जैसे उपरोक्त उदाहरण में मैं पढ़ रहा था - प्रमुख वाक्य है, अनाश्रित है। जब वह आया यह प्रमुख वाक्य नहीं है । वह प्रमुख उपवाक्य का समय बता रहा है । इसलिए वह आश्रित उपवाक्य है ।

आश्रित उपवाक्य के तीन प्रकार होते हैं -

i) संज्ञा उपवाक्य (Noun Clause)-यह अनिश्चित है कि मैं कब आऊंगा ।

ii) विशेषण उपवाक्य (Adjective Clause)-जिस लड़की के बारे में मैंने बताया वह मराठी लड़की है।

iii) क्रियाविशेषण उपवाक्य (Adverbial Clause)- जब तुम आए मैं चाय पी रहा था ।

ग) अग्र और पश्चवाक्य -

अर्थात पहलेवाला और बादवाला हिस्सा ये दो हिस्से वाक्य के स्वाभाविक रूप से होते हैं । बोलते समय कभी-कभी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

पूरे वाक्यों को या वाक्योंशो को दुहराया जाता है -पहले वाक्य का आधा भाग या कुछ भाग पुन: दूसरे वाक्य में आ जाता है और दूसरे वाक्य का वाक्य कुछ हिस्सा तीसरे में आता है। लोकसाहित्य में या कथा कहनेवाले व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त भाषा में इस प्रकार के वाक्य बहुतायात मिलते है। जैसे ''एक था राजा। राजा के थी दो रानियाँ। दो रानियों के एक रानी की अत्यधिक प्रिय थी दूसरी अप्रिय। अप्रिय जो थी वह बड़ी रानी थी......''

घ) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

1)निकटस्थ अवयव पहचानों-वह गुमशुदा लड़का जो कल रास्ते में पुलिस को मिला था आज अपने पिता के पास पहुँचा दिया गया।

2) उद्देश्य विधेय के अनुसार विभाजन कीजिए -दिलीप आम खाता है।

3) उपवाक्य के अनुसार विभाजन कीजिए - जब बिजली गयी तब दिलीप आया।

वाक्य की संरचना

भाषाविज्ञान में भाषा की अर्थवान और पूर्ण इकाई के रूप में वाक्य है। कारण अर्थवान शब्दसमूह संबंधतत्त्वों के योग से जब प्रयोग योग्य हो जाते है तब वाक्य बनता है। व्याकरणिक दृष्टि से वाक्य का गठन इसी रूप में होता है। वर्तमान में वाक्य को कई दृष्टियों से देखा जाता है - वाक्य की संरचना के लिए पदक्रम, विराम चिन्ह, व्याकरण इन तीन बातों को ध्यान में रखा जाता है।

पदक्रम -

पदक्रम से अभिप्राय यह है कि किस पद के बाद कौन सा पद आएगा। प्रत्येक भाषा की पदक्रम के संबंध में एक निश्चित व्यवस्था है। इसलिए हम मनमाने ढंग से पदों को नहीं रख सकते। जैसे - हिन्दी में कर्ता + कर्म + क्रिया - ऐसे पदक्रम व्यवस्था है। तो अंग्रेजी में कर्ता + क्रिया + कर्म की व्यवस्था है। जैसे - राम आम खाता है।

Ram eats a Mango.

विरामचिन्ह -

वाक्य में कथनभंगिमा को दिखाने के लिए विराम चिन्हों का प्रयोग होता है। इनके हेराफेरी से अर्थ गोलमाल हो जाता है। विरामचिन्ह कथन की पूर्णता, अपूर्णता के द्योतक है। इससे वाक्य रचना शुद्ध होती है। हिन्दी में प्रयुक्त होनेवाले विरामचिन्ह इस प्रकार है-

1) पूर्णविराम =। (Full Stop)(2) अर्धविराम =; (Semicolon)(3) अल्पविराम=, (Comma) (4) प्रश्नबोधक = ? (Introgation) (5) विस्मयादिबोधक = ! (Sign of Exclamation) (6) निर्देशक = - (Dash) (7) योजक = (Hyphen) (8) कोष्ठक = ( ) [ ] { } (9) उद्धरण चिन्ह= ‘‘ ’’(Inverted Commas) (10) काक पद =*h* (Sign of Mission) -(11) शुद्धि चिन्ह - a (Sign of Correction) (12) अशुद्धि चिन्ह = x (Sign of Wrong) (13) तारांकित =˙(Asterisk Mark)

व्याकरण -

किसी भाषा को शुद्ध बोलने, लिखने, पढ़ने, समझने के लिए उसकी व्यवस्था अर्थात व्याकरण को जानना आवश्यक है। व्याकरण के कारण भाषा मानकीकृत होती है। व्याकरण से वर्ण, धातु, शब्द, पद, वाक्य, कारक,संधि,समास, उपसर्ग, प्रत्यय, लिंग, वचन, पुरूष, काल का बोध होता है। व्याकरण के कारण कर्ता और क्रिया में अन्विती होती है तथा कर्म और क्रिया की अन्विती होती है। जैसे ...... राम ने रावण को मारा - ने कारक के कारण राम का कर्तृत्त्व, मारना क्रिया से अन्वय होकर को कारक से कर्म (जिस पर क्रिया घटित हुई) का बोध होता है।

3.3.4 निकटस्थ अवयव विश्लेषण

वाक्य का अध्ययन निकटस्थ या निकटतम अवयवों मे विभाजन कर के भी किया जाता है। इसके लिए वाक्य में एक से अधिक पद का होना अनिवार्य है। वाक्य में प्रयुक्त उसके पद अंग या अवयव संघटक होते है। निकटस्थ के लिए कुछ विद्वानों ने समीपी संघटक शब्द का प्रयोग भी किया है। निकटस्थ अथवा समीपी का अर्थ यहाँ स्थान की दृष्टि से न होकर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अर्थ की अवयवों को निकटस्थ दृष्टि से करीब है। जो व्याकरणिक इकाई दो या अधिक अवयवों से मिलकर बनती हैं। उसे निकटस्थ अवयव कहते हैं। डॉ.भोलानाथ तिवारी के मतानुसार कोई रचना जिन दो या अधिक अवयवों से मिलकर बनती हैं, उनमें से प्रत्येक निकटस्थ अवयव कहलाता है। डॉ.देवीशंकर द्विवेदी इन्हें समीपी संघटक कहते हुए बताते हैं कि, ''ऐसे संघटक जो किसी समग्र संघटन अथवा उसके अन्तर्भूत लघु संघटनों की रचना के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी होते हैं, समीपी संघटक कहलाते हैं।''

अर्थात शब्दानुक्रमों के सार्थक योजना को संघटन कहा जाता है। व्याकरणिक दृष्टि से वाक्य में एक कर्ता होता है, एक क्रिया होती है, क्रिया सकर्मक हो तो एक कर्म होता है और वाक्यर्थ की आवश्यकतानुसार अन्य कारक भी होते हैं। ये वाक्य के अनिवार्य घटक होते हैं। कई बार ये एकांकी होते हैं। कभी उनके साथ विशेषण, संबंधकारक के विशेषण रूप, क्रियाविशेषण आदि भी जुड़ जाते हैं। जैसे

1) लड़की गाती है।
सुंदर लड़की गाती है।
वह कारीगर है।
वह कुशल कारीगर है।

इनमें दूसरे वाक्यों में सुंदर, कुशल क्रमशः लड़की,कारीगर के अवयव है। इन्हें ही निकटस्थ अवयव कहा जाता हैं। निकटस्थ अवयव दो तीन या इससे भी अधिक हो सकते हैं। जैसे

''राम का चरित्र वाल्मिकी रामायण का आधार भूत तत्त्व है। '' इस वाक्य का निकटस्थ अवयवों में विभाजन इसप्रकार होगा -

राम का चरित्र वाल्मिकी रामायण का आधार भूत तत्त्व है।

इसी प्रकार दिनेश कल पुणे गया यह संपूर्ण वाक्य एक संघटन है। इसके दो समीपी संघटन है। दिनेश तथा कल पुणे गया। कल पुणे गया के दो समीपी संघटक है- कल तथा पुणे गया। पुणे गया के दो समीपी संघटक है- पुणे तथा गया। इसप्रकार विश्लेषण करने से स्वाभाविक अभिप्रेत अर्थ की अनुभूति होती है। अनुमान से इस विश्लेषण की पुष्टि होती है। वाक्यों को निकटस्थ अवयवों में विभाजित करने से अर्थ को समझना सरल हो जाता है। निकटस्थ अवयव पदक्रम पर अवलंबित होते हैं। कुछ वाक्यों में कभी-कभी समीपी संघटकों को विभाजित करना कठिन हो जाता है। समीपी संघटको से अर्थ प्रतीत हो जाती है। भाषा का प्रयोग करनेवाला इससे परिचित होता है, अगर परिचित नहीं है तो अर्थ समझने में कठिनाई होती है। इसके लिए भाषा की प्रकृति को जानना भी आवश्यक होता है। मुहावरे वाले वाक्यों का अनुवाद करते समय समीपी संघटक का अनुवाद आवश्यक है न कि केवल एक पद का। इसलिए वाक्य विभाजन निकटस्थ अवयवों में करना सहायक सिद्ध होता है। जैसे - जाओ, मेरा सिर मत खाओं का अंग्रेजी-Go, don't eat head -अनुवाद करना हास्यास्पद होगा। क्योंकि इस वाक्य में सिर अलग अवयव नहीं है। वह खाना क्रिया का कर्म नहीं है, उसका उवयव है इसलिए वाक्य का विश्लेषण होगा- अर्थात् निकटस्य अवयव इसप्रकार होंगे।

जाओ मेरा सिर मत खाओ

भाषा में अस्पष्टता होती है तो प्रभाव निकटस्य अवयवों पर पड़ता है। वाक्य सुर भी समीपी संघटक है क्योंकि इस के बिना भी सही-सही अर्थ की अनुभूति नहीं होती। ''महेश काम पर गया'' वाक्य को सुर के आधार पर प्रश्नसूचक, सामान्य, आश्चर्यसूचक आदि कई रूप दिये जा सकते हैं। निकटस्थ अवयवों को वाक्यावयव या वाक्यांग कहा जाता है।

3.4.5 गहन संरचना और बाह्य संरचना-

दो या उससे अधिक शब्दों अथवा रूपों से निर्मित रचना वाक्यरचना कहलाती है। वाक्य रचना के निर्माणक इकाईयों के व्यवहार तथा उनकी व्याकरणिक प्रवृत्ति को ध्यान में रख कर वाक्य दो भागों में बाँटा जाता हैं। अंत: केंद्रित (Indo centtic) दूसरा बहि : केंद्रित है (Exo Centric) कहते हैं।

अंत:केंद्रित संरचना इसे ही गहन संरचना कहते है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

डॉ. देवीशंकर द्विवेदी के मत से यदि कोई संघठन उसी भाग के अंतर्गत आता हो जिसके अंतर्गत उसका कम से कम एक समीपी संघटक आता है तो यह संघठन अंत:केंद्रित होगा।

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मत से यदि रचना गठन दृष्टि से अपने एक या अधिक पदों के समान है तो उसे अंत:केंद्रित कहेंगे। जैसे-लाल कुर्सी इस वाक्य में लाल और कुर्सी का कार्य एक ही है। जैसे हम कह सकते हैं मुझे कुर्सी दो-कुर्सी ले आओं - मुझें कुर्सी चाहिए अदि। हम ऐसा भी कह सकते हैं। मुझे लाल कुर्सी दो, लाल कुर्सी ले आओं - मुझे लाल कुर्सी चाहिए इस वाक्यांश में कुर्सी का वही कार्य है जो लाल कुर्सी का है।

एक और उदाहरण हम लेंगे -

आज की पकी रोटियाँ इस वाक्य में रोटियाँ प्रमुख घटक है। शेष घटक इस पर आश्रित है। इसलिए केवल हम 'रोटियाँ' का प्रयोग कर सकते हैं। जैसे रोटियाँ लाओ (आज की पकी रोटियाँ लाओं)

अंत:केंद्रित रचना के दो रूप मिलते हैं -

क) आश्रयात्मक (Sybordinate)-इन रचनाओं के निर्माणक घटक रचना के केंद्र पर आश्रित होते हैं। जैसे -अच्छा लड़का, हरी सब्जी, मीठा फल,

ख) समपदस्थ (Co-ordinative)-इन रचनाओं में एक से अधिक घटक प्रमुख होते हैं। जैसे - माता और पिता का कहना मानों। मैं और तुम बाहर जाएंगे।

समपदस्य के तीन प्रकार माने गये हैं।

i) संकलानात्मक - जिन रचना के घटकों के मध्य संयोजक लगता है, वह संकलनात्मक रचना है। जैसे माता और पिता, हरी और काली, राम और सीता आदि।

ii) एकांत्रिक -इस रचना के घटक अव्यय द्वारा एक-दूसरे से संबंधित रहते हैं। जैसे-नरो वा कुंजरो वा, हिन्दी अथवा अंग्रेजी, न आज न कल आदि।

iii) समानाधिकृत -इस रचना में घटकों के बीच न संयोजक रहना है न अव्यय रहता है। जैसे अखिल भारतीय कवि सम्मेलन इसका अर्थ है- अखिल भारतीय क्षेत्र के कवियों का सम्मेलन। पुणे विश्वविद्यालय (पुणे का विश्वविद्यालय)

बाह्य संरचना - इसे बहि: केंद्रित संरचना भी कहा जाता है। बहि:केंद्रित रचना के बारे में डॉ. उदयनारायण तिवारी लिखते हैं - ''यदि कोई वाक्य कही कार्य नहीं दर्शाता जो उसके किसी भी सन्निकट मौलिक अंश द्वारा दर्शित होता है। तो वह रचना बहि:केंद्रित रचना कहलाती हैं।'' जैसे - नौ दो ग्यारह होना यहाँ वह अर्थ नही जो नौ और दो मिलकर ग्यारह होता है यहाँ अर्थ होगा लापता होना।

बहि:केंद्रित रचना के दो प्रकार हैं - i)निदेशात्मक हिन्दी में इन रचनाओं में संज्ञा और परसर्ग मिलकर वाक्य बनता है। जैसे घोड़े पर बैठा लड़का। डिब्बो में भीड़ थी।

ii) विधेयात्मक इन रचनाओं में एक घटक विषय होता है, शेष घटक उसकी व्याख्या करते हैं। ब्लूमफीड़ इस रचना को Topic & Comment कहते हैं। जैसे लड़की गोरी है। रमेश विद्वान है। तुलसी ने रामायण लिखी।

3.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

क) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1) मारिओ पेई ने रूप की परिभाषा इस प्रकार दी है- रचना की दृष्टि से शब्द परम्परा से एक विशेष क्रम में बँधे ध्वनि समूह को रूप कहते हैं। अर्थ की दृष्टि से रूप भाषा की सब से छोटी सार्थक इकाई है।

2) रूप अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्वों का योग होता है।

3) शून्य संबंधतत्त्व का उदाहरण-मदन घर चल।

4) अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व दोनों अलग दर्शानेवाला उदाहरण पत्ता- डाल से नीचे गिरा।

5) निपात का अर्थ है- अव्यय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ख) संक्षेप मे उत्तर लिखिए -

1) रूप वाक्य का एक अंग होता है, इसमें व्याकरणीय प्रयोग के अनुसार अर्थप्रतीति कराने की शक्ति होती है, वह स्वतंत्र नहीं होता वह आकांक्षा लिए हुए होता है। तो रूपिम भाषा की लघुतम सार्थक इकाई है। रूपिम का निर्णय रूपों के सार्थक खण्डों के आधार पर किया जाता हैं। अर्थात रूपिम रूप के सार्थक खण्ड है। एक ही रूपिम के एक से अधिक समान अर्थवाले परंतु परिपूरक वितरण वाले रूपों को संरूप कहते हैं।

2) रूपिम ऐसा सार्थक- ध्वनिग्राम समूह है जिसका आगे खण्डीकरण अर्थ को नष्ट या परिवर्तित किये बिना संभव न हो।

3) मुक्त रूपिम वे होते हैं, जिनका वाक्य में स्वतंत्र रूप से या अकेले प्रयोग किया जा सकता है ये रूपिम स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होते हैं और अर्थाभिव्यक्ति भी स्वतंत्र रूप से हो जाती है। तो जो रूपग्राम देखने मे स्वतंत्र पर अर्थ की दृष्टि से बद्ध अर्थात् सदैव किसी दूसरे पर निर्भर होते हैं। वे मुक्त बद्ध रूपिम कहलाते हैं।

4) रचना के आधार पर रूपिम तीन प्रकार के बनाए गये हैं - मूल रूपिम-इनकी रचना मात्र अर्थतत्त्व के माध्यम से होती है, दूसरे संयुक्त रूपिम- ये दो या दो से अधिक रूपिमों से बनते हैं। जिनमें एक अर्थतत्त्व होता है शेष संबंधतत्त्व होते हैं, तीसरा मिश्रित रूपिम- इन रूपिमों की रचना में दो या दो से अधिक अर्थतत्त्वों का योग होता है। ये तीन प्रकार है।

5) खण्ड रूपिम के दो उदाहरण - रेलगाडी=रेल+गाडी, डाकघर=डाक+घर अर्थात्-जिन रूपिमों के खण्ड किये जा सकते हैं, उन्हें खण्ड रूपिम कहते हैं।

ग) रिक्त स्थानो की पूर्ति कीजिए।

1) वाक्य
2) वाक्यपदीय
3) योग्यता, आकांक्षा और आसक्ति
4) अभिहितान्वयवाद
5) रूपतत्त्व

वाक्य के प्रकार पहचानों ।

1) साधारण या सरलवाक्य
2) मिश्रवाक्य
3) आज्ञासूचक
4) प्रश्नार्थक
5) समीकृत वाक्य

3.7 इकाई का सारांश

प्रिय मित्रो, आपको ज्ञात ही है कि शब्दों के माध्यम से हम श्रोता तक अर्थ को पहुँचाते हैं। अर्थवान स्वनसमूह शब्द कहलाता है। परंतु हमे यह भी मालूम है कि वाक्यों में शब्दों का प्रयोग ज्यों का त्यों नहीं होता। वाक्य में प्रयुक्त होते समय शब्दों में परिवर्तन आता है। जैसे- मैं, पुस्तक पद- का रूप होगा-मैं पुस्तक पढूँ ? शब्दों का यह परिवर्तन ही रूप कहलाता है।

रूप से तात्पर्य है अर्थ तत्त्व और संबंधतत्त्व का योग। द्वारिकाप्रसाद सक्सेना लिखते हैं -शब्द के उस रूप को पद कहते है, जो विभक्ति, प्रत्यय या परसर्ग का संयोग ग्रहणकर तथा वाक्य में प्रयुक्त होकर अर्थबोध में समर्थ होता हैं।

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं- i) शब्द साधक-ii)-पद साधक। जो प्रत्यय धातु में जुड़कर शब्द का निर्माण करते हैं। उन्हें शब्दसाधक प्रत्यय कहते हैं। जैसे- लुच् धातु से लोचन शब्द बना है। तो व्याकरणिक या पदसाधक प्रत्यय, पुरूषवचन, काल,लिंग को सूचित करते हैं।

संबंधतत्त्व के निम्न प्रकार हैं-

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

स्वतंत्र संबंधतत्त्व- ने , को, से, आदि स्वतंत्र संबंधतत्त्व है ।

प्रत्यय - ऐसे संबंधतत्त्व जो अर्थतत्त्व के प्रारंभ, मध्य, अंत में जुड़ते हैं।

जैसे प्रदेश-प्रादेशिक, लिखाना

स्वनप्रतिस्थापन - स्वन प्रतिस्थापन का अर्थ है - नवीन ध्वनि का आना और पुरानी का चला जाना । जैसे - ग्रल्छ्य भेजना ग्रल्छ्‌ भैजा,शब्द प्रतिस्थापन नये शब्द का आ जाना ।

शब्द प्रतिस्थापन- नये शब्द का आ जाना । जाना- (वर्तमान) गया (भूतकाल)

शून्य संबंधतत्त्व अर्थात् अर्थतत्त्व ही संबंधतत्त्व को सूचित करता है । आज्ञार्थक वाक्य, लिंग सूचक शब्द इसके उदाहरण है । जैसे -तू जा (स्त्री लिंग-पुल्लिंग), मक्खी (लिंग-पुल्लिंग)

शब्दास्थान- वाक्य में शब्द का स्थान ही संबंधतत्त्व का सूचक होता है ।

जैसे मल्लों का गाँव- मल्लग्राम, गाँव का मल्ल-गावमल्ल । शब्द की आवृत्ति से भी संबंधतत्त्व का सूचन होता है - दिन-दिन का अर्थ है, दिन-प्रतिदिन ।

अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का संयोग, पूर्ण संयोग, अपूर्ण संयोग, दोनों स्वतंत्र तथा प्रत्येक अर्थतत्त्व साथ प्रयोग मिलता है।

हिन्दी में पदों के आठ विभाग बनाये जाते हैं - संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण, संबंधसूचक, समुच्चय सूचक और विस्मयादिसूचक अव्यय।

संबंधतत्त्व से लिंग, वचन, पुरूष, कारक, काल,वाक्य को सूचित किया जाता है।

यह विवेचन हमने रूप के सन्दर्भ में किया है ।

रूपिम को अंग्रेजी में Morpheme कहते हैं । भाषा या वाक्य के लघुत्तम अर्थवान इकाई रूपिम है ऐसा भोलानाथ तिवारी का कथन है । डॉ.उदयनारायण तिवारी के मत से रूपिम वस्तुतः परिपूरक वितरण अथवा मुक्त वितरण में आऐ हुए संरूपों का समूह है ।

रूपविज्ञान की जिस शाखा में किसी भाषा के रूपों का विश्लेषण कर अर्थ और वितरण के आधार पर उसके रूपिमों और संरूपों का निर्धारण करते हुए दो या उससे अधिक रूपिमों के योग से घटित होनेवाले स्वनिमित परिवर्तन का अध्ययन किया जाता है उसे रूपिमविज्ञान Morphemcs कहते हैं ।

संरूप से तात्पर्य है Allomorph एक ही रूपिम के एक से कहते हैं । जैसे-मैं हूँ, हम हैं, तुम हो, वह है, आप हैं । इनमें होना क्रिया के वर्तमानकालिक रूप प्रयुक्त है, जो होना क्रिया के संरूप है।

रूपिम के भेद चार आधारों पर बनते हैं । प्रयोग के आधार पर, रचना के आधार पर, अर्थद्योतन और संबंधद्योतन के आधार पर तथा खण्डीकरण के आधार पर ।

प्रयोग के आधार पर

रूपिम का प्रकार	**स्वरूप**	**उदाहरण**
मुक्त रूपिम, बद्ध रूपिम	**वाक्य में अकेले प्रयोग शब्द से जुड़कर आते हैं,**	**स्नानगृह,डाकघर,सुदंरता, कालिमा,लड़कपन**
मुक्त बद्ध	**अर्थ की दृष्टि से बद्धपर दिखने में स्वतंत्र रचना के आधार पर**	**कारक, प्रत्यय, राम ने रावन को मारा**
मूल रूपिम	**केवल अर्थतत्त्व**	**भला बुरा, सुख-दुख**
मिश्रित रूपिम	**संयुक्त रूपिम अर्थतत्त्व+संबंध का योग दो से अधिक अर्थतत्त्वों का योग**	**लड़कियाँ,गाएंगी लोक सभा, राष्ट्रपति**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

	नये अर्थ का सूचन अर्थद्योतन संबंध द्योतन के आधार पर	
अर्थदर्शी रूपिम	अर्थ का बोध करानेवाले शब्द संज्ञा,सर्वनाम,क्रिया विशेषण	
संबंधदर्शी रूपिम	लिंग,काल, आदि का बोध करनेवाली व्याकरणिक इकाई	संबंधतत्त्व
	खण्डीकरण के आधार पर	
खण्ड रूपिम	दो अर्थतत्त्वों का योग	डाकघर
खण्डेतर रूपिम	इनके टुकडे नहीं किये जा सकते	बलाघात, सुर,सुरलहर

रूपस्वानिकी से तात्पर्य है दो या उससे अधिक रूपिमों के योग से स्वानिमिक परिवर्तन का घटित होना। जैसे - घोडा+दौड़=घुड़दौंड़, सत्+जन=सज्जन

पदों का समूह अर्थात् रूपो का समूह वाक्य कहलाता है, वाक्य पूर्ण भावाभिव्यक्ति कराता है, हमारा अपना सोचना, समझना, बात करना, लिखना सब वाक्यों के माध्यम से संपन्न होता है । पातंजली ने वाक्य के चार लक्षण बताए हैं - क्रिया,अव्यय, कारक और विशेषण जहाँ एकत्र हो, जहाँ चारों पदों के साथ क्रिया विशेषण हो, जहाँ विशेषण सहित क्रिया हो और जहाँ एक क्रिया हो वाक्य कहलाता है।

आचार्य विश्वनाथ के मत से योग्यता, आकांक्षा और आसक्ति युक्त पदो के समूह को वाक्य कहते है ।

अंग्रेजी विद्वान जॉर्ज के मत से वाक्य भाव या विचार की अभिव्यक्ति है । तो बाबूराम सक्सेना के मत से भाषा का अवयव वाक्य हैं । भोलानाथ तिवारी के विचार से वाक्य पूरी बात की तुलना में अपूर्ण होते हुए भी अपने आप में पूर्ण, लघुतम, स्वतंत्र, भाषिक इकाई है ।

वाक्य और पद के महत्त्व को प्रकट करनेवाले दो वाद भाषाशास्त्रियों में रहे हैं ।

पहला वाद है- अभिहितान्वयवाद- इसके प्रवर्तक कुमारिल भट्ट है । ये पद को महत्त्व देते हैं । इसलिए इसे पद्वाद भी कहते हैं । पदों का अन्वय ही वाक्य है।

दूसरा वाद है- अन्विताभिधानबाद- इस वाद के प्रवर्तक आचार्य प्रभाकर गुरू है वे मानते हैं कि पदों की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं होती । इसलिए यह वाक्यवाद भी कहलाता है ।

वाक्य भेदों के आधार पाँच हैं ।

1) आकृति के आधारपर-आकृति का अर्थ है अर्थतत्त्व और संबंधतत्त्व का योग अयोगात्मक वाक्य- इसमें सभी पदों की सत्ता स्वतंत्र होती है । स्थान से संबंधतत्त्व का ज्ञान होता है। जैसे राम-मोहन को पैसे दें । मोहन राम को पैसे दें ।

योगात्मक - संबंधतत्त्वों के योग से रूपों का निर्माण होता है । इसके दो प्रकार है- प्रश्लिष्ट योगात्मक-कर्ता,क्रिया एक ही पद में समाहित होता है। जैसे-नाधोलिनन (हमारे पास नाव लाओ-चेरो की)

अश्लिष्ट योगात्मक-वाक्य के पदों में प्रत्ययों का योग रहता है। तुर्की, द्रविड,एस्पैरेन्तों, भाषाएँ इसके उदाहरण हैं

श्लिष्ट योगात्मक प्रत्यय प्रधान भाषा होती है। संस्कृत, ग्रीक लैटिन इसके उदाहरण है ।

2) रचना के आधार पर तीन प्रकार के वाक्य होते हैं- एक-कर्ता, एक-क्रिया-सामान्य वाक्य । दो वाक्यों का योग-संयुक्त वाक्य तो एक प्रधान वाक्य और उसके आश्रित अनेक प्रधान उपवाक्य मिश्रवाक्य कहलाता है ।

3) अर्थ के आधार पर-विधि,निषेध आज्ञा, इच्छा,संभावना, संदेह, प्रश्न, आश्चर्य, संकेत ऐसे नौ प्रकार बनते है।

4) क्रिया के होने न होने के आधार पर क्रिया युक्त और क्रियाविहीन वाक्य बनते हैं ।

5) रचनाशैली के आधार पर शिथिल, समीकृत और आवर्तक ऐसे तीन प्रकार के वाक्यों की रचना होती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वाक्य की संरचना में पदक्रम अर्थात् कर्ता,कर्म क्रिया विरामचिन्ह और व्याकरण इन तीन बातों को ध्यान में रखा जाता है। आधुनिक भाषावैज्ञानिक ने निकटस्थ अवयव अर्थात् समीपी संघटक को भी संरचना का आधार माना है। निकटस्थ अवयव स्थान की दृष्टि से न होकर अर्थ की दृष्टि से निकट होने वाली व्याकारणिक इकाई होती है । इसके कारण अपरिचित व्यक्ति भाषा के मुहावरे और लहजों का अर्थ प्राप्त कर सकता है । जाओ मेरा सिर मत खाओ का अनुवाद अब तुम चले जाओ ऐसा होगा ।

दो या उससे अधिक शब्दों से निर्मित रचना वाक्य संरचना कहलाती है। अंत:केंद्रित संरचना गहन संरचना कहलाती हैं । जिसके आश्रयात्मक और समपदस्थ ऐसे दो रूप मिलते हैं ।

बहिर्केंद्रित संरचना का अर्थ है , पदों का योग अन्य ही अर्थ दर्शाता हैं निदेशात्मक और विधेयात्मक ऐसे दो प्रकार बहि:केंद्रित संरचना के होते हैं ।

वाक्य विश्लेषण के तीन आधार माने गये हैं । उद्देश्य और विधेय । उद्देश्य कर्ता होता है और विधेय क्रिया उपवाक्य में दो वाक्यों के योग से उपवाक्य बनते हैं । जो संज्ञा, विशेषण, क्रियाविशेषण उपवाक्य कहलाते हैं ।

वाक्य भेद का तीसरा आथार अग्र और पश्च है । जो आवृत्तिमूलक वाक्य होते हैं । लोककथा प्रस्तोता वाक्यों को दुहरा-दुहरा कर अपनी बात कहता है जो अग्रवाक्य पश्चवाक्य के रूप ही हैं ।

3.8 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

1) रूप की परिभाषा देते हुए रूपिम के प्रकार समझाइए ।
2) रूप रूपिम के अंतर को स्पष्ट कीजिए ।
3) वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्य प्रकारों का विवेचन किजिए ।
4) गहन संरचना और बाह्य संरचना पर प्रकाश डालिए ।

टिप्पणी लिखिए - 1) आभिहितान्वय वाद 2) संबंधदर्शी रूपिम 3) निकटस्थ अवयव

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई - 4
अर्थविज्ञान

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 विषय विवरण
4.3.1 अर्थ की अवधारणा
4.3.2 शब्द और अर्थ का संबंध
4.3.3 पर्यायता
4.3.4 अनेकार्थता
4.3.5 विलोमता
4.3.6 अर्थ परिवर्तन
4.3.6.1अर्थ परिवर्तन-दिशाएँ
क) अर्थविस्तार
ख) अर्थसंकोच
ग) अर्थादेश
4.3.7 अर्थ परिवर्तन के कारण
4.4 स्वयं अध्ययन प्रश्न के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

4.१ प्रस्तावना -

ध्वनि(वर्ण) रूप (शब्द) से भाषा का शरीर बना है। इस शरीर में प्राण तत्त्व अर्थ है। भाषा का मुख्य प्रयोजन है कि मनुष्य अपनी बात को दूसरों तक संप्रेषित कर सके। अर्थ भाषा का सारतत्त्व है। अर्थ ही मानसिक प्रतीत है जो वक्ता और श्रोता को जोडने का काम करती है।

भाषा अर्थवान स्वनों का समूह है। ऋग्वेद में अर्थरहित वाणी को 'अफलाभपुष्पा' भी कहा है। यास्क मुनि ने लिखा है कि जो अर्थ जाने बिना वेदाध्ययन करता है वह केवल भारवाही है। इसलिए शब्द शरीर है, रूप है, अर्थ आत्मा है ,अनुभूति है। अर्थ का ज्ञान न रखनेवाला व्यक्ति अभागा तथा दरिद्र है।

उतत्व पश्चन्त दर्देश वाचमुत: त्व श्रृणोत्येनाम्।

उतो त्वस्मै तन्वं विससे जायेव पत्थ उशती सुवासा:। (ऋग्वेद)

महाभारत के वनपर्व, शतपथ ब्राह्मण, निरूक्त, न्यायमीमांसा, व्याकरणशास्त्र, वाक्यपदीय में अर्थतत्त्व के संबंध में विचार हुआ।

19 वीं शताब्दी में माईकेल ग्रीस ने सिमेंन्टिक्स Semantices शब्द का प्रयोग किया। 1902 में इडेव्हिलर ने 'सिमेन्टिक्स' को व्याख्यायित किया -''सिमेन्टिक्स ऐतिहासिक शब्दार्थ का नियम शब्दों के अर्थों में परिवर्तन के विकास और इतिहास का क्रमबद्ध विचार विमर्श है।''

अर्थ का संबंध हमारी चेतना से है जिसमें अर्थ के आदिम बीज धन -रूप में अथवा ऋण रूप में विद्यमान रहते हैं। प्रत्यक्ष रूप से हम ऐसी स्थिति मान सकते हैं जिसमें हमारी चेतना आधारभित्ति विशेष प्रभावोत्पादक एवं ज्ञापक तत्त्वों में विभक्त हो जाती है। ये तत्त्व ही पुन: संगठित एवं संश्लिष्ट होकर किसी अनुभव के अर्थ का रूप धारण करते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मत से किसी भाषिक इकाई (वाक्य, वाक्यांश, रूप, शब्द, ध्वनि, मुहावरा, लोकोक्ति आदि) की किसी भी इंद्रिय, कान, आँख प्रमुखतः, नाक, जीभ, त्वचा) से ग्रहण करने पर जो मानसिक प्रतीति होती है वही अर्थ है ।

अर्थविज्ञान की परिभाषाएँ :-

अर्थविज्ञान में अर्थ का वैज्ञानिक अध्ययन होता है । अर्थ का स्वरूप क्या है ? शब्द और अर्थ का संबंध क्या है ? अर्थ का ज्ञान कैसे होता है ? संकेतग्रह, अर्थबोध के साधन क्या है ? अनेकार्थी शब्द के अर्थ का निर्णय कैसे किया जाता है? अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ कौनसी है ? अर्थपरिवर्तन के कारण कौनसे है ? आदि बातों का अध्ययन करनेवाला विज्ञान अर्थविज्ञान है ।

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मतानुसार - अर्थविज्ञान में अर्थ का अध्ययन होता है । यह अध्ययन मुख्यतया ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक होता है । किंतु सोचने के या वर्णनात्मक स्तर पर भी अब अर्थ के अध्ययन की बात की जाने लगी है ।

कुल मिलाकर अर्थविज्ञान अर्थ का विज्ञान है ।

अर्थ के विभिन्न पक्षों का जिसमें वैज्ञानिक अध्ययन होता है उसे अर्थविज्ञान कहते हैं ।

4.२ उद्देश्य -

मित्रों, इस इकाई का मुख्य उद्देश्य भाषा की लघुत्तम, अर्थवान इकाई शब्द और अर्थ के संबंध को जानना है । जो भाषा अर्थ संप्रेषण नहीं कर पाती वह भाषा अस्तित्व शून्य हो जाती है । कारण अर्थ भाषा का आत्मतत्त्व है । इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

(1) शब्द तत्त्व और अर्थतत्त्व के पारस्परिक संबंध को समझते हुए अर्थ प्रतीति के साधनों की जानकरी प्राप्त करेंगे ।

(2) अर्थ प्रतीति के आधार पर शब्दों के प्रकार जान सकेंगे ।

(3) शब्द में होनेवाले अर्थगत परिवर्तन की दिशाओं, कारणों से परिचित हो पाएँगे ।

4.3 विषय विवरण

4.3.1 अर्थ की अवधारणा

भाषा की परिभाषा में ''सार्थक ध्वनियों का समूह ''पदावली का प्रयोग हुआ है । अर्थात् भाषा में निरर्थक शब्दों को, ध्वनि समूहों को स्थान नहीं होता है । अर्थ के बिना भाषा का कोई महत्त्व नहीं है और प्रत्येक सार्थक शब्द अपना एक अर्थ या भाव या विचार रखता है । सामान्यरूप में यह कहा जा सकता है कि शब्द के उच्चारण द्वारा जो प्रतीति होती है उसे अर्थ कहते है ।''

डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार ''किसी भाषिक इकाई (वाक्य,वाक्यांश,रूप, शब्द, ध्वनि, मुहावरा, लोकोक्ति आदि) की किसी भी इंद्रिय (प्रमुखतः कान,आँख किन्तु अपवादतः नाक,जीभ, त्वचा) से ग्रहण करने पर जो मानसिक प्रतीति होती है, वही अर्थ है ।''

आचार्य पाणिनि अर्थ को भाषा का सारे मानते हैं । कारण भाषा में अर्थ ही प्रमुख होता है । उसे प्रकट करने के लिए शब्द का सहारा लिया जाता है । अर्थ को जानना ही श्रोता के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।

किसी शब्द से उसके अर्थ का ज्ञान दो प्रकार से होता है । एक स्वयं किसी चीज का अनुभव करके, तो दूसरे-जिस चीज का हम अनुभव नहीं ले सकते उसका ज्ञान दूसरों के अनुभव के ज्ञान पर होता है । या उसके बारे में केवल पढ़ा-सुना होता है । जैसे स्वर्ग के बारे में हमने केवल सुना या पढ़ा होता है । इसका ज्ञान स्वयं का नहीं हो सकता । इस तरह दोनों रूपों में अर्थ की प्रतीति होती है । बिना अर्थ के भाषा और शब्द का कोई महत्त्व नहीं होता है । अर्थ के साथ जुड़कर ही भाषा महत्त्व को प्राप्त करती है ।

4.3.2. शब्द और अर्थ का संबंध

शब्द और अर्थ का संबंध अभिन्न है । शब्द शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा है । हम अपनी बात को अर्थात् अर्थ को

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

पहुँचाने के लिए शब्द का ही सहारा लेते हैं। ये शब्द भाषा के प्रतीक हैं। शब्द और अर्थ को लेकर विद्वानों ने अपने अनेकानेक मत प्रस्तुत किये हैं। जैसे कालिदास ने इनको गौरीशंकर की भाँति, तुलसीदास ने सीता-राम की भाँति तो भर्तृहरि ने दोनों को एक ही आत्मा के दो रूप बताया है। दोनों अलग हो ही नहीं सकते। अत: शब्द और अर्थ में प्रतीकात्मक संबंध है। भाषा के प्रतीक ये शब्द अर्थबोध कराते हैं कारण शब्द से किसी निश्चित वस्तु या अर्थ का बोध होता है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो शब्द और अर्थ का कोई नैसर्गिक संबंध नहीं है, समाज द्वारा यह संबंध मान लिया जाता है। उसी के अनुसार शब्द के साथ बिम्ब या वस्तु का मानसिक रूप सामने आ जाता है। हर शब्द या ध्वनि के निश्चित प्रतीक होते हैं। जन्म के बाद समय के साथ जैसे-जैसे चेतना का विकास होता है वैसे-वैसे परिवेश की वस्तुओं से मनुष्य का परिचय होता जाता है। प्रत्येक वस्तु के साथ जुड़ा शब्द (प्रतीक) मनुष्य के मस्तिष्क में बिम्ब अंकित करता है। इसलिए अनेक बार वस्तु सामने न होने पर भी हम मानस में उसे प्रत्यक्ष देख सकते हैं। इस तरह वस्तु और उसका वाचक शब्द मनुष्य के मन पर संस्कार करता रहता है। यह क्रिया एक साथ होती है। इसी कारण वस्तु देखते ही उससे जुड़ा शब्द भी सामने आ जाता है। इसी से शब्द और अर्थ में अभिन्न साहचर्य दृष्टिगोचर होता है। यदि शब्द है तो उसका कोई न कोई अर्थ अवश्य रहता है और अर्थ के रहने पर ही शब्द की वाक्य संगठन में सार्थकता मानी जाती है।

परंतु मित्रों, क्या अर्थ का इतना ही अर्थ है ? इतनी ही सी बात ? नहीं, यहाँ अर्थ से हमारा अभिप्राय इंद्रिय के विषयभूत पदार्थ से न होकर बुद्धिगत भाव से है। शब्द जिस बुध्दिगत भाव को व्यक्त करते हैं उसी को अर्थ कहते हैं। अर्थ शब्द का निर्माता है और शब्द के अर्थ के प्रत्यायक।

प्रतिभा, ज्ञान, अनुभव और ग्रहणशक्ति अलग-अलग होने के कारण अर्थ का स्वरूप निश्चित करना कठिन हो जाता है। कारण एक ही शब्द विभिन्न संदर्भो में अलग-अलग अर्थ का वाचक हो जाता है। इतना ही नहीं एक ही शब्द भिन्न स्थितियों में मानसिक दशा के कारण भिन्न भिन्न अर्थो में प्रकट होता है। तात्पर्य शब्द में अर्थबोध की नित्य और अनादिकालीन योग्यता है

ध्वनि या शब्द के साथ वस्तु का संबंध स्थापन ही अर्थ बोध या संकेतग्रह कहलाता है। भारतीय परम्परा में अर्थबोध के आठ साधन माने गये हैं। अर्थात् व्यवहार, आप्त वाक्य,व्याकरण, उपमान, कोश, वाक्य शेष (प्रकरण), विवृत्ति(व्याख्या) तथा प्रसिद्ध पद का सान्निध्य। इनका संक्षेप में विचार करने पर शब्द और अर्थ का संबंध और अधिक स्पष्ट हो जाएगा।

(1) व्यवहार :- व्यवहार अर्थबोध के लिए सबसे ज्यादा उपयोगी है। जन्म लेने के बाद से ही बच्चा संसार की सभी वस्तुओं के नाम,सम्बंधी, परिवेश आदि का ज्ञान व्यवहार से ही करता है। आरंभ में बच्चे को वस्तुएँ बताकर नाम बताया जाता है। फिर स्कूल में और बड़ा होने पर वह स्वयं यह ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता अर्जित कर लेता है।

(2) आप्त वाक्य-किसी वस्तु का यथार्थ चित्रण करनेवाले को आप्त कहा जाता है। इसमें वक्ता अपनी ओर से कुछ नहीं कहता। ऋषि,सिद्ध, सन्त की बात को आधार बनाया जाता है। जैसे-ईश्वर, मोक्ष के बारे में आप्तवाक्य या ग्रंथ से ही जाना जा सकता है।

(3) व्याकरण - व्युत्पत्ति, अन्वय, समास, सन्धि विच्छेद, प्रकृति, प्रत्यय, शब्द, रूप आदि व्याकरण के विषय है। जिनसे अर्थबोध होता है। शब्दों के अर्थगत सूक्ष्म भेद को स्पष्ट करने में व्याकरण ही मदद करता है।

(4) उपमान- सदृश्य वस्तु बताकर किसी शब्द का अर्थ बताना। इसे समानता या सादृश्य भी कहते हैं। समानता से आशय रूप, गुण, स्वभाव तथा कर्म सादृश्य है। जैसे किसी सुंदर स्त्री का वर्णन करने के लिए चंद्रमा की उपमा दी जाती है।

(5) कोश - भाषा ज्ञान या सम्पूर्ण अर्थबोध के लिए कोश आवश्यक होता है। कोश ज्ञात शब्दों के अर्थ के आधार पर अज्ञात शब्दों का अर्थबोध कराते हैं। एक शब्द के अनेक अर्थो के संबंध में कोश सहायता करता है। कोश के कारण शब्द के रूप लिंग, वचन, क्रिया, काल का बोध होता है।

(6) वाक्यशेष (प्रकरण) -प्रकरण या प्रसंग अनेकार्थक शब्दों के अर्थ निर्णय में सर्वोत्तम सहायक है। जब कोई व्यक्ति किसी वाक्य में विशेष शब्द का व्यवहार करता है तब वह उसके अनेक अर्थो के होते हुए भी, केवल एक अर्थ में लेता है और प्राय: श्रोता भी उसे उसी अर्थ मे ग्रहण करता है। एक समय में एक ही अर्थ रहता है।

(7) विवृत्ति (व्याख्या)- कभी-कभी अनेक शब्दों को केवल अर्थ देकर स्पष्ट नहीं किया जा सकता, उन्हें व्याख्या की

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अपेक्षा होती है। व्याख्या से अनेक शब्दों का अर्थ स्पष्ट होता है। विशेषरूप से पारिभाषिक शब्द, तकनिकी या दार्शनिक शब्दों को बिना व्याख्या के स्पष्ट नहीं किया जा सकता।

(8) प्रसिद्ध पद का सान्निध्य- प्रसिद्ध या ज्ञात पदों की समीपता से अज्ञात शब्द का अर्थ ज्ञात होता है। इनके लिए कोश देखने की आवश्यकता नहीं होती।

शब्द चाहे एकार्थक हो या अनेकार्थक सब में अर्थ निर्णय के साधनों का महत्त्व है। बिना इन साधनों के ठीक-ठीक अर्थज्ञान संभव नहीं है।

भाषा की संपन्नता उसके शब्द भंडार पर निर्भर होती है। हमारे पास जितना अधिक, शब्दभंडार, होगा उतनी ही मात्रा में हमारी अभिव्यक्ति प्रभावी होती है। अभिव्यक्ति में सटीक शब्दों का प्रयोग अपनी एक विशिष्ट भूमिका निभाता है। इसलिए केवल अधिक से अधिक शब्दों को जानना ही पर्याप्त नहीं है। या केवल शब्द संकलन ही आवश्यक नहीं है तो शब्द की ध्वनि संरचना एवं अर्थसंरचना का अध्ययन भी आवश्यक है।

भाषाविज्ञान में एक शाखा है शब्द विज्ञान इसके अंतर्गत शब्द की परिभाषा, शब्दों का वर्गीकरण, शब्दसमूह में परिवर्तन के कारण और दिशाएँ शब्दों का निर्माण आदि का अध्ययन किया जाता है हर भाषा में शब्दों की अपरिमित संख्या होती है। इन शब्दो को अलग-अलग आधारों पर विभिन्न वर्गो में भाषावैज्ञानिकों ने बाँटा है।

शब्दों के वर्गीकरण के निम्न आधार बताए जाते हैं - जैसे

1) स्रोत या इतिहास के आधार पर हिन्दी में पाँच प्रकार के शब्द बनते हैं-तत्सम, तद्भव, देशज और आगत तथा संकर
2) रचना के आधार पर- रूढ,यौगिक तथा योगरूढ शब्द बनते हैं।
3) व्याकरण के आधार पर - विकारी तथा अविकारी शब्द
4) प्रयोग के आधार पर- सामान्य शब्द, पारिभाषिक या तकनिकी और अर्ध पारिभाषिक
5) अर्थ के आधार पर - एकार्थवाची, अनेकार्थवाची, पर्यायवाची,विपरितार्थ, अनेक शब्दों के लिए एक शब्द।

इनमें से अर्थ के आधार पर कुछ शब्दों का परिचय हम प्राप्त करेंगे।

4.3.3. पर्यायता

पर्यायवाची शब्द या पर्यायी (Synonyms)

पर्याय की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है।

''किसी विशिष्ट भाषा में प्रचलित एक ही व्याकरणगत शब्द भेदवाले ऐसे दो या अधिक शब्द पर्याय कहलाते हैं जो मूलत: एक ही व्यक्ति,पदार्थ, भाव या व्यापार (क्रिया) के बोधक हो, किन्तु जिनमें कुछ-न-कुछ भिन्न अर्थच्छायाएँ भी विद्यमान हो।''

समृद्ध भाषा में पर्यायवाची शब्दों की अधिकता होती है। जिन शब्दों के अर्थ में समानता हो उन्हें पर्यायवाची, समानार्थी, प्रतिरूप शब्द भी कहते हैं। इन पर्यायवाची शब्दों में अर्थ की समानता होते हुए भी इनका प्रयोग एक-सा नहीं होता। ये शब्द अपने आप में इतनें पूर्ण होते हैं कि एक ही शब्द का प्रयोग सभी स्थितियों में, सभी स्थलों पर करना उचित नहीं होता। प्रत्येक शब्द की महत्ता विषय और स्थान के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है।

तात्पर्य यह कि किसी विशिष्ट भाषा में प्रचलित समानार्थक शब्दों को ही एक दूसरे का पर्याय कह सकते हैं, भिन्न-भिन्न भाषाओं के समानार्थक शब्दों को नहीं। पर्याय एक ही व्याकरणगत शब्द भेदवाले होते हैं। (दो संज्ञा शब्द, दो विशेषण, दो क्रियाएँ आदि)। पर्याय वे ही शब्द कहला सकते हैं जो एक ही व्यक्ति, वस्तु, भाव या क्रिया के द्योतक हो। पर्यायों में अर्थच्छाया का अन्तर रहना अनिवार्य है।

हिन्दी में तत्सम पर्यायवाची शब्द ही अधिक पाए जाते हैं जो कि संस्कृत से हिन्दी में आए हैं। हिन्दी में तद्भव पर्यायवाची शब्दों का अभाव है। कुछ प्रमुख पर्यायवाची शब्द इस प्रकार हैं -

अमृत - पीयूष, सुधा।
अग्नि - आग, अनल, कृशानु, वैश्वानर, पावक।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

असूर - दानव, दैत्य, राक्षस, निशाचर, रजनीचर, दनुज।

अरण्य - जंगल, वन, कानन, विपिन।

अश्व - घोड़ा, हय, सैंधव, तुरंग, घोटक, वाजि, तुरंग।

आँख - नेत्र, लोचन, नयन, चक्षु, दृग, अक्षि।

आकाश- व्योम, गगन, अम्बर, नभ, अभ्र, आसमान, अन्तरिक्ष,अनंत,पुष्कर,द्यौ, ।

इंदीवर - पंकज,जलज,नीरज,राजीव,उत्पल,कमल,सरोज,पद्म, कंज, अम्बुज,नलिन,अरविन्द।

इंदु - चंद्र,शशि,राकेश,सुधांशु,निशाकर,विधु,मृगांक, तारापति,सुधाकर, मयंक, सोम, कलानिधि।

इंद्र - देवराज,सुरपति,महेन्द्र,सुरेश,शचिपति,मेघराज,पुरन्दर।

उद्यान - उपवन,बाग,बगिचा,वाटिका।

कामदेव- अनंग,मदन,मनोज,मन्मथ,मयन कन्दर्प,पंचशर,मार।

खग - पक्षी,पंछी,चिड़ियाँ,विहंग, नभचर।

गंगा - भागीरथी,अलकनंदा,देवपथगा,सुरसरिता,जान्हवी,देवनदी।

गणेश - गजानन,गणपति,लंबोदर,विनायक,गजवदन,एकदन्त,मूषकवाहक,गिरिजानंदन।

घन - बादल,वारिद, मेघ,जलधर।

चपला - विद्युत,बिजली,तड़ित,चंचला,दामिनी।

तड़ाग - सरोवर,तालाब,जलाशय,ताल,सर।

दर्पण - आईना,आरसी,मुकूर,शीशा।

दुर्गा - काली,चण्डिका,शाम्भवी,महागौरी,चामुंडा,कल्याणी,कामाक्षी।

नदी - सरिता,तटिनी,स्त्रोतस्विनी,निर्झरणी,तरंगिणी,कल्लोलिनी।

पत्नी - स्त्री,सहचरी,अर्धांगिनी,गृहिणी,दारा,वल्लभा,वामा,जोरू,बहू,सहधर्मिणी।

पति - आर्यपुत्र, स्वामी, कांत, वल्लभ, भर्तार।

फूल - कुसुम,पुष्प,सुमन,गल,प्रसून।

ब्राह्मण - द्विज,भूदेव,विप्र,ज्येष्ठ वर्ण।

भास्कर - सूर्य, दिवाकर,दिनकर,रवि,प्रभाकर,दिनेश,भानु,मार्तण्ड,अर्क,आदित्य,दिनमणि।

मधुकर - भौंरा,षट्पद,भ्रमर,भृंग,मधुप,अलि।

राजा - नृपति,नरेश,नरपति,नृप,भूप,महीपति सम्राट।

यम - सूर्यपुत्र,यमराज,धर्मराज,यमुनाभ्राता,श्राद्धेव।

रूद्र - महादेव,शंकर,शिव,शंभो,महेश,त्रिलोचन,कैलासपति।

सोना - कनक,सुवर्ण,हेम,जानक,पुष्कल,हाटक,कंचन।

सरस्वती- वीणापाणि,शारदा,ब्राह्मी,वागीशा,महाश्वेता,भारती,वाक्,वाणी,भाषा।

हरि - विष्णु,गोविन्द,केशव,धनंजय,मुकून्द,नारायण,हृषिकेश,अच्युत,गरूड़ध्वज,दामोदर।

हाथी - गज,कुंजर,हस्ती,मतंग,कुंभी।

4.3.4. अनेकार्थता - (Polysemic Words)

हिन्दी में कुछ ऐसे शब्द प्रयोग में लाये जाते हैं जिनके अनेक अर्थ होते हैं। भिन्न भिन्न प्रसंगो के अनुसार इनका प्रयोग किया जाता है। जब एक शब्द अनेक अर्थो का द्योतन करें तो उसे अनेकार्थवाची कहते हैं। विभिन्न भाषाओं के अधिकांश शब्द इसी श्रेणी में आते हैं।

अनेकार्थक शब्दों का अर्थनिर्णय

भर्तृहरि ने 'वाक्यपदीय' में अनेकार्थ शब्दों के निर्णय के चौदह साधन बताये हैं जो निम्नानुसार है,

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1) संयोग - जहाँ अनेकार्थक शब्द का निश्चय किसी प्रसिध्द संबंध के आधार पर होता है उसे संयोग कहते हैं। जैसे - गो शब्द के अनेक अर्थ है - गाय, पृथ्वी, इंद्रिय, वाणी आदि। पर जब 'सवत्सा गौ: कहेंगे तो गो का अर्थ वत्स के संयोग से गाय होगा।

2) वियोग - संबंध का अभाव वियोग कहलाता है। जैसे ''नगबिन सूनी मुँदरी'' मुँदरी के कारण नग का अर्थ नगीना होगा। नग शब्द के अन्य अर्थ जैसे - पहाड़, वस्तु नहीं होगा।

3) साहचर्य - साहचर्य का अर्थ है - सदा साथ रहना। इससे अनेकार्थक शब्दों का निर्णय हो जाता है। जैसे राम-लक्ष्मण। राम के अनेक अर्थ है - परशुराम, दशरथपुत्र राम, बलराम। लक्ष्मण के भी अनेक अर्थ है - दाशरथी लक्ष्मण, दुर्योधन का बेटा लक्ष्मण परंतु साहचर्य के कारण दाशरथी पुत्र राम-लक्ष्मण भाई अर्थ होगा।

4) विरोध - पारस्पारिक वैमनस्य से भी अर्थ का निश्चयन होता है। राम-रावण कहने पर राम का अर्थ परशुराम अथवा बलराम नहीं होगा। दशरथ का पुत्र राम ही होगा।

5) अर्थ - यहाँ अर्थ शब्द प्रयोजनवाचक है। प्रयोजन के कारण अर्थ निर्णय होता है। जैसे- मैंने कर अदा किया है। इस वाक्य में प्रयुक्त कर शब्द के अनेक अर्थ है - हाथ, किरण, टैक्स आदि। पर यहाँ अर्थ टैक्स ही होगा।

6) प्रकरण - प्रसंग से अर्थ का निर्णय होता है। जैसे - ''मधु को दवा दो''। वाक्य में मधु शब्द का अर्थ शराब, वसंतऋतु, शहद न होकर व्यक्तिवाचक संज्ञा होगा।

7) लिंग - यहाँ पर लिंग का अर्थ पुल्लिंग-स्त्रीलिंग न होकर ऐसे चिन्ह से है जिससे किसी विशेष अर्थ का बोध होता है। जैसे - गगन में छाए है घनश्याम- इस कथन में प्रयुक्त 'घनश्याम' शब्द के दो अर्थ सूचित होते है - श्रीकृष्ण और काले बादल। गगन में छाए - 'के कारण यहाँ अर्थ होगा काले बादल। खाना खाते समय यदि सैंधव माँगे तो अर्थ होगा नमक न कि घोड़ा।

8) अन्य शब्द का सान्निध्य - शब्दों की पारस्पारिक निकटता से भी अर्थनिर्णय में सुगमता आती है। नेहरू-पटेल कहने से अर्थ होगा - पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभभाई पटेल। जब कि नेहरू और पटेल नामधारी अनेक व्यक्ति है।

9) सामर्थ्य :- सामर्थ्य का अर्थ है किसी कार्य के संपादन में किसी वस्तु की शक्ति का उपयोग। जैसे -चरन कमल बदौं हरि राई।

जाकि कृपा पंगु गिरि लंघे, अंधे को सबकुछ दरसाई।

यहाँ हरि शब्द का अर्थ - विष्णु होगा क्योंकि पंगु को पहाड़ लाँघने और दृष्टिहीन को सबकुछ दिखाई देने में सामर्थ्य उनका ही है।

10) औचित्य - अनेकार्थक शब्दों के अर्थ का निर्णय योग्यता के आधार पर लिया जाता है। जैसे -द्विज पंक्ति उड़ती जा रही की - इसमें द्विज का अर्थ ब्राह्मण, दाँत न होकर पक्षी अर्थ होगा। कारण उड़ने की क्षमता केवल पक्षी में होती है।

11) देश - स्थान विशेष की विशेषता के कारण अर्थ का निर्णय जब किया जाता है तब देश के आधार पर यह किया जाता है। जैसे - मरूभूमि का घनश्याम इस कथन में मरूभूमि के कारण घनश्याम का अर्थ पानी बरसाने वाले बादल होगा जो जीवन देते हैं।

12) काल - काल के कारण अर्थनिर्णय हो। जैसे - ''मधुमत्त कोयल की कूक''में मधु का अर्थ होगा वसंत ऋतु में कूकनेवाली कोयल।

13) व्यक्ति - यहाँ पर व्यक्ति का अर्थ स्त्रीलिंग और पुल्लिंग ऐसा लिंगभेद है जो अर्थनिर्णय में सहायक है।

जैसे टीका - टीका के अनेक अर्थ है - तिलक, दाग, पुस्तक की आलोचना, सगाई की रस्म, सोने का विशेष गहना, बच्चे के स्वास्थ के लिए लगाया जानेवाला टीका। परंतु लिंगभेद से अर्थ बदल जाता है। ललाट का टीका (पुल्लिंग-तिलक अर्थ), पुस्तक की टीका (स्त्रीलिंग - आलोचना)।

14) स्वर - स्वर का अर्थ है - आरोह - अवरोह -। स्वरभेद से अर्थभेद वेदों में होता है। इंद्र- शत्रु, शब्द का अर्थ स्वरभेद

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

से बदल जाता है - जैसे इंद्र जिसका शत्रु है वह और इंद्र का शत्रु । वह चला गया - वाक्य स्वरभेद के कारण आश्चर्य, क्रोध, निराशा, भय, घृणा को द्योतित करता है ।

इस तरह अर्थभेद के अनेक साधन होते है । जिनकी संक्षेप में चर्चा भर्तृहरि ने की है ।

उदाहरण के तौर कुछ शब्द प्रस्तुत है :-

अक्षर - वर्ण,ब्रह्म,विष्णु,सत्य,तपस्या,गगन,शिव ।

अक्ष - आंख,सर्प,धुरी,पहिया,कील,आत्मा ।

अंक - गिननी के अंक, नाटक के अंक,अध्याय,संख्या,भाग्य ।

अमृत - स्वर्ण,जल,पारा,दूध,अन्न ।

आम - फल का नाम, सर्वसाधारण, सामान्य-मामूली ।

कनक - सोना,धतूरा ।

कटाक्ष - व्यंग्य,आक्षेप,तिरछी नजर ।

कर - हाथ,टैक्स,किरण ।

खग - पक्षी,तारा,गंधर्व,बाण ।

गुरू - शिक्षक,ग्रह विशेष,श्रेष्ठ,गुरू ।

जलज - मोती,कमल,शंख,मछली,चन्द्रमा,सेवार ।

कला - सोलहवाँ भाग,हुनर ।

पानी - इज्जत,जल,शर्म,आब,चमक ।

उत्तर - जबाब,उत्तर दिशा,पश्चात् ।

अर्थ - मतलब,धन,प्रयोजन,कारण ।

द्विज - चंद्रमा,ब्राह्मण,दाँत,पक्षी ।

पक्ष - पंख,दल,तरफ,मास का आधा भाग ।

मधु - शहद,वसंत, चैत्रमास,शराब ।

हरि - विष्णु,बंदर,घोड़ा।

काल - मृत्यु,समय,अकाल ।

खल - दुष्ट,नीच,खरल,खलिहान,धतुरा ।

पुष्कर - एक तीर्थ का नाम,कमल,द्वीप का नाम, बाण ।

गुण - गुण,रस्सी, शील,स्वभाव,कौशल,सत्-रज-तम गुण ।

हेम - बर्फ,सुवर्ण ।

राग - संगीत का राग, प्रेम, गाना, रंग।

महावीर - हनुमान,बलवान,जैन,तीर्थकर ।

रस - नवरस,षड़रस,स्वर्णादि का भस्म,स्वाद,सार,पारा,प्रेम,आनन्द ।

4.3.5. विलोमता - (Antonyms)

विलोम या विपर्यय उन शब्दों को कहते हैं, जो एक दूसरे के विपरीत अर्थ के द्योतक हों। जैसे सच्चा-झूठा,रात-दिन आदि।

विलोम का निर्धारण अर्थ के आधार पर होता है। इसलिए कई बार जिन शब्दों के एक से अधिक अर्थ निकलते हैं उनके उस अर्थ के अनुसार विलोम भी भिन्न-भिन्न होते हैं। जैसे सूखा-इसके विलोम में हरा-भरा,गीला ये दो विलोम शब्द हैं। कारण सूखा शब्द पानी विरहित-और शुष्क,अकाल आदि के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इसी प्रकार एक और उदाहरण है - सीधा-इसके विलोम में टेढ़ा, उल्टा, शब्द बनते हैं। आदमी बड़ा टेढ़ा है, (कुटिल के अर्थ में) वह बड़ा ही उल्टा है। (विचित्र स्वभाव के अर्थ में) प्रयुक्त होगा। अर्थात,शब्द की विभिन्न अर्थच्छ्याओं के अनुसार उस-उसके विलोम शब्द भी बदल जाते हैं -

कुछ और उदाहरण विलोम शब्द के प्रस्तुत हैं -

आदि	-	अन्त	भूत	-	भविष्य
अस्त	-	उदय	बलवान	-	बलहीन
अल्प	-	बहु	मुनाफा	-	नुकसान
अग्रज	-	अनुज	विशेष	-	सामान्य
सम	-	विषम	सुलभ	-	दुर्लभ
अमृत	-	विष	सुगन्ध	-	दुर्गन्ध
स्मरण	-	विस्मरण	अनुकूल	-	प्रतिकूल
शीत	-	उष्ण	आस्तिक	-	नास्तिक
हिंसा	-	अहिंसा	आय	-	व्यय
तरूण	-	वृद्ध	आजादी	-	गुलामी
शयन	-	जागरण	अपमान	-	संमान
झोपड़ी	-	महल	इष्ट	-	अनिष्ट
मालिक	-	नौकर	उत्तीर्ण	-	अनुत्तीर्ण
घर	-	बाहर	कीर्ति	-	अपकीर्ति
दक्षिण	-	उत्तर	गीला	-	सूखा
नगर	-	ग्राम	गुण	-	दोष
हँसना	-	रोना	छाँह	-	धूप
जन्म	-	मृत्यु	रूपवान	-	कुरूप
जय	-	पराजय	सुबह	-	शाम
तीव्र	-	मन्द	चोर	-	साधू
देव	-	दानव	घात	-	प्रतिघात
धनी	-	निर्धन	खेद	-	प्रसन्नता
निन्दा	-	स्तुति	सौभाग्य	-	दुर्भाग्य
नैसर्गिक	-	कृत्रिम	एकता	-	अनेकता
पण्डित	-	मूर्ख	कनिष्ठ	-	ज्येष्ठ
पाप	-	पुण्य	उधार	-	नगद
कठोर	-	कोमल			

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क) संक्षेप में उत्तर दीजिए।

1) अर्थ किसे कहते हैं ?

2) शब्द और अर्थ का क्या संबंध है - स्पष्ट कीजिए

3) अर्थबोध किन साधनों के द्वारा होता है ?

4) भाषा की संपन्नता किस पर निर्भर होती है और कैसे ?

5) शब्दों के वर्गीकरण के प्रमुख आधार कौन से है ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

6) पर्यायवाची शब्द किन्हें कहा जाता है ?
7) पर्यायवाची शब्दों के कोई पाँच उदाहरण बनाईए ?
8) अनेकार्थी शब्दों से क्या तात्पर्य है ?
9) अनेकार्थी शब्दों के पाँच उदाहरण प्रस्तुत कीजिए ?
10) विलोम से क्या तात्पर्य है- सोदाहरण,समझाइए।

4.3.6 अर्थपरिवर्तन

शब्दों में निहित अर्थ सदैव एक सा नहीं रहता। यह अर्थ कैसे बदलता है, इसका अध्ययन भाषाविज्ञान के अर्थविज्ञान शाखा के अंतर्गत किया जाता है। अर्थ परिवर्तन कभी एक दिशा में, निश्चित रूप में नहीं होता है, वह कब होता, कितने समय के बाद होता है या हर शब्द के बारे में होता ही है इसके बारे कुछ कहा नहीं जा सकता। अर्थपरिवर्तन अनेक दिशाओं में होता है। कभी किसी शब्द का व्यापक अर्थो में व्यवहार होने लगता है तो कभी उसका क्षेत्र सिकुड़ जाता है। तो कभी विपरित अर्थ हो जाता है, या कभी नया अर्थ जुड़ जाता है। अर्थात कभी अच्छा या कभी बुरा अर्थ निकलता है। अर्थपरिवर्तन की यह प्रक्रिया जिस दिशा में होती है, इसके अध्ययन को भाषा विज्ञान में अर्थ-विकास या अर्थ-परिवर्तन की दिशा कहते है। अर्थ परिवर्तन के अन्तर्गत उसके विकास और ह्रास का अध्ययन किया जाता है।

4.3.6.1 अर्थपरिवर्तन की दिशाएँ

डॉ.भोलानाथ तिवारी ने अर्थपरिवर्तन की तीन दिशाएँ प्रस्तुत की है -

1) अर्थविस्तार 2) अर्थ-संकोच 3) अर्थादेश-साथ ही उन्होंने इसके अलावा अर्थोत्कर्ष तथा अर्थापकर्ष पर भी विचार किया है।

अब आप अर्थपरिवर्तन की इन दिशाओं का विस्तृत परिचय प्राप्त करेंगे।

(क) अर्थविस्तार - (Expansion or Widening of Meaning)

प्रसिद्ध अर्थ विज्ञानी 'ब्रील'(भ्इ्रल'ड्ड्र) ने भी अर्थविकास की इन तीन दिशाओं को ही प्रमुख माना है।

अर्थ विस्तार से तात्पर्य है, अर्थ का विस्तृत या व्यापक हो जाना अर्थात् पहले कोई शब्द सीमित अर्थ में व्यवहत होता है और बाद में वह अधिक व्यापक अर्थपर या स्तर पर प्रयुक्त होने लगे तो वह अर्थविस्तार कहा जाता है। जैसे गिलास शब्द है। मूल रूप में यह अंग्रेजी के Glass से आया है। जिसका अर्थ है, कांच या शीशे से निर्मित पीने के लिए उपयोग मे लाया जानेवाला बर्तन - परंतु आजकल हम सोना,चांदी,तांबा,पीतल,या अन्य किसी भी धातु से निर्मित उस पात्र को गिलास कहते है। यहाँ गिलास शब्द का अर्थ विस्तार हुआ है। ऐसे सैंकडो शब्द आज हमारी भाषा में हम देखते हैं जिनका अर्थ का क्षेत्र व्यापक हो गया है।

वस्तुओं के नाम ज्यादातर उपाधियाँ और गुणों के आधार पर ही रखे जाते हैं। पीछे उनका रूढ़ और संकुचित अर्थ मात्र रह जाता है। ऐसी स्थिति में ये शब्द नाम विशेष से सामान्य हो जाते हैं। जैसे स्याही शब्द का मूल अर्थ है काली। (आज भी स्याह का अर्थ काला ही होता है।) पर स्याही के संदर्भ में आज किसी भी प्रकार की लिखनेवाली स्याही को स्याही कहा जाता है। चाहे वह लाल हो, नीली हो या काली। यहाँ स्याही विशेष अर्थ से सामान्य की ओर बढ़ गई है।

इसी प्रकार के अन्य शब्द है। तैल,प्रवीण, कुशल,गवेषणा,पंडित,रूपया,अधर गोहार, अभ्यास आदि।

कई बार बडे प्रसिद्ध महत्त्व के व्यक्तिवाचक शब्द भी जातिविषयक बनकर अपने अर्थ का विस्तार करते हैं। कालिदास, प्रेमचंद, विभीषण, गांधी, हिटलर, नारद,चाणक्य, जयचन्द आदि।

अर्थविस्तार आलंकारिक प्रयोगे साद्दश्य,साहचर्य, सामीप्य आदि कारणों से होता है। अर्थविस्तार की और भाषा की प्रवृत्ति कम होती है। तो टकर के अनुसार यथार्थ में भाषा में अर्थविस्तार होता ही नहीं है।

(ख) अर्थसंकोच - (Contraction of Meaning)

जब शब्दो को अर्थ अपना व्यापक क्षेत्र को छोड़ कर सीमित अथवा संकुचित रूप में प्रयुक्त होने लगता है तब अर्थसंकोच होता है। जो अर्थविस्तार के बिल्कुल विपरित है। प्रसिद्ध विद्वान बील मानते है कि राष्ट्र या जाति जितनी अधिक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

प्रगत होगी उसकी भाषा में अर्थसंकोच के उदाहरण अधिक मिलते हैं। क्योंकि यह नियम विकासवाद के सिद्धांत के अनुकूल है।

सभी भाषाओं में अर्थसंकोच की मूल-प्रवृत्ति मिलती है। वास्तव में भाषा आरंभ के काल में सभी शब्द सामान्य रहे होंगे। परंतु विकास के साथ-साथ विशिष्ट की भावना गयी और अर्थसंकोच होता गया। भाषिक विकास में सूक्ष्म-से-सूक्ष्म भाव व्यक्त करने की शक्ति आ जाती है। भाव-विशेष को प्रकट करने के लिए अनेकानेक शब्द गढ़े जाते हैं। तो कुछ शब्द अपना व्यापक क्षेत्र छोड़कर सीमित या विशिष्ट भाव ही प्रकट करते हैं इसलिए शब्दों का अर्थ संकुचित हो जाता है। परिस्थितियों के कारण या मनुष्य स्वयं अपनी आवश्यकता के अनुसार भी इस प्रकार के अर्थभेद करने की शक्ति रखता है जिससे अर्थसंकोच होता है।

अर्थसंकोच का प्रसिद्ध उदाहरण है- संस्कृत का 'मृग' शब्द। पहले पशुसामान्य के अर्थ में चलता था। इसलिए सिंह के लिए-मृगराज,मृगेन्द्र, मृगपति, शब्दों का प्रयोग किया जाता है। बाद में 'मृग' शब्द केवल हिरण के अर्थ में सीमित हो गया। जबकि सिंह-केवल-हिरणों का स्वामी नहीं है। बल्कि जंगल सभी पशुओं का स्वामी है। इसलिए उसे मृगपति कहते थे। अत: 'मृग' शब्द का अर्थ संकोच हो गया। (शिकार के लिए 'मृगया' शब्द प्रसिद्ध ही है।)

इसी तरह के अनकों उदाहरण हमारी भाषा में मिल जाते हैं। जैसे -आदित्य का अर्थ था अदिति पुत्र। अदिती देवताओं की माता का नाम था। इसलिए अदिति के सभी पुत्र अर्थात समस्त देवता आदित्य कहलाते थे। किन्तु बाद में आदित्य शब्द को प्रयोग केवल सूर्य के अर्थ में ही होने लगा। दुर्लभ, दुहिता, धान्य,रत्न,सर्प,नेत्र,श्राद्ध,पंकज, सब्जी आदि अर्थ संकोच के उदाहरण है।

अर्थसंकोच समास (अनुज-रामानुज कृष्णानुज, हरी-भरी), उपसर्ग (आहार,उपहार, संहार), विशेषण, (अम्बर-नीलाम्बर, पीताम्बर, श्वेताम्बर), प्रत्यय (बाग से बगीचा, खाट से खटोला, खेल से खिलाडी,) नामकरण कृष्ण-काला-पर वासुदेव कृष्ण के अर्थ में प्रचलित) पंकज केवल कमल के अर्थ में आता है। संदर्भ या प्रसंग (गोली शब्द बंदूक की गोली, दवा की गोली) ('गर्भिणी' शब्द से गाभिन शब्द बना परंतु पशुओं के लिए गाभिन और स्त्री के लिए गर्भिणी ही प्रयुक्त है) पारिभाषिक शब्दावली (रस का अर्थ साहित्य,वैद्यक, पाकशास्त्र आदि में भिन्न अर्थ) आदि अनेकों कारणों से होता है।

इसके अलावा, जलज, सभ्य, पर्वत वेद,खाद्य,घृणा,भार्या, आदि शब्द अर्थसंकोच के ही उदाहरण हैं।

(ग) अर्थादेश- (Transference of Meaning)

अर्थादेश में किसी शब्द के अर्थ में इतना अंतर आ जाता है कि उस शब्द का मूल अर्थ ही समाप्त हो जाता है। और उसके स्थान पर नवीन अर्थ आ जाता है। आदेश का अर्थ ही है परिवर्तन। इसमें अर्थ न संकुचित होता है न विस्तृत। इसके विपरित एक अर्थ के स्थान पर दूसरा अर्थ उसकी जगह ले लेता है। इसमें मुख्य अर्थ के साथ एक गौण अर्थ भी चलता है। बाद में गौण अर्थ ही मुख्य का स्थान ले लेता है। ऐसा भाव साहचर्य के कारण होता है। जैसे-'मौन' शब्द का मूलार्थ था मुनि संबंधी या मुनियों द्वारा किया जानेवाला आचरण मौन। पहले मुनि ही मौन रखते थे। बाद में इसके स्थान पर चुप्पी यह अर्थ ग्रहण किया जाने लगा। संभवतया मुनि लोगों के चुप,शान्त भाव के कारण ही ऐसा अर्थ प्रचलित हो गया। ऐसे अनेक शब्द प्रचलित हैं- जैसे-आकाशवाणी-वर बौद्ध आदि।

अर्थादेश के अन्तर्गत अच्छे या बुरे अर्थ- परिवर्तन के आधार पर दो दिशाएँ और बनायी गयी है- 1) अर्थापकर्ष 2) अर्थोत्कर्ष अब हम इनका परिचय प्राप्त करेंगे।

(1) अर्थापकर्ष-

जब शब्दों के अर्थ अच्छे से बुरे बन जाते हैं या जब अर्थ गिर जाता है तो उसे अर्थापकर्ष कहते हैं। गंवार शब्द ग्रामिण से बना है पर आज उसका अर्थ मूर्ख है।

तत्सम शब्द और तद्भव शब्द में अंतर आकर तद्भव शब्दों में अर्थ गिर जाता है। जैसे गर्भिणी (स्त्री के लिए,) गाभिन (पशु के लिए)प्रयुक्त होते हैं। इसके अलावा महाजन, गुरू,दादा, महाराज, बाबु-अपने पहले के अच्छे अर्थ को त्याग कर सर्वथा नवीन किंतु निम्न भाव प्रकट करने लगे हैं। जिन अर्थों और भावों को समाज गोपनीय समझता है, उनकों प्रकट करनेवाले शब्द भी अपना प्रभाव और गौरव खो बैठते हैं। इस तरह अर्थ का अपकर्ष होता है।

Jain Vishwa Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(2)अर्थोत्कर्ष-

यह अर्थापकर्ष के बिल्कुल विपरित है। अर्थोत्कर्ष-का अर्थ है- अर्थ का उत्कर्ष अर्थात पहले निकृष्ट अर्थ में प्रयुक्त होनेवाले शब्द कालांतर में उच्च तथा अच्छे अर्थ में प्रयुक्त होने लगता है। अर्थोपकर्ष की अपेक्षा अर्थोत्कर्ष के उदाहरण अपेक्षाकृत कम मिलते हैं। साहसी शब्द का उदाहरण सब जानते हैं। संस्कृत में यह शब्द डाकू, दुराचारी के लिए प्रयुक्त होता था जो अब जीवट या हिम्मतवाला के अर्थ में प्रयुक्त होता है। कर्पट, मुग्ध, इसी केउदाहरण है।

उपर्युक्त दोनों दिशाओं को अर्थसंकोच तथा अर्थ विस्तार के अन्तर्गत भाषा वैज्ञानिकों ने ही अंतर्भूत कर दिया है। तो कुछ इसे अलग दिशा मानकर इसके वैशिष्ट्य को अंकित करने का प्रयास करते हैं।

शब्द के अर्थ की यात्रा इन्ही दिशाओं में होती है। पर इसके पीछे क्या कारण है, कौनसी ऐसी परिस्थिति होती है जो शब्द अपने मूल को छोड़कर कभी व्यापक स्तर पर तो कभी संकुचित स्तर पर कभी अच्छे रूप में तो कभी बुरे अर्थ में प्रयुक्त होते जाते हैं।

4.3.7 अर्थ परिवर्तन के कारण

भाषा का महत्त्वपूर्ण कार्य अर्थ को, भाव को सम्प्रेषित करना है, जिसका माध्यम है शब्द। हर शब्द का कोई न कोई अर्थ अवश्य होता है पर यह व्यक्ति, परिवेश संदर्भ, समय के साथ बदलता है। यह परिवर्तन या बदलाव कैसे लेता है। अर्थात अर्थपरिवर्तन की तीन दिशाओं में शब्द का सफर किन परिस्थितियों में कैसे होता है, इसके पीछे कौन से कारण हो सकते हैं। यह जानना ही अर्थपरिवर्तन जानना है।

(1) बल का अपसरण -

किसी शब्द के उच्चारण में यदि एक ध्वनि पर बल पड जाए तो दूसरी ध्वनियाँ निर्बल और कमजोर होकर समाप्त हो जाती है। इसी तरह अर्थ में बल प्रधान पक्ष से हट कर जब अन्य पक्ष पर आ जाता है तब अर्थभेदकारी बल का अपसरण कारण घटित होता है।

अ) गोस्वामी शब्द पहले गायों के स्वामी के लिए प्रयुक्त होता था। गाय धन का प्रतीक थी और धार्मिक दृष्टि से भी पूजनीय है। इसलिए सम्मानित और धार्मिक व्यक्ति गोस्वामी कहलाया गया। आगे चलकर इंद्रियों का स्वामी अर्थात् संत पुरूष के लिए यह शब्द आया और आज यह तुलसीदास अर्थ देता है।

ब) ड्रेस - फ्रेंच और पुरानी अंग्रेजी में इसका अर्थ है सीधा करना / काटना, घाँटना, सफाई करना, सजाना है। जैसे - घाव की पट्टी करना ड्रेसींग, बच्चों की स्कूली पोशाख और पुलिस की विशेष पोशाख। दरिया - फारसी शब्द दरिया का अर्थ है नदी। परंतु महाराष्ट्र और गुजरात में समुद्र के अर्थ में प्रचलित है कारण अरब सागर में मिलने वाली नदियाँ समुद्रवत दिखायी देती है - इसलिए वहाँ दरिया का अर्थ समुद्र हो गया।

अन्य शब्दों में कापी - प्रतिलिपि बही

जुगप्सा गोपालन छिपाना घृणा

(2) पीढ़ी परिवर्तन -

दो अथवा उससे अधिक पीढ़ियों के बाद जो अन्य परिवर्तन आते है उनके साथ-साथ भाषा और अर्थ में भी परिवर्तन आते हैं। शब्द तो वही रहता है पर वस्तु नयी हो जाती है। जैसे -पत्र शब्द-प्रारंभ में लोग पेड़ के पत्ते पर अथवा पत्र पर लिखते थे और उसे पत्र कहा जाता था। बाद में भोज वृक्ष की छाल को लेखन सामग्री के रूप में उपयोग में लाया जिसे भोजपत्र कहते है। धातु की तख्तियों पर भी लिखा जाता है। जिसे क्रमश: स्वर्णपत्र, रजतपत्र, ताम्रपत्र कहा जाता है। पतले वर्ख को भी पत्र कहा जाता है। आजकल कागज पर लिखा जाता है जो पत्र कहलाता है। लिखित संदेश का साधन पत्र है। समाचार पत्र, टिन का पत्रा इसी के रूप है। तेल, कुशल, प्रवीण ऐसे ही शब्द है।

(3) परिवेश परिवर्तन -

भौगोलिक परिवेश सामाजिक परिवेश और भौतिक तथा राजनीतिक परिवेश के कारण शब्दों के अर्थ में परिवर्तन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

आ जाता है ।

भौगोलिक वातावरण के कारण शब्दों के अर्थ में आए हुए परिवर्तन के उदाहरण है- कॉर्न - अंग्रेजी में कॉर्न का अर्थ गेहूँ । स्कॉटलैंड में बाजरा है । अमरिका में मक्का है ।

ठाकुर शब्द उत्तर प्रदेश में क्षत्रियवाचक बिहार में नाई-वाचक, बंगला में रसोईए का वाचक तो राजस्थान में इसका अर्थ भिन्न है ।

ऋग्वेद में उष्ट्र शब्द भैंसावाचक है, मरूभूमि में आर्यों ने ऊँट को देख कर उसे ऊँट के अर्थ में प्रयुक्त किया ।

सामाजिक वातावरण के कारण भी शब्द के अर्थ बदल जाते हैं । घर में पिता, माता, बहन, के आत्मा अर्थ है तो चर्च में धर्मगुरू, इसाई उपदेशकार (मदर टेरेसा) तो अस्पताल में नर्स के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

पाठशाला का संस्कृत में अर्थ विद्यालय, मदरसा अरबी - फारसी का विद्यालय तो स्कूल अंग्रेजी विद्यालय, कॉलेज, उच्च शिक्षा का विद्यालय अर्थ देते है । जबकि ये शब्द मूलत: पर्यायवाची है । डॉक्टर, वैद्य, हकीम, मूलत: चिकित्सक है पर इनके अर्थ अलग-अलग है ।

भौतिक परिवेश के कारण भी अर्थपरिवर्तन घटित होता है । जैसे शीशा - एक अर्थ दर्पण, दूसरा अर्थ धातु, तीसरा अर्थ काँच है ।

गिलास का अंग्रेजी में अर्थ है काँच परंतु हिन्दी में गिलास का अर्थ पानी पीने का पात्र भले ही पर पीतल, तांबा, स्टील, प्लॅस्टीक का क्यों न हो । पेन शब्द Pinna से बना है । जिसका अर्थ है मोरपंख की लेखनी परंतु आज उसका अर्थ पेन हो गया है ।

राजनीतिक परिवेश के कारण अर्थपरिवर्तन घटित होता है । पार्टी (राजनीतिक दल), होममिनिस्ट्री (गृहमंत्रालय), दो राजनीतिक दलों की संधि, आयोग, आदि राजनीतिक परिवेश के शब्द है ।

कई बार प्रथा बदल जाने पर भी अर्थ बदल जाता है । जैसे यजमान का अर्थ यज्ञ करानेवाला था पर आज कल होस्ट के अर्थ में प्रयुक्त होता है । बजरबट्टू का अर्थ मूर्ख हो गया ।

(4) सामान्य व्यवहार में आनेवाले शब्द-

दैनिक व्यवहार में आनेवाले शब्दों के अर्थों में परिवर्तन हो जाता है । कलम माली के लिए, पौधे के अर्थ में, छात्र के लिए लेखनी के अर्थ में प्रयुक्त होती है । बेंत शब्द के भी अनेक अर्थ है - टहलने के समय की छड़ी बेंत से बनी कुर्सी और अध्यापक के लिए बेंत डण्डे के रूप में अर्थ देती हैं । वर का अर्थ पूर्व में श्रेष्ठ अर्थ था अब दूल्हे के अर्थ में प्रयुक्त होता है । दुल्हा शब्द भी दुर्लभ से बना है ।

(5) अज्ञान या भ्रांति -

अज्ञान तथा भ्रांति के कारण शब्दों का अर्थ मूलवाला नहीं रहता, नया अर्थ आ जाता है ।

असुर शब्द पहले देववाचक था असुर में का अ निषेधसूचक समझ लिया गया इसलिए सुर शब्द का अर्थ हो गया देव और असुर का राक्षस अर्थ हो गया । संस्कृत का धन्यवाद प्रशंसासूचक था अब यह आभार सूचक हो गया । निखालिस में नि की आवश्यकता ही नहीं है । नेबर को नेबरर कहना अज्ञानसूचक है ।

पांडित्यप्रदर्शन के लिए लोग बन कर बोलते हैं । ज्ञान परिज्ञान, सम्मेलन समागम,

अज्ञान अर्थपरिवर्तन का कारण अन्य भाषा के संदर्भ में ज्यादा कार्य करता है ।

(6) अर्थगत अनिश्चितता -

सही अर्थ की जानकारी का न होना, अर्थगत अनिश्चितता है । समानार्थी शब्दों में इस तरह की भूलें प्राय: दिखाई देती है । जैसे - क्लेश - वेदना, पीड़ा, व्यथा, यातना के अपने अलग अर्थ है पर वे एक-दूसरे के पर्याय में प्रयुक्त होते हैं । प्रेम-प्रीति, प्रणय, स्नेह, वात्सल्य के अपने-अपने अर्थ है । कामिनी, ललना, वनिता, सुंदरी, वामा के अपने अर्थ होने के बावजूद भी स्त्री के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। त्रिवेदी, द्विवेदी, चतुर्वेदी सामान्य जातियाँ बन गई हैं ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(7) अंधविश्वास-

लोक में प्रचलित गहन विश्वास के कारण शब्दों के अर्थों में हेराफेरी होती है। जैसे - लोक में विश्वास है कि अपने गुरू का, बड़े बेटे का, पत्नी का, तथा पत्नी को पति का नाम नहीं लेना चाहिए यदि नाम लिया गया तो उनकी उम्र घट जाती है। इसलिए गुरूजी, आचार्यजी, भगवान (गुरू के लिए), बडे बेटे के लिए - बड़कउ, मुन्ना, बिटवा, दादा स्त्रियाँ पति के लिए ए, जी, मुन्ने के पापा, ऊ आदमी, तो पति पत्नी के लिए, मालकिन, घरवाली, बिटवा की माँ आदि कहते हैं।

अपना नामवाला साथी को उसके नाम से नहीं पुकारा जाता। मीत या सहनाऊ कहते हैं।

ऐसा भी लोकविश्वास है कि सुबह-सुबह कंजूष आदि कहने से भोजन नहीं मिलता। इसलिए उनके नामों को घुमाफिरा कर कहते हैं।

रात में बिच्छू, साँप आदि के लिए कीड़ा-जानवर, चेचक को शीतला माता कहते हैं।

(8) लाक्षणिकता अथवा अलंकारिकता प्रयोग-

साहित्यकार अपने भावों को आकर्षक, सुंदर तथा कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। उसके द्वारा प्रचलित शब्द नवीन अर्थ में प्रचलित हो जाता है। इनके प्रयोग से अर्थ में विशेषता और नवीनता आ जाती है। जैसे मीठे- बोल, कटु अनुभव, सरस प्रसंग, भयानक आनंद, रूखी हँसी। मुहावरों का प्रयोग - जैसे घर का भेदी लंका ढाए, चाँद - सा मुख, चार-चाँद लग जाना, रेगिस्तानी हरियाली, इन विद्वानों को बृहस्पति भी नहीं समझा सकता, बिना पेंदी का लोटा। पत्थरदिल।

स्थूल वस्तुओं को भी बिम्बालक रूप से प्रस्तुत किया जाता है - चने की नाक, सुई का मुँह, आरी के दाँत, नारियल की जटा, नारियल की आँख, सारंगी के कान आदि।

इस तरह अलंकारिक प्रयोगों के कारण अर्थपरिवर्तन घटित होता है।

(9) व्यंग्य-

व्यंग्योक्ति के कारण अर्थ पूर्णतया बदल जाता है। व्यंग्य के कारण प्राय: शब्दों में विपरित अर्थ आ जाता है और वे शब्द परिवर्तित अर्थ का ही संकेतन करते हैं। मूर्ख को पंडित,अंधे को नैनसुख, झूठे को हरिश्चंद्र का अवतार,कुरूप को कामदेव, भिखारी को कुबेर कहना व्यंग्यात्मक ही है। मोटे आदमी को दुबले कहना, नाम तो सुजान पर कुछ न जानना आदि अप्रस्तुत अर्थ व्यंग्य के कारण ही प्रकट होता है।

(१०) तद्भवता-एक ही शब्दों के दो रूपों का प्रचलन

उद्गम की दृष्टि से शब्द के तत्सम,तद्भव, देशराज और विदेशी ऐसे चार प्रकार बनते है। तत्सम शब्द का रूप बदलकर तद्भव हो जाता है तो उस शब्द का मूल अर्थ वही रहना चाहिए पर भाषा में ऐसा नहीं होता। भाषा ऐसा व्यर्थ का बोझ वहन नहीं करती। अर्थपरिवर्तन होकर उत्तम अर्थ तत्सम में और अर्थ का निम्न हो जाना तद्भव में दिखाई देता है। जैसे ग्रामीण-गाँव में रहनेवाला (तत्सम) गँवार (तद्भव-मूर्ख), गर्भिणी (तत्सम-नारी के लिए प्रयुक्त) गाभिन (तद्भव-पशुओं के लिए)

कुछ अन्य शब्द है- श्रेष्ठ सेठ,स्थान थान, स्तन थान, ब्राह्मण बामन, तिलक टीका, आदि।

(११) अन्य भाषाओं से शब्द उधार लेना-

जब कोई शब्द अपनी भाषा से दूसरी भाषा में चला जाता है तो अर्थ पीछे छुट जाता है, नया अर्थ देने लगता है। फारसी में मुर्ग-शब्द पक्षी वाचक है, संस्कृत में मृग शब्द पशुवाचक है हिन्दी में मृग शब्द का अर्थ हिरन हो गया और मुर्ग का अर्थ मुर्गा (पक्षीविशेष) हो गया है।

द्रविड भाषा का शब्द पिल्ला बच्चे के लिए प्रयुक्त होता है। परंतु हिन्दी में यह शब्द कुत्ते-बिल्ली के बच्चों के लिए आता है।

अंग्रेजी का क्लॉक दीवार घडीवाचक था गुजराती में कलाक का अर्थ एक घण्टा हो गया। संस्कृत का धान्य शब्द अन्न सूचक है, हिन्दी में धान चावल सूचक है। पाव ब्रेड के लिए हिन्दी में डबलरोटी शब्द चलता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हिन्दी का नीला शब्द गुजराती में लिलो होकर हरे रंग का अर्थ देता है।

(१२) नवीन वस्तुओं नामकरण-

नवीन वस्तुओं का निर्माण मानव समाज अपनी आवश्यकतानुरुप करता है। अपनी सीमित शब्द संपत्ति के द्वारा उनका नामकरण रखता है। शब्द वही रहते है, अर्थ नया आ जाता है। जैसे-कलम शब्द के लिए आज पेन शब्द का प्रयोग होता है। टाईपराईटर के लिए हिन्दी में कोई शब्द नहीं था पर टाँकने की कला थी इसलिए टंकन शब्द आया। वायर के लिए तार शब्द आया, रेडिओ के लिए आकाशवाणी, टेलीविजन के लिए दूरदर्शन,ॲटम के लिए परमाणू। सैटेलाईट के लिए उपग्रह एनर्जी के लिए ऊर्जा,ग्रंथ के लिए पुस्तक,दण्ड यानि जुर्माना ऐसे शब्द प्रचलित हुए।

(१३) अशोभन के लिए शोभन-सुश्राव्यता

सुनने में जो अच्छा हो ऐसे शब्दों का प्रयोग करना। भाषा संस्कार तथा सुरूचि की अभिव्यक्ति का साधन है। सभ्यता के विकास के साथ मनुष्य में इन तत्त्वों का विकास हुआ। अश्लीलत्त्व के अंतर्गत कुछ ऐसी चीजे है जो मनुष्य के हृदय में लज्जा उत्पन्न करती है, कुछ घृणा निर्माण करती है। उन्हें देखने-सुनने में मनुष्य को संकोच होता है। इसलिए जब उनके बारे में कहा जाता है तो सीधे न कह कर प्रकारान्तर से अभिव्यक्ति की जाती है। वे इस प्रकार है।

व्रीडा (लज्जा) - इसके अंतर्गत यौन संबंधी या मल मूत्र संबंधी शब्द आते हैं। जैसे-'मलत्याग के लिए पाखाना, मैदान जाना, दीर्घ शंका, मूत्रत्याग के लिए लघुशंका,गर्भावस्था को पाँव भारी होना कहकर सूचित किया जाता है।

जुगुप्सा- इसका प्रयोग घृणा के लिए होता है। घृणास्पद वस्तुओं को, बातों को समाज वर्ज्य मानता है। नाक बहना, पीव निकलना, मक्खियाँ भिनभिनाना आदि प्रयोग शिष्टता के अनुकूल नहीं माने गये है।

अमंगल-भयंकर व्याधि, मृत्यु आदि से संबंधित शब्द से मनुष्य बचना चाहता है। इसलिए मृत्यु के लिए पंचतत्त्व में विलिन होना, स्वर्गवास, चेचक की बीमारी को माता कहना, दुकान बंद करने को बड़ी करना, दीपक बुझना न कहकर बड़ा किया ऐसा कहा जाता है। मांग सूनी होना चूड़ी बड़ी होना भी ऐसे ही शब्द है।

उपर्युक्त बातों को अशोभन के लिए शोभन का प्रयोग कहा जाता है। अमंगल के लिए मंगल शब्दों का प्रयोग, अशुभ के लिए शुभ शब्दों का प्रयोग के कारण अर्थ परिवर्तन होता है।

(१४) सामान्य के लिए विशेष शब्द का प्रयोग-

कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई एक शब्द ही उस वर्ग का प्रतिनिधि होकर सूचन करने लगता है। जैसे स्याह शब्द से बना है स्याही। लेखन में काम आनेवाला द्रवपदार्थ। इस अर्थ में काली स्याही शब्द मूल अर्थ था पर आज हर रंग की स्याही के लिए प्रयुक्त होता है। सब्ज का अर्थ हरा होता है। सब्जी का अर्थ है हरी तरकारी परंतु आज सभी तरकारी के लिए ये शब्द चलता है। आलु से लेकर बेगन तक सब्जी ही कही जाती है। कभी-कभी एक शब्द के दो रूप बना लिए जाते है जिससे लिंगसूचन होता है। जैसे शिक्षक-शिक्षिका, मजदूर-मजदूरनी, कृषक-कृषिका,डॉक्टर-डॉक्टरनी।

(१५) अधिक शब्दों के लिए एक शब्द का प्रयोग करना-प्रयत्नलाघव

मनुष्य का स्वभाव होता है कि कम -से-कम श्रम में अधिक से अधिक काम करें। स्वन विज्ञान में हमने कम बोलने के अर्थ में प्रयत्नलाघव या मुखसौकर्य का विवेचन किया है। यहाँ अर्थ में भी इसी प्रवृत्ति के दर्शन होते है। जैसे-रेल्वे स्टेशन-स्टेशन, बस स्टैण्ड-स्टैण्ड,ऑटोरिक्शा-रिक्शा, पाठशाला शाला, बाइसिकल-साईकिल आदि

(१६) शब्दों के प्रयोग की अतिशयता-

शब्दों का अधिक प्रयोग करने से वे घीस जाते है। साथ ही उनकी अर्थवत्ता की चमक कमजोर हो जाती है। श्री-श्रीमान, श्रीयुत, अपनी प्रारंभिक अर्थवत्ता को खो चुके है। बाबु, साहब, सर, गुरू, भैय्या, भाई, क्रांति, संस्कृति, परम्परा, नेताजी आदि शब्द प्रभावहीन हो गये है।

अर्थपरिवर्तन के प्रमुख कारणों का विवेचन से परिचय आपने यहाँ पाया। इनके अलावा भी अनेक कारण ऐसे हैं जो शब्द के अर्थ में नवीनता, रोचकता और आकर्षकता को लाते हैं। उपहास,उपालंभ,निंदा, व्याजोक्ति, पैरोडी किसी के प्रति

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हमारे मनोभाव,भाषांतरण, पारिभाषिक शब्दावली,नवीन प्रक्रिया आदि भी अर्थ परिवर्तन में सहायता पहुँचाते है । आप अपने परिवेश से ऐसे शब्दों को एकत्रित कीजिए।

(17) साहचर्य के कारण गौण अर्थ की प्रमुखता

तंबाकू का आगमन इस देश में सूरत बन्दरगार पर हुआ बाद में उसका प्रसार सारे देश में हुआ। इसीकारण तम्बाकू को सूरती कहते है । केसर को काश्मिर इसी साहचर्य के कारण कहा जाता है ।

(18) प्रकरण भिन्नता

एक ही शब्द के अनेक भेद होते हैं । परंतु प्रसंगानुकूल प्रकरण के आधार पर उस शब्द का वैसा ही अर्थ लगा लिया जाता है । हर एक व्यक्ति एक शब्द को उसी अर्थ में नहीं लेता है जिस अर्थ में दूसरा ग्रहण कहता है । जितनी समुदाय की घनिष्ठता कम होती जाएगी उतना ही अर्थ परिवर्तन आता जाएगा । सैन्धव (घोड़ा-नमक), कर (टॅक्स-हाथ) प्रकरण भिन्नता से अर्थ निकाला-जाता है ।

(19) व्यक्ति के अनुसार शब्दों की प्रत्यय में भेद-

अर्थात व्यक्तिगत योग्यता के कारण भी अर्थ में परिवर्तन होता है । व्यक्ति के संस्कार, परिवेश, शिक्षा, जीवन प्रणाली आदि के भेद से शब्दों का जो प्रत्यय मन में उत्पन्न होता है वह भिन्न होता है। विभिन्न व्यक्तियों के मन में एक ही शब्द से विभिन्न प्रत्यय उत्पन्न होते हैं । शून्य शब्द का अर्थ दार्शनिक, गणितज्ञ, गृहस्थ वैज्ञानिक के लिए अलग अलग होगा ।

ख) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित शब्दों के अर्थ में परिवर्तन के कौन से कारण है बताइए - (१)गोस्वामी-(२) पेन- (३) गँवार- (४) दिया बड़ा होना- (५) आ,जी (६) थान (७) गिलास (८) श्रीमान- (९) गट्टे की सब्जी (१०) दिशा मैदान जाना

4.4 स्वयं अध्ययन के प्रश्न के उत्तर

क) संक्षेप में उत्तर दीजिए ।

1) प्रत्येक सार्थक शब्द अपना एक अर्थ या भाव या विचार रखता है । अर्थात शब्द के उच्चारण द्वारा जो प्रतीत होती है उसे अर्थ कहते है ।

2) शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध है । अर्थ को जानने के लिए शब्द का ही सहारा लिया जाता है । शब्द से किसी निश्चित वस्तु या अर्थ का बोध होता है । भाषा के प्रतीक ये शब्द अर्थबोध कराते है। शब्द शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा है ।

3) ध्वनि या शब्द के साथ वस्तु का संबंधस्थापन अर्थबोध कहलाता है । अर्थबोध के आठ साधन माने गये हैं-वे ये है- व्यवहार, आप्त वाक्य, व्याकरण, उपमान ,कोश, वाक्यशेष या प्रकरण, विवृत्ति तथा प्रसिद्ध पद का सान्निध्य ।

4) भाषा की संपन्नता उसके शब्द भंडार पर निर्भर होती है । हमारे पास जितना अधिक शब्द भंडार होगा उतनी ही मात्रा में हमारी अभिव्यक्ति प्रभावी होती है । सटीक शब्दों का प्रयोग अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाता है । इसलिए भाषा की संपन्नता उसके शब्द भंडार पर निर्भर होती है ।

5) शब्दों के वर्गीकरण के प्रमुख पाँच आधार भाषा वैज्ञानिकों द्वारा बनाए गये है । जैसे स्त्रोत के आधार पर तत्सम,तद्भव, देशज,विदेशी, रचना के आधार पर रूढ, यौगिक,योगरूढ, व्याकरण के आधार पर विकारी, अविकारी, प्रयोग के आधार पर सामान्य, पारिभाषिक और अर्थ के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण किया जाता है ।

6) किसी विशिष्ट भाषा में प्रचलित एक ही व्याकरणगत शब्द भेद वाले ऐसे दो या अधिक शब्द पर्याय कहलाते हैं जो मूलत: एक ही व्यक्ति पदार्थ, भाव या व्यापार के बोधक हो, किन्तु जिनमें कुछ-न-कुछ भिन्न अर्थच्छाया भी विद्यमान हो ऐसे शब्द पर्यायवाची कहे जाते है ।

7) पर्यायवाची शब्दों के उदाहरण इस प्रकार है -

आँख-नेत्र,नयन,लोचन,चक्षु,दृग,आक्षि।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

आकाश-गगन, अम्बर, नभ,आसमान, अभ्र।
सरोवर-जलाशय,तालाब,ताल,तड़ाग।
मधुकर -भौंरा,मधुप, अलि,षटपद, भ्रमर।
हरि-विष्णु,केशव, धनंजय, नारायण, दामोदर।

8) अनेकार्थी शब्द से तात्पर्य है, जब एक शब्द अनेक अर्थो का द्योतन करें तो उसे अनेकार्थी शब्द कहा जाता है। इनका प्रयोग प्रसंगानुसार किया जाता है।

9) अनेकार्थी शब्दों के उदाहरण इस प्रकार हैं -
अक्ष-आँख,सर्प,पहिया,धुरी।
खग-पक्षी,तारा,गंधर्व।
मधु-शराब,शहद,वसंत।
हरि-विष्णु बंदर,शराब।
गुण-रस्सी,शील,स्वभाव।

10) एक-दूसरे के विपरित अर्थ के द्योतक शब्द विलोम कहलाते है। जिनका निर्धारण अर्थ के आधार पर होता है। जैसे अमृत-विष,गीला-सूखा,मालिक-नौकर आदि इसलिए शब्द की विभिन्न अर्थच्छयाओं के अनुसार विलोम शब्द भी बदल जाते है।

ख) निम्नलिखित शब्दों के अर्थ में परिवर्तन के कारण बताईए।

1)	गोस्वामी	-	बल का अपसरण
2)	पेन	-	अन्य भाषाओं से शब्द उधार लेना। नवीन वस्तुओं का निर्माण
3)	गँवार	-	तद्‌भवता
4)	दिया बड़ा होना	-	अशुभ के लिए शुभ का प्रयोग
5)	ओ,जी	-	अंधविश्वास
6)	थान	-	तद्‌भवता
7)	गिलास	-	परिवेश परिवर्तन
8)	श्रीमान	-	शब्दों के प्रयोग की अतिशयता
9)	गट्टे की सब्जी	-	सामान्य के लिए विशेष शब्द का प्रयोग
10)	दिशा मैदान जाना	-	अशोभन के लिए शोभन (व्रीडा)

4.5 इकाई का सारांश

भाषा अर्थवान स्वनों का समूह है। शब्द शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा है। अर्थतत्त्व के संबंध में ऋग्वेद, महाभारत के वनपर्व, शतपथ ब्राह्मण,निरूक्त, न्यायमीमांसा, व्याकरणशास्त्र, वाक्यपदीय आदि ग्रंथो में विचार हुआ है।

19 वी शताब्दी मे माइकेल ब्रील ने सिमेंटिक्स शब्द का प्रयोग किया जो शब्दार्थ का नियम, शब्दों के अर्थों में परिवर्तन के विकास और इतिहास का क्रमबद्ध विचार-विमर्श है।

डॉ.भोलानाथ तिवारी के मत से अर्थविज्ञान में अर्थ का अध्ययन होता है। भाषा की परिभाषा में सार्थक ध्वनियों का समूह पदावली का प्रयोग भी यही बात सूचित करता है। भाषाविज्ञान में निरर्थक ध्वनिसमूह का कोई महत्त्व नहीं है। आचार्य पाणिनि तो अर्थ को भाषा का सार मानते हैं।

अर्थ को प्रकट करने के लिए शब्द का आधार लिया जाता है। किसी शब्द से अर्थ का ज्ञान स्वयं किसी चीज का अनुभव करके होता है या फिर दूसरों के अनुभव द्वारा होता है। इन दोनों रूपों में अर्थ की प्रतीति होती है।

शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध है। शब्द भाषा के प्रतीक हैं जो हमे अर्थबोध कराते हैं। शब्द से ही किसी निश्चित वस्तु का अर्थबोध होता है। कारण प्रत्येक वस्तु के साथ जुडा शब्द (प्रतीक) मनुष्य के मस्तिष्क में बिंब अंकित करता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इसलिए वस्तु देखते ही उससे जुड़ा शब्द भी सामने आ जाता है। शब्द और अर्थ को लेकर विद्वानों ने अनेकानेक मत प्रस्तुत किये हैं। शब्द है तो उसका अर्थ अवश्य है और अर्थ के रहने पर ही शब्द की वाक्य संघठन में सार्थकता मानी जाती है।

परंतु शब्द का इतना ही सीमित अर्थ नहीं है। अर्थ का अभिप्राय बुद्धिगत भाव से भी है। शब्द जिस बुद्धिगत भाव को व्यक्त करते है। उसी को अर्थ कहते है। प्रतिभा, ज्ञान, अनुभव और ग्रहणशक्ति भिन्न होने से अर्थ का स्वरूप भिन्न हो जाता है। कारण एक ही शब्द विभिन्न सन्दर्भो में अलग-अलग अर्थ का वाचक हो जाता है। भारतीय परम्परा में अर्थबोध के आठ साधन माने गये हैं। ध्वनि या शब्द के साथ वस्तु का संबंध स्थापन ही अर्थबोध या संकेतग्रह कहलाता है। व्यवहार, आप्तवाक्य, व्याकरण, उपमान,कोश, वाक्यशेष, विवृत्ति या व्याख्या तथा प्रसिद्ध पद का सान्निध्य ये साधन हैं जो अर्थ निर्णय करते हैं। बिना इनके अर्थ ज्ञान संभव नहीं है। भाषा विज्ञान की एक शाखा शब्द विज्ञान है। जिसके अंतर्गत शब्द की परिभाषा, वर्गीकरण, शब्दसमूह में परिवर्तन के कारण और दिशाएँ, शब्दों का निर्माण आदि का अध्ययन किया जाता है। अभिव्यक्ति में सटीक शब्दों का प्रयोग अपनी विशिष्ट भूमिका निभाता है। इसलिए शब्द की ध्वनि संरचना एवं अर्थ संरचना का अध्ययन भी आवश्यक है। भाषावैज्ञानियों ने इन शब्दों को अलग-अलग आधारों पर विभिन्न वर्गों में बाँटा है - जैसे

1) स्रोत या इतिहास के आधारपर-तत्सम, तद्भव, देशज, आगत और संकर शब्द बनते हैं।
2) रचना के आधार पर -रूढ,यौगिक तथा योगरूढ शब्द हैं।
3) व्याकरण के आधार पर -विकारी तथा अविकारी।
4) प्रयोग के आधार पर- सामान्य, पारिभाषिक या तकनीकी और अर्धपारिभाषिक।
5) अर्थ के आधार पर-एकार्थवाची, अनेकार्थवाची,पर्यायवाची,विपरितार्थ तथा अनेक शब्दों के लिए एक शब्द।

अर्थ के आधारपर पर्यायवाची या पर्यायी शब्द का विचार किया गया है। इन्हें समानार्थी,प्रतिरूप शब्द भी कहते हैं। अर्थ की समानता होते हुए भी इनका प्रयोग एक-सा नहीं होता कारण पर्यायों में अर्थच्छाया का अन्त होता है। पर्याय वे ही शब्द कहला सकते हैं जो एक ही व्यक्ति, वस्तु,भाव या क्रिया के द्योतक हो।

हिन्दी में तत्सम पर्यायवाची शब्द अधिक पाए जाते हैं। जो संस्कृत से है कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है-

अमृत	- पीयुष,सुधा
आकाश	- गगन,अम्बर, नभ, अभ्र,आसमान,अनंत
कामदेव	- मदन,मनोज, मन्मथ, पंचशर
दर्पण	- आईना, आरसी, मुकुर शीशा।
सोना	- कनक, सुवर्ण,हेम,हाटक,कंचन

हिन्दी में कुछ शब्द ऐसे है जिनके अनेक अर्थ होते हैं। भिन्न-भिन्न प्रसंगों के अनुसार इनका प्रयोग किया जाता है। अनेकार्थक शब्दों का अर्थनिर्णय के लिए भर्तृहरि ने ''वाक्यपदीय'' में चौदह साधन बताए है।

1) संयोग- जहाँ अनेकार्थक शब्दों का निश्चय किसी प्रसिद्ध संबंध के आधार पर होता है। जैसे गोवत्सवत्स के संयोग अर्थ गाय होगा।
2) वियोग- संबंध अभाव वियोग कहलाता है।
3) साहचर्य का अर्थ है - सदा साथ रहना-जैसे-राम-लक्ष्मण, दाशरथी पुत्र अर्थ होगा।
4) विरोध-पारस्परिक वैमनस्य से भी अर्थ का निश्चयन होता है।
5) अर्थ - अर्थात प्रयोजन जन वाचक शब्द यहाँ अर्थ हो।
6) प्रकरण-प्रसंग से अर्थ निर्णय होता है।
7) लिंग-यहाँ लिंग का अर्थ ऐसे विशेष चिन्ह से है जिससे किसी विशेष अर्थ का बोध होता है। जैसे खाना खाते समय सेंधव का अर्थ नमक होगा।
8) अन्य शब्दों का सान्निध्य- शब्दों की पारस्परिक निकटता से भी निर्णय होता है।
9) सामर्थ्य -किसी कार्य के संपादन में किसी वस्तु की शक्ति का उपयोग सामर्थ्य कहलाता है।
10) औचित्य-योग्यता के आधार पर अर्थ का निर्णय यहाँ लिया जाता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

11) देश-स्थानविशेष की विशेषता को देश कहा जाता जिससे अर्थ निर्णय होता है।
12) काल-अर्थात समय से अर्थनिर्णय का होना।
13) व्यक्ति - कहने वाला कौन है इसके आधार पर अर्थ निर्णय किया जाता है।
14) स्वर-आरोह-अवरोह या स्वरभेद से अर्थ भेद हो जाता है।

कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है
अक्षर-ब्रह्म,वर्ण,सत्य,गगन,शिव
कनक-सोना,धतुरा
गुरू-शिक्षक,ग्रहविशेष,श्रेष्ठ गुरू
उत्तर-दिशा,जबाब,पश्चात्
महावीर-हनुमान,बलवान, जैन-तीर्थंकर,

एक दूसरे के विपरित अर्थ के द्योतक शब्दों को विलोम या विपर्यय कहा जाता है। विलोम का निर्धारण अर्थ के आधार पर होता है। इसलिए शब्द की विभिन्न अर्थच्छटयाओं के अनुसार उसके विलोम शब्द भी बदल जाते हैं- कुछ विलोम शब्दों के उदाहरण इस प्रकार हैं।

रात-दिन	नगर-ग्राम	
सूखा-गिला,हराभरा	हँसना-रोना	
उत्तीर्ण -	अनुत्तीर्ण	छाँह-धूप

उपर्युक्त शब्दों का परिचय करने के बाद यह दिखाई देता है कि शब्दों में निहित अर्थ सदैव एक-सा नहीं रहता। इसका अध्ययन भाषाविज्ञान के अर्थविज्ञान शाखा के अन्तर्गत किया जाता है। अर्थपरिवर्तन अनेक दिशाओं में होता है। अर्थपरिवर्तन की यह प्रक्रिया जिस दिशा में होती है उसे अर्थ परिवर्तन की दिशा कहते हैं।

डॉ.भोलानाथ तिवारी ने अर्थ परिवर्तन की तीन दिशाएँ बताई जाती है- अर्थविस्तार, अर्थसंकोच और अर्थादेश इसके अलावा अर्थोत्कर्ष तथा अर्थापकर्ष पर भी उन्होंने विचार किया है।

अर्थ विस्तार अर्थ का व्यापक या विस्तृत हो जाना अर्थ विस्तार कहलाता है। तैल-शब्द मूलत: तिल्ली के लिए प्रयुक्त होता था। परंतु आज मिट्टी का तेल, नारियल का तेल, पामतेल,मूँगफली का तेल या फूलों से बना भी तेल होता है। इसी प्रकार अन्य शब्द है - गिलास, प्रवीण (वीणा बजाने में उत्कृष्ट) कुशल (कुश तोडने में माहिर), गवेषणा आदि। अर्थ विस्तार आलंकारिक प्रयोग, सादृश्य, साहचर्य, सामीप्य आदि कारणों से होता है। अर्थ विस्तार की ओर भाषा की प्रवृत्ति कम होती है।

अर्थ संकोच यह अर्थविस्तार के विपरित है। जब शब्द अपना व्यापक क्षेत्र छोड़कर सीमित अथवा संकुचित रूप में प्रयुक्त होने लगता है तब अर्थ संकोच होता है।

सभी भाषाओं में अर्थ संकोच की प्रवृत्ति मिलती है। संस्कृत का 'मृग' शब्द जो पहले पशुसामान्य के अर्थ में चलता था। बाद में केवल हिरन के अर्थ में सीमित हो गया। मृग शब्द का अर्थ संकोच हो गया।

अन्य उदाहरण है दुर्लभ,दुहिता, धान्य, श्राद्ध, सब्जी आदि। अर्थादेश में किसी शब्द के अर्थ में इतना अंतर आ जाता है कि उस शब्द का मूल अर्थ ही समाप्त हो जाता है और उसके स्थान पर नया अर्थ आ जाता है।

अर्थादेश के अन्तर्गत अच्छे और बुरे अर्थ परिवर्तन के आधार पर दो दिशाएँ बनती है। अर्थापकर्ष और अर्थोत्कर्ष।
अर्थोत्कर्ष- जब शब्दो के अर्थ अच्छे से बुरे बन जाते है या अर्थ गिर जाता है तो वह अर्थोपकर्ष कहलाता है। जैसे-गर्भिणी (स्त्री के लिए) गाभिन (पशु के लिए) ग्रामिण (देहाती) गँवार (मूर्ख) प्रयुक्त होते है। महाजन, गुरू दादा भी इसी के उदाहरण हैं। अर्थोत्कर्ष का अर्थ है अर्थ का उत्कर्ष-। पहले निकृष्ट अर्थ में प्रयुक्त होनेवाले शब्द कालांतर में उच्च तथा अच्छे अर्थ प्रयुक्त होने लगता है। साहसी शब्द संस्कृत में दुराचारी, डाकू के लिए प्रयुक्त होता था जो बाद में हिम्मतवाला के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा।

Jain Vishva Bharati Institute Deemed University Ladnun

अर्थ परिवर्तन की तीन दिशाओं में शब्द का सफर किन परिस्थितयों में कैसा होता है, इनके पीछे कौनसे कारण हो सकते हैं यह भी भाषावैज्ञानिकों द्वारा जानने का प्रयास किया गया है । ये अर्थ परिवर्तन के कारण कहलाए जाते हैं । कुछ प्रमुख हैं -

बल का अपसरण, ड्रेस,पीढी परिवर्तन, परिवेश परिवर्तन (भौगोलिक,सामाजिक,भौतिक, राजनीति) सामान्य व्यवहार में आनेवाले शब्द, अर्थगत अनिश्चितता, अंधविश्वास, लाक्षणिक अथवा आलंकारिकता का प्रयोग व्यंग्य, तद्भवता अन्य भाषाओं से शब्द उधार लेना, नवीन वस्तुओं का नामकरण, अशोभन के लिए शोभन या सुश्राव्यता, सामान्य के लिए विशेष शब्द का प्रयोग, शब्दों के प्रयोग की अतिशयता के अलावा का अर्थपरिवर्तन घटित कहते हैं। इससे भाषा की अर्थशक्ति में नूतन प्राण संचरित होते है और सर्जनपक्ष के कारण आकर्षकता का आगमन होता है। सूक्ष्मतर अभिव्यंजना क्षमता भाषा में आने से भाषा प्रौढ हो जाती है ।

4.6. अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न-

1) शब्द और अर्थ का संबंध सोदाहरण समझाईए ।
2) अर्थ का स्वरूप बताते हुए अर्थ परिवर्तन की दिशाओं का सोदाहरण परिचय दीजिए ।
3) अर्थपरिवर्तन के कारणों की चर्चा कीजिए ।

टिप्पणियाँ लिखिए - 1) विलोमता 2) पर्यायता

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई 5

भाषाविज्ञान का साहित्य को लाभ

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य
5.2 प्रस्तावना
5.3 विषय विवरण
5.3.1 सृजनात्मक भाषा
5.3.2 भाषा विज्ञान के अंग
- क. स्वन विज्ञान
- ख. शब्द विज्ञान
- ग. अर्थ विज्ञान
- घ. व्युत्पत्ति विज्ञान
- ड. कोशविज्ञान

5.3.3 भाषा विज्ञान के नवीन अंग
- 1) शैली विज्ञान
- 2) प्रोक्ति विज्ञान

5.4 पारिभाषिक शब्दावली
5.5 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
5.6 इकाई का सारांश
5.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

5.१ प्रस्तावना -

साहित्य शब्द विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त होता है। सामग्री, साधन, जानकारी, उपकरण आदि साहित्य में आते हैं। अंग्रेजी का Literature शब्द भी इसी व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होता है। औषधियों के बोतल के साथ आनेवाले परचे, मशीन का प्रचालन बतानेवाली विधि पुस्तिका, किसी वस्तु का निर्माण करने में लगनेवाली सामग्री और साधनों की जानकारी देनेवाली पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, गणित, भूगोल, भौतिकी, अर्थशास्त्र, कम्प्युटर, विज्ञान की पुस्तकें अर्थात् बोलचाल में छपी हुई सामग्री और साधन सामग्री को साहित्य कहते हैं।

साहित्यशास्त्र अथवा भारतीय आचार्यों द्वारा प्रदत्त, नामकरण काव्यशास्त्र में विशेष अध्ययन होने वाला साहित्य अथवा काव्य, संकुचित अर्थ में साहित्य आता है। ऐसी ललित कला जो शब्दों के माध्यम से व्यक्त होती है। सहृदय के मन में भाव जगाकर जो आनंद उत्पन्न करती है वह साहित्य है।

साहित्य के सहारे मनुष्य जीवन के दु:ख और संकट को क्षणभर के लिए भूल सकता है। वह आपदाओं से भरे हुए वास्तविक संसार को छोड़कर कल्पना और भावना के सुंदर लोक में भ्रमण कर सकता है। इसका अर्थ यह नहीं कि फुर्सत के समय जो भी लिखा जाएगा वह साहित्य हो। साहित्य और रूचि का अभिन्न संबंध है।

हडसन के मतानुसार ''आत्मभिव्यक्ति की कामना यथार्थ जगत् के प्रति हमारा लगाव और आकर्षण, कल्पना जगत् के निर्माण की प्रवृत्ति और रूपविधान की कामना ये चारे बातें साहित्य को जन्म देती है।''

डॉ.भगीरथ मिश्र के मत से ''साहित्य मनुष्य के अनुभव और ज्ञान का वह रूप है जो लिपिबद्ध होकर हमारे सामने आने आता है और सुरक्षित रहता है।''

तात्पर्य यह कि साहित्य हमारे भाव, हमारी संस्कृति और हमारी भाषा को सुरक्षित रखने का साधन है।

साहित्य निराकार पदार्थों, भावों और विचार को साकार तथा सजीव बनाता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

आचार्य भामह ''शब्द और अर्थ से युक्त रचना को काव्य मानते हैं'' (शब्दार्थो सहित काव्यम्)। रूद्रट इसी बात को ''ननु शब्दार्थो काव्यम्'' के द्वारा स्पष्ट करते हैं। आचार्य दंडी ने ''अभिलक्षित अर्थ को व्यक्त करने वाली पदावली को साहित्य माना है''। आचार्य कुंतक के मत से

शब्दार्थो सहितौ वक्रकविव्यापार शालिनी।

''बंधे व्यवस्थितों काव्यम तद्विदाह्लादकारिणी ॥''

अर्थात् आह्लादकारक, कवि व्यापार से मुक्त सुंदर रचना में व्यवस्थित शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं।

आचार्य विश्वनाथ ने ''वाक्यम् रसात्मक काव्यम्'' कहकर काव्य के उद्देश्य को हमारे सामने रख दिया है। तो पण्डितराज जगन्नाथ ने ''रमणियार्थ प्रतिपादक: शब्द काव्यम्'' कहकर शब्द की रमणियात्मकता को प्रधानता दी है।

अंग्रेजी विचारक विलिमय हेजलिट ने भी इसी तरह की बात कही है। ''काव्य भावना और कल्पना की सर्वोच्च भाषा है।''

इस तरह कविता शब्द, अर्थ, वाक्य के द्वारा अलौलिक आनंद अर्थात रस प्रदान करनेवाली कला कहा गया है।

५.२ उद्देश्य -

प्रिय छात्रों, इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत,

1) साहित्य की परिभाषा और उसके स्वरूप से पुन:परिचित होंगे।
2) साहित्य की अभिव्यक्ति तथा संप्रेषण का आधार भाषा हैं और भाषाविज्ञान के अध्ययन का आधार भाषा ही है। इस सत्य से अवगत होंगे।
3) भाषा के रूप और भाषा के अंगो का साहित्य क्षेत्र की उपयोगिता को जानेंगे।
4) भाषा की साहित्यिक प्रयुक्ति को स्पष्ट कर पाएंगे।
5) भाषाविज्ञान के अध्ययन की उपयोगिता को जान सकेंगे।

5.3 विषय विवरण -

मानसिक भावों को शब्द बद्ध करना और कल्पना द्वारा सजीव रूप प्रदान करने की कला साहित्य है। मानसिक भाव कल्पना द्वारा सृजित होकर भाषा और शैली के माध्यम से अनुभूतिपरक होते हैं और अलौकिक आनंद प्रदान करते हैं। साहित्य में प्रयुक्त भाषा साहित्य की ही तरह सृजनपरक होती है।

5.3.1 सृजनात्मक भाषा -

सृजनात्मक भाषा की निम्न विशेषताएँ है-

सृजनात्मक भाषा व्याकरण के नियमों द्वारा अनुशासित होती है। इस भाषा का रूप मानक या परिनिष्ठित होता है। इसलिए सृजनात्मक भाषा का रूप स्थिर और स्थायी है। अलंकरण और चमत्कार तथा उत्सुकता के गुणों को लिए हुए यह भाषा होती है। सृजनात्मक भाषा बोलचाल की भाषा सें अलग होती है।

सृजनात्मक भाषा जो साहित्य के लिए प्रयुक्त होती है वह शिक्षित वर्ग द्वारा अपनायी जाती है। इसी भाषा में सामाजिक,सांस्कृतिक, साहित्यिक, व्यापारिक, वैज्ञानिक, प्रशासनिक कार्य संपन्न होते हैं। कला,विज्ञान, ज्ञान, शिक्षा का माध्यम साहित्य में प्रयुक्त सर्जनपरक भाषा ही होती है। यह रूप सरलीकरण और आधुनिकीकरण की प्रवृत्ति को लिए हुए होता है।

सृजनात्मक भाषा के दो रूप मिलते हैं। (i) शिष्ट साहित्य में प्रयुक्त रूप, (ii)-लोकसाहित्य, या पत्र-पत्रिकाओं में प्रयुक्त रूप।

शुद्ध साहित्य को शिष्ट साहित्य भी कहा जाता है। बुद्धिजीवी वर्ग की भाषा शिष्ट साहित्य में प्रयुक्त होती है और वह आचार्यों, विद्वानों की होती है। साहित्य में संस्कृत, हिन्दी के अलावा अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि भारतीय तथा विदेशी भाषाओं की ध्वनियाँ, शब्द,रूप, वाक्य और शैली का अनुसरण किया जाता है। मित्रों, आधुनिक हिन्दी साहित्य और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में इसके अनेक उदाहरणों से आप परिचित हुए है। यह भाषा गंभीर और अलंकरणपरक होती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

सृजनात्मक भाषा का दूसरा रूप लोकसाहित्य पत्र-पत्रिकाओं में दिखायी देता है। यह भाषाई रूप मानक न होकर मानक के आस पास का होता है। बोली, स्थानीय शब्द, आँचलिकतापरक विवरण में बोलचाल की अनौपचारिक भाषाई रूप के दर्शन होते हैं। व्याकरणिक नियमों का कठोरता से इस भाषा में पालन नहीं होता।

साहित्य की भाषा होने के कारण ही भाषा के विविध रूप-मानक भाषा से लेकर विश्व भाषा तक के निर्माण हुए हैं। बोलियों में रचित साहित्य लोकसाहित्य की संज्ञा पाता है। अत: चाहे शिष्ट साहित्य हो या लोकसाहित्य, अभिव्यक्ति और संम्प्रेषण का आधार भाषा ही है।

भाषा का विशेष अध्ययन करनेवाला क्षेत्र भाषा विज्ञान है। भाषा विज्ञान के लिए आधारभूत सामग्री भाषा है, जो साहित्य के माध्यम से भाषा विज्ञानियोंकों प्राप्त होती हैं। भाषा के विभिन्न अंग ही भाषा विज्ञान के अंग है। इनके अध्ययन के कारण साहित्य का अर्थ और उसकी आलोचना वैज्ञानिक ढंग से प्राप्त होती है।

5.3.2.भाषाविज्ञान के अंग -

क. स्वन (ध्वनि) विज्ञान

स्वन किसी भाषा का लघुतम एवं आधारभूत तत्त्व होता है। जिससे किसी भाषा की संरचना होती है। किसी भाषा की सही जानकारी तभी पर प्राप्त हो सकती है जब हम उस भाषा के स्वनों से पर्याप्त परिचित हो उनका उच्चारण कर सके तथा उन्हें अलग-अलग पहचान सकें।

शब्द का मुख्य आधार स्वन है। स्वन अर्थतत्त्व (शब्द) का निर्माण करते हैं। साहित्य, शब्द तथा अर्थ के संयोग से जन्म लेता है। स्वन गुणों का वैशिष्ट्य है-

(1) दीर्घता:-उच्चारण में लगनेवाला समय मात्रा (काल) कहलाता है। मात्राओं के तीन भेद होते हैं - ह्रस्व (एक मात्रा), दीर्घ (दो मात्रा),प्लुत (तीन मात्रा)। मात्रा का संबंध छंद विधान से अर्थात् मात्रिक छंदो से हैं। मात्रा भेद से अर्थ भेद भी घटित होता है और कविता में छंद भेद भी। रोला, दोहा, सोरठा-24 मात्राओं के छंद हैं परंतु यति-गति भेद से स्वतंत्र छंद हो गए हैं। दिन दीन, मन मना इस तरह दीर्घता के कारण अर्थ भेद घटित होता है।

(2) द्वित्व - व्यंजनों को दो बार लिखना 'द्वित्व'कहलाता है जो अर्थ भेद घटित करता है। पता-ठिकाना, पत्ता-पेड़ का पत्ता। गदा-अस्त्र, गद्‌दा-मोटा बिछौना।

(3) बलाघात वाक्य में किसी शब्द पर बल देना बलाघात कहलाता है। अंग्रेजी बलाघात प्रधान भाषा है जहाँ अर्थ परिवर्तन घटित होता है।

(4) सुर - सुर घोष स्वनों का वैशिष्ट्य है। सुर के कारण प्रश्न, निषेध, आश्चर्य, व्यंग्य आदि भाव प्रकट होते है। सुर का भ्रमरगीत का उपालंभ सुर पर आधारित है। चीनी भाषा सुर प्रधान है।

(5) संगम - एक ध्वनि से दूसरी ध्वनि पर जाते समय यदि कही विराम आया तो संगम कहलाता है और अर्थ भेद घटित हो जाता है।

होली - हो / लीसजलता- सज / लता

तुम्हारे - तुम / हारे

कविता में इन बातों का ध्यान रखा जाता है। कारण कविता में गति, यति, लय, नाद और संगीत होता है।

रचनाकार तुक, मात्रा, लय मिलाने के लिए नवीन ध्वनियों की योजना करता है। जैसे कमल के लिए कमलु नयन के लिए नैन, देवर के लिये देवरवा, भावज के लिए भौजी।

ख. शब्दविज्ञान

स्वन अथवा वर्णों को कोई अर्थ नही होता। वर्ण-समूह जब अर्थबोध कराने लगता है तब शब्द बन जाता है। शब्द को अर्थतत्त्व भी कहा जाता है। पतंजली के मतानुसार ''शब्द कान से प्राप्त बुद्धि से ग्राह्य तथा प्रयोग से स्पृहित आकाशव्यापी ध्वनि है।''तात्पर्य यह कि शब्द अर्थ के स्तर पर भाषा की लघुतम स्वतंत्र इकाई है। शब्द रचना के आधार पर रुढ है-अर्थात्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

शब्दों का विभाजन नहीं हो सकता - घोडा,बैल, गाय, हाथी । यौगिक में प्रत्यय जोडकर शब्द बनाये जाते हैं - भलाई, गृहपति, रेलगाडी, किराएदार, पीताम्बर । योगरूढ शब्द वे होते हैं जिनका अर्थ विशिष्ट हो जाता है पंकज का रूढ अर्थ है कमल । सामासिक शब्द गठित किए जाते हैं और नवीन अर्थवत्ता शब्दों में आ जाती है - वीणापाणि - चक्रधर, पीताम्बर आदि

शब्द स्रोत के आधार पर इस तरह वर्गीकृत होते हैं । तत्सम अर्थात् मूलभाषा (संस्कृत) के शब्द जल, विद्या, नर, कर्म, ग्रंथ, ऋषि, मास, वर्ष । तद्‌भव-मूल भाषा से उत्पन्न - साँप, काम, किसन आदि । देशज-जिनकी व्युत्पत्ति अज्ञात होती है - छोटा, चूहा, खादी, पेड़ आदि । विदेशी - अंग्रेजी अरबी-फारसी के शब्द, बुक, रजिस्टर, स्टेशन, किताब, कलाकंद, बरफी, रोजनामचा आदि । पारिभाषिक शब्द उपसर्ग-प्रत्यय से बनाए जाते हैं जो तकनीकी होते हैं। संपूरक, आरक्षण, लिपिक, विधिपालिका, न्यायालय आदि ।

शब्द निर्माण उपसर्ग-प्रत्ययों के द्वारा होता है । सर्जनात्मक भाषा में शब्दों के नए रूप गढे जाते हैं - रसनिर्झरणि, निमज्जित, कंटकाकीर्ण, रसवर्षी, अंतर्गवाक्ष, एकोद्‌देशीय अंतरिक्षण आदि ।

(ग) अर्थविज्ञान - भाषा विचार-विनिमय का साधन है और यह काम भाषा के अर्थ द्वारा संपन्न होता है। भाषाध्वनियों की व्यवस्था जब अपने समग्र में किसी अर्थ की अभिव्यक्ति करने में समर्थ होती है तभी भाषा को पूर्णता मिलती है ।

जिस तरह प्राणविहीन शरीर में जीवन का अभाव होता है, उसी प्रकार अर्थविहीन भाषा मात्र प्रलाप हो जाती है ।

यास्क मुनि लिखते हैं - जो अर्थ जानता है, उसे ही समस्त कल्याण प्राप्त होता है । बिना अर्थ को जाने केवल शब्द दुहराने से इच्छित अर्थ उसी तरह प्रकाशित नहीं होता जैसे - अग्नि के अभाव में सूखा इंधन कभी प्रज्वलित नहीं हो सकता । ''

भर्तृहरि के मत से ''शब्द के उच्चारण से जो मानसिक प्रतीति होती है वही उसका अर्थ है ।

परम्परावश शब्दों का अर्थ हम जान लेते हैं । शब्द कहते ही वस्तु के गुणों का एहसास हमारे मानसपटल पर होता जाता है । नींवू कहते ही खटास, आग कहते ही जलना, इमली कहते ही खट्‌टा-मीठा स्वाद मुँह पर आ जाता है । तात्पर्य यह कि शब्द सुनते ही हमारे मन में बिम्ब (प्रतिमा) अंकित हो जाते हैं । यह अर्थ हमें वक्ता,बोधव्य,वाच्य,प्रस्ताव,देश-काल,काकू और चेष्टा से प्राप्त होता है । साहित्यिक रचना से हमे भावार्थ, मानसिक प्रतीति और तद्‌जन्य आनन्द की प्राप्ति होती है । इस अर्थग्रहण को ही रसग्रहण भी कहते हैं ।

हम अर्थ निम्न साधनों के द्वारा ग्रहण करते हैं । संयोग-अर्थात् दूसरे पद के संयोग से अर्थप्राप्ति होती है । गो शब्द के आगे वत्स लगाने पर गोवत्स शब्द बनता है और गो का अर्थ गाय होता है ।

वस्तुसंबंध के अभाव को वियोग कहते हैं । नग का अर्थ वस्तु, पहाड़, रत्न आदि होते हैं । जैसे-नगबिन सूनी मूँदरी-कहने पर नग का अर्थ रत्न है । साहचर्य अर्थात् निरंतर साथ रहने वाले पदार्थ या व्यक्ति से भी शब्द के अर्थ का ज्ञान होता है । जैसे नल-नील यहाँ अर्थ है सुग्रीव के मंत्री ।

गगन मे छाए है घनश्याम-कहने पर घनश्याम का अर्थ बादल हो जाता है ।

प्रकरण से भी अर्थबोध होता है । जैसे -मधु शब्द के अर्थ अनेक है । जैसे-शहद,मदिरा, पराग,वसंत आदि । ''नहीं मधुर-मधु -'' बिहारी के इस दोहे में मधु का अर्थ वसंत ऋतु है । शब्दों के आरोह-अवरोह से भी शब्दों का अर्थ भिन्न हो जाता है । जैसे राम-राम का अर्थ भय, निराशा, बुरा होना,नमस्कार आदि अर्थ स्वरभेद के कारण होते हैं ।

कवि अथवा साहित्यकार अर्थशक्ति को पहचानता है और नूतन अर्थ में शब्द का प्रयोग कर चमत्कार उत्पन्न करता है । जैसे-अज्यौ तरोना ही रह्यौ, श्रुति सेवत इक अंग । नाक बास बेसरि लहै मुकतन के संग ।इसमें अभिधा, लक्षणा, व्यंजना का अर्थात् विदग्धता का चमत्कार देखने को मिलता है ।

घ. व्युत्पत्तिविज्ञान

स्वन अथवा वर्णों को कोई अर्थ नहीं होता । वर्ण-समूह जब अर्थबोध कराने लगता है तब शब्द रूप निर्माणक प्रक्रिया से अवगत कराकर सर्जनात्मक भाषा निर्माण की राह खोल देता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

शब्दों का भूगोल-इतिहास, संस्कृति से परिचय व्युत्पत्ति विज्ञान कराता है। शब्द की व्युत्पत्ति व्यक्ति और समाज के आश्रित होती है जो शब्द गढ़ने के नवीन द्वार खोलती है। प्रयोगवादी वाक्य में शब्दों का नवीन गठन आकर्षकता को जन्म देता है।

शब्द संबंधी उसकी व्युत्पत्ति और निर्माण प्रक्रिया का अध्ययन करनेवाला शास्त्र व्युत्पत्तिविज्ञान है। इस विज्ञान में शब्दों के मूल को प्रत्यय-विश्लेषण के द्वारा खोजा जाता है। जैसे - आदित्य शब्द का अर्थ सूर्य है। आदित्य की व्युत्पत्ति इस प्रकार है।

(क) 'दा' धातु से 'डिति' प्रत्यय लगकर, 'दिति' शब्द बना, जो दैत्यों की माता का नाम है। नञ तत्पुरूष समास करके न दिति=अदिति (अर्थात जो दिति न हो वह अदिति) यह देवों की माता (दक्ष प्रजापति की कन्या तथा कश्यप की पत्नी) का नाम निष्पन्न हुआ। अब आदिति शब्द में 'ञ्य' प्रत्यय लगाने से 'आदित्य' शब्द बना, जिसका अर्थ हुआ अदिति के पुत्र अर्थात् देवगण।

(ख) 'दा' धातु (=बाँटना, खण्डित करना) में 'क्तिन्' प्रत्यय लगकर भी 'दिति' शब्द बनता है, जिसका अर्थ हुआ 'खण्ड'। नञ समास करके 'न' दिति=अदिति शब्द बना, जिसका अर्थ हुआ 'अखण्ड, पूर्ण'। अदिति शब्द में पूर्ववत 'ण्य' प्रत्यय के योग से 'आदित्य' शब्द बना, जिसका अर्थ हुआ पूर्णता।

दोनो व्युत्पत्तियों को मिलाने से 'आदित्य' का अर्थ हुआ 'देवगण', जिनमें पूर्णता का भाव विद्यमान है। मनुष्य अपूर्ण है और देवता पूर्ण। इसी कारण मानव की तुलना में देवताओं की श्रेष्ठता का प्रतिपादन हुआ। इस तरह व्युत्पत्तिविज्ञान के कारण विशिष्ट शब्द प्रयोग करने की जानकारी साहित्यकार को मिलती है।

(ङ) कोशविज्ञान -

कोश विज्ञान को अंग्रेजी में Lexicology कहते हैं। कोश में विषय का विभाजन अकारादि क्रम से दिया जाता है और उस विषय से संबंधित संपूर्ण सामग्री को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया जाता है।

पुस्तककोश के निर्माण में लेखक की रचना को आधार बनाया जाता है। तथा उसमें प्रयुक्त शब्दों और प्रयोगों को अकारादि क्रम से संकलित किया जाता है। शब्द और प्रयोगों का संदर्भ-उल्लेख किया जाता है। मानस-कोश, कामायनी कोश पुस्तक कोश के उदाहरण है।

भाषाकोश के तीन रूप मिलते है- (i) भाषा कोश, (ii)-द्विभाषाकोश, तीन-अनेकभाषाकोश। भाषाकोश में शब्दों, प्रयोगों, मुहावरों, लोकोक्तियों का अकारादि क्रम से संकलन कर व्याख्या दी जाती है। पर्यायवाची कोश, प्रयोगकोश और लोकभाषाकोश भाषाकोश के ही प्रकार है।

कोश के कारण शब्द और अर्थ की जानकारी सहज और सरल ढंग से होती है। कठिन, अप्रचलित शब्दों के अर्थ और प्रयोग को जानने में सुगमता होती है। कोश के कारण भाषा की अभिव्यंजनाशक्ति की तथा शुद्ध वर्तनी की जानकारी मिलती है। कोश के कारण शब्दों की व्याकरणिक कोटि समझने में मदद मिलती है। लोकोक्तियों और मुहावरों को समझने मे मदद मिलती है। फलत: साहित्य के मर्म और रसनिष्पत्ति में सहायता मिलती है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न -

क. एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

१. आ.भामह के मत से साहित्य क्या है ?

२. आ.कुंतक साहित्य को कैसे परिभाषित करते हैं ?

३. आपके मत से कविता शब्दों द्वारा क्या कहती है ?

४. मात्रा से अर्थ भेद घटित होने वाले चार उदाहरण लिखिए।

५. स्त्रोंत के आधार पर शब्द के कौन से प्रकार हैं ?

ख. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

१. आरक्षण शब्द में .... उपसर्ग है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

२.	विधिपालिका शब्द का ....प्रत्यय है ।

३.	आदित्य शब्द ....धातु से बता है ।

४.	कोश को अंग्रेजी में .... कहते हैं ।

५.	निरूक्तकार .... मुनि है ।

भाषा विज्ञान के नवीन अंग-

शैलीविज्ञान -

शैली, रीति,गुण ,अलंकार, वक्रोक्ति, वृत्ति, दोष, ध्वनि, आदि - सभी अभिव्यंजना के तत्त्वों को वहन करती है । प्लेटो के मतानुसार जब विचार को रूप दिया जाता है तभी शैली का जन्म होता है । तो न्यूमैन के मत से भाषा के अन्तर्गत सोचना ही शैली है । शैली ऐसी विलक्षण शक्ति है जो लेखक के भावों, विचारों, मस्तिष्क और हृदय में स्थायीरूप में विद्यमान रहती है और वाणी के माध्यम से व्यक्त होती है ।

डॉ.नगेन्द्र के मत से शैली साहित्य के सन्दर्भ में एक विशेष भाषिक प्रयोगविधि अथवा कथन भंगिमा है । साथ ही वे शैली के तीन अर्थ देते हैं - (i) -शैली कृतिकार के व्यक्तित्त्व का वैशिष्ट्य है । (ii) -विषय प्रतिपादन की विधि है । (iii) -साहित्य की चरम उपलब्धि है । जो कलात्मक अभिव्यक्ति है ।

शैली विज्ञान में केवल साहित्यिक भाषा का ही अध्ययन किया जाता है । शब्दों, पदों, वाक्यों को स्पष्ट तथा व्याख्यायित करने का काम शैलीविज्ञान करता है । इस कारण डॉ. रवींन्द्रकुमार श्रीवास्तव लिखते हैं - ''शैलीविज्ञान का निकटतम संबंध एक ओर प्रतिपाद्य के विषय के रूप में साहित्यिक सिद्धान्त के साथ सिद्ध है तो दूसरी ओर कार्यप्रणाली के रूप में भाषा वैज्ञानिक टेकनीक के साथ भी।''

डॉ.नगेन्द्र भी इसी तरह की बात करते हैं ''शैली विज्ञान भाषा विज्ञान के नियमों तथा प्रविधि के अनुसार साहित्य के भाषिक-विधान का रूपात्मक अध्ययन है । इसी अर्थ में वह सैद्धांतिक स्तर पर भाषाविज्ञान और साहित्य शास्त्र का और व्यावहारिक स्तर पर भाषा विज्ञान तथा अनुप्रयुक्त साहित्य समीक्षा का संयोजक सेतु है ।''

शैली विज्ञान में निम्न बातों का अध्ययन होता है जो कविता को समझने में मददगार है ।

ध्वनि-विचलन- शब्दों की ध्वनियों को परिवर्तित करना ।

ताही अहिर की छोहरिया छछिया भर छाछ पै नचावे ।

छोरी-मूल शब्द । छोहरिया अधिक तुच्छता हीनता, निर्ममता को सूचित करता है ।

ध्वनिचयन - शाब्द बिम्ब इसके उदाहरण है -

बाँसो का झुरमुट । संध्या का छुटपुट । है चहक रही चिडिया । टी-बी.टूट. टूट ।

कंकण किंकिणी मधुर धुनि सुनि, मानहुँ मदन दुंदभि दीन्ही ।

कण क्वणित रणित नुपूर थे (प्रसाद)

पदक्रम - पार ले चल तू मुझको (निराला)

सही पदक्रम है - तु मुझे पार ले चल ।

इस तरह शैली विज्ञान, साहित्य - भाषा को समझने में मदद करता है ।

(2) प्रोक्ति विज्ञान -

अंग्रेजी Discours के लिए हिन्दी में प्रोक्ति का प्रयोग होता है । अंग्रेजी Discorsology के लिए प्रोक्तिविज्ञान के नाम डॉ. भोलानाथ तिवारी ने सुझाया है । सस्यूर के मत से भी भाषा केवल वाक्य तक सीमित नहीं है । केवल कहना मात्र भाषा न होकर बात चीत करना भाषा है ।

डॉ.भोलानाथ तिवारी ने प्रोक्ति की परिभाषा इस प्रकार दी है, ''तर्कपूर्ण, क्रमयुक्त और आपस में आंतरिक रूप से सुसंबंद्ध एकाधिक वाक्यों की ऐसी-व्यवस्थित इकाई को प्रोक्ति कहते हैं जो संदर्भ विशेष में अर्थद्योतन की दृष्टि से पूर्ण

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हो।''

प्रोक्ति में प्राय: एक से अधिक वाक्य होते हैं। परंतु कभी-कभी एक वाक्य की भी प्रोक्ति होती है। जैसे-''साँप तुम नगर में तो रहे नहीं। डसना कहाँ सीखा ?''। यह प्रोक्ति है।

प्रोक्ति आंतरिक रूप से सुसंबंद्ध होती है। वाक्य भले ही ऊपरी तौर पर अलग प्रतीत होते हो।

प्रोक्ति का विस्तार एक शब्द से लेकर संपूर्ण कहानी, एकांकी उपन्यास, नाटक, महाकाव्य तक हो सकता है।

प्रोक्ति में वक्ता, श्रोता, कथ्य,संदर्भ,मौखिक, सरणी ये पाँच इकाईयाँ हैं। प्रोक्ति मूलत: सम्प्रेषण की एक इकाई होती है। साहित्य के ये सारे भेद किसी एक विशिष्ट उद्देश्य, लक्ष्य, विषय और रस को प्रस्तुत करने के कारण साहित्य की विधाएँ प्रोक्ति ही हैं।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ग) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1. प्लेटो के मत से शैली का जन्म कब होता है ?
2. रवींद्रकुमार श्रीवास्तव शैली का संबंध किसके साथ बताते हैं ?
3. शैली किस बात का संयोजन सेतु है।
4. प्रोक्ति को अंग्रेजी में क्या कहते हैं ?
5. प्रोक्ति में साहित्य के सभी रूप कैसे समाविष्ट हो जाते हैं?

5.4 पारिभाषिक शब्द -

1) छंदविधान - पद्य के वर्ण तथा मात्राओं के बंधन को छंद विधान कहते हैं। जो रसानुकूल होता है।
2) अर्थ - शब्द को सुनकर होनेवाला मानसिक प्रत्यय।
3) रस - आनंद की अनुभूति जो कला से निष्पन्न होती है।
4) अर्थशक्ति - अभिधा (वाच्यार्थ) लक्षणा (लक्ष्यार्थ) व्यंजना (व्यंग्यार्थ) तीन शब्द शक्तियाँ है।

5.5 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर -

क) एक वाक्य में उत्तर लिखिए

1. आचार्य भामह के मत से साहित्य शब्द और अर्थ का संयोग है। (शब्दार्थो सहित काव्यम्)
2. आचार्य कुंतक के मत से शब्दार्थो सहित वक्र, कवि व्यापार से युक्त व्यवस्थित बँधी हुई, आह्लाद उत्पन्न करनेवाली रचना साहित्य है।
3. कविता शब्दों के द्वारा अलौकिक आनंद अर्थात् पाठकों को रस प्रदान करती है।
4. दिन-दीन,कल-कला, आदि-आदी,बहु-बहू।
5. स्रोत के आधार पर तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्द केप्रकार है।

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. आ
2. पालिका
3. दिति
4. Lexicology
5. यास्क

ग) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1. प्लेटो के मत से जब विचार को मूर्त रूप प्रदान किया जाता है तब शैली का जन्म होता है।
2. रवीन्द्रकुमार श्रीवास्तव शैली का संबंध साहित्य के साथ बताते है।
3. शैली साहित्य समीक्षा का संयोजक सेतु है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

4. **Discours**

5. प्रोक्ति में कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खण्डकाव्य, निबंध आदि सभी रूप समाविष्ट होते हैं।

5.6 इकाई का सारांश-

भाषा विज्ञान साहित्यसृजन को प्रेरणा, दिशा प्रदान करते हुए सर्जनाशक्ति को निखार कर साहित्य सर्जन, साहित्य का रसग्रहण और साहित्यालोचन का द्वार खोलता है। भाषाविज्ञान से ही हमें पता चलता है कि भाषा का एक रूप साहित्यिक भाषा है। साहित्यिक भाषा परिमार्जित परिष्कृत व्याकरण सम्मत और शिष्ट होती है। साहित्यकार इसी भाषा में साहित्य सृजन करता है। सृजनात्मक शिष्ट भाषा युगानुरूप नवीन रूप में अपने आपको ढाल लेती है। भारतेंदु युग में हिन्दी ब्रज,अवधी और खड़ी बोली के निकट थी, तो छायावादी युग में संस्कृतप्रधान, परिष्कृत हिन्दी का प्रयोग हुआ। प्रगतिवादी युग में उर्दू, फारसी के शब्दों का समावेश हुआ। स्वातंत्र्योत्तर काल के साहित्यमें अंग्रेजी का प्रभाव अधिक दिखाई देता है।

भाषाविज्ञान और व्याकरण दोनों एक दूसरे के निकट है। दोनों का आधार भाषा है। व्याकरण का संबंध भाषा विशेष से होता है, काल-विशेष की भाषा से होता है। भाषाविज्ञान भाषा -मात्र से संबंधित होता है। व्याकरण मानक भाषा को स्थिर तथा नियमबद्ध करता है। भाषाविज्ञान उपलब्ध सामग्री का विश्लेषण तथा भाषा रूपों का निधीरण पर वैशिष्ट्य बताता है। भाषा विज्ञान के लिए आधारभूत सामग्री भाषा साहित्य के द्वारा ही प्राप्त होती है और भाषाविज्ञान के कारण साहित्य अपनी अभिव्यंजना क्षमता को निखारता है।

5.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

1) साहित्य का स्वरूप निर्दिष्ट करते हुए सृजनात्मक भाषा का वैशिष्ट्य बताइए।
2) स्वन शब्द तथा अर्थविज्ञान का अध्ययन साहित्य सृजन में किस तरह मदद करता है - सोदाहरण बताईए।
3) प्रोक्ति विज्ञान और साहित्य का संबंध विशद किजिए।
4) साहित्य की आत्मा भाव है तो शैली शरीरकथन की समीक्षा कीजिए।
5) व्युत्पत्तिविज्ञान और कोशविज्ञान का महत्त्व बताइए।

अतिरिक्त अध्ययन हेतु ग्रंथ

डॉ.भोलानाथ तिवारी - भाषाविज्ञान प्रवेश-शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली-12
डॉ.रामेश्वर दयालु अग्रवाल - मुग्धबोध भाषाविज्ञान-साधना प्रकाशन, मेरठ - 2
डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा - भाषाविज्ञान की भूमिका-राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली - 02
डॉ.केशवदत्त रूवाली - आधुनिक भाषाविज्ञान-श्री. अल्मोडा बुक डेपो, अल्मोडा-01
डॉ.भारतभूषण चौधरी-संरचनात्मक भाषा-विज्ञान-संजीव प्रकाशन, कुरूक्षेत्र (हरियाणा)
डॉ.सुधाकर कलावडे - भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा-साहित्य रत्नालय, कानपुर
डॉ.कैलाशचन्द्र भाटिया - हिन्दी भाषा का आधुनिकीकरण-तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली - 02
डॉ.राजमणि शर्मा - आधुनिक भाषा - विज्ञान-वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली - 02
डॉ.अम्बादास देशमुख - भाषिकी हिन्दी भाषा तथा भाषा शिक्षण-अतुल प्रकाशन, कानपुर - 12
डॉ.विष्णु चतुर्वेदी विराट-राजभाषा हिन्दी व्याकरण-अमर प्रकाशन, मथुरा - 01 (म.प्र.)
डॉ.अनूपप्रतापसिंह भाषाविज्ञान-नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - 02
डॉ.भोलानाथ तिवारी - भाषा विज्ञान कोश-ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी -1
डॉ.सुरेश माहेश्वरी - हिन्दी :राष्ट्रभाषा से विश्वभाषा की ओर-विकास प्रकाशन, कानपुर - 27

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई - 1

हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 विषय विवरण
1.3.1 प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ
क. वैदिक संस्कृत
ख. लौकिक संस्कृत
1.3.2 मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ-प्राकृत पालि
अपभ्रंश अन्य प्राकृत - शौरसैनी,अर्द्धमागधी, मागधी,
1.3.3 आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ और उनका वर्गीकरण
1.4 पारिभाषिक शब्द
1.5 स्वयं अध्ययन प्रश्न के उत्तर
1.6 इकाई का सारांश
1.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

१.१ प्रस्तावना -

भारत एक बहुभाषिक और बहुबोलियों वाला देश है । इसलिए भारत एक महाद्वीप के समान है। भाषा, बोलियों और संस्कृति की दृष्टि से भारत दुनिया का सबसे अधिक समृद्ध देश है । डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन के मत से भारत में लगभग १७९ भाषाएँ और लगभग ५४४ बोलियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। इन सभी भाषाओं और बोलियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

आर्य भाषा और आर्येतर भाषाएँ

आर्यभाषाएँ - आर्य उत्तरी ध्रुव प्रदेश से यूरोप से होते हुए एशिया में आए । आर्यो से पूर्व-भारत में रहनेवाले लोगों को अनार्य कहा जाता है । आर्यों का ग्रंथ वेद है जो संस्कृत में है । इसलिए आर्यभाषाओं की उत्पत्ति वैदिक संस्कृत से मानी जाती है ।

आर्येतर भाषाओं को द्रविड, आष्ट्रीक मुण्डा परिवार की भाषाएँ कही जाती हैं। द्रविड भाषी परिवार का क्षेत्र दक्षिण भारत है । इसमें वर्तमान की चार भाषाएँ आती हैं तेलगू, तमीळ, कन्नड, मलयालम ।

आष्ट्रीक मुण्डा परिवार की भाषाओं का क्षेत्र वर्तमान का ईशान्य भारत है । इस परिवार की मुख्य भाषा मुण्डा है।

इस तरह वर्तमान भारत में बोली जानेवाली समस्त भाषाओं का उदगम आर्य और आर्येतर ये दो भाषा परिवार है।

१.२ उद्देश्य -

प्रिय मित्रों, इस इकाई का उद्देश्य है - हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानना ।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप -

क) प्राचीन भारतीय आर्य-अनार्य भाषाओं को जान सकेंगे ।

ख) प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं के अंतर को तुलनात्मक ढंग से समझ सकेंगे ।

ग) मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं की (ध्वन्यात्मक) स्वनात्मक, रूपात्मक विशेषताएँ और उनके साहित्य को जान सकेंगे ।

घ) आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं और उनके वर्गीकरण से वर्तमान भारतीय आर्य भाषाओं की स्थिति से अवगत हो सकेंगे ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1.3 विषय विवरण :-

भाषा के स्वरूप को जानने के लिए केवल स्वन, रूप और अर्थ का ज्ञान पर्याप्त नहीं होता । उसके मूल को जानना आवश्यक होता है । मूल को जानने पर हमें ज्ञात होता है कि सभी भारतीय भाषा-भाषी एक ही परिवार के सदस्य हैं इससे भेद, अलगाव खत्म होकर एकता, अपनेपन का आगमन होता है । आर्यों के आने से पहले भारत में नेग्रिटो, आग्नेय, कीरात और द्रविड जातियाँ निवास करती थी । जिन्हें अनार्य कहा जाता है । इन जातियों की भाषाओं का अस्तित्व आज भी मिलता है । इनके अनेक शब्द आर्यभाषाओं में घुलमिल गये हैं । इनके व्याकरण ने भी वर्तमान भारतीय भाषाओं को प्रभावित किया है।

आर्यो के आगमन के संदर्भ में ऐसा माना जाता है कि ई.स.पूर्व २००० से १५०० के आस पास भारत में आर्यों का प्रवेश हुआ होगा । आर्यों का मूल मध्य एशिया अथवा मध्य यूरोप या केस्पियन समुद्र तट माना जाता है। अपनी मूलभूमि से दूर आर्य लोग तीन भागों में विभाजित हुए-एक समूह ईरान की ओर गया, दूसरा कमिशिनर की पहाड़ियों की तरफ गया तीसरा समूह भारत में आया । इन तीनों समूहों की भाषाओं को क्रमश: ईरानी, दरद और आर्यावर्ती कहा जाता है ।

भारत में आर्य अनेक बार आए ऐसा माना जाता है । हार्नली के मत से आर्य दो खेमों में भारत आए । शुरू में आनेवाले आर्य मध्यदेश (सरस्वती नदी से इलाहाबाद तक का भूप्रदेश) में बसे । जिन्हें बाद के खेमे के आर्यों ने पूर्व, उत्तर, दक्षिण की ओर हटा दिया और वे स्वयं मध्यदेश में बस गए । इस तरह पहले खेमेवाले आर्य बाहरी हो गए और बाद में आनेवाले भीतरी । जॉर्ज ग्रियर्सन ने इसी आधार पर भारतीय आर्य भाषाओं का बाहरी और भीतरी में वर्गीकरण किया है ।

आर्य अफगान के पहाड़ी प्रदेशों से होते हुए सप्तसिंधु के मैदानी प्रदेश में आए, तब से भारत में आर्यभाषाओं का प्रारंभ माना जाता है ।

यह समय ऋग्वेद की रचनाकाल का है । ऋग्वेद के समय के बारे में कहा जाता है कि इसकी रचना ई.स.पूर्व १५०० में हुई । तब से आज तक का साढे तीन हजार सालों के इतिहास को तीन चरणों में विभाजित करने से हमें अध्ययन में सुविधा होगी ।

(१) प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ - (ई.पू.१५०० से ई.पू.५०० तक)

इसके अंतर्गत वैदिक और लौकिक संस्कृत का समावेश किया जाता है ।

(२) मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाएँ :- (ई.पू.५०० से ई.स.१००० तक)

इसके अंतर्गत पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाएँ आती हैं ।

(३) आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ (ई.स.१००० से आज तक)

इसमें हिन्दी, गुजराती, मराठी, बांगला, असमिया, उडिया, सिंधी, पंजाबी इत्यादि भारतीय भाषाएँ समाविष्ट होती है।

1.3.1 प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ (इ.पू.१५०० से ई.पू.५०० तक)

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा को संस्कृत कहते हैं । संस्कृत भाषा के दो रूप मिलते हैं । वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत । इसलिए प्राचीन भारतीय आर्यभाषाकाल को ''संस्कृतकाल'' भी कहते हैं । अब हम संस्कृत के इन दोनों रूपों का परिचय लेंगे ।

वैदिक संस्कृत -

वैदिक साहित्य प्रारंभ में आर्य जाति के अंतस् के उद्‌गारों के रूप में सृजित हुआ जो सौंदर्यचेतना और जिज्ञासामूलक रहस्यभावना के प्रकटीकरण से गुजरते हुए बौद्धिक चिंतन में ढल गया । वैदिक साहित्य में चार वेद-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद के अलावा ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद और वेदांग आते हैं । ऋग्वेद पहला और प्रमुख वेद है । इसके पद्य श्लोक 'ऋचा' कहलाते हैं । यजुर्वेद कर्मक लिए प्रयुक्त होने वाले याजुष है । याजुष का अर्थ है गद्य । सामवेद में गीत है जो यज्ञ के समय गाये जाते हैं । अथर्व में ऐहिक फल प्राप्ति के साधन है । ब्राह्मण ग्रंथ वेदों की गद्य मीमांसा है। भाव स्पष्टीकरण के लिए प्रसंगानुरूप आख्यानों की योजना भी की गयी है । आरण्यक और उपनिषद इनके परिशिष्ट है । वेदांग छह माने गय हैं - शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छंद, ज्योतिष । इन्हीं के कारण आज वैदिक संस्कृत सुरक्षित रही है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

विशेषता :-

क. स्वनात्मक-

1. वैदिक स्वर - स्वर तेरह है जो इस प्रकार हैं -

ह्रस्व - अ, इ,उ,ऋ,लृ

दीर्घ - आ, ई, ऊ, ॠ

1. संयुक्त - ए, ऐ, ओ, औ

2. व्यंजन स्वन - उच्चारण स्थान की दृष्टि से व्यंजन स्वन के निम्न वर्ग हैं -

कण्ठ्य - क्, ख्, ग्, घ

तालव्य - च्, छ्, ज्, झ्

दन्त्य - त्, थ्, द्, ध्

ओष्ट्य -प्, फ्, ब्, भ्

मूर्धन्य - ट्, ठ, ड्, ढ्, ळ्, ळ्ह्

नासिक्य - ङ्, ञ्, ण्, न्, म्

अर्धस्वर - य्, र्, ल्, व्

उष्म - श्, ष्, स्

अलिजिह्वीय - ह्

अघोष संघर्षी - विसर्ग (:)

मूल भारोपीय व्यंजन स्वनों का सब से अधिक सुरक्षित रूप वैदिक में मिलता है ।

3. ट वर्गीय मूर्धन्य स्वन मूल भारोपीय भाषाओं में नहीं था । द्रविड़ों के प्रभाव से यह स्वन वर्ग आया हैं । वैदिक संस्कृत में ह्रस्व-दीर्घ- और प्लुत् (त्रैमात्रिक) तीनों उच्चारण थे ।

ख. पदात्मक-

— वैदिक भाषा में स्वरान्त और हलन्त दोनों प्रकार के शब्द मिलते हैं । वैदिक भाषा पदरचना की दृष्टि से श्लीष्ट योगात्मक है ।

— वैदिक संस्कृत में शब्दों के रूप - तीन लिंग, तीन वचनों के अनुसार बनते हैं ।

पुल्लिंग-स्त्रीलिंग नपुंसक लिंग - ये तीन लिंग हैं । एकवचन, द्विवचन और बहुवचन ये तीन वचन है । क्रियारूप दो पदों में विभक्त है - आत्मनेपद जहाँ क्रिया के फल का भोक्ता स्वयं होता है । परस्मैपद जहाँ क्रिया के फल का भोक्ता अन्य होता है ।

भविष्यकाल के प्रयोग वैदिक संस्कृत में प्राय: नहीं मिलते । इसके बदले संभावनार्थ और निश्चयार्थ रूप मिलतेहैं।

वैदिक भाषा संगीतात्मक स्वराघातप्रधान थी ।

लौकिक संस्कृत -

लौकिक संस्कृत को संस्कृत अथवा क्लासिकल संस्कृत भी कहा जाता है यह भाषा बोलचाल की रही है । यूरोप में जो स्थान लैटीन का है वही स्थान भारत में संस्कृत का है । संस्कृत साहित्य का सबसे प्राचीन ग्रंथ आदिकाव्य कहलाता है । जिसके रचियता आदि कवि वाल्मीकि है । इनके ग्रंथ का नाम ''रामायण'' है । संस्कृत शब्द का अर्थ है संस्कार की गयी भाषा या शिष्ट भाषा । इस भाषा में पुराण, महाभारत, काव्य नाटक आदि की रचनाएँ हुई है । महाकवि कालिदास, व्याकरणाचार्य पाणिनि, निरूक्तकार यास्कमुनि, महाभाष्यकार पतंजली आदि संस्कृत के रचनाकार है ।

भारत की सभी भाषाओं ने संस्कृत से अगणित शब्द लिये हैं । इसलिए संस्कृत को भारतीय भाषाओं की जननी कहा जाता है । इसके अलावा तिब्बती, अफगानी, चीनी, कोरियाई, जपानी भाषाओं में भी संस्कृत के शब्द मिलतेहैं।

संस्कृत का समय ई.स.पूर्व ८०० से ई.स.पूर्व ५०० तक माना जाता है । ई.स.पूर्व ६०० में पाणिनि ने ''अष्टाध्यायी'' में संस्कृत को व्याकरण निबद्ध कर इसे मानकीकृत भी किया । इसलिए संस्कृत का अर्थ पाणिनीय संस्कृत भी लिया जाता है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

विशेषता -

क. स्वनात्मक विशेषता,

1. स्वर स्वन ग्यारह है ।
   मूलस्वर - अ,आ,इ,ई,उ,ऊ,ऋ,ॠ,ऌ,ए, ओ
   संयुक्त स्वर - ऐ, औ

2. व्यंजन स्वन - उच्चारण स्थान की दृष्टि से व्यंजन स्वन के निम्न वर्ग है
   कण्ठ्य - क्, ख, ग्, घ्, ङ्
   तालव्य - च्, छ्, ज्, झ्, ञ्
   मूर्धन्य - ट्, ठ्,ड्,ढ्, ण्
   दन्त्य - त्, थ्, द्, ध, न्,
   ओष्ठ्य - प्, फ्, ब्, भ्,म्
   अर्धस्वर - य्, र्, ल्, व्
   उष्म - श्, ष्, स्
   अलिजिव्हीय - ह्
   अघोष संघर्षी - विसर्ग (:)

3. संस्कृत में केवल अड़तालीस व्यंजन ही शेष रहें । ळ, ळ्ह्, ऌ, ॠ ये लुप्त हो गये ।

4. वैदिक संस्कृत में अनुस्वार शुद्ध नासिक्य स्वर था । संस्कृत में इसके दो रूप हो गये अनुस्वार (ं) और अनुमासिक (ँ) । स्वराघात में भी परिवर्तन आ गया ।

5. अनेक वैदिक शब्दों का प्रयोग बंद हो गया । जैसे अमूर (बुद्धिमान), दर्शत (सुन्दर) इसी के साथ शब्दों के अर्थों में भी परिवर्तन हो गया ।

शब्द	वैदिक	संस्कृत
पत्त	उड़ना	गिरना
असुर	शक्तिशाली	दैत्य
वध	घातक शस्त्र	हत्या

ख. रूपात्मक -

1. संस्कृत में संज्ञाएँ दो प्रकार की थी - अजंत (स्वरांत), हलंत (व्यंजनांत) संस्कृत में तीन लिंग है - पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग
2. आठ कारक है - प्रथमा (कर्ता), द्वितिया (कर्म), तृतीया (करण), चतुर्थी (संप्रदान), पंचमी (अपादान), षष्टी (संबंध) सप्तमी (अधिकरण), अष्टमी (संबोधन) । दो पद हैं - आत्मनेपद और परस्मैपद ।
3. तीन वाच्य हैं कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाववाच्य ।
4. प्रत्यय चार प्रकार के हैं -सुप्(कारक),तिङ्,(क्रिया),कृदंत (आख्यात या क्रिया),तद्धित (संज्ञा)
5. समस्त क्रियाएँ दस लकारों में विभक्त हैं - लकार - सभी के नाम ल से प्रारंभ होने के कारण इन्हें लकार कहते हैं । लकारों का संबंध क्रियाओं से है ।
6. क्रियापदों में तीन काल हैं - वर्तमान, भूत,भविष्य ।
7. वाक्य की चार विधियाँ हैं आज्ञा, विधि, आर्शिलिंग हेतु, हेतुमद

   प्रत्येक लकार में तीन वचन, तीन पुरूष होते हैं ।

वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत में अन्तर

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

१) वैदिक संस्कृत जनभाषा के निकट थी।	१. लौकिक संस्कृत जनभाषा से दूर थी।
२) कठिन, जटिल रूपों-से युक्त तथा साहित्यिक रूप स्थिर नहीं हुए थे।	२. वैदिक संस्कृत की अपेक्षा सरल, अनेकरूपता से मुक्त, नियमबद्ध, परिनिष्ठित साहित्यिक बन गयी।
३) वैदिक भाषा में संगीतात्मक स्वराघात की प्रधानता है।	३. संस्कृत में बलात्मक स्वराघात की प्रधानता है।
४) स्वरों में उदात्तादि गुण थे।	४. स्वरों में उदात्तादि गुण नहीं हैं।
५) छोटे समास, समास नियमों का कठोरता से पालन नहीं। केवल चार समास मिलते हैं।	५. बडे-बडे समास, समास नियमों का कठोरता से पालन। अनेक समासों (छह) का प्रयोग होता है।
६) संधि नियमों का पालन अनिवार्य न होने से ही अनेक अपवाद मिलते हैं।	६. संधि नियमों का पालन होने से अनिवार्य अपवाद नहीं मिलते।
७) शब्द रूपों में विविधता है। एक ही शब्द के एकाधिक रूप प्रचलित हैं	७. शब्द रूपों में एकरूपता है। विविधता और अपवाद कम हो गए हैं।
८) स्वरों का ह्रस्व-दीर्घ और प्लुत (त्रैमात्रिक) उच्चारण होता था।	८. केवल ह्रस्व-दीर्घ उच्चारण प्रचलित, प्लुत उच्चारण समाप्त हो गया।
९) 'ऌ' स्वर का प्रयोग प्रचुर मात्रा में होता था।	९. 'ऌ' स्वर का लोप हो गया।
१०) अनुस्वार शुद्ध नासिक्य था।	१०. अनुनासिक्य के दो रूप अनुस्वार तथा अनुनासिक बन गये।
११) आत्मनेपद और परस्मैपद का कोई विशेष नियम नहीं था।	११. नियमानुसार आत्मनेपद और परस्मैपद का प्रयोग होने लगा।
१२) उपसर्गों का प्रयोग स्वतंत्र रूप से हो सकता था।	१२. उपसर्गों का स्वतंत्र प्रयोग समाप्त हो गया।
१३) तद्भव तथा मूल शब्द से विकसित शब्द प्रयुक्त हैं	१३. अनेक विदेशी शब्दों को ग्रहण किया जाने लगा।
१४) वैदिक के तीन रूप प्रचलित पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती तथा पूर्वी।	१४. चार रूप प्रचलित-पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती, पूर्वी तथा दक्षिणी।
१५) वैदिक संस्कृत में ळ, ळ्ह ध्वनियाँ प्रचलित	१५. ळ्, ळ्ह ध्वनियाँ समाप्त हो गयी।

उपर्युक्त भिन्नता के अलावा दोनों में कुछ समानताएँ दिखाई देती हैं।

जैसे दोनों श्लिष्ट योगात्मक है। पद निर्माण की विधि प्राय: एक ही है। समास विधि दोनों में है। दोनों में तीन लिंग, तीन वचन, तीन पुरूष है। वाक्य रचना शब्दों से नही अपितु पदों से होती है। दोनों के वाक्य में पद-क्रम (शब्दों का स्थान) निश्चित नहीं है। दोनों में संधि, कारक, विभक्तियाँ हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत में कुछ समानताओं के साथ कुछ असमानताएँ भी हैं। वैदिक भाषा और लौकिक संस्कृत में अनेक स्वनों की संरचना में पर्याप्त समानता है। वस्तुत: वैदिक संस्कृत का उत्तरोत्तर विकास होने पर ही लौकिक संस्कृत का स्वरूप अत्यंत परिनिष्ठत हो गया। लौकिक संस्कृत में विपुल मात्रा में साहित्य रचना हुई है। रामायण, महाभारत, मेघदूत, रघुवंश, कुमारसंभव आदि इस भाषा की अमूल्य रचनाएँ हैं। आधुनिक भाषाओं के विकास में इस भाषा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के लिए संस्कृत स्रोत भाषा के रूप में कार्य कर रही है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क. एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

(१) डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार भारत में कितनी भाषाएँ बोली जाती हैं?

(२) भारतीय भाषाओं का उद्गम कौन से दो परिवार से माना गया है?

(३) प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं में किन दो भाषाओं का समावेश किया जाता है?

(४) वैदिक साहित्य में कौन-कौन से ग्रंथ आते हैं ?

(५) वैदिक स्वन कितने माने गये हैं।

(६) लौकिक संस्कृत साहित्य का सबसे प्राचीन ग्रंथ कौनसा है, इसके रचियता कौन है ?

1.3.2 मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ - (ई.पू.५०० से ईस्वी.१००० तक)

भारतीय आर्यभाषा के इतिहास में ई.पू.५०० से इ.स.१००० तक का काल जो लगभग डेढ़ हजार वर्ष का है - जिसे मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाकाल कहा जाता है। अपनी विकास यात्रा में लौकिक संस्कृत लोकभाषा के रूप में विकसित होती रही। यही परिवर्तित होकर प्राकृत के रूप में विकसित हुई। इसीकारण इस समूचे काल को 'प्राकृतकाल' भी कहते है। प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से हुई है। इस तथ्य को प्राकृत के वैयाकरण हेमचंद्र, मार्कंडेय आदि विद्वान स्वीकार करते हैं। वस्तुत: संस्कृत भाषा के समय ही साधारण जनता की बोलचाल की भाषा से विकसित होकर प्राकृत का निर्माण हुआ। इन १५०० वर्षों तक प्रचलित प्राकृत को तीन कालों में विभाजित किया जाता है जो इस प्रकार हैं -

(क) प्रथम प्राकृत - (ई.पू.५०० से ई.स.०१ तक) - पालि

(ख) द्वितीय प्राकृत - (ईस्वी.०१ से ई.स.५०० तक)- प्राकृत

(ग) तृतीय प्राकृत - (ईस्वी ५०० से ई.स.१००० तक)- अपभ्रंश

क. प्रथम प्राकृत - 'पालि' (ई.पू.५०० से ईस्वी १ तक)

प्रथम प्राकृतकाल में जिस भाषा का विकास हुआ उसमें पालि का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। इसे देशभाषा भी कहते हैं। यह बौद्ध धर्म की भाषा है। पालि शब्द का प्रयोग भाषा के अर्थ में न हो कर बुद्धवचन के अर्थ में होता था। पं.विधुशेखर भट्टाचार्य के मत से पालि शब्द संस्कृत के पंक्ति से बना है। बुद्धवचन की पंक्तियाँ। कुछ विद्वान 'पल्ली' शब्द से तो मेक्समूलर 'पाटली' शब्द से पालि की व्युत्पत्ति मानते हैं। अशोक के राजाश्रय के कारण इसका प्रचार हुआ। भगवान बुद्ध के उपदेशों के संग्रह त्रिपिटक तथा, उन पर लिखी गयी अट्ठकथा, दीपवंश आदि कृतिया पालि साहित्य के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं। पालि भाषा के प्रदेश के संबंध में विद्वानों में भी एकमत नहीं है। कई भाषाओं के बोलियों के तत्त्व घुल-मिल गये है। संस्कृत से हिन्दी के विकास की पहली सीढ़ी पालि है।

क. स्वनात्मक

1. पालि के प्रसिद्ध वैयाकरण कच्चायन के अनुसार पालि में ४१ स्वन हैं।

1.	स्वर -	अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ
2.	व्यंजन-कण्ठ्य -	क्, ख्, ग्, घ्, ङ्
	तालव्य -	च्, छ्, ज्, झ्, ञ्
	मूर्धन्य -	ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, ळ्, ळ्ह
	दन्त्य -	त्, थ्, द्, ध्, न्
	ओष्ट्य -	प्, फ्, ब्, भ्, म
	अन्तस्थ -	य्, र्, ल्, व्
	उष्म -	स्
	अलिजिव्हीय-	ह्

3. स्वरों में - ऋ, ऋ, लृ, ऐ, औ स्वन लुप्त हो गए।

4. व्यंजनों में- श्, ष्, विसर्ग (:), जिह्वामूलीय, उपध्मानीय लुप्त हो गए।

5. दो नए स्वर आ गए - ह्रस्व ए तथा ओ

6. वैदिक संस्कृत के दो व्यंजन - ळ्, ळ्ह मिलते हैं।

7. ऐ,औ के बदले ए,ओ मिलता है। अलग रूपमें - ऐ एँ, औ ओ

8. श, ष स के स्थान पर केवल 'स' का प्रयोग है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

9. सभी शब्द सस्वर बन गए, ण ध्वनि का प्रयोग पदों के प्रारंभ में होने लगा।

10. महाप्राणीकरण और समीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है। बील खील, सर्व सब्ब

11. पालि में अनुस्वार स्वतंत्र ध्वनि हो गई। म् के बदले पूर्ववर्ती व्यंजन ध्वनि के ऊपर बिंदु का प्रयोग मिलता है। इसलिए पालि में हलन्त व्यंजन नहीं होते।

ख. रूपात्मक विशेषता :

1. संधियाँ केवल तीन रह गई। एकवचन तथा बहुवचन ये दो ही वचन मिलते हैं। द्विवचन के रूप बहुवचन में समाहित हो गए है।

2. पुल्लिंग - स्त्रीलिंग नपुसकलिंग विद्यमान थे।

3. आत्मनेपद का प्रयोग प्राय: लुप्त हो गया और परस्मैपद शेष रह गया।

4. इसमें तत्सम शब्द कम है, तद्भव शब्द अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं। अनेक विदेशी शब्दों का प्रयोग भी होने लगा।

5. पालि भाषा में वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत तथा जन भाषा के विभिन्न तत्त्व पाये जाते हैं। इसके अनेक रूप रहे हैं। पालि भाषा लगातार परिवर्तनशील रही है।

ख. द्वितीय प्राकृत (ई.स.०१ से ई.स.५०० तक) प्राकृत काल

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के द्वितीय काल में बोली जानेवाली भाषा को प्राकृत कहा जाता है। यह जनसाधारण द्वारा प्रयुक्त बातचीत का सहज रूप है जो प्राकृत नाम से प्रसिद्ध हुआ। प्राकृत भाषा की सामग्री संस्कृत नाटकों और जैन साहित्य में उपलब्ध होती है। प्राकृत के प्रथम वैयाकरणी वररूचि हैं। उनसे लेकर हेमचंद्र तक की परम्परा में जिस प्राकृत का विवेचन-विश्लेषण किया गया है यही परिनिष्ठित, साहित्यिक प्राकृत है। गाथा सप्तशती, सेतुबंध, गौडवहो जैसे प्रबन्ध काव्य प्राकृत के प्रमुख ग्रंथ हैं। प्राकृत के अनेक भेद विद्वानों ने बताएँ हैं- साहित्य की दृष्टि से महाराष्ट्री शौरसेनी, मागधी, अर्द्धमागधी, पैशाची ये पाँच भेद समृद्ध हैं। इनमें से हम शौरसेनी, मागधी, और अर्धमागधी इन भेदों का परिचय लेंगे।

क. शौरसेनी प्राकृत

मथुरा अथवा शूरसेन क्षेत्र के आसपास बोली जाने के कारण इस शौरसेनी प्राकृत कहा जाता है। मध्यदेश की भाषा होने के कारण यह महत्त्वपूर्ण रही है। उस काल में इसे परिनिष्ठित भाषा माना जाता था। मध्यदेश में संस्कृत का अत्याधिक महत्त्व था। इसीलिए इस पर संस्कृत का प्रभाव अधिक रहा है। संस्कृत के गद्य नाटकों की भाषा यही थी। जैन धर्म के दिगंबर सम्प्रदाय के धर्मग्रंथों की यही भाषा थी। इसलिए इसे जैन शौरसेनी अथवा दिगंबर शौरसेनी भी कहा गया है।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

1. दो स्वरों के बीच आनेवाला संस्कृत 'त' द हो जाता है। तथा थ ध बन जाता है। आगत: आवदो, भवति होदि आदि।
2. दो स्वरों की मध्यवर्ती द्,ध्, ध्वनियाँ अपरिवर्तित ही रहती है। जलद्: जलदो, क्रोध: क्रोधो आदि।
3. क्ष के स्थान पर क्ख मिलता है - इक्षु इक्खु, चक्षु चक्खु।
4. महाप्राण ख, घ, थ, ध, फ, भ का ह हो जाता है। मुखमुह, मेघे मेह, वधू बहू, अभिनव अहिनव
5. ऋ का विकास ई के रूप में होता है। गृध्र गिद्ध
6. न का ण हो जाता है - भगिनी बहिणी
7. मध्यगत प का व हो जाता है - दीप दीव
8. उष्म ध्वनियों में श, ष, स में से केवल स का प्रयोग लेता है।

ख. रूपात्मक

रूपों की दृष्टि से विचार किया जाए तो यह संस्कृत से अधिक प्रभावित दिखाई देती है।

1. आत्मनेपद का लोप्, केवल परस्मैपद का ही प्रयोग मिलता है।

आवन्तिका, आभीरिका और दाक्षिणात्य इसके भेद माने जाते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

II. अर्धमागधी प्राकृत -

इस प्राकृत का क्षेत्र कोशल प्रदेश था । जो मागधी और शौरसेनी के बीच में आता है । इसमें मागधी की प्रवृत्तियाँ अधिक मात्रा में मिलती हैं इसलिए इसे अर्धमागधी कहते हैं । जैनाचार्यों ने इसे आर्ष, आर्षी, आदिभाषा भी कहा है । अर्धमागधी का प्रयोग मुख्यरूप से जैनसाहित्य में हुआ है इसलिए इसे जैन प्राकृत भी कहा जाता है । भगवान महावीर के सारे धर्मोपदेश इसी भाषा में हैं । मुद्राराक्षस और प्रबोध चंद्रोदय नामक नाटकों में अर्धमागधी के प्रयोग मिलते हैं। विद्वानों के अनुसार अशोक के अभिलेखों की मूलभाषा यही थी । आचार्य विश्वनाथ के मत से चेट, सेठो, और राजपुत्रों की भाषा है ।

अर्धमागधी की विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

क. स्वनात्मक

1. ष, श के स्थान पर स का प्रयोग - शावक सावग, वर्ष वास
2. दन्त्य ध्वनियाँ मूर्धन्य हो गई - स्थित ठिय, कृत्वा कट्ट ।
3. क का ग होने की प्रवृत्ति पाई जाती है एक एग, शुक सुग ।
4. र और ल दोनों स्वन मिलते हैं ।
5. स्वरों के बीच में य श्रुति मिलती है - सागर सायर
6. च वर्ग के स्थान पर कहीं कहीं त वर्ग मिलता है - चिकित्सा ते इच्छ

गद्य और पद्य की भाषा में अंतर मिलता है । अर्धमागधी से अवधि, भोजपुरी, मैथिली आदि पूर्वी हिन्दी की बोलियों का जन्म हुआ है ।

III. मागधी प्राकृत -

मगध की भाषा मागधी कहलाती है । मध्यकालीन संस्कृत नाटकों में निम्न श्रेणी के पात्र मागधी का प्रयोग करते थे । यह अपने प्राचीनतम रूप में अश्वघोष की रचनाओं में पायी जाती है । इसे 'गौंडी' भी कहते हैं । वररूचि के अनुसार मागधी का विकास शौरसेनी से हुआ है । इसमें बहुत कम साहित्य लिखा गया है । मागधी के तीन भेद मिलते हैं - शाकारी, चाण्डाली और शाबरी । मागधी से ही भोजपुरी, मैथिली, उड़िया, असमी पूर्वी भारत की भाषाओं का विकास हुआ हैं ।

क. विशेषताएँ -

स्वनात्मक

1. र ध्वनि नहीं पाई जाती । र के स्थान पर ल का प्रयोग किया जाता है । राजा लाजा । हरिद्रा हलिद्दा
2. इसमें स, ष के स्थान पर श मिलता है - पुरूष पुलिश, समर शमल, सप्त शत्त
3. ज के स्थान पर य हो जाता है - जानति यान्तादि, जनपद यणपद
4. झ के स्थान पर य्ह हो जाता है - झटिति य्हति
5. स्य और र्थ के स्थान पर स्त मिलता है - उपस्थित उपस्तिद, अर्थवती अस्तवदीन
6. प्रथमा एकवचन में संस्कृत अ के स्थान पर ए होता है - देव: देवे
7. द्य, र्य के य्य हो जाते है - अद्यअय्य, कार्य कय्य
8. क्ष का श्क हो जाता है - पक्ष पश्क

शौरसेनी प्राकृत से पश्चिमी हिन्दी तथा राजस्थानी हिन्दी का विकास हुआ है । अर्द्धमागधी से पूर्वी हिन्दी का विकास हुआ तो मागधी से बिहारी हिन्दी विकसित हुई है । इसलिए उपरोक्त तीन 'प्राकृतों' का स्वनात्मक तथा पदात्मक विशेषताओं के साथ विस्तृत परिचय आपको दिया गया है ।

महाराष्ट्री प्राकृत साहित्यिक दृष्टि से सर्वाधिक समृद्ध है । महाराष्ट्री प्राकृत का सम्बन्ध महाराष्ट्र प्रदेश से है । हार्नले के मत से महाराष्ट्री एक जनबोली मात्र न होकर संपूर्ण उत्तरी भारत की भाषा थी । कालिदास, हर्ष के नाटकों में तथा गीतों में महाराष्ट्री प्राकृत के उदाहरण मिलते हैं । जैनधर्म के श्वेतांबर संप्रदाय का साहित्य, गाथा सतसई महाराष्ट्री मे हैं।

महाराष्ट्री में महाप्राण स्वनों का 'ह' हो जाता है । वध वहो, गाथा गाहा । महाराष्ट्री में केवल 'स' ऊष्म दंत्य स्वन मिलता है । वर्तमान मराठी महाराष्ट्री से विकसित है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

पैशाची प्राकृत

पैशाची प्राकृत का संबंध 'पिशाच प्रदेश' (भारत की वायव्य दिशा) में स्थित में निवास करने वाली लोगों की भाषा से है । पंजाबी, सिंधी, कश्मीरी भाषा का जन्म पैशाची से हुआ है । गुणाद्य की 'बृहत्कथा' पैशाची की रचना है । संघोष व्यंजन अघोष में परिवर्तित होते हैं । सगन गकन, नगर नका आदि । 'श' और 'स' दोनों अन्य व्यंजन मिलते हैं। ल र का विपयर्य होता है ।

प्राकृतों की संख्या निश्चित करना कठिन है । जितनी लोकभाषाएँ भारत में प्रचलित होगी उतनी ही प्राकृत मानी जानी चाहिए । परंतु इनके संबंध में साहित्य तथा अन्य सामग्री उपलब्ध नहीं होती । संस्कृत नाटक तथा जैन साहित्य में उपलब्ध सामग्री के आधार पर पाँच भेद विद्वानों द्वारा मान्य हुए हैं ।

तृतीय प्राकृत (ई.स.५०० से ई.स.१००० तक) अपभ्रंश

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के इस तीसरे चरण को अपभ्रंशकाल कहा गया । आधुनिक भाषाओं का विकास अपभ्रंशों से हुआ है, इस दृष्टि से इनका अनन्यसाधारण महत्व है । जनभाषाओं से विकसित इस नयी भाषा को अपभ्रंश या देसी भाषा कहा जाने लगा । कारण वैयाकरणी केवल व्याकरणसम्मत रूप को ही सम्मान देते थे उन्होंने अपभ्रष्ट अथवा अपभ्रंश या बिगडी हुई अशुद्ध भाषा जैसा नाम दिया । इसी के प्राकृत रूप अविहंस, अवहत्थ, अवहट्ट, अब्बभंस आदि है । कुछ विद्वान पूर्वरूप को अपभ्रंश बाद के रूप को अवहट्ट कहते हैं ।

अपभ्रंश शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग पतंजली के महाभाष्य में मिलता है । अशुद्ध या भ्रष्ट शब्दों के लिए भरत, दण्डी, एवं भर्तृहरि जैसे विद्वान अपभ्रंश का प्रयोग करते हैं । भाषा के अर्थ में 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग चण्ड कवि ने 'प्राकृत लक्षणम्' में किया है । कालिदास के विक्रमोर्शीय नाटक के चौथे अंक में अपभ्रंश भाषा के साहित्य का सर्वप्रथम प्रयोग मिलता है । छठी - सातवी शती तक यह साहित्य भाषा व्यवहृत होती रही ।

अपभ्रंश का क्षेत्र पश्चिमोत्तर भारत माना गया है । कुछ विद्वानों ने अहीरों और गुर्जरों के प्रदेश को इसका क्षेत्र माना है। व्यापक अर्थ में यह हिन्दी प्रदेश में मध्यदेश की भाषा थी । इसका क्षेत्र व्यापक होने के कारण विविधता निर्माण हुई और बोलियों का विकास हुआ ।

जैन धर्म के अनेक प्रसिद्ध ग्रंथ इसी भाषा में मिलते हैं। स्वयंभू का पउमचरिउ , धनपाल का भविस्सयत्तकहा, पुष्पदंत का जसहरचरिउ, रामसिंह का पाहुडदोहा, करकंडचरिउ, जम्बूस्वामीससा, दोहाकोश, हरिवंशपुराण आदि चर्चित रचनाएँ रही है। अपभ्रंश में उन सभी प्रवृत्तियों के अंकुर मिल जाते हैं जो विशेषता आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में विकसित हुए।

क. स्वनात्मक -

1. अपभ्रंश में ३१ व्यंजन ध्वनियाँ हैं ।
2. प्राकृत की ध्वनियाँ अपभ्रंश में सुरक्षित है ।
3. द्वित्व व्यंजनों में एक का लोप और पूर्ववर्ती अक्षर में दीर्घीकरण हो जाता है जैसे तस्य तासु, धर्म धम्म, चक्र चक्क
4. शब्द के अंतिम स्वर के ह्रस्व होने की प्रवृत्ति अधिक, कभी कभी अंत्यस्वर का लोप -वरयात्रा वरआत् प्रिया पिअ,
5. अपभ्रंश उकार बहुला भाषा है । जैसे एक्कु, अंगु, जगु
6. शब्द का आदि व्यंजन य अपभ्रंश में ज में परिवर्तित हो जाता है । जैसे- यौवन जोबन, यमल जमल
7. मध्य व्यंजनों का अपभ्रंश में प्राय: लोप हो जाता है और महाप्राण व्यंजनों के स्थान पर शेष रह जाता है । योगिन जोई, कथा कहा, शोभा सोह, दीर्घ दीह
8. अपभ्रंश के ध्वनिपरिवर्तन के अंतर्गत लोप, आगम, विपर्यस्त, घोषीकरण, समीकरण इत्यादि की प्रवृत्ति ध्वनिविकार के सामान्य नियमों के आधार पर ही है ।

आदिव्यंजनलोप - शमशान मसाण, मध्यव्यंजन लोप - कोकिल कोईल, अंत्य व्यंजन लोप मौक्तिक मोती, घोषीकरण - काक काग

ख. रूपात्मक विशेषता -

1. क्रिया के काल रूपों की विविधता कम हो गई ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2. अपभ्रंश की प्रवृत्ति अयोगात्मकता की ओर है ।
3. पुरूषवाचक सर्वनामों के रूपों में कमी आ गयी ।
4. केवल दो लिंग पुल्लिंग और स्त्रीलिंग बचे रहे और नपुंसकलिंग लुप्त हो गया है । द्विवचन लुप्त हो गया तथा दो वचन रहे, संयुक्त ऐ औ अपभ्रंश में अई, अउ हो गयी ।
5. परिनिष्ठित अपभ्रंश में विदेशी शब्द प्राय: नहीं मिलते जबकि परवर्ती काल में अवहट्ट की रचनाओं में ये मिलने लगते है ।
6. कारकों के रूप केवल ६ ही रह गये हैं ।

अपभ्रंश भाषा की कई विशेषता है जो द्वितीय प्राकृत और आधुनिक आर्य भाषाओं से कुछ बातों में समन्वय रखती है । परन्तु संस्कृत भाषा से उसका संबंध समाप्त-सा हो गया ।

ख. स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित कथनों को सही या गलत बताइए ।

(१) प्राकृतों की संख्या तीन है ।
(२) सुप्रसिद्ध वैयाकरण कात्यायन के अनुसार पालि में बयालीस ध्वनियाँ हैं ।
(३) शौरसेनी प्राकृत का क्षेत्र मथुरा के आसपास का क्षेत्र है ।
(४) भगवान महावीर के धर्मोपदेश अर्धमागधी में मिलते हैं ।
(५) मागधी प्राकृत में श,ष,स तीनों उष्म व्यंजन मिलते हैं ।
(६) अपभ्रंशकाल ई.स.५०० से १००० तक का माना गया है ।

१.३.३ आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ - (ई.स.१००० से आज तक)-

ई.स.१००० के आसपास अपभ्रंश के विभिन्न रूपों का विकास हुआ, जिसमें आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ विकसीत हुई । आधुनिक भारतीय भाषाओं में साहित्य रचना ई.स.११०० के बाद ही मिलती है किंतु उनका जन्म १००० ई.स.के आसपास हो चुका था । कारण कोई भी भाषा साहित्यिक बनने से पहले जनसाधारण की भाषा के रूप में १००-१५० वर्ष प्रचलित होती है । उसका स्वरूप निश्चित, स्थिर होने पर ही साहित्य लिखा जाता है ।

विद्वानों का मानना है कि छठी से ग्यारहवी सदी के मध्य प्रचलित प्रत्येक प्राकृत का एक-एक अपभ्रंश रूप रहा होगा । कुल मिलकर अपभ्रंश के सात भेद किये जाते हैं इनसे जो उपभाषाएँ निकली वे इस प्रकार हैं, जैसे

अपभ्रंशरूप	विकसित भाषाएँ
शौरसेनी	गुजराती, राजस्थानी, हिन्दी पश्चिमी हिन्दी ।
पैशाची	लहँदा, पंजाबी ।
खस	पहाड़ी उपभाषाएँ
ब्राचड	सिंधी
महाराष्ट्री	मराठी
अद्र्धमागधी	पूर्वी हिन्दी (अवधी)
मागधी	बांगला, असमिया, उड़ीया, बिहारी, हिन्दी

अवहट्ट के उत्तरार्द्ध में आधुनिक आर्यभाषाओं की प्रवृत्तियाँ प्रमुख हो गयी तथा धीरे-धीरे आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ । किस अपभ्रंश से किन भारतीय आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ है, इसका वर्गीकरण विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग प्रकार से किया है । डॉ. भोलानाथ तिवारी ने शौरसेनी, मागधी, अर्द्धमागधी, महाराष्ट्री, ब्राचड और पैशाची के रूप में वर्गीकरण करके इनसे ही आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की उत्पत्ति मानी है । इन भाषाओं का वर्गीकरण करने वालों में प्रमुख है - ए रूडोल्फ हार्नले, बेबर, ग्रियर्सन, सुनीतिकुमार चॅटर्जी, डॉ.धीरेन्द्र वर्मा, डॉ.भोलानाथ तिवारी, डॉ.हरदेव बाहरी आदि ।

ग्रियर्सन की मान्यता रही है कि मध्य एशिया से आर्यों का पहला दल पंजाब में बस चुका था । बाद में आर्यों के दूसरे दल ने भी उसी स्थान पर प्रवेश किया, इसलिए पहले आए हुए आर्यों को उत्तर, पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण की ओर फैलने के लिए

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बाध्य होना पड़ा अर्थात् ये आर्य मध्यदेश के चारो ओर फैल गए। इसलिए ग्रियर्सन ने उन्हें बाहरी, तथा बाद में आए हुए आर्यों को भीतरी कहा। इन दोनों की भाषा को बाहरी उपशाखा (बहिरंग) तथा भीतरी उपशाखा (अंतरंग) और इनकी मध्यवर्ती भाषा को केंद्रिय (मध्यवर्ती) उपशाखा नाम से संबोधित किया। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को इन तीन उपशाखाओं मे विभक्त करते हुए ध्वनितत्त्व और रूपतत्त्व तथा क्रिया रूप के आधार पर छह भाषा समुदाय माने हैं जो इस प्रकार हैं-

(क) बाहरी उपशाखा -१) पश्चिमोत्तर समुदाय- (१) लहँदा (२) सिंधी
२) दक्षिणी समुदाय- (३) मराठी
३) पूर्वी समुदाय-(४) उड़िया (५) बंगाली (६) असमी (७) बिहारी, हिन्दी

(ख) केंद्रीय उपशाखा- ४) मध्यवर्ती समुदाय (८) पूर्वी हिन्दी
(ग) भीतरी उपशाखा- ५) भीतरी समुदाय (९) पश्चिमी हिन्दी (१०) पंजाबी
(११) गुजराती (१२) भीली / खानदेशी
(१३) राजस्थानी
६) पहाड़ी समुदाय (१४) पूर्वी पहाड़ी (नेपाली)
(१५) मध्यपहाड़ी
(१६) पश्चिमी पहाड़ी

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का परिचय

हम इनमें से सिंधी, मराठी, उड़िया, बंगाली, असमी, पंजाबी, गुजराती और हिन्दी का परिचय लेंगे।

सिंधी :- ब्राचड़ अपभ्रंश से उत्पन्न सिंध प्रदेश की भाषा सिंधी कहलाती है। सिंधी शब्द का संबंध संस्कृत सिंधु नदी से है। सिंधु नदी के आसपास का क्षेत्र सिंध प्रदेश कहलाया और वहाँ की भाषा सिंधी कहलायी। सिंधी बोलनेवाले अधिकांश पाकिस्तान के सिंध प्रांत में हैं जो मुख्यत: मुसलमान है। सिंधी के शब्दभंडार में अरबी, फारसी, तुर्की शब्दों की अधिकता है। सिंधी की पाँच बोलियाँ हैं - बिचौली, सिराईकी, लारी, थरेली, और कच्छी। सिंधी की अपनी लिपि लंडा है परंतु यह कभी फारसी, कभी गुरूमुखी तो कभी नागरी लिपि में भी लिखी जाती है।

'शाहनो रिशालो' सिंधी साहित्य का प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसके प्रसिद्ध कवि अब्दुल करीम, शाहलतीफ, सचल, सामी आदि है।

विशेषता -

क. स्वनात्मक विशेषता -

1. सिंधी भाषा की अंतस्फोटक ध्वनियाँ-'ग्, द्, ज्,ब् आदि प्रमुख विशेषता है। जिन्हें कण्ठपीटक बंद करके उच्चारित किया जाता है।
2. द के स्थान पर ड का, तथा स का ह हो जाता है। जैसे दक्ष दस दह।
3. पदांत अ का उच्चारण स्पष्ट रूप से किया जाता है।

ख. रूपात्मक

1. सिंधी भाषा में पुल्लिंग और स्त्री लिंग - दो लिंग हैं।
2. एक वचन और बहुवचन ये दो वचन सिंधी में मिलते हैं।
3. प्रसर्गों में को खे, से स. मे म. पर ते।

मराठी -

महाराष्ट्री अपभ्रंश से विकसित मराठी भाषा है। जो महाराष्ट्र राज्य की भाषा है और इसकी लिपि देवनागरी है। नित्य के व्यवहार में कहीं -कहीं मोडी लिपि का प्रयोग भी होता रहा था। मराठी की उत्पत्ति ई. स.१००० से मानी जाती है। इसकी ३ बोलियाँ है- खानदेशी, कोंकणी, वऱ्हाडी। मराठी का साहित्य १२ वी शती से प्राप्त होता है। मुकुन्दराय कृत 'विवेकसिंधु' मराठी की पहली रचना है। ज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, रामदास आदि संतों की रचनाएँ हैं। रीतिकालिन कवि मोरोपंत

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

है। मराठी का आधुनिक साहित्य समृद्ध है।

पुणे के आसपास की भाषा परिनिष्ठित मराठी मानी जाती है। इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है।

विशेषता -

क. स्वनात्मक

1. मराठी में 'च' वर्ग ध्वनियाँ दो प्रकार की है - सामान्य - च तथा (त्स जैसी- यह बलात्मक स्वराघातवाली)
2. इसमें वैदिक 'ळ' ध्वनि का प्रयोग होता है।
3. मराठी में क्लीक ध्वनियाँ भी मिलती हैं।
4. 'ऌ' भी विद्यमान है। ऋ, ज्ञ का उच्चारण, रू, ग्ज्य होता है।

ख. रूपात्मक-

1. दो वचन, तीन लिंग, पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुसकलिंग (तो, ती, ते) है। लिंग प्रक्रिया जटिल है।
2. आकारांत संज्ञाए पुल्लिंग, इकारांत स्त्रीलिंग और एकारांत नपुसकलिंग होती है।

उड़िया -

मागधी अपभ्रंश से विकसित भाषाओं में वर्तमान उड़ीसा प्रांत की उडिया भाषा है। जो बांगला से मिलती- जुलती है। उड़ीसा को प्राचीन काल में उत्कल भी कहा जाता था, इसलिए यहाँ की भाषा को उत्कली भी कहा जाता है। इसकी मुख्य बोलियाँ है - गंजामी, संभलपुरी, आदि। उड़ीसा पर बहुत दिनों तक तैलंगो तथा मराठों का अधिकार था, इसलिए सामान्य भाषा में तेलगु और मराठी शब्दों का प्रयोग दिखायी देता है। उड़िया की लिपि ब्राह्मी से विकसित है। उड़िया लिपी है जिस पर तेलगु लिपि का प्रभाव है।

क. स्वरात्मक :-

1. अ का ओ जैसा उच्चारण होता है।
2. ळ्, ड्, ढ ध्वनियाँ विद्यमान है।
3. ऋ का उच्चारण रू, जैसा होता है, य का ज, ज का य होता है।
4. ण्, ल्, क्, ट्, प् उच्चारण महाप्राणवत्।

ख. रूपात्मक-

1. बहुवचन बनाने के लिए मन, लोक, गण जोड़े जाते हैं।
2. उड़िया संयोगात्मक भाषा है।
3. दो वचन, दो लिंग हैं। लिंग प्रयोग स्वाभाविक और सरल है।
4. इसमें सभी वर्ण वर्तुलाकार उच्चारित होते हैं।

उड़िया साहित्य संपन्न भाषा है। लुईपा, सरलादास, बलरामदास, उपेन्द्रभंज प्रसिद्ध कवि है।

बंगला -

संस्कृत शब्द बंग+आल से बंगाल बना है और वहाँ की भाषा बांगला कहलाती है। अब बंगाली पश्चिम बंगाल में तथा बांगला देश में बोली जाती है। इसकी व्युत्पत्ति मागधी अपभ्रंश से हुई है। कोलकाता की बांगला ही मानक मानी जाती है। आज बंगला, बांगला देश की राष्ट्रभाषा है।

इसकी अपनी स्वतंत्र लिपि है। जिसका विकास नागरी या कुटिल लिपि से माना जाता है।

विशेषता

क. स्वनात्मक -

इसमें संस्कृत, तत्सम शब्दों की प्रधानता है।

1. 'अ' का उच्चारण 'ओ' जैसा होता है। भजन भोजन, महाशय मोशाय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2. य, ज में परिवर्तित जैसे यतीन जतीन
3. यह ओकार बहुला भाषा है। ऐ, औ का उच्चारण ओइ और आए की भाँति।
4. स्, ष् के स्थान पर श बोला जाता है जैसे पास पाश, सुनो शुनो।
5. व का उच्चारण ब जैसा। पदांत स्वर का उच्चारण स्पष्ट किया जाता है।

ख. रूपात्मक-
1. दो वचन, दो लिंग है। विशेषण लिंग के अनुसार नहीं बदलते ।
2. स्त्रीलिंग बनाते समय आ, औ, ई प्रत्ययों का प्रयोग होता है।
3. 'पीना' क्रिया बांगला में नहीं है।
4. लिंग का सर्वनाम, विशेषण, क्रिया पर प्रभाव नहीं पडता - अमार देश, अमार घोडी

बांगला साहित्य पर संस्कृत और अंग्रेजी साहित्य का प्रभाव है। चण्डीदास, बंकीमचंद्र, शरतचंद्र, ताराशंकर, बंदोपाध्याय, विमल मित्र, रवींद्रनाथ इसके उल्लेखनीय साहित्यकार है।

असमी -

यह असम प्रांत की भाषा है। जो असमियां नाम से जानी जाती है। इसकी व्युत्पत्ति मागधी से हुई है। असमियां भाषा पर तिब्बती, बर्मी, ऑस्ट्रिक तथा बंगला भाषा का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इन भाषाओं के शब्दसमूह तथा वाक्यगठन का प्रभाव असमियां पर दिखायी देता है।

असम या कामरूप की भाषा का उल्लेख ७ वी शती में मिलता है। इसकी लिपि असमियां है जो बंगाली के समान है। मुख्य बोली विश्नुपुरिया है। असमियां का प्राचीनतम काव्य 'प्रल्हादचरित्र' तेरहवी शती के आरंभ में रचा गया। जिसके कवि हेम सरस्वती है। अन्य साहित्यकारों में हैं - शंकरदेव, माधवदेव, पीतांबर, बलदेव आदि। आधुनिक कवियों में चंदकुमार अगरवाला, लक्ष्मीकांत बरूआ,रघुनाथ चौधरी आदि प्रमुख नाम हैं।

असमियां की लिपि असमियां है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक -
1. च, छ, का स होता है। छाता साता, चलो सलो
2. कहीं कहीं स के स्थान पर ह या ख का प्रयोग होता है।
3. य, व, ण, का, ज, ब, न होता है।
4. ट, ड का उच्चारण त, द की तरह होता है।
5. ड के स्थान पर र तथा ज का ज़ उच्चारण होता है।

ख. रूपात्मक-
1. असमियां में लिंग व्यवस्था बेहद सरल है। क्रिया में एक वचन-बहुवचन नहीं।
2. लिंग और वचन के अनुसार क्रिया परिवर्तित नकारात्मक क्रिया का रूप नि या न पहले जोड देने से बन जाता है।

पंजाबी -

पैशाची अपभ्रंश से विकसित और शौरसेनी से प्रभावित पंजाबी पूर्वी पंजाब की भाषा है। पंजाबी सिक्खों की भाषा होने के कारण सिक्खी, खालसी, या गुरूमुखी भी कही जाती है। मुख्य रूप से पंजाब के किसानों की भाषा पंजाबी है।

पंजाबी के दो रूप मिलते हैं - लहँदा और पंजाबी। लहँदा का अर्थ है - सूर्यास्त की दिशा अर्थात पश्चिमी पंजाबी जो आजकल पाकिस्तान में है। इस पर सिंधी का प्रभाव दिखाई देता है।

अमृतसर की पंजाबी परिनिष्ठित मानी जाती है। जिसे 'माझी' भी कहा जाता है, दूसरा रूप डोगरी का है। इसकी अन्य बोलियाँ है - जालंधरी, दोआबी, पोवाधी, राठी, मालवाई, भाट्टियानी।

पंजाबी की पुरानी लिपि लंडा थी जिसे देवनागरी की सहायता से सुधार कर गुरूमुखी लिपि बनाई गई है। डोगरी की लिपि टाकरी है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक -

1. ह का उच्चारण विसर्गवत् होता है।
2. स्वर भक्ति पंजाबी की विशेषता - प्रसाद परसाद, राजेंद्र रजिंदर।
3. अपभ्रंश की द्वित्त प्रवृत्ति विद्यमान - पुत्तर, अक्ख।
4. मध्यस्थ, उ, इ, का अ करने की प्रवृत्ति साबुत साबत, माथुरमाथर।
5. द्वित्वीकरण की प्रवृत्ति पंजाबी में पाई जाती है। जैसे गड्डी, अट्ठ, सत्त।
6. पदादि स्वर के साथ ह आ जाता है- एक हिक।
7. व श्रुति का आगमन हुआ हुआ हुवा, ओला वोला।

ख. रूपात्मक-

1. पंजाबी में दो वचन, दो लिंग मिलते हैं।

2. विशेषण और क्रिया पर वचन का प्रभाव पडता है - अच्छी लडकियाँ आच्छियाँ कुडियाँ

पंजाबी के आदि कवि बाबा फरीद शकरगंज है। पुराने साहित्य में सिख गुरूओं की रचनाएँ प्रधान है। मोहनसिंह, राजेंद्रसिंह बेदी, कर्तारसिंह दुग्गल, अमृता प्रीतम, डॉ. गोपालसिंह आदि ने पंजाबी साहित्य को समृद्ध किया है।

गुजराती -

गुजरात प्रदेश की भाषा गुजराती है। गुजरात का प्राचीन नाम लाट था, इसलिए गुजराती को लाटी भी कहते हैं। संस्कृत में लाटी शैली प्रसिद्ध है। गुजराती का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। यह पश्चिमी हिन्दी और राजस्थानी से बहुत मिलती है। भाषा के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग १७ वी शती से मिलता है।

गुजराती की मुख्य बोलियाँ हैं - काठियावाडी, पट्टनी, सुरती, भडौची आदि।

गुजराती की अपनी गुजराती लिपि है जो देवनागरी का ही भिन्न रूप है इसमें शिरोरेखा नहीं लगाई जाती।

कच्छी जो सिन्धी की बोली है, इसी प्रदेश में आती है।

विशेषताएँ

स्वनात्मक :-

1. क, ख, ग के स्थान पर च, छ, ज का प्रयोग - लाग्यो लाज्यो

2. च, छ के स्थान पर स तथा स का ह में परिवर्तन हो जाता है। पाँच पाँस, सूरज हूरज। है का छे होता है। तमारो नाम सूँ छे ?

ख. रूपात्मक विशेषताएँ

1. गुजराती में दो वचन, तीन लिंग है।
2. बहुवचन में आ और ओ लगाया जाता है।
3. संबंध में नो, ना, नी परसर्ग का प्रयोग होता है।
4. वर्तमानकाल में क्रिया छा, छे, छी है।
5. भूतकाल में हतो तथा भविष्यकाल में श परक होता है।

इसका साहित्य १२ वी शती से मिलता है। विनयचंद्र सूरि, राजशेखर सूरि, नरसी मेहता, मीराँबाई, कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, उमाशंकर जोशी इसके प्रमुख साहित्यकार हैं। साहित्य की दृष्टि से यह संपन्न भाषा है।

हिन्दी -

हिन्दी शब्द से हम जिस भाषा का अर्थग्रहण करते हैं वह भारत के अधिकांश भाग में प्रयुक्त होती है। हिन्दी भाषा हिन्द देश की है। सिंधु नदी के आस-पास का क्षेत्र 'सिंध' प्रदेश है। फारसी में 'स' ध्वनि नहीं है इसलिए 'स' का ह हो गया और सिन्ध प्रदेश हिन्द और जबान, 'हिन्दी' कहलाई। फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद आज की हिन्दी के अर्थ में यह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

भाषा जानी गई। मलिक मुहम्मद जायसी ने 'पद्मावत' में लिखा है-तुर्की अरबी हिन्दवी भासा जेती आहि। जाने मारग प्रेम का सबै सराहै ताहि ॥

हिन्दी के छह रूप मिलते हैं - 1. पश्चिमी हिन्दी 2. पूर्वी हिन्दी 3. बिहारी हिन्दी 4. राजस्थानी हिन्दी 5. दक्खिनी 6. पहाडी हिन्दी।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने वर्तमान हिन्दी को परिनिष्ठित रूप प्रदान किया। स्वतंत्रता आंदोलन में 'हिन्दी' राष्ट्रीयता की पहचान बन गई। राष्ट्र भाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा, विश्वभाषा ऐसे हिन्दी के रूप हमें मिलते हैं।

विशेषताएँ-

स्वनात्मक

1. संस्कृत के ऋ, ऌ, को छोड़कर सभी स्वर-व्यंजन स्वन हिन्दी में है।
2. वैदिक ध्वनि 'ळ' हिन्दी में नहीं मिलती।
3. श, ष, स तीनों ऊष्म स्वन हिन्दी में है। ष का उच्चारण 'श' की तरह है।
4. नुक्ता तथा 'ऑ', ऍ ऐसे विदेशी स्वन हिन्दी ने अपना लिए है।

पदात्मक -

1. संस्कृत के उपसर्ग, प्रत्ययों के अलावा अरबी-फारशी और अंग्रेजी के भी हिन्दी शब्द निर्माण में सहायता देते हैं।
2. पुल्लिंग और स्त्रीलिंग ऐसे दो लिंग हैं।
3. एकवचन-बहुवचन-दो वचन हैं ।
4. विशेषण और क्रिया विशेष्य - कर्ता के लिंग वचन के अनुसार बदलते है- जैसे

   काला लड़का, काले लड़के, काली लड़की।

   लड़का जाता है।

   लड़की जाती है।
5. हिन्दी वियोगात्मक और सरल भाषा है।

   हिन्दी का विस्तृत परिचय आपको अगली इकाई में प्राप्त होगा।

ग. स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए।

(१) ग्रियर्सन ने केंद्रिय उपशाखा में हिन्दी के कौनसे रूप को रखा है ?
(२) मराठी की दो स्वनात्मक विशेषताएँ बताइए।
(३) असमिया पर कौनसी भाषाओं का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।
(४) गुजराती लिपि की कौनसी विशेषता है ?
(५) पंजाबी की पुरानी लिपि कौनसी थी ?

आर्येतर भाषाएँ :- आर्यभाषाओं के अतिरिक्त अन्य भाषाएँ भी यहाँ प्रचलित हैं -इन्हें आर्येतर भाषाएँ या अनार्य भाषाएँ भी कहा जाता है। जिसमें मुख्यत: द्रविड परिवार की भाषाएँ आती है। आर्य लोगों की भाषाएँ भारोपीय परिवार के अंतर्गत आती है। अब आर्येत्तर भाषाएँ और उनके परिवार का परिचय संक्षेप में लेंगे जो इसप्रकार है-

द्रविड परिवार की भाषाएँ :- द्रविड एक जाति का नाम है। इनके मूल स्थान के संबंध में विवाद है। डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार द्रविड भाषा-भाषी अफगानिस्तान से लेकर पूर्वी भारत तक फैल गए। संस्कृत साहित्य में द्रविडों को दास, दस्यु, तथा शूद्र नाम से संबोधित किया गया है। आरंभ में जातिवाची नाम अर्थापकर्ष के कारण गुलाम, डाकू, अछूतवाची बन गए।

द्रविड शब्द संस्कृत के द्राविड़ का रूपांतर माना जाता है। द्रविड भाषाओं पर संस्कृत भाषा का प्रभाव दिखायी देता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

द्रविड परिवार की प्रमुख चार भाषाएँ हैं - तमिल, मलयालम, कन्नड़, तेलगु ।

तमिल - द्रविड़ परिवार की सबसे प्राचीन, समृद्ध भाषा है । यह तमिलनाडु प्रांत की भाषा है । जो चेन्नई तथा दक्षिण भारत के कुछ राज्यों में बोली जाती है । आधुनिक तमिल लिपि की व्युत्पत्ति अशोककालीन ब्राह्मी लिपि से हुई है । इस भाषा की शेन और कोडून दो शैलियाँ प्रचलित है । इसका आधुनिक साहित्य अत्यंत समृद्ध है ।

मलयालम - यह केरल राज्य की भाषा है।

इसकी लिपि तमिल से संबद्ध है । संस्कृत शब्दों की प्रधानता इसमें देखी जाती है ।

कन्नड - मैसूर अर्थात् कर्नाटक राज्य की भाषा है । मैसूर, कर्नाटक, हैदराबाद में प्रमुख रूप से बोली जाती है ।

तेलुगु - आंध्र प्रदेश की भाषा है, आंध्र शब्द से एक साथ जाति, भाषा और प्रदेश का बोध होता है । तेलंगना और आंध्र प्रदेश में विशेष रूप से बोली जाती है ।

द्रविड़ परिवार की भाषाओं के अलावा - आग्नेय, आस्ट्रिक या मुण्डा परिवार की भाषाएँ आती हैं । निकोबार द्वीप समूह की निकोबारी, भारत के पश्चिमी बंगाल से लेकर बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा आदि की मुण्डा, संथाल, लोगों की संथाली भाषाएँ हैं ।

तीसरा परिवार तिब्बती चीनी का है । तिब्बती बोलने वाले हिमाचल प्रदेश, लद्दाख तथा अरूणाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों में है । असम, त्रिपुरा, मेघालय की अलग भाषा है जो बोरों शाखा कहलाती है और मिझोराम, मणिपुर, नागालैंड की नागा कुकी शाखा के लोग हैं ।

विद्वानों ने अनिश्चित भाषा परिवार की भाषाएँ यह एक वर्ग भी माना है - कमिश्नर के उत्तर-पूर्व में बोली जाने वाली तथा दूसरी अंदमान -द्वीप की अंदमानी ये भाषाएँ किसी परिवार में नहीं रखी जाती हैं ।

१.४. शब्दों के अर्थ

सप्तसिंधु-गंगा की सात उपनदियाँ - नलिनी, ह्लादिनी, पावनी, चक्षु सीता, सिंधु और भागीरथी । .... महाभारत के मत से गंगा-यमुना-सरयू-गोमती-गंडक,प्लक्षगा और रक्तस्था ये सात नदियाँ आती हैं। (संदर्भ-भारतीय संस्कृति पृ.939)

१.५. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

क.

(१) डॉ.जॉर्ज ग्रियर्सन के अनुसार भारत में १७९ भाषाएँ बोली जाती हैं।

(२) भारत में बोली जानेवाली समस्त भाषाओं का उद्‌गम आर्य और आर्येतर ये दो भाषा परिवार है ।

(३) प्राचीन - भारतीय आर्यभाषाओं में वैदिक और लौकिक संस्कृत इन दो भाषाओं का समावेश किया जाता है ।

(४) वैदिक साहित्य में चार वेद - ऋग्वेद, यर्जुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इनके अलावा ब्राह्मणग्रंथ आरण्यक, उपनिषद और वेदांग आते हैं।

(५) वैदिक स्वन तेरह माने गये हैं।

(६) लौकिक संस्कृत साहित्य का सबसे प्राचीन ग्रंथ रामायण है, जिसके रचियता आदि कवि वाल्मीकि हैं ।

ख. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

(१)	सही	(२)	गलत	(३)	सही	(४)	सही
(५)	गलत	(६)	सही				

ग. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

(१) ग्रियर्सन ने केंद्रीय उपशाखा में पूर्वी हिन्दी को रखा है । इसे मध्यवर्ती समुदाय भी कहा जाता है । पूर्वी हिन्दी की अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी प्रमुख बोलियाँ हैं।

(२) मराठी बलात्मक स्वराघात वाली भाषा है । वैदिक 'ळ' ध्वनि का प्रयोग होता है ।

(३) असमियाँ पर तिब्बती, बर्मी, ऑस्ट्रिक तथा बंगला भाषा का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । इन भाषाओं के शब्दसमूह,

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वाक्यगठन का प्रभाव असमिया पर दिखायी देता है।

(४) गुजराती लिपि में शिरोरेखा लगायी नहीं जाती। गुजराती की अपनी लिपि है जो देवनागरी का ही भिन्न रूप है।

(५) पंजाबी की पुरानी लिपि लंडा थी जिसे देवनागरी की सहायता से सुधार कर गुरूमुखी लिपि बनाई गई।

१.६ इकाई का सारांश

भारत एक बहुभाषिक और बहुबोलियों वाला देश है। यहाँ बोली जानेवाली भाषाओं को दो परिवारों में विभाजित कर अध्ययन किया जाता है - आर्यभाषा और आर्येतर भाषा। इसमें आर्यभाषा परिवार प्रमुख है। आर्यभाषाओं की उत्पत्ति वैदिक संस्कृत से मानी गयी है। उस काल में वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत प्रमुख भाषाएँ थी। भारत की सभी भाषाओं ने संस्कृत से प्रचुर शब्दावली ग्रहण की है। पाणिनि ने इसको व्याकरणनिबद्ध किया। आर्येत्तर भाषाओं को द्रविड परिवार की भाषाएँ माना जाता है तेलगू , तमिल, कन्नड, मलयालम आदि। द्रविड भाषी परिवार का क्षेत्र दक्षिण भारत है। भाषाओं के विकास में मध्यकालीन आर्य-भाषाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राकृत काल भाषाएँ इस काल की प्रमुख भाषाएँ थी। इन भाषाओं को तीन कालों में विभाजित किया जाता है प्रथम प्राकृत (पालि), द्वितीय प्राकृत काल (प्राकृत) तथा तृतीय प्राकृत काल (अपभ्रंश)। प्रथम काल में पालिभाषा प्रमुख थी। द्वितीय प्राकृत काल में बोली जानेवाली भाषा को केवल प्राकृत कहा जाता हैं। साहित्य कि दृष्टि से इस द्वितीय काल में पाँच प्राकृतों का विकास हुआ महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची ये पाँच भेद प्राकृत के माने गये हैं। तृतीय प्राकृत काल की भाषा अपभ्रंश है। अपभ्रंश और अवहट्ट ये दो भाषा इस काल में सामने आयी।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास अपभ्रंश के अलग-अलग रूपों से हुआ है। अपभ्रंश के सात भेद किये जाते है उनसे विभिन्न उपभाषाएँ निकली। शौरसेनी से गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पैशाची से लहँदा, पंजाबी, खस से पहाड़ी उपभाषाएँ, ब्राचड़ से सिंधी, महाराष्ट्री से मराठी, अर्धमागधी से पूर्वी हिन्दी तो मागधी से, बंगला, असमिया, उड़िया, बिहारी। ग्रियर्सन ने आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को अंतरंग, केंद्रिय तथा बहिरंग इन तीन उपशाखाओं में विभक्त किया है।

हम यह पाते हैं कि भारत में विविध भाषाएँ बोली जाती हैं परंतु उसमें समानता यह है कि ये सभी संस्कृत प्रादुर्भवा है। ये वियोगात्मकता की ओर तथा सरलता की ओर अग्रसर हुई है। फिर भी भारतीय संस्कृति का स्वर ज्यों का त्यों भास्वर ही रहा है।

आर्येतर भाषाएँ भारत की मूल संस्कृति की संवाहिका है। इस तथ्य की भी हमने इस इकाई द्वारा जानकारी प्राप्त की है।

1.7 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

१. प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ कौनसी है? बताते हुए वैदिक संस्कृत की विशेषताएँ लिखिए।

२. वैदिक और लौकिक संस्कृत के अंतर को समझाइए।

३. प्राकृतों का परिचय दीजिए।

४. गुजराती, मराठी और हिन्दी भाषाओं की विशेषता बताते हुए साम्य वैषम्य लिखिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई–2

हिन्दी का भौगोलिक विस्तार

<u>*इकाई की रूपरेखा*</u>

2.1. प्रस्तावना
2.2. उद्देश्य
2.3. विषय विवरण
2.3.1. पश्चिमी हिन्दी
खड़ी बोली
ब्रज
हरियाणवी बांगरू
बुंदेली
कन्नौजी
2.3.2. पूर्वी हिन्दी
अवधी
बघेली
छत्तीसगढ़ी
2.3.3. बिहारी हिन्दी
भोजपुरी
मगही
मैथिली
2.3.4. राजस्थानी हिन्दी
मारवाडी
जयपुरी
मेवाती
मालवी
2.3.5. पहाडी हिन्दी
कुमायूँनी
गढ़वाली
2.3.6. दक्खिनी हिन्दी
2.4. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
2.5. इकाई का सारांश
2.6. अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

2.१ प्रस्तावना

हिन्दी भाषी क्षेत्रों मे अर्थात् झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान है। इस प्रदेश में हिन्दी मातृभाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। इन राज्यों में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। इतने बड़े भूभाग में फैली भाषा हिन्दी के अनेक रूप दिखायी देते हैं।

भाषा इतिहास और उद्गम की दृष्टि से हिन्दी के पाँच रूप या उपभाषावर्ग हमें मिलते हैं। जो इस प्रकार है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

क्र.	उपभाषा	उत्पत्ति	बोलियाँ
1)	पश्चिमी हिन्दी	शौरसेनी	खड़ीबोली (कौरवी), ब्रज, हरियाणवी (बांगरू), बुंदेली, कन्नौजी
2)	पूर्वी हिन्दी	अर्धमागधी	अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी
3)	बिहारी हिन्दी	मागधी	भोजपुरी, मगही, मैथिली
4)	राजस्थानी हिन्दी	शौरसेनी अपभ्रंश	मारवाडी, जयपुरी, मेवाती, मालवी
5)	पहाड़ी हिन्दी	शौरसेनी अपभ्रंश, उत्तरीरूप	कुमायूनी, गढ़वाली
6)	दक्षिणी हिन्दी	(शौरसेनी)	दक्खिनी हिन्दी

इसतरह हिन्दी की छह-उपभाषा और उसकी १७ बोलियाँ रूप दिखाई देते हैं।

2.२. उदेश्य -

मित्रों इस इकाई का उद्देश्य है हिन्दी का भौगोलिक विस्तार जानना अत: इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप

(1) हिन्दी भाषी क्षेत्र के बोलीवर्ग को जान पाएंगे।
(2) हिन्दी की उपबोलियों का परिचय कर पाएंगे।
(3) बोलियों की विशेषताएँ जान सकेंगे।
(4) इन उपबोलियों में समानता और अंतर को स्पष्ट कर सकेंगे।

2.3. विषय विवरण -

प्रिय छात्रों हिन्दी के इन विविध रूपों की विशेषताएँ तथा उनके भौगोलिक क्षेत्र के संबंध में अब हम संक्षेप में जानकारी लेंगे।

हिन्दी भाषा के संबंध में जब हम विचार करते हैं, तब यह ज्ञात होता है कि हिन्दी संज्ञा हमें ईरानी लोगों ने दी है। पंचतंत्र का फारसी अनुवाद करते समय उन्होंने संस्कृत को जबान-ए-हिन्दी बताया। नवभारतीय आर्यभाषा के अर्थ में हिन्दी शब्द का प्रयोग ई.स.1424 में लिखित तैमूरलंग के पोते शरफुद्दिन यज्दी के ग्रंथ ''जफ़रनामा''में मिलता है।

शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी भाषा का उद्‌भव हुआ। बाबू श्यामसुंदरदास ने इसका उद्‌भव समय 994 ई.स. माना है। हिन्दी के प्रारंभिक रूप का आभास हेमचंद्र के ''शब्दानुशासन'' में दिए उदाहरणों में दिखाई देता है।

आधुनिक काल से पहले हिन्दी का अस्तित्त्व तीन रूपों में मिलता हैं - 1) उत्तरी भारत-मुख्यतया मध्य देश में विभिन्न साहित्यिक भाषा शैलियों के रूप में। 2) दक्षिण की बहमनी रियासतों में हिन्दवी अथवा हिन्दुई नाम से इसे साहित्यिक और दरबारी मान्यता मिली। 3) अंत:प्रांतीय रूप में तीर्थाटन, वाणिज्य में इसका प्रयोग होता रहा और 19 वी शताब्दी में फोर्ट विलियम कॉलेज, ईसाई मिशनरी, पत्रकारिता तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण (आर्य समाज, ब्रह्म समाज, थियोसॉफिकल सोसाईटी के मतों) का माध्यम बनीं।

हिन्दी के विकास को हमें प्राय: तीन रूप मिलते हैं - 1) आदिकाल 2) मध्यकाल 3) आधुनिक काल।

आदिकाल की हिन्दी पर अपभ्रंश का प्रभाव दिखाई देता है। राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल और अशांति का युग था। अरबी, फारसी, तुर्की विदेशी शब्दों का समावेश इसमें हो रहा था। तद्‌भव और देशज शब्द विकसित हो रहे थे। सिद्ध, नाथ, जैन कवि, चारण कवि, मुस्लीम कवि साहित्य में यह रूप दिखाई देता है।

उच्चा उच्चा पावत (पर्वत), तीहं बसह सबरी बाली (-शबरपा)

किसका बेटा, किसकी बहू। आप सवारथ मिलिया सहू॥ (- चर्पटनाथ)

श्याम बरन की है वह नारी, माथे ऊपर लागे न्यारी
याको अर्थ कोई खोले, कुत्ते की वह बोली बोले। (-अमीर खुसरो)

इस काल की हिन्दी की विशेषताएँ हैं - ऐ, ओ दो स्वर विकसित हुए। ड़,ढ़ व्यंजनों का विकास हुआ। नपुंसक लिंग

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

समाप्त हो गया और हिन्दी वियोगात्मक हो गई।

मध्यकाल तक आते - आते हिन्दी का रूप स्पष्ट हो गया था। तुर्कों का प्रभाव क्षीण होकर मुगल साम्राज्य की नींव पड़ी। राजपूत शासक तथा मुस्लिम शासकों ने हिन्दी साहित्यकारों को प्रोत्साहन दिया। ब्रज, अवधी में इस काल में अत्याधिक लिखा गया। भक्तिकाल और रीतिकाल के कवियों का साहित्य मुख्यतया इन्हीं दो भाषाओं में है। संस्कृत से यह हिन्दी अधिक प्रभाव ग्रहण कर रही थी। हिन्दू साहित्यकारों के साथ-साथ मुस्लिम साहित्यकारों ने भी अवधी और ब्रज में रचनाएँ की। गुरूदेव नानक, दादू दयाल, कबीर, तुलसीदास, सूरदास, नंददास, केशव, बिहारी, घनानंद, रहीम, रसखान आदि साहित्यकारों की यह भाषा है।

इसी काल में खड़ीबोली के दो रूप दिखाई देते हैं - उत्तरी रूप रेख्ता था खड़ीबोली, दक्षिणी रूप दक्खिनी और फारसीनिष्ठ हिन्दी का प्रचार बढ़ने से उर्दू का विकास हुआ। उर्दू के प्रसार के खड़ी-बोली की लोकप्रियता में वृद्धि हुई।

इस काल की हिन्दी की विशेषताएँ हैं, नुक्तावाले, क, ख, ज, फ, व्यंजनों का प्रयोग होने लगा। हिन्दी का व्याकरण बना। तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ा और युरोपिय शब्द हिन्दी में प्रचलित हुए।

आधुनिक काल में मुगलसत्ता का विलय होने गया और अंग्रेजों का शासन भारत में आया। युरोपिय शिक्षा, विचार के कारण भारत में राजनीतिक, सामाजिक आंदोलन हुए। प्रेस की सुविधा के कारण गद्य का निर्माण, पत्र-पत्रिकाओं का प्रचार-प्रसार हुआ। फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई और उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी बनीं। जिससे ब्रजभाषा केवल कविता की भाषा रह गयी ब्रज और खड़ीबोली का मिश्रित रूप बोलचाल की हिन्दी बन गया और गद्य के लिए खड़ीबोली का प्रयोग होने लगा। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इस खड़ीबोली को परिनिष्ठित किया। उनकी प्रेरणा के कारण ही हिन्दी कविता की भाषा बनी इससे पूर्व कविता के लिए ब्रज का प्रयोग होता था। मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कविता के क्षेत्र में आगे आए।

जयशंकर प्रसाद (छायावादी कविता) प्रेमचंद (गद्य साहित्य) के कारण हिन्दी का साहित्यिक रूप निखरा - हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, नागरी प्रचारिणी सभा, राजनीतिक नेता, इन सब ने मिलकर हिन्दी को स्वतंत्रता से जोड़ा फलस्वरूप आज हिन्दी विश्वभाषा बन गई है।

अंग्रेजी की ध्वनियाँ ऍं, ऑ, ड़ का आगमन हुआ। विराम चिन्ह अंग्रेजी के ग्रहण किए। हिन्दी बहुप्रयोजनपरक भाषा बन गई।

2.3.1.*पश्चिमी हिन्दी*

पश्चिमी हिन्दी भारत के पश्चिमी क्षेत्र में प्रयुक्त होती है। भारत का पश्चिमी क्षेत्र राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से अत्याधिक सक्रिय रहा है। जिसका परिणाम समूचे भारत के राजनीतिक और सामाजिक जीवन पर पड़ा है। पश्चिमी क्षेत्र की बोलियों को ही राजभाषा बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस कारण साहित्यिक दृष्टि से भी ये समृद्ध रही है। पश्चिमी हिन्दी शौरसेनी से उद्‌भूत है। पश्चिमी हिन्दी में ऋ का उच्चारण 'रि' होता है। तथा उच्चारण की प्रवृत्ति 'य' की ओर अधिक है। भविष्यकाल के रूप 'ग' वाले होते है। पश्चिमी हिन्दी में खडी बोली ब्रज महत्त्वपूर्ण बोलियाँ है। पश्चिमी हिन्दी बोलनेवालों की संख्या अधिक है।

2.3.1.1.खड़ीबोली (कौरवी) -

खड़ीबोली के अनेक नाम है - हिन्दुस्तानी, नागरी, सरहिन्दी, कौरवी। दिल्ली, मेरठ, मुरादाबाद, रामपुर, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर तथा देहरादून के मैदानी भागों में बोली जानेवाली भाषा के लिए खड़ीबोली नाम प्रचलित है। सहारनपुर, मेरठ और मुजफ्फरनगर को सामूहिक रूप में 'कुरूप्रदेश' भी कहा जाता है, इसलिए इसका एक नाम कौरवी भी है। सामान्य रूप से उत्तर भारत की बोलचाल की भाषा खड़ीबोली है। खड़ीबोली को खरीबोली भी कहते हैं। खड़ी बोली शब्द का प्रयोग 'लल्लू लाल' ने अपने ग्रंथ 'प्रेमसागर' में किया है। खड़ी बोली से ही आज की साहित्यिक हिन्दी का जन्म हुआ है जो भारत की राष्ट्रभाषा और राजभाषा है।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

1. यह आकारान्त प्रधान भाषा है जैसे- खाना, करना, गया, चला।

2. साहित्यिक हिन्दी का ऐ, औ ए, ओ, में मिलते हैं। पैर पेर, और ओर, बैठे बेठ।
3. स्वराघातहीन अक्षरों में 'इ' का अ में परिवर्तन हो जाता है। मिठाई - मठाई
4. कभी अ का लोप भी हो जाता है - इकट्ठा - कट्ठा
5. मध्य या अन्त्य न के स्थान पर 'ण' प्रयुक्त - लेन - देन - लेण - देण
6. ड़, ढ़ के स्थान पर ड, ढ बोले जाते हैं। गाड़ी-गाडी
7. व्यंजनों के द्वित्व की प्रवृत्ति मिलती है। बेटा-बेट्टा, रोटी-रोट्टी, छोटा-छोट्टा, धोती - धोत्ती, भूखा-भूक्खा
8. ओ, औ के लिए ऊ का प्रयोग - राम का रामकू

ख. रूपात्मक

1. क्रियाविशेषण - अभी अबइब, जब-तबजिब, तिब, यहाँह्या, जहाँजों, क्यों क्यू कैसे कीकर आदि विशिष्ट है।
2. क्रियारूप परिनिष्ठित रूप की तरह क्या कर रहा है कि करै सै
3. क्रियाओं के भूतकालिक रूप दो-दो प्रकार के मिलते है। जैसे - करना किया-करा जानागया-गिया।
4. पूर्वकालिक क्रिया में कर की अपेक्षा 'के' का प्रयोग अधिक दिखाई देता है जाके, खाके आदि।

सर्वनामों में - मैं, मुज, मेरा, हम, म्हारा, हमारा, तू ते, तुझ, तेरा, तम, तमे, तेने, किसके, थारा, जो जोण, कोण, आपण आदि का प्रयोग विशिष्ट है।

5. ह के पहले अ का उच्चारण ए की तरह सुनाई देता है। रह-रेह

अमीर खुसरों का साहित्य खड़ीबोली का है ऐसा माना जाता है।

2.3.1.2. ब्रज -

पश्चिमी हिन्दी की बोलियों में ब्रज प्रमुख है। इसलिए ब्रज को भाषा भी कहते हैं। ब्रज का अर्थ है पशुओं, गायों का समूह। गोपालन प्रमुख व्यवसाय होने से इस क्षेत्र को गोस्थली या गोष्ठी कहा जाता है। यही प्रदेश ब्रज कहलाया जो शूरसेन राजा के अधिपत्य में था। इस भूप्रदेश में बोली जानेवाली भाषा ब्रज है। ब्रज भाषा का प्राचीनतम प्रयोग ई.स.१५५७ में गोपाल कृत 'रसविलास' की टीका में हुआ है-

मरूभाषा निरजल तजि करिव्रजभाषा चोज

साहित्य और लोकसाहित्य की दृष्टि से ब्रजभाषा अत्यंत संपन्न है। भक्त कवियों में सूरदास, तुलसीदास, नंददास, नाभादास, नरोत्तमदास, अष्टछाप के कवियों के अलावा रीतिकाल के केशव, रत्नाकर, पद्माकर, देव, मतिराम, बिहारी, भूषण, रसखान, रहीम, भिखारीदास, घनानंद, आधुनिक काल के भारतेंदु हरिश्चंद्र और उनके मंडल के कवि आते हैं।

शुद्ध रूप में ब्रजभाषा मथुरा, आगरा, अलिगढ़, धौलपुर में बोली जाती है। गुडगाँव, भरतपुर, बरेली, बदायुँ, मैनपुरी, एटा, ग्वालियर में भी इसका प्रयोग होता है। हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश के उत्तरी सीमावर्ती क्षेत्र ब्रज प्रभावित क्षेत्र है।

ब्रजभाषा के रूप भुक्सा, अंतर्वेदी, डांगी, जादोवाटी है।

ब्रजभाषा की विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक -

1. ब्रजभाषा में ओकारांतता पाई जाती है- आयो, बड़ो, भलो, खरो, सुन्यो-
2. ड़ का र हो जाता है - लड़का-लरिका, जुड़ना जुरना, पडे परे।
3. ल का र होता है - दुबला दुबरा, र का ल होना, धोला धोरो।
4. व का ब होता है - विषय बिसय
5. ष्, श्, स् - के स्थान पर केवल स का प्रयोग भाषाभासा, पुरूषपुरूस, जोशजोस
6. ऋ का रि होता है - ऋषि रिसि।
7. ह का लोप - बहुँ बऊ, साहुकार साउकार
8. प्राय: सभी स्वर अनुनासिक होते हैं - हँसत, अँखियाँ, भौंहा, सौंह, नैंकु

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ख. रूपात्मक -

1. एकवचन पुल्लिंग संज्ञाए ओकारांत-जाईगो, गयो, चलो
2. तिर्यक बहुवचन के रूप न, नु जोड़कर बनते हैं - आँखन, छोरन, बातन, नरनु,
3. सहायक क्रिया हूँ के स्थान पर हौं, भूतकाल में था के स्थान पर हतौ, हतो तथा भविष्यकाल में ह्है, का प्रयोग होता है। भविष्यत् के दो रूप हैं - ग तथा ह वाला-जाऊँगो, मारिहौ।
4. परसर्गों का प्रयोग - कर्ता - ने, नै, नें, नैं। कर्म - संप्रदान कु,कू,कुँ, कूँ, को, कौ, कौं।
   करण अपादान - ते, तें, तैं, से, सैं, सो, सौं, सू, सूँ। संबंध - को, कौ,की।
   अधिकरण - में, मैं, मँह, माहि, महि, पै, पे, में, तें, से
   अन्य परसर्ग - काज, लग, लागि, ढिग, नाईं, पाछै, ताहि लौं।
5. खड़ीबोली के समान औ प्रत्यय का प्रयोग - बातौं, नारियों आदि
6. स्त्रीलिंग प्रत्यय - ई, नी, आनी, इनी, आइन-छोरा-छोरी, मास्टर-मास्टरनी, देवर-देवरानी,
7. हाथी-हाथिनी, ठाकुर-ठकुराईन।
8. व्यंजन-संयोग में द्वित्त्व का प्रयोग खर्च-खच्चु, बादशाह-बास्सा।

काव्य की भाषा होने से ब्रज ही भाषा के रूप में सम्मानीत हुई। पिंगल साहित्य ब्रज में ही रचा गया है।

2.3.1.3. हरियाणवी (बांगरू)

हरियाणा प्रदेश की बोली हरियाणवी कहलाती है। करनाल के आसपास का क्षेत्र बांगर कहा जाता है इ स लि ए इसका नाम बांगरू भी है। बोलनेवालों में जाटों की संख्या अधिक होने से यह 'जाटू' भी कहलाती है। हिसार, रोहतक, करनाल, पटियाला, नाभा, जींद और दिल्ली प्रदेश के सम्मिलित भूभाग के भौगोलिक क्षेत्र मे प्रयुक्त होती है। खड़ीबोली, अहिरबाटी, मारवाडी, पंजाबी से घिरा होने से इन का प्रभाव हरियाणवी पर देखा जाता है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक

1. स्वरों के उच्चारण में अनिश्चितता मिलती है। अ स्वर इ, उ, ए तथा ओ में परिवर्तित हो जाता है- जैसे- रहा रिहा, रहा रेह्या, बहुत बोहत, कहाऊ कोहाऊ।
2. मध्य ग व्यंजन को द्वित्वयुक्त होने पर आरंभ का स्वर (अ को छोड़ कर) दीर्घ से ऱ्हस्व हो जाता है - भीतर-भित्तर, गाड़ी-गड्डी, भूखा-भूक्का, पूछा-पुच्छा।
3. न के स्थान पर ण का प्रयोग-होणा, आपणा, पाणी
4. ल के स्थान पर ळ - काली-काळी।
5. त के स्थान पर द - करता करदा, मारता मारदा।

ख. रूपात्मक

1. संज्ञारूप खड़ीबोली की तरह परंतु ओं के स्थान आँ-घोडों-घोडाँ, घरों-घराँ ।
2. कारकीय परसर्ग - अनिश्चित - एक ही परसर्ग का प्रयोग कई कारकों के साथ होता है।
3. सर्वनाम के रूपों में भी अनेकरूपता-में, मन्ने, मत्तै, मेरा, मेरै, हाम्, हम्ने, म्हारे, म्हनै, म्हारा, म्हां
4. जाना क्रिया के भूतकालीन कृंदतीय रूप-गया, गिया।
5. सामान्य वर्तमानकालीन क्रिया में गा, गे, गी जोड़कर भविष्यत के रूप बनते हैं -
   पढ़ैगा, माराँगा।

है, हैं के स्थान पर से, सें, सूँ, सो का प्रयोग हरियाणवी की विशेषता है।

हरियाणवी में लिखित साहित्य का अभाव है परंतु लोकसाहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है।

2.3.1.4.बुंदेली :

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

झाँसी, जालौन, हमीरपूर और बाँदा जिले का पश्चिमी भाग सम्मिलित रूप से बुन्देलखंड कहलाता है। इस प्रदेश में प्रयुक्त होनेवाली भाषा का नाम 'बुंदेली' है। ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, सागर, टीकमगढ़, नृसिंहपुर, सिउनी, छिंदवाडा, बालाघाट, होशंगाबाद आदि क्षेत्र में बुंदेली बोली जाती है। बुंदेली बोली का विकास शौरसेनी अपभ्रंश के दक्षिणी रूप से हुआ है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक

1. बुंदेली में सभी स्वरों के अनुनासिक रूप मिलते है। ऊँठा-अँगुठा।
2. व्यंजनों में महाप्राण से अल्पप्राण में परिवर्तन की प्रवृत्ति मिलती है - जीभ-जीब, दूध-दूद।
3. दीर्घ स्वर आ, ई, ऊ, ए, ऐ, औ के ह्रस्व स्वर प्रयुक्त होते है-जुर्माना-जरीबानौ, बेटी-बिटिया, घोरी-घुरवा।
4. बुंदेली में ध्वनि विकास की प्रवृत्तियाँ - इस प्रकार है। ऊ का ई - खूब-खीब
   ब का म - बबूल - बमूरा
   च् का स् - शौच-सौंस
   स् का छ् - सीढ़िया - छिड़ियाँ
   क का ग - हकीकत हकीगत

ख. रूपात्मक

1. कर्ता के लिए - ने, नें, कर्म संप्रदान में कों, खों, अपादान में से, सें, सों, संबंध को, के की, तथा अधिकरण में, में, आदि का प्रयोग मिलता है।
2. वर्तमानकालिक सहायक क्रिया हूँ के लिए आँऊँ, आँव तथा है के लिए आँय और है के लिए आय का प्रयोग होता है।
3. भविष्यतकालिन सहायक क्रिया गा के लिए हो, गे के लिए है आदि।
4. बुंदेली में कई ऐसे शब्द प्रचलित हैं जो हिन्दी में भी चलते हैं। जैसे - बाबा, भाई, दीदी, जीजा, कलसा आदि।

बुंदेली में साहित्य कम ही लिखा गया। कारण बुंदेलखंड के कवियों ने ब्रजभाषा में साहित्य लिखा। केशव, मतिराम, ईसुरी की रचनाओं पर बुंदेली का प्रभाव है। बुंदेली की उपबोली के रूप में बनाफरी का नाम लिया जाता है जो लोक साहित्य की दृष्टि से संपन्न है।

2.3.1.5 कन्नौजी -

संस्कृत कान्यकुब्ज से कन्नौज विकसित है। कान्यकुब्ज कण्णउड्डा कन्नौज फर्रूखाबाद कन्नौजी का केंद्र है। कन्नौजी और ब्रज में पर्याप्त साम्य मिलता है। शाहजहाँपुर, फर्सरवाबाद, इटाला में कन्नौजी बोली जाती है।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

1. ओ का प्रयोग अधिक मिलता है - बड़ों, चलो
2. मध्यस्वर का लोप हो जाता है - कहिहीं-कैह्यों
3. य और व श्रुतियों का अभाव - गयो- गओ, भवो-भओ
4. ह के लोप की प्रवृत्ति-करहु-करउ, लेहु-लेउ।
   हिन्दी के व्यंजनात शब्द कन्नोजी में उकारात होते है - घर-घरू, बाप-बापु

ख. रूपात्मक

1. भूतकालीन अन्यपुरूष की क्रिया का अलग रूप- मिलता है- सोना, चलना आदि क्रिया के साथ ने का प्रयोग लरिका ने, चलो गओ -

2. वा तथा इया प्रत्ययों का प्रयोग - छोकरी- छोकरियाँ, बच्चा-बचवा

3. संज्ञा और सर्वनाम के बहुवचन के रूप ''हवार'', जोड़कर बनाए जाते हैं - हमलोग-हमहवार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

4. भूतकालीक सहायक क्रिया था, थे, थी के साथ - हतो, हते हत्ती का प्रयोग मिलता है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

(क) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षिप्त में लिखिए।

१) पश्चिमी हिन्दी में कौन-कौन सी बोलियों का समावेश होता है ?

२) वर्तमान हिन्दी किस बोली से विकसित हुई है ?

३) खड़ीबोली की तीन विशेषताएँ लिखिए।

४) पश्चिमी हिन्दी की किस बोली को भाषा कहा जाता है ?

५) ब्रज भाषा का भौगोलिक क्षेत्र लिखिए।

६) ब्रजभाषा के कौन से रूप है ?

७) बांगरू किस बोली का नाम है ?

2.3.2. पूर्वी हिन्दी :-

पूर्वी हिन्दी नाम से ही स्पष्ट है कि इसका क्षेत्र पश्चिमी हिन्दी के पूर्व में पड़ता है। पूर्वी हिन्दी का क्षेत्र भाषा की दृष्टि पूरब में बिहारी (भोजपूरी) उत्तर में पहाड़ी (नेपाली), पश्चिम में ब्रज, पश्चिमोत्तर में खड़ीबोली, दक्षिण-पूर्व में उड़िया, दक्षिण-में तेलगु तथा मराठी को छूता है। पूर्वी हिन्दी की उत्पत्ति अर्धमागधी से हुई है। पूर्वी हिन्दी में दो स्वर एक साथ आ सकते हैं, अउर। पूर्वी हिन्दी में व 'श्रुति' का अधिक प्रयोग होता है। ऋ का उच्चारण 'र्' की तरह होता है। भविष्यकाल में 'ग' वाले रूप नहीं आते। चलूँगा चलिहै। पूर्वी हिन्दी के प्रदेश में तीन बोलियाँ मुख्य हैं - अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी। इनका परिचय हम लेंगे।

2.3.2.1. अवधी :-

अवधी पूर्वी हिन्दी की सबसे प्रमुख बोली है। अवध क्षेत्र की भाषा अवधी कहलाती है। समस्त अवध प्रदेश, फतेहपुर, इलाहाबाद, जौनपुर, लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, फैजाबाद, गोंडा, बहराईच, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी जिलों, कानपुर जिले के कुछ भागों में तथा मुजफ्फरपुर तक तथा नेपाल की तराई के कुछ क्षेत्रों में यह बोली जाती है।

अर्धमागधी से विकसित पूर्वी हिन्दी बोलियों में अवधी के उत्तरी, प्राचीन पूर्वी, उत्तरीखण्डी, पूर्वी कौशली, बैसवाड़ी, पूरबिया आदि नाम है।

अयोध्या का प्रदेश कोसला के अंतर्गत था, इसलिए अवधी को 'कोसली' भी कहा गया। अयोध्या शब्द का विकास 'अवध' रूप में हुआ है। अवधी भाषी प्रदेश का नाम अवध है। इसी आधार पर इस भाषा को अवधी नाम पडा है। पूर्वी अवधी का क्षेत्र गोंडा, फैजाबाद, अयोध्या आदि है, इसी क्षेत्र की अवधी परिनिष्ठित मानी जाती है। पश्चिमी अवधी लखनऊ से कन्नौज तक मिलती है, बैसवाडी उन्नाव, रायबरेली क्षेत्र में बोली जाती है। इन तीन रूपों में अवधी को देखा जा सकता है।

अधिक प्रयोग होता है, 'ऋ' का उच्चारण 'र्' की तरह होता है। भविष्यकाल में 'ग' वाले रूप नहीं आते। चलूँगा चालि है।

अवधी भाषा साहित्य की दृष्टि से समृद्ध है। अवधी की साहित्यिक कृतियों में सर्वप्रथम रचना मुल्ला दाऊद की 'चंदायन' है। सूफी कवियों द्वारा अधिकतर अवधी में साहित्य रचा गया। कुतुबन की 'मृगावती', जायसी का 'पद्मावत', 'अखरावट' विख्यात रचनाएँ हैं। मंझन,उसमान, नूरमहंमद उत्कृष्ट कोटि के कवि हैं। प्रेमाख्यान परंपरा की रचनाओं के अलावा रामभक्ति धारा का साहित्य भी इसमें लिखा गया है। तुलसी के महाकाव्य 'रामचरितमानस' में इस भाषा का प्रौढ़, परिष्कृत रूप दिखाई देता है। जगनिक की 'आल्हाखण्ड' को अवधी की प्रथम वीररसप्रधान, काव्यकृति माना जाता है।

स्वामी अग्रदास, जानकीशरण, महाराज रघुराज, वंशीधर, रमई काका आदि अनेक उल्लेखनीय रचनाकार है। इसका लोकसाहित्य भी पर्याप्त समृद्ध है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक-

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1. अवधी में वे सभी स्वरध्वनियाँ मिलती है जो खड़ीबोली में है। ए ओ का ऱ्हस्व रूप मिलता है।
ए का उच्चारण अई और औ का उच्चारण अउ की भाँति होता है कैसे - कईसे, औरत - अउरत
2. श्, ष्, स् के लिए केवल स का प्रयोग- भूषण-भूसण, आशिष आसिस।
3. ण के स्थान पर न का प्रयोग - कारण कारन, चरण चरन, मणि मनि।
4. ल के स्थान पर र का प्रयोग - फल-फर, काल कार।
5. ड के स्थान पर 'र' का प्रयोग - लड़ाई-लराई, जुडई - जुरई।
6. व् ध्वनि ब् की तरह उच्चारित - विधि-बिधि, वारि-बारि
7. य् और व् श्रुतियों का अभाव - छुवन कारिय छुअन, कारिअ
8. य के स्थान पर ज का प्रयोग तथा स्वर रूप में 'इ' परिवर्तित हो जाती है-युग-जुग, सुयस-सुजस
9. ऋ लिपि में है पर उच्चारण रि - ऋषि - रिसि, ऋतु-रितु।

ख. रूपात्मक

1. संज्ञा शब्दों के प्रयोग में विविधता मिलती है, तीन-तीन रूप बनते है
घोरघोरवाघोरवना, बेटी-बिटिया-बिटइवा, नदीनदिया नदिवा
2. व्यक्तिवाचक तथा विदेशी शब्दों में वा, हवा लगाकर शब्द बनाये जाते हैं - जैसे-
बिटवा, जगदिसवा, फोनवा, रजिस्टरवा
3. प्राय: दो वचन और दो लिंग अवधी में मिलते है -
4. बहुवचन बनाने के लिए न, न्ह, नि, न्हि आदि प्रत्ययों का प्रयोग होता है।
लरका-लरिकन, बात-बातन, मुनि-मुनिन्ह
5. ध्वनिपरिवर्तन के कुछ उदाहरण उल्लेखनीय है- उजालाउज्जर, पक्षीपाँरवी, वृक्षबिरछा, चिकनाचीकन, निमंत्रणन्युता।
6. परसर्गों का विशिष्ट प्रयोग।

क, का, कां, कहयाँ, कहँ, कऊँ, कहूँ, कह से, ते, रे सन, सों, भे, केरा, का, की, माँ, में, यहँ, माँझ, मइहाँ प्रयोग मिलते हैं।

7. विशेषण में - एक (याकु), पाव(पाऊ), छदुहा, पहिल, दोसर, ओनईस आदि गिनने के शब्द रूप है।
8. काल रचना

क्रिया में चलत हऊँ, चलत हई, चलेऊँ, चलेन, चलिहऊ, चलिबा, चलिब चली है।

वर्तमानकालीन सहायक क्रिया के लिए है-अहै, आटे बाटे

भूतकालीन सहायक क्रिया के लिए भए, रहे।

भविष्यत्काल के लिए ब, बू, बे, बो का प्रयोग-देखब, करीबो

अवधी में कुछ अव्यय विशिष्ट है इनका प्रयोग हिन्दी में नही होता है। जैसे कालि, मोर, पुनि, बहोरी, बेगि, इहाँ, उहाँ, तहवाँ, तहाँ, निअरे, इत, उत, इमि, तस, जस, जिनि, किन, अवसि, अरू, वरू, अबै, कबै कहँ, एहसि, नियरे, अन्ते, मुदा आदि प्रयोग मिलते हैं।

2.3.2.2. बघेली

यह बघेलखण्ड की भाषा है। अवधी और बघेली में विशेष अंतर नहीं है। बघेली का केंद्र रीवाँ है। इसलिए इसे रीवाई भी कहते हैं। इसका क्षेत्र दमोह, जबलपुर, माँडला, बालाघाट, बांदा, फतेहपुर, तथा हमीरपुर आदि जिलों के कुछ भागों में इसका प्रयोग होता है। इसके क्षेत्र में बघेल राजपुतों की प्रमुखता है। इसलिए इसे बघेली नाम पडा है।

बघेली स्थानीय रूप हैं - तिरहारी, महोरा, जुड़ार, बनाफरी, मरारी, पोवारी, कुंभारी, ओझी आदि।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1. इसमें संज्ञाशब्द में दो व्यंजनों के बीच ओ का वा हो जाता है। घोड़ा-घ्वाड़, मोर-म्वार।

2. का, कौना, तथा वा जोड़कर दीर्घ रूप बनते हैं - छोटका, छोटकौना, लहुरवा। ने परसर्ग का प्रयोग नहीं।

3. व का ब होने की प्रवृत्ति अवधी से अधिक दिखाई देती है। पावा-पाबा

ख. रूपात्मक

परसर्गों में कर्म संप्रदान के क , का , के, कहा, करण, अपादान में ते के, तार आदि।
विशेषण निर्माण में हा प्रत्यय, अधिकहा, नीकहा।
सर्वनामों में म्वां, मोही, त्वा, तोही, वहि यहि प्रचलित।
भविष्यकालिक क्रिया में व प्रत्यय के साथ ह प्रत्यय की प्रधानता जईहौं, कइहौं
सर्वनाम है- मँय, तँय्, हम्ह, तुम्ह, वहि, ओ, कउन्
बघेली का लोकसाहित्य संपन्न है ।

2.3.2.3. छत्तीसगढ़ी

छत्तीसगढ़ की बोली छत्तीसगढ़ी कहलाती है। इसे लरिया या खलाटीया, खल्हाटी भी कहा जाता है। इस प्रदेश को महाकौसल भी कहा जाता है। यह रायपुर, बिलासपुर,उड़ीसा के संबलपुर का पश्चिम हिस्सा कांकेर, खैरागढ़, रायगढ़, कोरिया, सरगुजा, उदयपुर, चांदा, बालाघाट के कुछ भागों में तथा जमशेदपुर, बस्तर, सारंगढ़ में बोली जाती है। छत्तीसगढ़ी भाषा क्षेत्र में आदिवासी रहते हैं। उनकी बोलियों पर मराठी, तेलगु, उड़िया का प्रभाव देखा जाता है।

इसकी सरगुजिया, सदरी, कोरवा, बैगानी, विझावरी, कलंगा, भुलिया, कांकेरी, सतनामी, हलवी, बिलासपुरी, आदि प्रमुख उपबोलियाँ हैं।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

1. महाप्राणीकरण की प्रवृत्ति दौड़ धौड़, जन झन

2. श् का स तथा ष् के स्थान पर कभी स, कभी ख होता है जैसे भाषा भासा भाखा, वर्षा बरसा-बरखा

3. ध्वनि परिवर्तन की प्रवृत्ति ब का प- खराब-खराप

4. ब का म - बबूल - बमूर

5. स का छ - सीता - छीता

ख. रूपात्मक -

1. निश्चयार्थ में संज्ञा के साथ हर का प्रयोग - वह खाएगा - वो हर खाही, छोरेहर।

2. अन मन जोड़कर बहुवचन बनाया जाता है । जैसे- बेटीमन, लड़कामन, छैलों-छइलन, बैलों-बइलन।

3. पशु-पक्षियों के नाम के पहले गंज जोडकर बहुवचन रूप बनते हैं। घोडे-गंजघोडा

4. कर्म सम्प्रदान में - ला (उसको-बोला), करण में - से,ला (नौकर से कहा-नौकरला कहिरा)

अधिकरण-मां,में,ऊपर, संबंध-के लिंगानुसार कोई परिवर्तन नहीं-राम के लड़का, राम के लड़की

5. संज्ञाओं में आकारांत की प्रवृत्ति - बैल-बइला, घैल-छइला।
आकारांत पुल्लिंग विशेषण - स्त्रीलिंग में ईकारांत - छोटा-छोटकी
विशेषणों और क्रियाओं के रूप बहुत-कुछ मिलते-जुलते हैं।

6. छत्तीसगढ़ी का साहित्य तथा लोकसाहित्य काफी समृद्ध है। शुकलाल प्रसाद पाण्डेय ने छत्तीसगढ़ी में काव्य रचना की है।

उदा. हमर भाई के होवे लाल
हम काजर आँजेय, ला जाबो हैं।
सैंया चढ़े घोड़ा मां, हम चढ़बौ, डोलामा

थाली भर मोहर पाबो हों।

(II) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1) अवधी की दो रूपात्मक विशेषताएँ बताइए।
2) य, ऋ, श के अवधी में कौन से रूप बनते हैं।
3) अवधी के प्रमुख साहित्यकारों के नाम लिखिए।
4) छत्तीसगढ़ी कहाँ बोली जाती है ?
5) छत्तीसगढ़ी पर किस बोली का प्रभाव दिखायी देता है ।

2.3.3. बिहारी हिन्दी:-

यह हिन्दी प्रदेश बिहार की उपभाषा है। जो मागधी अपभ्रंश से विकसित है। इसके अंतर्गत तीन बोलियाँ आती हैं - भोजपुरी, मगही, मैथिली हैं। बिहारी हिन्दी भाषा का क्षेत्र समस्त बिहार और झारखंड प्रांत है। प्रमुख रूप से छोटा नागपुर और उत्तर प्रदेश के बलिया, गाजीपुर, पूर्वी फैजाबाद, पूर्वी जौनपुर, देवरिया, गोरखपुर से लेकर नेपाल की तराई तक बोली जाती है। दक्षिण में इसकी सीमा उड़ीसा तक है। इनकी बोलियों का संक्षिप्त परिचय हम देंगे।

2.3.3.1. भोजपुरी:-

इस बोली का नामकरण शाहाबाद जिले के भोजपुर परगने के एक छोटे से कस्बे के आधार पर हुआ है। उत्तर में नेपाल की दक्षिणी सीमा से लेकर छोटे नागपुर तक। पूर्व में मिर्जापुर से लेकर वाराणसी, फैजाबाद, रांची, पटना, आजमगढ़, देवरिया, गोरखपुर, गाजीपुर, बलिया, शाहाबाद तक के भागों में बोली जाती है ।

इसकी चार उपबोलियाँ हैं - उत्तरी भोजपुरी, दक्षिणी भोजपुरी, पश्चिमी भोजपुरी, तथा नागपुरिया।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक

1. मध्य र का लोप होता है - लरिका लड़का, करि- कह
2. न्द,न्ध के स्थान पर न, न्ह, आते हैं - सुन्दर-सुन्नर, बान्ध-बान्ह
3. म्ब,म्भ, के स्थान पर म,म्ह, आते हैं - ताम्बा-तामा,खम्भा-खम्हा

ख. रूपात्मक

1. संज्ञा एवं विशेषण के तीन रूप - माली, मलिया, मलिनयवाँ
2. बहुवचन के नि,न्ह,न आदि प्रत्यय सम, लोग आदि के योग से बनते हैं। जैसे-लोगनि, लोगन्ह, समन।
3. भूतकालिक क्रिया रूपों में 'इल' और वर्तमान कालिक में 'ला' परसर्ग लगता है -
   खाया-खाइल, खाता है- खाला
4. पुरूषवाचक सर्वनाम - एकवचन में - मोहि,मोर, हमनिका, हमरा, हमार, हमरन।
5. भूतकाल के एकवचन मे रहली, रहले, रहल, रहलसि, बहुवचन में रहली,रहलन्हि, रहलेसन्हि का प्रयोग मिलता है।

कबीर, धर्मदास, भीखा- साहब आदि के पदों में भोजपुरी का प्रयोग मिलता है। साहित्य की दृष्टि से भी यह संपन्न है। इसलिए कुछ विद्वान इसे बोली न मानकर भाषा कहते है।

2.3.3.2. मगही:-

प्राचीन मगध का अपभ्रंश मगह हुआ, इसी से मगही नाम बना। आदर्श मगही गया की मानी गयी है। इसके अलावा, सासाराम, पटना, हजारीबाग, मुंगेर, राँची, भागलपुर, के कुछ इलाके में भी मगही बोली जाती है।

पूर्वी, जंगली, टलहा,सोनतटी, इसकी, उपबोलियाँ बताई गयी है।

मागधी प्राकृत अपभ्रंश से विकसित है। मगही और भोजपुरी मे लिंग-वचन के रूपों, संज्ञा, सर्वनाम परसर्ग आदि समान है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

विशेषता

क. रूपात्मक

1. शब्दों में इ,ए,के पूर्व अ, ए, ध्वनि में परिवर्तित हो जाती है - कहकर-कहिके

ख. पदात्मक

1. संज्ञा के तीन रूप - घर-घरवा-घरौना
2. बहुवचन के रूप न प्रत्यय-'सम 'और 'लोग' से बनते हैं -
   घोरा-घोरन, घोरा सम, राजा लोग
3. विभक्तियों में करण के लिए ए-एं-अधिकरण में ए का योग मिलता है-
4. पुरूषवाचक सर्वनाम-हम,मोर,हमरा,अपनी विशिष्ट है ।
5. क्रियाविशेषण पद में देखना का देखव, देखल
   वर्तमानकालिक कृदन्त में देखित, देखत
   भूतकाल में - देखल रूप होता है

इसमें लिखित साहित्य नहीं मिलता किंतु लोकसाहित्य पर्याप्त है। सन्त कवियों में बाबा मोहनदास, हेमनाथ, जगन्नाथ, प्रसिद्ध है।

2.3.3.3. मैथिली :-

मिथिला की बोली मैथिली है । स्थूल रूप में बिहार में गंगा से उत्तर नेपाल की तराई तक मैथिली बोली जाती है। पूर्व में पूर्णिया जिला, भागलपुर और बंगाल के दिनाजपुर के कुछ भागों तक इसका विस्तार है । आदर्श मैथिली मुजफ्फरपुर, सीतामढ़ी दरभंगा की है। इसका एक नाम तिरहुतिया भी है। इसकी छह बोलियाँ हैं - उत्तरी,दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी, छिकाछिकी, जोलाही। हिन्दी भाषी इसे हिन्दी की बोली मानते हैं तो बंगला भाषी बंगला की जबकि इसकी अपनी विशेषताएँ हैं। इसलिए स्वतंत्र भाषा के रूप में अस्तित्व बनाने के लिए प्रयत्नशील है । संभवत: इसका कारण हिन्दी क्षेत्र और बंगाली क्षेत्र के संधिस्थल में मिथिला का होना हो सकता है ।

विशेषताएँ -

क. स्वनात्मक

1. मैथिली के सभी शब्द स्वरांत होते हैं । अ,इ,उ, का उच्चारण अतिलघु होता है ।
2. मध्य श,ष के स्थान पर संयुक्त अक्षर में ह हो जाता है- पुष्प-पहुप,मास्टर-माहटर

ख. रूपात्मक

1. संज्ञा के अवधी के समान तीन रूप -माली,मालिया,मलीवा, मीठा-मीठवा-मिठकवा ।
2. बहुवचन सभ, सबहि, लोकनि जोड़ने से बनता है ।
3. कर्म और सम्प्रदान में के, करण और अपादान में सैं, सौं, संबंध में क,कर,केर,तथा अधिकरण में मैं रूप बनते हैं।
4. क्रियारूप जटिल है। ऐ, औ में अंत होनेवाले क्रिया रूप के साथ क जोड़ा जाता है। मैं सोया-सुतलिऐक।
5. सहायक क्रिया रूप छ-रूप, वर्तमान ल-रूप भूतकाल-भविष्य में ब होता है। वर्तमान कालिक रूप'हु' का गुजराती के समान छ रूप-विद्यमान है ।
6. क्रियापद के साथ 'ल'तथा 'वा' का प्रयोग - रहल, देखल, देखवा, देखव आदि।
7. लिंगभेद 'इ' प्रत्यय के योग से होता है- लड़का-लड़की (नैना-नैनी) बड़ा-बड़ी(बड़-बड़ि)
8. पुरूषवाचक सर्वनामों में हम, हमारा, हम, तम, तोह, तोहार अपनाहि, अपन, अपनसम, इसका (एकर), इनका (हिनक) आदि होते हैं।

मैथिली में सर्वाधिक साहित्य रचना हुई है । इसके प्रसिद्ध कवि हैं - विद्यापति, उमापति, हर्षनाथ, लखिमा, ठकुरानी, मनबोध झा आदि। प्रिय छात्रों आपने विद्यापति की पदावली पढ़ी है। वहाँ मैथिली की विशेषताओं से परिचित हुए हैं ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(III) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

संक्षेप में उत्तर लिखिए

1) बिहारी हिन्दी की बोलियों के नाम लिखिए ?
2) विद्यापति ने किस बोली मे पदावली की है ?
3) मगही कहाँ बोली जाती है ?

2.3.4. राजस्थानी हिन्दी :-

राजस्थान को बोली जानेवाली भाषाओं कों राजस्थानी संज्ञा प्राप्त है । डॉ.गियर्सन ने कर्नल टॉड के आधार पर यह शब्द प्रयोग किया है । परंतु राजस्थान में 'व्रज' (भरतपुर-धौलपुर) तथा राजस्थान से बाहर 'मालवी' इंदौर, रतलाम, उज्जैन, मंदसौर,देवास जिले में प्रयुक्त होती है ।

राजस्थानी की विशेषताएँ

1) राजस्थानी में 'अ' को 'इ' तथा इ, उ, ऊ, को 'अं' बोला जाता है -
   मनुष्य माणस, मालूम मालम, सरदार सिरदार
2) मूर्धन्य ध्वनियों का प्रयोग अधिक होता है । संदेस संदेसडा, कोठी कोठडी ।
3) 'स' का 'ह' हो जाता है - सेठ हेठ, सो हो, साथ हात
4) 'ह' (मध्यम) व होता है - सोहन सोवन, लुहार लुवार
5) 'न' का 'ण' हो जाता है - जाना जाणा, सुन सुण.
6) राजस्थानी में वैदिक 'ळ' ध्वनि है - बादल बादळ, धवल धोळा, काली काला ।

रूपात्मक -

1) परसर्गों का विशिष्ट प्रयोग - कर्म-संप्रदान - नै, ने, कने, रै ।
   करण - अपादान - सूँ - ऊँ - अधिकरण - में, माँग, मांई, माहि
2) भविष्यकाल में 'ल' का प्रयोग होता है चलेंगे चालेला, जाऊँगा जाऊँला

राजस्थानी भाषा के अतंर्गत कई बोलियाँ है, जिनमें अधिक अंतर नहीं है । भिन्न-भिन्न प्रदेशो में बोली जाने के कारण इनके भिन्न-भिन्न नाम पड़े हैं । इसकी मुख्य बोलियाँ हैं - मारवाड़ी-मेवाडी, मेवाती, ढूँढ़ाडी,हाडौती, मालवी आदि । राजस्थान की इन उपभाषाओं को क्षेत्र की दृष्टि से चार भागों में बाँटा जाता है । जैसे -पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी), उत्तरी राजस्थानी, (मेवाती), पूर्वी राजस्थानी (जयपुरी) तथा दक्षिणी राजस्थानी (मालवी) इनका संक्षेप में परिचय इस प्रकार है -

2.3.4.1. मारवाड़ी :-

मारवाड़ी का प्राचीन नाम मरू भाषा है जो मारवाड़ प्रांत में बोली जाती है ।

जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, अजमेर, किशनगढ, नागौर इ. क्षेत्र में प्रयुक्त पश्चिमी राजस्थानी अथवा मारवाड़ी नाम से जानी जाती है । इसकी लगभग अठारह उपबोलियों का उल्लेख है ।

मारवाड़ी का परिनिष्ठित रूप जोधपुर जिले में मिलता है ।

इसमें संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश के शब्द विशेष रूप से मिलते हैं । कुछ-अरबी फारसी के शब्द भी घुल-मिल गये हैं । मारवाडी ओजगुण संपन्न भाषा है । सोरठा छंद तथा शास्त्रीय राग भी मारवाड़ी के प्रसिद्ध है । मारवाड़ी में कुछ गुणविशेषताएँ हैं - लोकसाहित्य तथा शिष्ट साहित्य मिलता है ।

विशेषताएँ-

क. स्वनात्मक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1) मूर्धन्यीकरण की प्रवृत्ति-न-ण,थ-ठ, ल-ळ्, स्वनों के प्रयोग की अधिकता

2) ट वर्ग की प्रधानता ट,ठ,ड़,ढ,ण-ड़,ढ़ विशेष रूप से प्रयुक्त बड़ा,कोठड़ी, काणी, संदेसड़ा।
ओकारांत की प्रवृत्ति-लियों, गयों थो।

ल के स्थान पर पळ्, जल-जळ् बहुवचनात्मक पदों के अंत में आँ ध्वनि लक्षित-बात-बातॉं, छोरी-छोरियाँ, लोग-लोंगाँ बेटे-बेटा।

ख. रूपात्मक

ध और स-दो क्लीक ध्वनियाँ-ध का उच्चारण द-ध-के बीच का स का उच्चारण-श के समान शब्द के अंत में ह का लोप होता है - शहर-सैर, सुलह-सुलै

कारकीय परसर्ग-नै सूँ-अं तै-थाणी के लिए रो, रा, री, र।

संबंधकारक-में, पै, माथें।

अव्यय- अठै-उठै,जबे-तबे,आज-काल, कीसा,पण, के ।

भविष्यकालिक परसर्ग- ला,ली,ले है चालेला, जाऊँला।

सर्वनामों में रूप विविधता है- मैंहुं, म्हँ, सूँ। यह-ओ, यौ।

मारवाड़ी का लोकसाहित्य बहुत ही समृद्ध है।

2.3.4.2 जयपूरी (ढूँढाडी)

पूर्वी राजस्थानी की यह प्रधान बोली है। इसे ढूँढाड़ी कहते हैं - जयपुर के पहले इस प्रांत का नाम ढूँढाण था। इसका केंद्र है जयपुर,तथा बूँदी और कोटा का कुछ हिस्सा। ढूँढाडी को झाड़शा या जंगली बोली भी कहा गया है। मध्यपूर्वी वर्ग की यह प्रतिनिधि बोली है। तोरावाटी, काठैड़ा, चौरासी, नागरचाल, राजावाटी इसकी उपबोलियाँ हैं ।

इस पर गुजराती और मारवाड़ी का प्रभाव दिखाई देता है। संत दादूदयाल तथा उनके शिष्यों की रचनाएँ जयपूरी में मिलती हैं।

विशेषताएँ

पदात्मक

कर्म संप्रदान - के, नै, कै, करण अपादान - से, सूँ, सै, संबंध के, को, की, अधिकरण- में, ऊपर, मालै है।

सर्वनामों में-मैं,मनै,जनै,तनै, हमारो, थारो, म्हाको, थाँको, ईन, ऊँ, कै, जी, को रूप उल्लेखनीय है।

क्रिया के सामान्य रूप लेबो, देवो, भूतकाल दीयो,लीयो, के अलावा दीनू-लीनू भी है। अ,आ,इ,उ का आपसी परिवर्तन-पँडित-पंडत,दिन-दन।

इसी का एक रूप बूँदी, कोटा में प्रचलित है इसे हाडौती कहते हैं।

2.3.4.3. मेवाती :-

उत्तरी राजस्थानी अर्थात, मेवाती का प्रयोग भरतपुर, अलवर तथा गुडगाँव में होता है। मेव जाति की अधिकता के कारण इस प्रदेश को मेवात कहा गया, यहाँ की मेवाती बोली है। इसकी चार उपबोलियाँ बताई गयी है। शुद्ध मेवाती, राठी मेवाती, नहेड़ा मेवाती, और कठेर मेवाती।

मेवाती जयपुरी के समान है। सभी सर्वनाम हरियाणी बोली के समान है।

विशेषताएँ

कर्ता -में, नै, कर्म संप्रदान- कै , संबंध-को,का,की, अपादान- सैं,लैं, है ऐंको, वैं को, झैं को, कैंह को है।

क्रियारूपों पर राजस्थानी का प्रभाव है थो,था, थी, प्रचलित है।

चरणदासी पंथ के प्रवर्तक संत चरणदास की शिष्याएँ-दयाबाई, सहजोबाई की रचनाएँ इसी भाषा में मिलती हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

2.3.4.4. मालवी :-

समस्त मालवा प्रांत की भाषा मालवी है। उज्जैन के आसपास का क्षेत्र मालव नाम से जाना जाता है। रतलाम, इन्दौर, भोपाल, होशंगाबाद, बैतुल, ग्वालियर, कोटा जिले का कुछ भाग इसके क्षेत्र है। मालवी का केंद्र उज्जैन, इन्दौर, देवास है। इस प्रदेश की भाषा का प्राचीन नाम अवंती या अवन्तिका मिलता है। परिनिष्ठित मालवी को अहीरी भी कहते हैं। दक्षिणी राजस्थानी अर्थात्, मालवी का विकास शौरसेनी, अपभ्रंश से हुआ।

सोड़वाड़ी,राँगड़ी,डाँगी,धोलेवाड़ी, भोयारी, रतलामी, मन्दसौरी, उमठवाड़ी कटियाई, डँगेसरी, पाटवी आदि इसकी उपबोलियाँ हैं। इसमें मारवाड़ी और ढूँढ़ाड़ी दोनों की विशेषताएँ मिलती है। कहीं-कहीं मराठी का भी प्रभाव झलकता है। यह कर्णमधुर और कोमल भाषा है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक

1. इसमें ण नहीं बोला जाता है।
2. ड़ की अपेक्षा ड का प्रयोग मिलता है।
3. ऐ औ, के स्थान पर ए, ओ का प्रयोग होता है।
4. इ, उ, और अ, का आपसी परिवर्तन दिन-दन,ठाकुर-ठाकर,ह के स्थान पर य का प्रयोग-मोहन-मोयन,
5. ह के स्थान पर व का प्रयोग-लुहार-लुवार,
6. ह का लोप-महिना, मइना,साहब-साब।

ख. रूपात्मक

परसर्गो में, कर्ता में - ने, कर्म में-खे,के,रे, करण-अपादान में से, ती, मारे, संप्रदान में दे,के, सारू, कारणे वास्ते, संबंध में-को,का,की,रो,रा,री,थाको,थाका,प्रयुक्त होता है।

विशेष सर्वनाम - के, कीने, काणी ने, कोई, कई, कै, है।

संज्ञा बहुवचन में होर, होरो, होनो, जुड़ता है।

सहायक क्रिया का भूतकालिक रूप - थो,था,थी है।

भविष्यत-गो,गा,गी।

मालवी में साहित्य का अभाव है। लोकसाहित्य मिलता है।

इसके अलावा मेवाड प्रांत की मेवाडी है जो भीलवाडा, चित्तौडगढ़, उदयपुर में बोली जाती है। बागडी बोली डूँगरपुर बाँसवाडा में बोली जाती है।

(ऋ) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

1) राजस्थानी हिन्दी की व्युत्पत्ति किस अपभ्रंश सें हुई ?
2) राजस्थानी हिन्दी की बोलियों के नाम लिखिए ?
3) मारवाड़ी में कौनसी वैदिक ध्वनि है ?
4) जयपुरी बोली को कौनसा अन्य नाम है ?
5) मालवी का विकास कौनसे अपभ्रंश से हुआ ?

2.3.5. पहाड़ी हिन्दी :-

पहाड़ी का अर्थ है पहाड़ की। यह पहाड़ी प्रदेश में बोली जाती है, इसी कारण यह 'पहाड़ी' कहलाती है। पहाड़ी हिन्दी हिमाचल प्रदेश में भद्रवाह के उत्तर-पश्चिम से लेकर नेपाल के पूर्वी भाग तक फैली हुई है। इसके अंतर्गत तीन प्रधान बोलियाँ हैं-पश्चिमी, मध्यवर्ती तथा पूर्वी पहाड़ी।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

जौनसार, शिमला, चंबा, सिरमौर तथा मंडी के समीपवर्ती भागों की भाषा पश्चिमी पहाड़ी कहलाती है। इसकी प्रमुख बोलियाँ है - जौनसारी, सिरमौरी, बघाटी, चमेआली, क्योंठली।

मध्यवर्ती पहाड़ी :-

यह क्षेत्र के मध्यभाग में बोली जाती है इसलिए इसे मध्यवर्ती, केंद्रीय, माध्यमिक या मध्य पहाड़ी भी कहते है। शौरसेनी अपभ्रंश से इसका विकास हुआ है। यह कुमायूँ तथा गढ़वाल में दक्षिण-पूर्व में बरमदेव से लेकर उत्तर-पश्चिम में चकराता के उत्तर में स्थित प्रदेश तक बोली जाती है। इस पहाड़ी की दो बोलियाँ हैं - कुमायूँनी और गढ़वाली।

2.3.5.1.कुमायूँनी -

इसका मुख्य क्षेत्र कुमायूँ होने के कारण इसे कुमायूँनी कहा जाता है। इसके अंतर्गत नैनीताल, अल्मोडा और पिथारोगढ़ जिले सम्मिलित है। इसकी मूल बोली खस थी। खसपरजिया, कुम्मयाँ, चोगरखिया, गंगोला, दानपुरिया, सीराली, सोरियाली, पंछाई, जोहरी आदि इसकी प्रधान उपबोलियाँ है।

सामान्य ध्वनियाँ हिन्दी की ही है।

विशेषताएँ

क. स्वनात्मक

1. ए, ओ के ह्रस्व - दीर्घ दोनों रूप हैं।
2. श, ष, स में से ष लेखन में है - स के स्थान पर श उच्चारित - दस-दश
3. ए, ओ- के स्थान पर या वा ध्वनियाँ प्रयुक्त - चेला-च्याला, बोझ-ब्वाज
4. अधिकतर शब्द - ओकारांत - गयो
5. अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति - सूखा-सुक, बोझ-बोज, दूध-दूद, हाथ-हात
6. संयुक्त व्यंजन के रूप में प्रयुक्त श, स का लोप - स्थल-थल, श्मशान-मशान
7. क्ष - कहीं क, कहीं ख, कहीं छ में परिवर्तित - राक्षस - राकस, क्षेत्र-खेत, लक्ष्मण-लछम

   आरंभिक श प्राय: छ में परिवर्तित शनिश्चर-छंजर, शत्कल-छिकल

   इसमें लोकसाहित्य मिलता है।

2.3.5.2. गढ़वाली

इसका क्षेत्र गढ़वाल होने से गढ़वाली नाम पड़ा पहाड़ी भाग का पश्चिमी खंड जिसे केदारखंड कहते हैं इस बोली का क्षेत्र है। टेहरी, अलमोड़ा, देहरादून, सहारनपुर, बिजनौर तथा मुरादाबाद के कुछ भागों में बोली जाती है।

गढ़वाली की अनेक उपबोलियाँ है - जिनमें - प्रमुख श्रीनगरिया, राठी, लोहल्या, बधानी, दसौल्या, मांझ कुमैयाँ, नागपुरिया, सलाणी, गंगापारिया तथा टेहरी है।

श्रीनगरिया गढ़वाली का परिनिष्ठित रूप है।

विशेषताएँ

स्वनात्मक

च वर्गिय ध्वनियाँ अधिक संघर्षी।

ल दन्ताग्र, अ ध्वनि शब्दांत में सुरक्षित।

अनुनासिकीकरण की प्रवृत्ति - पैंसा, दैंत, प्यांर

र, ड, ल, ळ में परस्पर परिवर्तन - शरीर-शरील, काला-काडो

अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति-भीख-भीक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

स्वरलोप की प्रवृत्ति-अँगूठी-गुठी, आहार-हार

'ण' जोड़ने से अकारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग - दोस्त-दोस्तीण, पंड़ित-पंड़िताण, बाघ-बघेण

श, स में भेद दिखाई देता है ।

गढ़वाली में लोकसाहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है ।

पूर्वी पहाड़ी :-

पूर्वी पहाड़ी (नेपाली) का क्षेत्र हिन्दी प्रदेश से बाहर है । पहाड़ी क्षेत्र के पूर्व भाग में बोली जाने के कारण इसका नाम पूर्वी पहाड़ी है ।

इसके अन्य नाम नेपाली, पर्वतिया, गोरखाली, तथा खसकुरा आदि है । नेपाली वर्तमान में नेपाल की राजभाषा है । यह क्षेत्र हिन्दी प्रदेश से बाहर होने के कारण हिन्दी की उपभाषाओं के संदर्भ में इसकी गणना नहीं की जाती ।

2.3.6. दक्खिनी हिन्दी :-

दक्खिनी हिन्दी का जन्म उत्तर भारत में शौरसेनी अपभ्रंश से माना जाता है । इसका विकास दक्षिण में हुआ, इसलिए दक्खिनी नाम पड़ा । दक्खिनी हिन्दी को हिंदवी, दकनी, देहलवी, गुजरी, जबाने हिन्दुस्तान, दक्खिनी उर्दू, मुसलमानी दक्खिनी, दक्खिनी, हिंदुस्थानी आदि नामों से पुकारा जाता है । मूलतः दक्खिनी, हिन्दी का ही एक रूप है । इसका मूल आधार दिल्ली के आसपास प्रचलित १४ वी १५ वी शती की खड़ीबोली है । मुसलमानों ने भारत आने पर इसे अपनाया । १५ वी १६ वी शती में फौज, धर्मप्रचारक, तथा दरवेशों के साथ यह दक्षिण पहुँची । वहाँ उत्तर भारत के हिन्दुओं तथा मुसलमानों में प्रचलित हो गयी ।

जिसे फारसी का कुछ न ज्ञान है, जबाँ दक्खिनी उसको आसान है ।

इस पर उर्दू का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है । क्षेत्रानुसार शब्दसमूह पर तमिल, तेलगु, कन्नड, मराठी का प्रभाव है । जैसे औरंगाबाद, देवगिरी की भाषा में मराठीपन है तो गुलबर्गा और बीजापुर की भाषा में कन्नड का, हैदराबाद, गोलकुण्डा की दक्खिनी तेलगु से प्रभावित है । बरार, बीदर, गोलकुण्डा, अहमदनगर, बीजापुर इसके केंद्र है ।

इसकी लिपि फारसी है परंतु सामान्य हिन्दी और दक्खिनी हिन्दी में पर्याप्त समानता है । हिन्दी के अधिकाँश स्वर दक्खिनी हिन्दी में मिलते हैं ।

विशेषता

क. स्वनात्मक

1. अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति - समझ-समज, पीछे-पीचे, अधिक-अदिक, सुख-सुक
2. कुछ शब्दों का महाप्राणीकरण - पलक-पलख,
3. विपर्यय-कीचड़-चीकड़
4. दीर्घ स्वरों के ह्रस्व होने की प्रवृत्ति - भीगना-भिगना, आदमी-अदमी
5. हिन्दी के सभी व्यंजन दक्खिनी में है । अरबी - फारसी के क, ख़,ग़,ज़,ग़, फ़ - व्यंजन भी मिलते हैं । ड की अपेक्षा ड़ का व्यापक प्रयोग होता है ।
6. दो मूर्धन्य ध्वनियों का प्रयोग एक साथ नहीं - टूटे-तुटे, ठण्डी-थंडी,
7. द्वित्व व्यंजन की प्रवृत्ति- डली-डल्ली, फीका, फिक्का, मीठा-मिठ्ठा, सूखा-सुक्का
8. शब्द के मध्य आनेवाला ह लुप्त होता है - ठहरते - ठैरते
9. न्द के स्थान पर न - चान्दनी - चाननी,
10. न्ध के स्थान पर न - बान्धना - बानना
11. म्ब के स्थान पर-म गुम्बज-गुम्मज, कम्बल, कम्मल

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

ख. रूपात्मक

1. बहुवचन में मूल और विकृत रूप के साथ आँ जुड़ जाता है जैसे- औरत-औरताँ, बन्दा-बन्दाँ,

2. परसर्ग-में नी, नै, को, कूँ, सों, ते, थे, खातिर तहं, केरा, केर, मियाने, महि, उपर मिलते हैं।

3. क्रियारूपों में 'या' जोड़कर कुछ प्रयोग मिलता है। दौड्या, जान्या, बोल्या भविष्यत्काल के रूपों में गा, गी, गे तथा 'स' प्रत्यय का भी प्रयोग मिलता है। जाँगा, खाँगा, जासीर, होसन, ऐसियाँ।

4. सर्वनाम लगभग हिन्दी के समान मिलते हैं। दक्खिनी मूलत: हिन्दी ही है।

राजाश्रय के कारण इस भाषा में साहित्य सृजन बहुत हुआ है। दक्खिनी हिन्दी के लेखकों में ख्वाजा नवाज गेसूदराज मुहम्मद हुसैनी का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। कुतुबशाही के राज्य में वजही, गवासी, इब्न, निशाती, गुलाम अली आदि साहित्यकार चर्चित रहे हैं। आदिलशाह में शाह मीरांजी,बुह्रानुद्दीन, नसरती प्रसिद्ध हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है।

निकला है सितमगर तेरे अदा कूँ लेकर
सीने में मुज आसक के अब फतेयाब होगा (वली)

(फ) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

1) पहाड़ी हिन्दी किन राज्यों में बोली जाती है ?

2) नेपाली के साथ-साथ कौनसी भाषा प्रयुक्त होती है ?

3) दक्षिणी हिन्दी कौनसी अपभ्रंश से विकसित हुई है ?

4) दक्खिनी हिन्दी की तीन ध्वन्यात्मक विशेषताएँ लिखिए।

5) दक्खिनी हिन्दी की कौन-कौन सी लिपियाँ हैं ?

2.4. स्वयं अध्ययन के प्रश्नों के उत्तर

[I]

1) पश्चिमी हिन्दी में खड़ीबोली, ब्रज, हरियाणवी, बुंदेली, कन्नोजी आदि बोलियों का समावेश होता है।

2) वर्तमान हिन्दी खड़ीबोली से विकसित हुई है।

3) खड़ीबोली की तीन विशेषताएँ - आकारांतता, द्वित्व प्रवृत्ति, ऐ, ओ, के स्थान पर, ए, ओ का प्रयोग।

4) पश्चिमी हिन्दी की ब्रज को भाषा कहा जाता है।

5) ब्रजभाषा का क्षेत्र ब्रज, मथुरा, अलीगढ़ आगरा आदि है।

6) भुक्सा, अंतर्वेदी, जादोंवाटी, डांगी आदि ब्रजभाषा के रूप हैं।

7) हरियाणवी का नाम बांगरू है।

[II]

1) अवधी की दो रूपात्मक विशेषताएँ, संज्ञा शब्दों के तीन-तीन रूप मिलते हैं, व्यक्तिवाचक तथा विदेशी शब्दों में वा, इवा, लगाकर शब्द बनाएँ जाते हैं।

2) अवधी में य का ज, ऋ का रि, ष के स्थान पर केवल स का प्रयोग मिलता है।

3) अवधी में तुलसीदास, जायसी, कुतुबन, मौलाना दाऊद, मंझन, उस्मान आदि प्रमुख कवि हैं।

4) छत्तीसगढ़ी छत्तीसगढ़ में बोली जाती है।

5) छत्तीसगढ़ी पर भोजपुरी का प्रभाव दिखाई देता है।

[III]

1) बिहारी हिन्दी की बोलियाँ भोजपुरी, मगही, मैथिली हैं।

2) विद्यापति ने मैथिली में रचनाएँ लिखी।

3) मगही पटना और उसके आस-पास बोली जाती है।

[IV]

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

1) शौरसेनी अपभ्रंश से राजस्थानी हिन्दी का विकास हुआ।
2) राजस्थानी हिन्दी की बोलियाँ मेवाती, मारवाड़ी, जयपुरी, तथा मालवी हैं।
3) राजस्थानी में वैदिक ळ ध्वनि का प्रयोग होता है।
4) जयपुरी बोली का अन्य नाम ढूँढाड़ी है।
5) मालवी का विकास शौरसेनी-अपभ्रंश से हुआ।

[V]
1) पहाड़ी हिन्दी हैं- उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश राज्यों में बोली जाती है।
2) नेपाली के साथ पहाड़ी हिन्दी बोली जाती है।
3) दक्षिणी हिन्दी शौरसेनी अपभ्रंश से विकसीत हुई है। (कारण दिल्ली के आसपास के लोग दक्षिण में आकर बस गये। खड़ीबोली का का यह दक्षिणी रूप है।)
4) दक्खिनी हिन्दी की तीन ध्वन्यात्मक विशेषताएँ-दीर्घ स्वरों के ऱ्हस्व होने की प्रवृत्ति अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति, द्वित्व व्यंजन।
5) दक्खिनी हिन्दी की फारसी और देवनागरी लिपियाँ हैं।

2.5. इकाई का सारांश

इस इकाई में देखा कि हिन्दी बड़े भू-भाग में बोली जानेवाली भाषा है। यह भारत के सात प्रदेशों की राजभाषा है। बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश तथा दिल्ली हिन्दी भाषी क्षेत्र है। जहाँ हिन्दी की अनेक बोलियाँ प्रचलित है। हिन्दी भाषाओं को मुख्यतः पाँच बोलीवर्गों में विभाजित किया जाता है। पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, तथा पहाड़ी हिन्दी। इन पाँच बोलीवर्गों के अंतर्गत हिन्दी की सत्रह-बोलियाँ प्रचलित हैं। हमारे पाठ्यक्रम में खड़ीबोली, ब्रज तथा अवधी बोलियों का अध्ययन-अपेक्षित है।

पश्चिमी हिन्दी वर्ग में खड़ीबोली, हरियाणवी, ब्रज, बुंदेली, कन्नोजी आदि समाविष्ट है। खड़ीबोली का प्राचीन नाम कौरवी है जो विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक कारणों से समृद्ध भाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा है। वर्तमान हिन्दी खड़ीबोली का ही परिनिष्ठित रूप है।

पूर्वी हिन्दी वर्ग में अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी का समावेश होता है। बिहारी हिन्दी की भोजपुरी, मगही तथा मैथिली बोलियाँ प्रमुख हैं । राजस्थानी की मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती, मालवी बोलियाँ हैं तो पहाड़ी हिन्दी की कुमायूँनी और गढ़वाली प्रमुख बोलियाँ हैं। इनके अलावा हिन्दी की दक्खिनी हिन्दी का रूप भी प्रचलित है।

खड़ीबोली दिल्ली, मेरठ, मुरादाबाद, रामपुर, बिजनौर, मुजफ्फरपुर, सहारनपुर आदि भागों की बोली है। सहारनपुर, मेरठ, और मुजफ्फरपुर को सामूहिक रूप में कुरूप्रदेश भी कहा जाता है। इसलिए इसका एक नाम कौरवी भी है। यह सामान्यतया उत्तर भारत की बोली है। सामान्य रूप से साहित्यिक हिन्दी के स्वर मध्यम व्यंजनों का उच्चारण द्वित्त होता है। अमीर खुसरों का साहित्य खड़ीबोली का है ऐसा माना जाता है।

ब्रज पश्चिमी हिन्दी की ही प्रमुख बोली है। जो ब्रज में और उसके आसपास बोली जाती है। ब्रज शब्द का पुराना अर्थ पशु समूह है। साहित्य और लोकसाहित्य दोनों दृष्टियों से ब्रज भाषा अत्याधिक समृद्ध है। ब्रज के प्रमुख कवियों में सूरदास, तुलसीदास, नंददास, नाभादास, रहीम, बिहारी, देव, पद्माकर, केशव, घनानंद आदि का नाम उल्लेखनीय है। सूरदास और नंददास के योगदान से ब्रज को साहित्यिक रूप मिलने में सहायता मिली। इसका जन्म शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है।

पाठ्यक्रम में तीसरी बोली अवधी है, जो अवध प्रदेश की बोली है। इसका मुख्य केंद्र अयोध्या है। इसके अलावा लखनऊ, इलाहाबाद, फतेहपुर, रायबरेली, जौनपुर, सीतापुर, फैजाबाद आदि भी इसका क्षेत्र है। अयोध्या का प्रदेश कोसला के अंतर्गत था इसलिए अवधी को कोसाली भी कहा जाता है। पूर्वी अवधी, पश्चिमी अवधी तथा बैसवाडी इन तीन रूपों में अवधी का विकास देखा जाता है। साहित्य की दृष्टि से भी अवधी काफी समृद्ध है। सूफी कवियों की रचनाएँ, रामभक्ति का संपूर्ण साहित्य अवधी में मिलता है। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित ''रामचरितमानस'' अवधी की सर्वोत्तम काव्यकृति है। इसका लोकसाहित्य भी पर्याप्त समृद्ध है। ये अर्धमागधी से विकसित है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इस इकाई से हम हिन्दी के भौगोलिक विस्तार तथा हिन्दी के विभिन्न भाषाई रूप और बोलियों के भौगोलिक रूप, भाषागत विशेषत: और साहित्य से परिचित हुए। आपने अवधी, ब्रज तथा खड़ीबोली को और राजस्थानी का मध्यकालीन कवियों की रचनाओं के माध्यम से परिचय पाया है। यहाँ पर आपने भाषावैज्ञानिक परिचय प्राप्त किया।

2.6. अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

1) पश्चिमी हिन्दी की बोलियों का भाषावैज्ञानिक परिचय दीजिए।
2) ब्रज भाषा और अवधि में तुलना प्रस्तुत किजिए।
3) खड़ी बोली नाम कैसे पड़ा। बताते हुए परिचय दीजिए।
4) राजस्थानी की बोलियों का परिचय दीजिए।
5) दक्खिनी हिन्दी वस्तुता खड़ी बोली ही है - पक्ष विपक्ष में उत्तर लिखिए।

टिप्पणियाँ लिखिए

1) गढ़वाली
2) कन्नौजी
3) मारवाड़ी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई ३

हिन्दी का भाषिक स्वरूप

<u>*इकाई की रूपरेखा*</u>

३.१ प्रस्तावना
३.२ उद्देश्य
३.३ विषय विवरण
३.३.१ हिन्दी की स्वनिम व्यवस्था
क. खण्डय
ख. खण्डेतर
३.३.२ हिन्दी शब्द रचना
क. उपसर्ग
ख. प्रत्यय
ग. समास
३.३.३ रूप-रचना
३.३.४ १. लिंग वचन कारक व्यवस्था
२. संज्ञा-सर्वनाम, विशेषण,
३. क्रियारूप
३.३.५ हिन्दी वाक्य रचना
क. पदक्रम
ख. अन्विति
३.४ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
३.५. इकाई का सारांश
३.६. अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

३.१ प्रस्तावना -

इस इकाई का केंद्रिय विषय हिन्दी भाषा की स्वन और स्वनिम व्यवस्था से आपको परिचित कराना है । इस कारण आपको हिन्दी के स्वन, स्वनों के प्रकार, स्वर-व्यंजन का संक्षिप्त परिचय देते हुए संस्वन और स्वनिम में अंतर को समझाया जाएगा । हिन्दी की स्वन व्यवस्था के अंतर्गत खंड्य-खंड्येतर स्वनिमों की विशेषताओं का परिचय दिया जाएगा। तत्पश्चात भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई 'शब्द' की निर्माण प्रक्रिया उपसर्ग-प्रत्यय-समास के कारण शब्द की सूक्ष्म अर्थाभिव्यंजना से आप परिचित हो पाएंगे ।

भाषाविज्ञान में शब्द को अर्थतत्त्व कहते हैं।

अर्थतत्त्व का सीधे ज्यों का त्यों वाक्य में प्रयोग नहीं होता । इसके लिए रूपरचना अर्थात, अर्थतत्व और संबंधतत्व का योग करना पड़ता है । रूपरचना से लिंग वचन, काल, पुरूष का बोधन हमें होता है । इनके कारण संज्ञा, सर्वनाम और क्रिया के रूप बदलते हैं। इस तथ्य से आपको परिचय होगा । इसके बाद आपको हिन्दी वाक्यर चना को स्पष्ट करते हुए उसके पदक्रम और अन्विति से परिचित किया जाएगा ।

३.२ उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

१) हिन्दी के भाषिक स्वरूप से परिचित हो सकेंगे ।

२) स्वन-स्वनिम-संस्वन की संकल्पना को समझ सकेंगे ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

३) हिन्दी के स्वनिमों के प्रकार-खंड्य-खंड्येतर को जान पाएंगे ।

४) हिन्दी शब्द रचना को आत्मसात कर सकेंगे ।

५) हिन्दी की रूपरचना से अवगत होंगे ।

६) हिन्दी में वाक्य रचना कर पाएंगे ।

३.३ विषय विवरण-

किसी भाषा की लघुतम इकाई स्वन(ध्वनि) होती है । स्वन के मुख्यतया निम्न रूप होते है - स्वर, व्यंजन, और अर्धस्वर ।

हिन्दी की स्वनव्यवस्था इस प्रकार है -

१) स्वर-स्वन-स्वर वे स्वन होते हैं जिनके उच्चारण में हवा मुँह से बिना किसी रूकावट के बाहर निकलती है दूसरे इनका सतत उच्चारण हो सकता है । हिन्दी के स्वर स्वन इस प्रकार है अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, ऑ, ऍ.

२) व्यंजन स्वन - जिन स्वनों के उच्चारण में जीभ के अंग अथवा ओठ के द्वारा मुँह में तालु के विभिन्न स्थानों पर हवा को रोका जाता है तब व्यंजन स्वनों का निर्माण होता है । हिन्दी में क से लेकर 'ह' तक व्यंजन स्वन है । जिन्हें इस प्रकार बताया जा सकता है ।

क,	ख,	ग,	घ,	ङ
च,	छ,	ज,	झ,	ञ
ट,	ठ,	ड,	ढ,	ण
त,	थ,	द,	ध,	न
प,	फ,	ब,	भ,	म
य,	र,	ल,	व	
श,	ष,	स		
ह,	ळ			

हिन्दी में अनुनासिकता के कारण सभी स्वर अनुनासिक हो जाते हैं जो अर्थ परिवर्तन की क्षमता रखते हैं । चंद्रबिंदू और बिंदू के द्वारा, अनुनासिक और अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है ।

स्वन-स्वनिम-संस्वन में अंतर

स्वन का अर्थ वर्ण (ध्वनि) है । वर्ण भाषा की सबसे छोटी औच्चरणिक इकाई है । वर्ण के दो प्रकार हैं - स्वर और व्यंजन । जिनका परिचय अभी हमने ऊपर लिया । संस्वन-संस्वन को अंग्रेजी में Allophone कहते है । भाषा में जब स्वनों का उच्चारण किया जाता है तो उनपर आस-पास के स्वन उच्चारण का प्रभाव पड़ता है । शब्दारंभ, शब्दमध्य और शब्दांत में जब कोई एक वर्ण आता है तो अन्य-निकटवर्ती वर्णों के प्रभाव से एक ही स्वन के उच्चारण में अंतर आ जाता है । जैसे -

कालू जल्दी से हल्दी खरीदने बाजार गया जो कल ही खत्म हो गयी थी । इस वाक्य में 'ल' स्वन की पुनरावृत्ति हुई है। परंतु औच्चरणिक भिन्नता दिखाई देती है । जैसे - कालू का 'ल'-वर्त्स पार्श्विक (अपने मूल रूप में उच्चारित) हल्दी का 'ल' द स्वन के प्रभाव से दन्त्य हो गया । इस तरह ल के तीन रूप बनें । एक पार्श्विक, दो -दन्त्य, कल ही का ल महाप्राण हो गया है । जबकि शेष ल वर्ण अल्पप्राण है । इन्हें ही संस्वन-कहा जाता है । लिपिचिन्ह असंख्य संस्वनों को सूचित करता है ।

इसके विपरित स्वनिम अर्थभेद करनेवाला स्वन होता है ।

स्वनिम को तिरछे कोष्ठकों में / / तो संस्वन को बड़े कोष्टको ( ) में लिखा जाता है ।

स्वन और स्वनिम में अंतर इस प्रकार बताया जा सकता है ।

	स्वन		*स्वनिम*
(१)	स्वन निरपेक्ष होता है जो मात्र भौतिक घटना करता है ।	(१)	स्वनिम भाषा विशेष की अर्थ भेदकारी घटना है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(२) स्वनों का वर्गीकरण स्थान, प्रयत्न, प्रकार आदि के आधार पर असंख्य रूपों में किया जाता है।	(२) स्वनिमों की संख्या किसी भी भाषा में ६० से अधिक नहीं होती।
(३) स्वन अपरिमित है।	(३) स्वनिम सीमित है।
(४) स्वन व्यक्ति है।	(४) स्वनिम परिवार है।
(५) स्वन के लिपि चिन्ह नहीं होते।	(५) स्वनिम के लिपिचिन्ह होते हैं।

हिन्दी स्वनिम के भेद

हिन्दी में स्वनिम के दो भेद हैं - खण्ड्य और खंडेतर।

क) खण्ड्य स्वनिम - **(Segmental Phoneme) हिन्दी के ऊपर विवेचित सभी स्वर, अर्धस्वर, व्यंजन तथा नासिक्य स्वनिम है जिन्हें-खण्ड्य स्वनिम कहते हैं। इनका स्वन गुण - प्राणत्व, घोषत्त्व, नासिक्य, निर्नुनसिक आदि भेद किये जा सकते हैं। तीसरे, इनका स्वतंत्र प्रयोग होता है।**

ख) खण्ड्येतर स्वनिम - **(Supra Segmental Phoneme) खण्ड्येतर स्वनिम खण्ड्य स्वनिमों के सहायक के रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। इनका प्रयोग स्वतंत्र रूप में नहीं होता। दूसरी बात यह कि इन का खण्ड करना संभव नहीं। तीसरी बात यह कि खण्डेतर स्वनिम सभी भाषाओं में एक से नहीं मिलते।**

खण्ड्येतर स्वनिमों के प्रकार -

(१) बलाघात (Stress)-शब्दों का उच्चारण करते समय किसी भाषा को बोलनेवाला व्यक्ति शब्द में आनेवाले सभी वर्णों पर समान बल देकर नहीं बोलता। किसी वर्ण पर अधिक बल दिया जाता है तो किसी पर कम। इसी बल के आघात को बलाघात कहते है।

लिपिचिन्हों में वर्ण के ऊपर (')से बलाघात को चिन्हित किया जाता है। अंग्रेजी में बलाघात के कारण अर्थ बदल जाता है। जैसे कंडक्ट (Con'duct) संज्ञा है। परंतु जब Con'duct बोला जाए तो क्रिया हो जाएगी। हिन्दी में बलपरिवर्तन से अर्थ तो नही बदलता अपितु उच्चारण अस्वाभाविक हो जाता है। जैसे छिपकली का उच्चारण हिन्दी भाषा-भाषी अंतिम अक्षर पर बल देकर करता है पर यदि कोई अज्ञानवश अंतिम के स्थान पर दूसरे अक्षर पर बल देता है तो उसका उच्चारण अस्वाभाविक हो जाता है।

(२) मात्रा (Length)-जब किसी स्वन का उच्चारण सामान्य ढंग से किया जाता है तो वह एक मात्रा गिनी जाती है। जब उच्चारण समय दुगुना होता है तो दीर्घ कहलाता है। अ, इ, उ, ह्रस्व स्वर मात्रा है तो आ, ई, ऊ दीर्घ है। संयुक्त स्वर ए, ऐ, ओ, औ दीर्घ है। दीर्घता के कारण हिंदी में शब्दों के अर्थ बदल जाते है। जैसे मन-मान, दिन-दीन, पल-पाल, बहु-बहू आदि।

(३) अनुनासिकता -स्वन के उच्चारण में जब हवा मुखविवर के साथ-साथ नासिका विवर से भी बाहर आए तो अनुनासिकता का आगमन होता है। अनुनासिकता भी अर्थ बदल देती है। इसलिए खण्ड्येता स्वनिम है। सास-साँस, कहा-कहाँ, चिता-चिंता, है-हैं, हंस-हँस।

(४) सुर-शब्द के उच्चारण में आए उतार-चढाव को सुर कहते हैं। सुरपरिवर्तन के कारण अर्थ बदल जाता है।

सुरभेद को तान कहते है। चीनी, जपानी, कोरियन भाषाओं में सुरपरिवर्तन से एक ही शब्द से अनेक अर्थ हो जाते है। चीनी भाषा का 'येन' शब्द के सुर परिवर्तन के कारण धुँआ, नमक, आँख, हँस, आदि अर्थ होते हैं। सुर और तान शब्द से संबंधित है तो अनुतान वाक्य से संबंधित होता है। अनुतान को Intonation कहते हैं। संसार की सभी भाषाओं में यह गुण दिखाई देता है। हिन्दी में अनुतान या लहजे के कारण एक ही वाक्य प्रश्न, आश्चर्य, आदि का सूचक हो जाता है। जैसे - रमेश आ रहा है। (सामान्य कथन) रमेश आ रहा है ? (प्रश्नार्थक) रमेश आ रहा है। (आश्चर्यसूचक)

(५) संगम (Junction)-शब्द का उच्चारण करते समय एक ही शब्द के बीच आनेवाले किन्ही दो स्वनों के बीच यदि विराम लिया जाए तो शब्द का अर्थ बदल जाता है। संगम को (प्लस+) चिन्ह से अंकित किया जाता है। उदा. शर्बत में सिरका आवश्यक है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

मेरे सिर+का दर्द कम नहीं हुआ।

कुछ अन्य शब्द है -

मूँगफली	मूँग + फली
सजलता	सज+लता
दोना	दो + ना
होली	हो + ली

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिए।

१) भाषा की लघुत्तम इकाई .... होती है।

२) जिन स्वनों के उच्चारण में हवा मुँह से बिना किसी रूकावट के बाहर निकलती है तब .... स्वनों का उच्चारण होता है।

३) उष्म स्वन .... है।

४) .... अर्थभेद करनेवाला स्वन होता है।

५) खण्ड स्वनिमों के साहचर्य के रूप में.................... स्वनिम प्रयुक्त होते हैं।

३.३.२. हिन्दी शब्दरचना :-

शब्द को अर्थतत्त्व कहा जाता है। शब्द से ही वस्तु, पदार्थ, व्यक्ति, गुण, क्रिया, अव्यय आदि का बोध होता है परंतु शब्द सीमित होते हैं। भाव, विचार, वस्तुएँ असंख्य होती हैं। उन सभी को व्यक्त करने के लिए नवीन शब्दों की आवश्यकता पडती है। इसलिए हमें शब्दों की रचना करनी होती हैं। यह रचना प्रत्ययों के द्वारा संपन्न होती है। प्रारंभ में लगनेवाले प्रत्यय 'उपसर्ग' कहलाते हैं। बीच में लगनेवाले प्रत्यय 'मध्यसर्ग' कहलाते हैं तो अंत में लगनेवाले 'प्रत्यय' कहलाते हैं। ये प्रत्यय तत्सम, तद्भव, विदेशी तीनों प्रकार के होते हैं। प्रिय छात्रों, अब हम इनका परिचय लेंगे।

क. उपसर्ग:-

उपसर्ग की व्युत्पत्ति -

(उप+सृज+धञ) से उपसर्ग शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। जिसका अर्थ है समीप या पास रखा हुआ। किसी धातु या शब्द के प्रारंभ में जुडी हुई व्याकरणिक इकाई उपसर्ग है।

''सिद्धांत कौमुदी'' में लिखा है - ''उपसर्गेण धातंर्यों बलादनत्र नीयते। प्रहाराहार संहार-विहार परिहारवत्।''

इसका अर्थ है - उपसर्ग के द्वारा हार (ह) से प्रहार, आहार, संहार, विहार, परिहार के समान धातु का अर्थ बलात् परिवर्तित कर देता है।

उपसर्ग उस शब्दांश को कहते हैं, जो किसी शब्द के प्रारंभ में जुडकर उसके अर्थ में विशेषता या परिवर्तन उत्पन्न करता है। मान के आगे, अप, वि, अभि, लगाने से जो शब्द बनेंगे इनके विभिन्न अर्थ हो जाते हैं।

उपसर्ग की परिभाषा - कामता प्रसाद गुरू के अनुसार उपसर्ग, उस वर्ण या वर्णसमूह को कहते हैं, जिसका स्वतंत्र प्रयोग न होता हो और जो किसी शब्द के पूर्व कुछ आधिक विशेषत: लाने के लिए जोड़ा जाए।

उपसर्ग के कार्य

(१) उपसर्ग के प्रयोग से अर्थ में विशेषता आ जाती है।

(२) शब्दार्थ - सर्वार्थ प्रतिकूल हो जाता है। तथा (३) शब्दार्थ में कोई विशेष अंतर नहीं आता, मात्र गति या अधिकता का संकेत मिलता है। आदि तीन-स्थितियाँ उपसर्ग के प्रयोग से प्रकट होती हैं।

उपसर्ग के उद्भव के आधार पर तीन भेद हैं - तत्सम अर्थात संस्कृत के दूसरे तद्भव अर्थात् संस्कृत से उत्पन्न तथा तीसरे विदेशी।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

संस्कृत में बाईस उपसर्ग माने जाते हैं, वे इस प्रकार हैं -

	तत्सम उपसर्ग	अर्थ	निर्मित शब्द	अभ्यास
१)	प्र-	अधिक, आगे, ऊपर	प्रख्यात, प्रबल	------
२)	परा-	पीछे, उलटा, नाश	परामर्श, पराभव	------
३)	अप-	बुरा, हीन, विरूद्ध, अभाव	अपशब्द, अपकीर्ति	------
४)	सम् -	अच्छा, साथ, पूर्ण	संगम, संकल्प	------
५)	अनु-	पीछे-समान, अनुवाद	अनुस्वार, अनुज	------
६)	अव-	नीचे, हीन, अभाव	अवसान, अवसाद	------
७)	निस्-	निषेध	नि:संतान, निष्फल	------
८)	निर्-	बाहर	निर्दोष, निरपराध	------
९)	दुस्-	कठिन	दुष्कर्म, दुष्काल	------
१०)	दुर-	बुरा, दुष्ट	दुर्दशा, दुराचार	------
११)	वि-	विशेष, भिन्न, अभाव	विज्ञान, विस्मरण	------
१२)	आ-	तक, ओर, समेत, उलटा	आचरण, आकृति	------
१३)	नि-	भीतर, नीचे, बाहर	निदर्शन, निबंध	------
१४)	अधि-	ऊपर, समीपता, स्थान में श्रेष्ठ	अधिष्ठाता, अधिकार	------
१५)	अपि-	निकट	अपिकर्ण	------
१६)	अति-	अधिक, ऊपर	अतिशय, अतिरिक्त	------
१७)	सु-	अधिक, अधिक अच्छा	सुगम, सुकर्म, सुचारू	------
१८)	उद्-	ऊपर, ऊँचा, श्रेष्ठ	उत्कर्ष, उन्नत	------
१९)	अभि-	ओर, पास, सामने	अभिलाषा, अभिमान	------
२०)	प्रति-	बदला, विरूद्ध,सामने, एकएक	प्रतिदिन, प्रतिकूल	------
२१)	परि-	आसपास, चारो ओर, पूर्ण, अतिशय	परिधि, परिशीलन	------
२२)	उप-	निकट,सदृश्य, गौण	उपवेद, उपकार	------

तद्भव अर्थात संस्कृत से उत्पन्न उपसर्ग

अ-अन्	अभाव-	अज्ञान, अनमोल	------
अति	अधिकता-	अतिद्रिय	------
कु-	बुरा-खराब	कुरूप, कुचाल	------
दु-दूर	बुरा, हीन	दुर्बल, दुर्दिन	------
नि निर्	बिना, रहित	निरोग, निर्दय	------
सु स-	अच्छा, साथ	सुफल, सपूत	------
उ-उद्	ऊपर, ऊँचा	उनींदा, उथला	------
ऊन-उन	कम	उनसठ, उनचास	------
औ- अव	नीचे, दूर, हीन	औगुन अवतार	------
क-	हीन-बुरा	कपूत,कदाचार	------
पर	पहले के	परदादा, परनाना	------
बिन-	रहित	बिनब्याहा, बिनदेखा	------

विदेशी उपसर्ग

अरबी - फारसी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अल्-	निश्चित	अलबत्ता, अलगरज	------
कम-	कम, थोडा बुरा	कमजोर, कमसिन	------
खुश-	अच्छा	खुशनसीब, खुशखबर	------
गैर-	पराया	गैरसरकारी, गैरहाजिर	------
दर	में	दरमियान, दरअसल	------
ना	निषेध	नापसंद, नाखुश	------
ब, बा-	के साथ	बाकायदा, बनाम	------
बद्	बुरा	बदनसीब, बददुआ	------
बर-	ऊपर	बर्दाश्त, बरखास्त	------
बिल-	के साथ	बिलकुल, बिलवास्त	------
बे-	रहित	बेकार, बेइज्जत	------
ला-	बिना	लाईलाज, लापरवाह	------
सर-	प्रमुख	सरदार, सत्कार	------
हम-	बराबर	हमवतन, हमसफर	------
हर	प्रत्येक	हरएक, हररोज	------
फिल	अब	फिलहाल	------
		अंग्रेजी उपसर्ग	
सब	उप	सबइन्स्पेक्टर, सबऑफीस	------
हेड	मुख्य	हेडमास्टर, हेडक्लर्क	------
हाफ	आधा	हाफशर्ट, हाफपैंट	------
वाईस	उप	व्हाईसप्रेसिडेंट, व्हाइसचान्सलर	------

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ख. निम्नलिखित शब्दों से उपसर्ग जोड़कर शब्द बनाइए ।

चार, वास, वेश, ज्ञान, जय, देश

स्वयं अध्ययन के प्रश्न :-

निम्नलिखित उपसर्गों से शब्द बनाइए ।

अभि, परि, उप

निम्नलिखित शब्दों के उपसर्ग पहचानिए ।

कुरूप, सपूत, परदादा, अलबत्ता, हमसफर, हेडमास्टर

ख. प्रत्यय:-

प्रत्यय का अर्थ है - 'प्रतीयते विधीयते इति प्रत्यय' प्रत्यय वह शब्दांश है जो किसी शब्द के अंत में जुड़ कर उसके अर्थ में या तो नवीनता लाता है या उसके अर्थ में परिवर्तन करता है । अर्थात् जिसका किसी धातु अथवा शब्द से विधान किया जाता है उसे प्रत्यय कहते हैं ।

डॉ.भोलानाथ तिवारी प्रत्यय की परिभाषा इसप्रकार देते हैं -''प्रत्यय ध्वनियाँ ध्वनि समूह की वह इकाई है जो व्याकरणिक रूप या अर्थ की दृष्टि से परिवर्तन लाने के लिए किसी शब्द या धातु या अपवादत: कभी-कभी उपसर्ग जैसे हिन्दी की दृष्टि से 'विज्ञान' के अंत में जोड़ी जाती है, किन्तु जिसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता ।''

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

प्रत्यय मूलत: सार्थक शब्द रहे होंगे किन्तु धीरे-धीरे उन की स्वतंत्र अर्थवत्ता समाप्त हो गई और वे प्रत्यय मात्र रह गए।

प्रत्यय के दो भेद है - कृत तथा तद्धित।

कृत प्रत्यय- कृत से कृदंत प्रत्यय बने हैं - इन्हें कृत प्रत्यय भी कहते हैं जो धातु के अंत में प्रयुक्त होते हैं और उनके योग से बने शब्द कृदंत कहलाते हैं।

कृत प्रत्ययों से अ, अन्त, आई, आन, आवट, इ, ती, नी जुड़कर संज्ञाओं का निर्माण करते है। कृत प्रत्ययों के निम्न प्रकार है-

१) *भाववाचक कृदंत* :- जिन कृदंत शब्दों से क्रिया के भाव की जानकारी मिले उसे भाववाचक कृदंत कहते हैं।

प्रत्यय	शब्द	प्रत्यय	शब्द
ई-	हँसी, बोली, सिसकी	इया-	बढ़िया, घटिया, गवैया
आव-	चुनाव, पड़ाव, लगाव	आवट-	लिखावट, मिलावट, रूकावट
आई-	लिखाई, चढ़ाई, रूलाई	त-	बचत, लागत, चपत

२) *कर्तृवाचक कृदंत प्रत्यय* :- जिन शब्दों से क्रिया के करनेवाले का बोध होता हो उसे कर्तृवाचक कृदंत प्रत्यय कहते है जैसे-

प्रत्यय	शब्द	अभ्यास
अक्-	लेखक, पाठक, चालक	------
अक्कड़-	घुमक्कड़, सुअक्कड़, पियक्कड़	------
आहट-	घबराहट, चिल्लाहट, सरसराहट	------
इयल-	अड़ियल, सड़ियल, मरियल	------
ईया-	मुंबईया, धुनिया, नचनिया	------
एरा -	लुटेरा, चितेरा, सँपेरा	------
ऐत-	लठैत, डकैत	------
ओडा-ओरा	भगोड़ा, चटोरा	------
ऊ-	खाऊ, चालू	------

३) *कर्मवाचक कृदंत प्रत्यय* :- क्रिया के कर्म का बोध जिन शब्दों से होता है वे कर्मवाचक कृदंत प्रत्यय कहलातेहैं।

नी-	जननी, चटनी, कहानी	------
आना-	पढ़ाना, सुनाना, चलाना	------

४) *करणवाचक कृदंत प्रत्यय* :- क्रिया के साधन का बोध जिन शब्दों से होता है उन्हें करणवाचक कृदंत प्रत्यय कहते हैं।

ना-न	बेलना, ओढ़ना,घोटना, झाड़न, बेलन	------
ऊ-	झाड़ू, चाकू	------

५) *विशेषण* :-

अक्-	बैठक, भौंचक	------
आवना-	सुहावना, डरावना, लुभावना	------

तद्धित प्रत्यय :- जो प्रत्यय विशेषण तथा संज्ञा के अंत में लग कर अर्थ परिवर्तित करें उन्हें *तद्धित* प्रत्यय कहते हैं। *तद्धित* प्रत्ययों के निम्न प्रकार हैं -

संबंधवाची *तद्धित* - नाना ननिहाल, ससुर ससुराल, माँ मैका, चाचा चचेरा, मौसा मौसेरा, मामाममेरा

कर्तृवाचक *तद्धित* - सोनासुनार, लोहालुहार, तेलतेली, साँपसँपेरा, भँगभँगेडी, नर्त नर्तकी, पानीपनिहार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

वाला - सबजीवाला, गाड़ीवाला, खानेवाला

गुणवाचक *तद्धित* - ये प्राय: विशेषण होते है ।

भूखभूखा, प्यासप्यासा, धर्मधार्मिक, संप्रदायसांप्रदायिक, विचारवैचारिक, ऊनऊनी, धनधनी, देश देसी, खर्च खर्चिला, गेरूगेरूँआ, बाजारबाजारू, पेटपेटू, लाड़लाड़ला, धनधनवान,धनवंत, सोना सुनहरा, रूपारूपहरा, तीनतिहरा.

ऊनवाचक तद्धित - इन प्रत्ययों से न्यूनता, लघुता, प्रकट होती है ।

खाटखटिया, गठरीगठरियाँ, बेटीबिटियाँ, पहाड़पहाड़ी, डोरडोरी, कटोराकटोरी, दु:खदुखड़ा, मुख मुखड़ा, पंखपंखडा

स्थानवाचक तद्धित प्रत्यय - स्थान विशेष के सूचक शब्द होते हैं ।

आगेअगाड़ी, पीछेपिछाडी, राजपूतराजपुताना, तेलंगतेलंगाना, मथुरामथुरिया, कलकत्ताकलकत्तिया, मुंबई मुंबईयाँ

स्त्रीलिंग सूचक प्रत्यय -

सेठसेठानी, जेठ जिठानी, नौकर नौकरानी, मालक मालकिन, पड़ौस पडौसिन, भील भीलनी, मोर मोरनी, शेर शेरनी, चूहा चुहिया, बंदर बंदरिया, बूढ़ा बुढ़िया, नाना नानी, चाचा चाची, मौसा मौसी, राजा रानी

<u>*विदेशी प्रत्यय अरबी फारसी के*</u>			<u>*अभ्यास*</u>
आबाद	—	अहमदाबाद, औरंगाबाद, जहानाबाद	------
आना	—	रोजाना, नजराना मेहनताना	------
इंदा	—	शर्मिंदा, आईंदा	------
स्थान	—	कबरिस्तान, हिंदुस्तान, पाकिस्तान	------
इयत	—	असलियत, इन्सानियत	------
खोर	—	आदमखोर, रिश्वतखोर	------
गाह	—	इदगाह, बंदरगाह	------
गार	—	मददगार, गुनाहगार, यादगार	------
गर	—	जादूगर, बाजीगर, सौदागर	------
मंद	—	जरूरतमंद, अक्लमंद	------
वार	—	उम्मीदवार, तारीखवार	------
बाज	—	चालबाज, दगाबाज	------
नाक	—	दर्दनाक, खौफनाक, शर्मनाक	------
दार	—	चमकदार, दुकानदार, थानेदार	------
दान-दानी	—	इत्रदान, फुलदानी	------
साज़	—	जालसाज, जिल्दसाज	------
अंग्रेजी / हिन्दी			------
फिल्म		फिल्माना	------

इस तरह प्रत्ययों से नवीन अर्थव्यंजना करनेवाले नए शब्दों का निर्माण होता है ।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ग. संक्षेप में उत्तर लिखिए ।

१) डॉ.भोलानाथ तिवारी द्वारा प्रदत्त प्रत्यय की परिभाषा बताइए ।

२) प्रत्यय के कितने भेद है ? कौन से ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

३)	कृदंत के पाँच भेद बनाकर उनके दो-दो उदाहरण लिखिए।

४)	तद्धित प्रत्यय किनके साथ जुडते हैं।

निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय पहचानिए।

भील-भीलनी, मौसा-मौसी, ईदगाह, इत्रदान, जिल्दसाज

*ग.	समास :-*

समास का अर्थ है दो या उससे अधिक शब्दों के योग से बननेवाला नया शब्द। समास प्रक्रिया भारोपिय भाषाओं की मुख्य विशेषता है। ऋग्वेद में तीन पदों वाले समास मिलते हैं। परंतु लौकिक संस्कृत मे माघ, बाण, भवभूति की साहित्यिक भाषा अनेक पदों से बँधी है। साहित्यिक संस्कृत का प्रभाव साहित्यिक प्राकृत पर भी पड़ा। वहाँ भी लंबी सामासिक पदावली मिलती है। गउडबहो, कर्पूरमंजरी जैसी रचनाएँ तो अपभ्रंश में स्वयंभू, पुष्पदंत आदि लेखकों में सामासिक भाषा का प्रयोग मिलता है।

हिन्दी वियोगात्मक भाषा है। इसलिए यहाँ दो शब्दों के ही समास मिलते हैं। समास निम्न दशाओं में बनता है।

१)	समास में कम से कम दो शब्दों का संयोग होता है।

२)	सामासिक शब्द एक ही होता है।

३)	विभक्ति प्रत्ययों का लोप हो जाता है।

संधि और समास में निम्न अंतर है -

१)	संधि में दो वर्णों का योग होता है। समास में दो पदों का योग होता है।

२)	दो वर्णों के मेल होने पर संधि में विकार की संभावना रहती है। तो समास में पदों के प्रत्ययों का लोप होता है।

समास के प्रकार - समास के छह प्रकार माने गए हैं।

१) द्वंद्व	२) तत्पुरूष	३) बहुब्रीही	४) अव्ययीभाव	५) द्विगु	६) कर्मधारेय

इनमें से पहले चार प्रमुख हैं। द्विगु और कर्मधारेय गौण है।

१) द्वंद्व समास - द्वंद्व समास में दोनों पद प्रधान होते हैं जो दोनों संज्ञाएँ अथवा विशेषण हो सकते हैं तब द्वंद्वं समास होता है। इसका विग्रह करने पर दो पदों के बीच और अथवा या प्रयुक्त होता है। जैसे - माता-पिता-माता और पिता, भाई बहन - भाई और बहन हिन्दी में केंद्रिय हिन्दी निदेशालय के अनुसार मानक लेखन के नियमों के अनुसार द्वंद्वंसमास में हायफन का प्रयोग होता है। जैसे माता-पिता, राम-सीता, भाई-भाई। द्वंद्वं समास के तीन भेद माने गये है- इतरेतर द्वंद्वं, समाहार द्वंद्वं, वैकल्पित द्वंद्वं।

इतरेतर द्वंद्वं में और, तथा योजक चिन्ह लुप्त होते हैं। जैसे भाईबहन, भलाबुरा (भला और बुरा), राधाकृष्ण (राधा और कृष्ण)

समाहार द्वंद्वं में तीसरे अर्थ का भी ज्ञान होता है। जैसे दाल-रोटी (सभी भोज्यपदार्थ) रूपया-पैसा (संपत्ति), कहा-सुनी (झगड़ा)

वैकल्पिक द्वंद्वं में या, अथवा जैसे शब्द होते हैं। जैसे काला-गोरा (काला अथवा गोरा), छोटा-बड़ा (छोटा या बड़ा)।

२. तत्पुरूष समास - जिसमें उत्तर पद अथवा अंतिम पद प्रधान हो तब तत्पुरूष समास होता है। इसमें कर्ता और संबोधन को छोड़कर सभी कारकों की विभक्तियाँ लगकर समास का विग्रह होता है।

			अभ्यास
कर्म या द्वितीया तत्पुरूष -	माखनचोर,	सत्यवादी।	------
करण या तृतीया तत्पुरूष-	आगजला,	बिहारीसतसई	------
सम्प्रदान या चतुर्थी तत्पुरूष	आरामकुर्सी,	मालगोदाम	------
अपादान या पंचमी तत्पुरूष	ज्ञानहीन,	कामचोर	------

Jain Vishwa Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

संबंध या षष्ठी तत्पुरूष	रामकथा,	गंगातट	------
अधिकरण या सप्तमी तत्पुरूष	हथकडी,	दहीवडा	------

३. बहुव्रीहि समास -इस समास में दो पदों का शब्द होता है। शब्द के दोनों पद अर्थ की दृष्टि से गौण रहते है। अर्थात दोनों पदों में से कोई भी प्रधान न हो और दो पदों के योग से किसी अन्य अर्थ का बोध हो वहाँ बहुव्रीहि समास होता है। जैसे-बहुरूपिया बहुत है रूप जिसके वह। इसके विग्रह में जो, जिसके आदि शब्द लगते है।

बहुव्रीहि समास के निम्न भेद है

क) समानाधिकरण बहुव्रीहि समास -	बजरंग वज्र के समान अंग है जिसका (हनुमान) एकदंत - एक है दाँत जिसके (गणेश)
कक) व्याधिकरण बहुव्रीहि समास -	असमान विभक्तिवाले शब्द चंद्रशेखर - चंद्र है सिर पर जिसके (शंकर) गिरीधर - गिरी को धारण किया है जिसने (श्रीकृष्ण)
ककक) तुल्ययोग बहुव्रीहि -	जिसमें पहला पद सहसूचक होता है। सशरीर - सपरिवार,
कफ) व्यतिहार बहुव्रीहि -	घात-प्रतिघातसूचक शब्द होते है। लठ्ठमलठ्ठ, धक्काबुक्की।
फ) मध्यमपदलोपी बहुव्रीहि -	जहाँ विग्रहकारक पद लुप्त होता है। डेढ़गजा, पचसेरी आदि।

४.अव्ययीभाव समास - इस समास में पहला पद अव्यय और दूसरा पद संज्ञा होता है।

क्रियाविशेषण पदसमुच्चय इसके उदाहरण है। हररोज, यथाशक्ति, भरपेट, आजन्म आदि।

५. द्विगु समास -इसमें पहला पद संख्यावाचक और दूसरा पर संज्ञा हो तो द्विगु समास होता है। पंचवटी - पाँच वटों का समूह, त्रिफला तीन फलों का समूह - नौरत्न - नौरतन का समूह दुभाषि दो भाषा का ज्ञाता। त्रिभुवन तीन भुवन, पंचांग, पाँच अंग। चौराहा - चार रास्तों का समूह।

६.कर्मधारेय समास -प्रथम पद विशेषण, दूसरा विशेष्य होता है। जैसे नीलकमल नीला कमल, महावीर-महान वीर। जब एक पद उपमान, दूसरा उपमेय हो तब भी कर्मधारेय समास होता है। जैसे चरणकमल-कमल के समान चरण मृगलोचन-हिरन के समान आँखे चंद्रमुख चांद के समान मुख आदि।

इसतरह समासों के द्वारा नया शब्द गठित होकर नवीन अर्थ को अभिव्यक्त करता है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

घ. *निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।*

१) द्वंद्व समास के दो उदाहरण लिखिए।
२) तत्पुरूष समास कब होता है।
३) द्विगु समास पहचानिए -
पंचाग, त्रिभुवन, चौराहा

३.३.३. रूपरचना :-

रूप से तात्पर्य अर्थवान शब्दखंडों से है। शब्द एक या अधिक रूपों से निर्माण होता है। जैसे लड़का, सड़क, अंगूर। इन शब्दों में केवल एक ही रूप है। इससे आगे हम अर्थवान खंडों में विभाजन नहीं कर सकते। परंतु जब हम कहते हैं, लड़के, सड़के तो फिर यहाँ एक से अधिक खंड बन जाते हैं। जैसे लड़क+ए = लड़के। सड़क ए + अनुस्वार = सड़कें।

कभी-कभी दो स्वतंत्र रूपों से भी शब्द निर्माण होता है। जैसे- डाकघर, देशप्रेम, बंधुभाव।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

रूपरचना के कारण संज्ञा, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम आदि के लिंग वचन, कारक, काल, आदि व्याकरणिक सूचनाएँ मिलती है। इन्हें हम रूपसाधक कहते हैं।

रूपसाधक प्रत्यय = रूपसाधक प्रत्यय में निम्न व्याकरणिक कोटियाँ प्रकट होती हैं।

१. लिंग - लिंग का अर्थ है चिह्न । लिंगभेद मूलत: चेतन - अचेतन पर आधारित था। अचेतन के लिए नपुंसक लिंग का प्रयोग किया जाता था। तो चेतन के दो भेद किये गये थे। पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। अत: स्वाभाविक रूप से लिंग तीन है - पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग। परंतु भाषाओं में लिंगभेद व्याकरणिक है। इसलिए भिन्न-भिन्न भाषाओं में लिंगों की संख्या कम अधिक है। संस्कृत में तीन लिंग है , अंग्रेजी में चार लिंग है (चौथा उभयलिंग), हिन्दी में दो लिंग है पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। बंगला, असमिया, उड़िया में लिंग भेद ही नहीं है।

२. वचन - संख्याभेद को वचन कहा जाता है। जो कर्ता और कर्म से संबंधित है। एक और अनेक ऐसे दो वचन भाषाओं में मिलते हैं जो स्वाभाविक है। संस्कृत में तीन वचन मिलते हैं तीसरा द्विवचन है जो युग्मों के लिए प्रयुक्त होता है। आँखें, कान,

हिन्दी में एकवचन से बहुवचन करना आसान है। कारण अनुस्वार के प्रयोग से क्रिया बहुवचन में हो जाती है।

३. कारक - कारक शब्द कृ.धातु मे ण्वुत प्रत्यय लगकर बना है। जिसका अर्थ है - करनेवाला (क्रियान्वयिखभु कारकत्त्वम्) अर्थात वाक्य की क्रिया से जिसका सीधा संबंध हो वह कारक है। संसार की भाषाओं में कारकों की संख्या एक जैसी नहीं है। हिन्दी में आठ कारक है।

कारक		*चिह्न*
प्रथमा -	कर्ता-	ने,श्र
द्वितीया -	कर्म -	को,
तृतीया -	करण -	से, द्वारा
चतुर्थी-	सम्प्रदान	के लिए, वास्ते
पंचमी	अपादान	से
षष्ठी	संबंध	का, की, के
सप्तमी	अधिकरण	में, पर, पै
सम्बोधन	सम्बोधन	हे, हो, अरे

इनके उदाहरण क्रमश: इस प्रकार है -

१. महेश ने आम खाया। (कर्ताकारक - ने *श्र*)
महेश आम खाता है।

२. दिलीप ने विजय को दस रूपए दिए। (कर्मकारक-को *श्र*)
दिलीप घर गया।

३. पिताजी ने बेटे से कहा (करण से)

४. मीना ने दिनेश के लिए पेन खरीदा। (संप्रदान- के लिए)

५. पेड़ से पत्ता गिरा। (अपादान -से)

६. यह किताब किसकी है ? (संबंध - की)

७. पेड़ पर तोता बैठा है। (अधिकरण-पर)

८. अरे ! तुमने यह क्या किया ? (संबोधन - अरे)

४. संज्ञा - किसी व्यक्ति, वस्तु, प्राणी, स्थान, गुण, धर्म, द्रव्य, भाव आदि के सूचक शब्द को संज्ञा कहते हैं। संज्ञाओं को विकारी शब्द माना जाता है। कारण लिंग, वचन, कारक आदि का प्रभाव संज्ञा के रूप पर पड़ता है। जैसे लड़का, लड़की (लिंग), लड़का-लड़के (वचन), लड़कपन (भाव)

संज्ञा के निम्न प्रकार है -

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

१) जातिवाचक संज्ञा - जिस संज्ञा शब्द से किसी जाति या वर्गविशेष अथवा एक जैसे अनेक पदार्थों का बोध होता है, वहाँ जातिवाचक संज्ञा होती है। जैसे - पक्षी, पशु, मनुष्य, दुकान, पुस्तक आदि।

२) व्यक्तिवाचक संज्ञा - जब संज्ञा शब्द से किसी एक वस्तु, संस्था या व्यक्तिविशेष का बोध होता है वहाँ व्यक्तिवाचक संज्ञा होती है। जैसे-दिनेश,रमेश,मीना, बनारस, दिल्ली, जयपुर, अजमेर, जैन विश्वभारती आदि।

३) भाववाचक संज्ञा - जिस संज्ञा शब्द से पदार्थों में पाये जानेवाले धर्म का आभास होता है। उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे -मीठास, गर्मी, ठण्डा, ईमानदारी, जवानी, मूर्खता,

४) समूहवाचक संज्ञा - जिस संज्ञा शब्द से किसी समूह विशेष का बोध होता है उसे समूहवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे - समाज, भीड, परिवार, रजवाडा।

५) द्रव्यवाचक संज्ञा - द्रव्यविशेष का बोध करनेवाले संज्ञाशब्द इसमें आते हैं। जैसे पानी, सोना, तांबा, पीतल, स्टील, लोहा।

५. सर्वनाम - संज्ञा के बदले प्रयुक्त होनेवाले शब्द को सर्वनाम कहते हैं। सर्वनाम के निम्न प्रकार हैं।

पुरूषवाची सर्वनाम - जो सर्वनाम किसी व्यक्ति अथवा पदार्थ का बोध कराते हैं उसे पुरूषवाची सर्वनाम कहतेहैं। पुरूष की अवधारणा वक्ता, श्रोता तथा अन्य के आधार पर हुई है।

पुरूष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरूष	मैं,	हम
मध्यम पुरूष	तुम, तू	आप
अन्य पुरूष	वह	वे, वो

निश्चयवाची सर्वनाम :-किसी निकटस्थ वस्तु के लिए यह, ये, का प्रयोग किया जाता है। इन्हें निकटवर्ती निश्चयवाची सर्वनाम कहते हैं।

दूरस्थ वस्तु के लिए वह, वे, उसे, सर्वनामों का प्रयोग होता है। इन्हें दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं।

अनिश्चयवाची सर्वनाम से किसी निश्चित संज्ञा का बोध नहीं होता. जैसे कोई. कुछ आदि।

संबंधवाचक सर्वनाम - उपवाक्य को मुख्यवाक्य से जोड़ने वाला शब्द यदि सर्वनाम हो तो उसे संबंधवाचक सर्वनाम कहते है - जैसे - जो, सो,

प्रश्नवाचक सर्वनाम - प्रश्न का बोध कराता है। क्या, कौन, किसका, कब, कहाँ, कैसे आदि।

६. विशेषण -

जिस शब्द से संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता का पता चले उसे विशेषण कहते हैं। जिसमें विशेषण लगाया जाय उसे विशेष्य कहते हैं। जैसे - बुद्धिमान छात्र - बुद्धिमान - विशेषण, छात्र-विशेष्य।

सर्वनाम के बाद भी विशेषण का प्रयोग होता है। जैसे - यह काली है। वह सच्चाई है।

आकांत - विशेषणों के अलावा अन्य विशेषणों के रूपों में लिंग, वचन के अनुसार परिवर्तन नहीं होता। जैसे सुंदर लड़की आ रही है।

सुंदर लड़का आ रहा है।
सुंदर लड़के आ रहे हैं ।
सुंदर लड़कियाँ आ रही हैं ।

अकारांत विशेषण लिंग, वचन के अनुसार बदलते हैं। जैसे

विजय बड़े घर का लड़का है।
अच्छे लड़के मांगते नहीं।
अच्छी लड़की गाना गा रही है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

विशेषण के भेद - सामान्यत: विशेषण के चार भेद किये जाते हैं। जो इस प्रकार है -

१) गुणवाचक विशेषण - जो विशेषण संज्ञा अथवा सर्वनाम के गुणों को स्पष्ट करें उन्हें गुणवाचक विशेषण कहा जाता है। गुणवाचक विशेषण से रंग-रूप, आकार-प्रकार, समय स्थान, गुण-दोष आदि का बोध होता है। जैसे - काला कुत्ता, सूखा पेड़, चौड़ी सड़क, पाश्चात्य सभ्यता, पूरबी बोली, नया कपड़ा

२) सार्वनामिक विशेषण - जो विशेषण सर्वनाम से बनते है उन्हें सार्वनामिक विशेषण कहते हैं। जैसे यह कलम, इस तरह का आदमी, उसकी पुस्तक, वैसी लड़की, ये लड़के।

३) संख्यावाचक विशेषण - इस प्रकार के विशेषण संज्ञा की संख्या की ओर संकेत करते हैं। कभी यह संख्या निश्चित होती है तो कभी अनिश्चित। जैसे - पहला लड़का, तीसरी कक्षा, थोड़ी किताबें, सभी प्राणी, पाँच लड़के, आदि।

४) परिमाणवाचक विशेषण - परिमाणवाचक विशेषण से संज्ञा के परिमाण (मात्रा, नाप-तौल) का बोध होता है। जैसे- अधिक सामान, थोड़ा दूध, कितना सोना, बहुत पानी, इतनी सी बात, कुछ जलेबियाँ ।

७. क्रिया -

क्रिया का अर्थ है काम करना अथवा होना।

क्रिया विकारी शब्द है कारण इसके रूप लिंग,वचन, पुरूष के अनुसार बदलते हैं।

क्रिया धातु, संज्ञा, विशेषण से बनती है।

हिन्दी की बहुत सारी क्रियाएँ धातु से बनती है। धातु का अर्थ है क्रिया का मूल रूप।

जैसे - लिख् + ना, पढ़ + ना, सुन + ना, देख + ना आदि। इन शब्दों में पहला धातु है। आज्ञार्थ वाक्यों में क्रिया के धातु रूप का प्रयोग होता है, पत्र - लिख, घर चल

संज्ञा से क्रिया बनती है। हथियाना, बतियाना, कहलवाना।

विशेषण से - चमकाना, फुलवाना आदि।

क्रिया के भेद-

(१) सकर्मक -अकर्मक

अकर्मक क्रियाओं का सीधा संबंध कर्ता से रहता है। क्रिया का फल स्वयं कर्ता पड़ता है। जैसे- वह सोता है। वह फिरता है। रमेश खाता है।

तो सकर्मक क्रियाओं का फल कर्म पर पड़ता है। जैसे

दिनेश रोटी खाता है। सीता पुस्तक पढ़ती है।

(२) प्रेरणार्थक क्रिया -

प्रेरणार्थक क्रिया से तात्पर्य - कर्ता दूसरे को क्रिया करने की प्रेरणा देता है। जैसे

मैं हँसा। मैने उसे हँसवाया। मैने उसे हँसाया।

प्रेरणार्थक क्रिया के दो रूप बनते हैं - प्रथम प्रेरणार्थक - द्वितीय प्रेरणार्थक। प्रथम प्रेरणार्थक का क्रिया का कर्ता सीधा दूसरा होता है। तो द्वितीय प्रेरणार्थक का अन्य।

जैसे - पिता ने पुत्र को पढ़ाया। पिता ने पुत्र को शिक्षक से पढ़वाया।

क्रियारूप बनाना आसान है। जैसे -

क्रिया	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक
पढ़ + ना	पढ़ाना	पढ़वाना
चल + ना	चलाना	चलवाना
हँस + ना	हँसाना	हँसवाना

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बन + ना बनाना बनवाना

प्रथम प्रेरणार्थक के बीच में 'आ' आता है।

तो द्वितीय प्रेरणार्थक में 'वा' आता है।

(३) संयुक्त क्रिया -

मुख्य क्रिया और सहायक क्रियाओं के मेल से संयुक्त क्रिया बनती है। जैसे - पहुँच जाना, देख लेना, भेज देना, खरीद लेना, दे देना, पूछ बैठना, चल पड़ना आदि।

अब हम उपरोक्त विवेचित रूप रचना को सोदाहरण समझेंगे।

संज्ञा के रूप -

लिंग - लड़का - लड़की, शेर-शेरनी, नौकर-नौकरानी, नद-नदी।

वचन - लड़का - लड़के, लड़की-लड़कियाँ, रानी-रानियाँ, बात-बातें

कारक - लडका - लडके (ने), लडका -लडकों (में), शिक्षकों (से), छात्रों (को)

क्रिया के रूप - (१) लिंग - जाता - जाती, गया - गई, जाऊंगा-जाऊँगी, था-थी।

(२) वचन - जाता - जाते, गया - गए, था-थे।

(३) पुरूष - (में) हूँ - (तुम) हो, (वह) है।

(मैं) जाऊँ - (तुम) जाओ, (वह) जाए।

(४) काल-(होना) हैं - था, रहा है, रहूँगा, रहा था।

वर्तमान है - अपूर्ण वर्तमान रहा है।

भूतकाल था - पूर्ण भूत रहा था।

(५) वृत्ति - जाईए - जाएँ आदि।

क्रिया के रूप का चार्ट

		पुल्लिंग		स्त्रीलिंग	
काल	पुरूष	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
वर्तमानकाल	उत्तम पुरूष	जा+ता+हूँ	जा+ते+हैं	जा+ती+हूँ	जा+ती हैं
सामान्य	मध्यम पुरूष	ता/ते / हो /है	तें / हैं	ती / हो	ती + हों
	अन्य पुरूष	ता + है	ते + हैं	ती + है	ती + हैं
अपूर्ण वर्तमान	उत्तम पुरूष	मैं जा रहा हूं।	हम जा रहे हैं।	मैं जा रही हूँ।	हम जा रहीं हैं।
	मध्यम पुरूष	तुम जा रहे हो।	आप जा रहे हैं।	तुम जा रही हो।	तुम जा रही हों।
	अन्य पुरूष	वह जा रहा है।	वे जा रहे हैं।	वो जा रही है।	वे जा रही हैं।
पूर्ण वर्तमानकाल	उत्तम पुरूष	मैं गया हूँ।	हम गए हैं।	मैं गयी हूँ।	हम गई हैं।
	मध्यम पुरूष	तु तुम गए हो।	आप गए हो।	तु तुम गई हो	तुम गई हों।
	अन्य पुरूष	वह गया है।	वे गए है।	वह गई है।	वे गई है।
भूतकाल	उत्तम पुरूष	मैं गया।	हम गए।	मैं गयी।	हम गयीं।
सामान्य	मध्यम पुरूष	ता/ते / हो /है	तें / हैं	ती / हो	ती + हों
	अन्य पुरूष	ता + है	ते + हैं	ती + है	ती + हैं
अपूर्ण भूतकाल	उत्तम पुरूष	मैं जा रहा था।	हम जा रहे थे।	मैं जा रही थी।	हम जा रही थीं।
	मध्यम पुरूष	तुम जा रहे थे।	आप जा रहे थे।	तुम जा रही थी।	आप जा रही थी।
	अन्य पुरूष	वह जा रहा था।	वे जा रहे थे।	वह जा रही थी।	वे जा रही थीं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

पूर्ण भूतकाल	उत्तम पुरूष	मैं गया था ।	हम गए थें ।	मैं गयी थी ।	हम गई थीं ।
	मध्यम पुरूष	तुम गए थे ।	आप गए थे ।	तुम गई थी ।	आप गई थी ।
	अन्य पुरूष	वह गया था ।	वे गए थे ।	वह गई थी ।	वे गई थीं ।
भविष्यत्काल	उत्तम पुरूष	मैं जाऊँगा।	हम जाएंगे।	मैं जाऊंगी।	वे जाएँगी ।
	मध्यम पुरूष	तुम जाओगे।	आप जाएंगे।	तुम जाओगी।	तुम जाएँगी।
	अन्य पुरूष	वह जाएगा।	वे जाएँगे ।	वह जाएगी।	वे जाएँगी।
	(जाना क्रिया का भूतकालीन रूप)				
	मध्यम पुरूष	तुम गए ।	आप गए।	तुम गयी।	आप गई।
	अन्य पुरूष	वह गया ।	वे गए ।	वह गई।	वे गईं ।

<u>सर्वनामों के रूप</u>

सर्वनाम +	ने +	को +	से, (मैं, पर)+	का, के, की
मैं	मैंने	मुझको	मुझसे	मेरा, मेरे, मेरी
तू	तूने	तुझको	तुझसे	तेरा, तेरे, तेरी
तुम	तुमने	तुमको	तुमसे	तुम्हारा, तुम्हारे, तुम्हारी
आप	आपने	आपको	आपसे	आपका, आपके, आपकी
वह	उसने	उसको	उससे	उसका, उसके, उसकी
यह	इससे	इसको	इससे	इसका, इसके, इसकी
हम	हमने	हमको	हमसे	हमारा, हमारे,हमारी
वे	उन्होंने	उनको	उनसे	उनका, उनकी, उनके
ये	इन्होंने	इनको	इनसे	इनका, इनकी, इनके
जो (एकवचन)	जिसने	जिसको	जिससे	जिसका, जिसके, जिसकी
कौन (बहुवचन)	किसने	किसको	किससे	किसका, किसके, किसकी
क्या(एकवचन)	-	किसको	किससे	किनका, किनके, किनकी
जो (बहुवचन)	जिन्होंने	जिनको	जिनसे	जिनका, जिनके, जिनकी
कौन (बहुवचन)	किन्होंने	किनको	किनसे	किनका, किनके, किनकी
क्या (बहुवचन)			किनसे	

(च) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

निम्न प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

१) हिन्दी में कितने लिंग है ? कौनसे ?
२) हिन्दी में कौनसे दो वचन हैं।
३) हिन्दी में कारकों की संख्या कितनी हैं ?
४) संज्ञा किसे कहते हैं ?
५) संज्ञा के बदले क्या आता है ?

३.३.५. हिन्दी वाक्यरचना :-

वाक्य एक स्वतंत्र अर्थपूर्ण उक्ति है। तो कुछ विद्वानों के मत से एक पूर्ण विचार व्यक्त करनेवाला शब्दसमूह वाक्य है।

जिस तरह अलग-अलग स्वनों के संयोग से शब्द का निर्माण होता है, उसी तरह अलग-अलग शब्द और प्रत्यय के योग से वाक्य की रचना होती है। इसका अर्थ यह नहीं कि वाक्य बिखरे हुए शब्दों का समूह है। मित्रों, हम देखते हैं कि वाक्य में एक तरह का क्रम होता है। जिसे भाषाविज्ञान में शब्द क्रम या पदक्रम कहते हैं। ये शब्द विभिन्न विभक्तियों से जुडते हैं। जिसे वाक्य का कारकीय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

संबंध कहा जाता है। हम यह भी देखते हैं कि व्याकरणिक इकाइयाँ, लिंग, वचन, पुरूष से भी शब्द के रूप प्रभावित होते हैं। यही अन्विति है। वाक्य में संगति होती है। अर्थात किसी एक शब्द की जगह हम दूसरा शब्द नहीं रख सकते। जिसे वाक्य की योग्यता कहते हैं। आपने यह भी देखा होगा कि वक्ता कभी-कभी पूरा वाक्य नहीं बोलता फिर भी हमे वक्ता के अभिप्रेत अर्थ का बोध हो जाता है। भाषाविज्ञान में इसे अध्याहार कहते हैं।

पदक्रम -

शब्दों का पूर्वापर क्रम पदक्रम कहलाता है। यह क्रम विधान प्रत्येक भाषा में अपना विशेष होता हैं। हिन्दी, मराठी, आदि भारतीय भाषाओं में संज्ञा+कर्ता अंत में क्रिया ऐसा क्रम आता है, विशेषण का क्रम संज्ञा, कर्म और क्रिया के पहले आता है। जैसे -

सुंदर बगीचा, काला लड़का, सफाईदार खेल, इससे वाक्य बनेगा-

काला लड़का, सुंदर से बगीचे में गुल्ली-डंडा का सफाईदार खेल प्रस्तुत कर रहा था। अंग्रेजी आदि भाषाओं में कर्ता के बाद क्रिया, उसके बाद कर्म आता है। जैसे -

I go to school.

वाक्य के स्तर पर पदक्रम का प्राय: वही कार्य रहता है, जो कारक विभक्ति करते हैं। इसलिए शब्द भी स्थान के आधार पर व्याकरणिक काम करता है। जैसे -

बिल्ली चूहा खा रही है। बिल्ली - कर्ता -

चूहा बिल्ली खा रहा है। चूहा - कर्ता-

प्रथम स्थान में आने के कारण बिल्ली और चूहा कर्ता हो गए तो दूसरे स्थान पर आने पर ये कर्म बन जाते हैं। तात्पर्य यह कि हिन्दी भाषा में वाक्यों का पदक्रम इस प्रकार होता है -

कर्ता + कर्म + क्रिया - Subject + Object + Verb

इसे SOV वाक्यरचना कहते हैं।

तो अंग्रेजी की Subject + Verb + Object रचना है। इसलिए इसे SVO कहते हैं।

हिन्दी में वाक्यों की पदक्रम व्यवस्था इस प्रकार है। कर्ता + क्रिया + अनिवार्य घटक होते हैं। तो कर्म विशेषण, क्रिया विशेषण ऐच्छिक घटक है। जैसे -

मैं <u>परसो</u> जयपुर जाऊँगा।
<u>परसो</u> मैं जयपुर जाऊँगा।
मैं जयपुर <u>परसो</u> जाऊँगा।

क्रियाविशेषण ऐसा घटक है जो अपने स्थान से पूर्व किसी भी स्थान पर आ सकता है। केवल बाद में नही आता। (कर्ता से पहले या बाद में, कर्म से पहले या बाद में और क्रिया से पहले होता है।) कारण हिन्दी वाक्यों में पदक्रम तुलनात्मक दृष्टि में लचीला है।

<u>अन्विति :-</u>

प्रत्येक भाषा में संज्ञा की कुछ व्याकरणिक श्रेणियाँ होती हैं। लिंग, वचन, पुरूष - ये संज्ञाएँ विशेषण और क्रिया के रूपों को प्रभावित करती है। किसी घटक विशेष के प्रभाव में रूप बदलने की इस प्रक्रिया को अन्विति कहते हैं। अन्विति की प्रक्रिया सभी भाषाओं में पाई जाती है। हिन्दी में यह दो स्तरों पर देखी जाती है।

१) विशेषण स्तर पर - काला लड़का, काले लड़के, काली लड़की।

२) क्रिया के स्तर पर - बेटा आया, बेटी आई, बेटे आए, बेटियाँ आई।

इस तरह संज्ञा के लिंग, वचन तथा सार्वनामिक रूप पुरूष के अनुसार बदलते हैं।

जैसे - मैं - हूँ - तुम - हो, वह - है। (होना क्रिया के रूप)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

तो अंग्रजी में I go, You go, He, she it goes, They go इस तरह बनते हैं।

व्याकरणिक संरचना और अन्विनि सही होने पर भी वाक्य अर्थ संगति की दृष्टि से योग्य होना चाहिए जिसे योग्यता कहते हैं। कारण कार्य व्यापारगत आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं होती। जैसे मैं आग खाता हूँ। मेरी साइकिल आज बहुत दुखी है। आग बर्फ-सी जम गयी है।

इसमें आग को खाया नहीं जा सकता। खाद्य वस्तुएँ कुछ अलग हैं उन्हीं के नाम आने चाहिए। साइकिल दुखी नहीं हो सकती कारण चेतन दुखी हो सकता है, साइकिल अचेतन है। आग कभी जम नहीं सकती क्योंकि आग में गर्मी होती है, बर्फ में ठण्डक। अत: ये वाक्य व्याकरणिक दृष्ट्या सही होने पर भी इनमें योग्यता का गुण नहीं है।

वाक्यरचना में एक बात और पाते हैं कि बोलचाल में हम कर्ता-कर्म, क्रिया, सहायक क्रिया आदि पूर्ण नहीं बोलते, फिर भी वक्ता का अभिप्रेत अर्थ श्रोता समझ लेता है।

संबोधन, अभिवादन के समय जैसे - धन्यवाद, नमस्कार, सुनिए, शाबाश, संदर्भ आश्रित, वाक्यों के प्रश्नों में, कौन, कहाँ ? कैसे के उत्तर एक-एक शब्दों में ही होते हैं। 'आज्ञा' में भी कर्ता का लोप हो जाता है। दे, लिखे, जाईए, अथवा दो, लिखो, आओ आदि।

३.४. स्वयं अध्ययन के प्रश्नों के उत्तर

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिए।

१) भाषा की लघुतम इकाई शब्द है।

२) जिन स्वनों के उच्चारण में हवा मुँह से बिना किसी रूकावट के बाहर निकलती है तब स्वर स्वनों का उच्चारण होता है।

३) उष्म स्वन श, ष, स है।

४) स्वनिम अर्थभेद करनेवाला स्वन होता है।

५) खण्ड्य स्वनिमों के साहचर्ण के रूप में खण्ड्यंतर स्वनिम प्रयुक्त होते हैं।

ख. निम्नलिखित शब्दों से उपसर्ग जोड़कर शब्द बनाइए।

चार- उपचार, लाचार

वास- प्रवास, सुवास

वेश- परिवेश, आवेश

ज्ञान- विज्ञान, अभिज्ञान

जय- पराजय, विजय

देश- विदेश, प्रदेश

निम्नलिखित उपसर्गों से शब्द बनाइए।

अभि- अभिलाषा, अभिमान, अभिमत

परि- परिशीलन, परिवेश, परिचय

उप- उपवेद, उपकार, उपनयन

निम्नलिखित शब्दों के उपसर्ग पहचानिए।

कुरूप -	कु	अलबत्ता - अल्
सपूत -	स	हमसफर - हम
परदादा -	पर	हेडमास्टर - हेड

ग. संक्षेप में उत्तर लिखिए।

१) डॉ.भोलानाथ तिवारी ने प्रत्यय की परिभाषा इसप्रकार दी है - प्रत्यय ध्वनियाँ ध्वनि समूह की वह इकाई है जो व्याकरणिक रूप या अर्थ की दृष्टि से परिवर्तन लाने के लिए किसी शब्द या धातु या अपवादत: कभी-कभी उपसर्ग-हिन्दी की दृष्टि से विज्ञान के अंत में जोड़ी जाती है, किंतु जिसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

२)	प्रत्यय के दो भेद हैं- कृत प्रत्यय और तद्धित प्रत्यय।

३)	कृदंत के पाँच भेद इस प्रकार है। (१) भाववाचक कृदंत बढ़िया, लगत (२) कर्तुवाचक कृदंत - पाठक, चितेरा (३) कर्मवाचक कृदंत- कहानी, सुनाना (४) करणवाचक कृदंत - ओढ़ना, बेलन (५) विशेषण कृदंत - सुहावना, सुभावना।

४)	तद्धित प्रत्यय विशेषण तथा संज्ञा के अंत में जुड़ते हैं।

निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय पहचानिए।

भील-भीलनी - नी
मौसा - मौसी - ई
ईदगाह - गाह
इत्रदान - दान
जिल्दबाज - बाज

घ.	*निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।*

१)	द्वंद्व समास के दो उदाहरण - माता-पिता, राधाकृष्ण
२)	जिसमें उत्तर पद अथवा अंतिम पद प्रधान हो। तब तत्पुरूष समास होता है।
३)	द्विगु समास - पंचांग - पाँच अंग

त्रिभुवन- तीन भुवन
चौराहा - चार रास्तों का समूह

च.	*निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।*

१)	हिन्दी में दो लिंग है - स्त्री लिंग और पुल्लिंग
२)	हिन्दी में एकवचन तथा बहुवचन ये दो वचन है।
३)	हिन्दी में कारकों की संख्या आठ है।
४)	किसी व्यक्ति, वस्तु, प्राणी, स्थान, गुण, धर्म, द्रव्य भाव आदि के सूचक शब्द को संज्ञा कहते हैं।
८)	संज्ञा के बदले प्रयुक्त होनेवाले शब्द को सर्वनाम कहते हैं।

## ३.५	*इकाई का सारांश*

प्रिय छात्रों इस इकाई में हमने निम्न महत्त्वपूर्ण बातों की चर्चा की। शब्द भाषा की अर्थवान इकाई है। इस इकाई में स्वनों का प्रयोग हुआ है। बिना अर्थ परिवर्तन लिए आने वाला स्वन सं-स्वन होता है। अर्थपूर्ण स्वन स्वनिम कहलाता है। स्वन-स्वनिम-संस्वन के अंतर को हमने देखा। स्वनिम के दो भेद है - खण्ड्य स्वनिम स्वतंत्र स्वन होता है तो खण्ड्येतर स्वनिम में मात्रा, बलाघात, सुर और संगम अनुनासिकता है।

इसके बाद हम हिन्दी के शब्दों की रूपरचना से अवगत हुए ।

उपसर्ग - शब्द के प्रारंभ में जुड़कर अर्थ को परिवर्तित करता है। जैसे -मान-सम्मान - अपमान। संस्कृत में बाईस उपसर्ग है। तद्भव के बारह उपसर्ग है। अरबी, फारसी और अंग्रेजी उपसर्गों का परिचय भी हमने प्राप्त किया।

प्रत्यय - शब्द के अंत में जुड़कर अर्थ में परिवर्तन लाता है। प्रत्ययों के दो भेद हैं - कृत और तद्धित। कृत प्रत्ययों से बनने वाले शब्द कृदंत कहलाते हैं। कृदंत मूलत: धातु अर्थात् क्रिया से संबंधित है।

तद्धित प्रत्यय संज्ञा और विशेषण के अंत में लगते हैं। विदेशी प्रत्यय भी हिन्दी में मिलते हैं। प्रत्ययों के कारण लिंग, वचन, काल का बोध होता है।

दो शब्दों के योग से बननेवाले शब्द सामासिक शब्द है। समासों के छह प्रकार हैं - द्वंद्वं, तत्पुरूष, बहुव्रीही, अव्ययी भाव, द्विगु, कर्मधारेय।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

रूपरचना इन्हीं प्रत्यय, उपसर्ग, समासों से बनती है। इनसे लिंग बोध, वचनबोध, कारकबोध होता है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया पर इनका परिणाम होता है। यह भी हमने चार्ट के द्वारा देखा।

व्याकरणिक स्तर पर भाषा की मूल इकाई वाक्य है। वाक्य रचना के कारण व्याकरणिक प्रकार्य पूर्ण होता है। वाक्यरचना प्रक्रिया में पदक्रम, अन्विति, अर्थसंगति और अध्याहार आते हैं। अध्याहार में हम कर्ता, कर्म, क्रिया,सहायक क्रिया में से किन्ही का लोप करते हैं। तो घटकविशेष के प्रभाव से बदलने की प्रक्रिया अन्विति कहलाती है। हिन्दी का पदक्रम - कर्ता, कर्म क्रिया ऐसा है। इनमें से कर्ता और क्रिया अनिवार्य घटक है। इन सारी बातों का परिचय ही हिन्दी की संरचना का प्रयोग कहलाता है जो हिन्दी के भाषिक स्वरूप का वैशिष्ट्य दर्शाता है।

३.६ अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

टिप्पणियाँ लिखिए

१) स्वन स्वनिम में अंतर २) स्वनिम के प्रकार ३) उपसर्ग ४) लिंग वचन व्यवस्था ५) सर्वनाम

निम्न प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

१) स्वन, संस्वन, स्वनिम को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
२) हिन्दी शब्द रचना पद्धति को उदाहरणों द्वारा समझाइए।
३) हिन्दी कारक रचना स्पष्ट कीजिए।
४) हिन्दी व्याकरण का परिचय दीजिए।
५) वाक्य को परिभाषित करते हुए उसके आवश्यक तत्त्वों का विवेचन कीजिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई - ४
हिन्दी के विविध रूप

इकाई की रूपरेखा

४.१ प्रस्तावना
४.२ उद्देश्य
४.३ विषय विवरण
४.३.१ संपर्क-भाषा
४.३.२ राष्ट्रभाषा
४.३.३ राजभाषा
४.३.४ माध्यम-भाषा
४.३.५ संचार-भाषा
४.४ हिन्दी की संवैधानिक स्थिति
४.५ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
४.६ पारिभाषिक शब्द
४.७ इकाई का सारांश
४.८ अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

4.१. प्रस्तावना -

विश्व में जितने देश है, उनमें प्रत्येक की एक भाषा है। परंतु भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ एक से अधिक भाषाएँ बोली जाती है। भारत की राजनीतिक दृष्टि से इकाई प्रदेश है तथा प्रत्येक प्रदेश की अपनी प्रादेशिक भाषा राजभाषा या कामकाजी भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। ऐसे बहुभाषी देश में प्रत्येक प्रांत की अपनी भाषा प्रांत तक ही सीमित है परंतु एक दूसरे से विचारों का आदान प्रदान करने के लिए हिन्दी का प्रयोग होता है। हिन्दी भाषी राज्यों के अलावा भी लगभग संपूर्ण भारत में हिन्दी बोली और समझी जाती है। इसलिए हिन्दी के विविध रूपों का प्रचलन हुआ। सभी ने एकमत से हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया है। राजभाषा के रूप में इसका प्रयोग करने के लिए स्वतंत्रता के बाद संविधान में प्रावधान किया गया। इसके अलावा संपर्क भाषा, माध्यम भाषा, संचार भाषा के रूप में हिन्दी प्रयुक्त हो रही है। १४ सितंबर १९४९ में भारतीय संविधान के द्वारा हिन्दी को संघ की राजभाषा तथा देवनागरी लिपि को राजलिपि के रूप में स्वीकृत किया गया। संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में हिन्दी संबंधी निर्देश दिये गये हैं, जिसे हिन्दी की संवैधानिक स्थिति के रूप में जाना जाता है।

4.२. उद्देश्य -

प्रिय छात्रों, इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप

(१) संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी की स्थिति को स्पष्ट कर पाएंगे।
(२) राष्ट्रभाषा की संकल्पना, उसके स्वरूप एवं आवश्यकताओं को जान पाएंगे।
(३) राजभाषा के रूप में हिन्दी की प्रयुक्ति का प्रयोग कर सकेंगे।
(४) माध्यम भाषा के रूप में हिन्दी का प्रकार्य, तथा महत्व समझेंगे।
(५) संचार भाषा का स्वरूप, संचार के विविध माध्यमों में हिन्दी की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
(६) संवैधानिक भाषा के रूप में हिन्दी की संवैधानिक स्थिति, उसके नियम, उपनियम आदि की जानकारी प्राप्त कर हिन्दी प्रयोगण के महत्त्व से परिचित होंगे।

४.३ विषय - विवरण

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

परिस्थिति तथा प्रयोग के आधार पर एक ही भाषा के विभिन्न रूप बन जाते हैं। जैसे स्वतंत्रता के पहले एक दूसरे से संपर्क की आवश्यकता, विचार-विनिमय के कारण हिन्दी संपर्क भाषा, माध्यम भाषा के रूप में कार्यरत थी, तो स्वतंत्रता के बाद अधिकतर लोगों द्वारा अपनाये जाने के कारण तथा सभी के द्वारा समझी बोली जाने के कारण राजभाषा तथा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का ही विचार करना अनिवार्य बन गया। वह व्यापक से व्यापकतर बनती गयी। इसलिए संविधान में हिन्दी प्रयोग के स्वरूप और क्षेत्र पर आधारित अधिनियमों का प्रावधान किया गया। हिन्दी के इन विभिन्न रूपों का स्वरूप अब देखेंगे।

४.३.१ संपर्क भाषा Link Language

जिस भाषा को राष्ट्र के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक के लोग समझ सकते हैं तथा जिसके माध्यम से राष्ट्र के किसी भी स्थान पर जाने से वहाँ की जनता से संपर्क किया जा सकता है वह संपर्क भाषा होती है।

किसी भी देश में एक भाषा संपर्क भाषा के रूप में कार्य करती है। भारत में यह कार्य हिन्दी करती है। यही एक ऐसी सशक्त, समृद्ध तथा संपन्न भाषा है जो ऐतिहासिकता, भौगोलिक एकता के कारण जनभाषा के रूप में आपसी संपर्क की भाषा है। भारत की अन्य भाषाओं के प्रति भी इसका उदार, व्यापक तथा समन्वयवादी दृष्टिकोण दिखायी देता है। यही सबको आंतरिक रूप में और बाह्य रूप में एक दूसरे को मिलाने वाली संपर्क भाषा है।

भारत के प्रत्येक राज्य में कहीं दो भाषाओं का तो कही तीन भाषाओं का प्रयोग किया जाता है। परंतु राज्य-राज्य में संपर्क हिन्दी द्वारा होता है। दो भिन्न भाषा-भाषी अथवा एक भाषा को दो भिन्न उपभाषाओं के मध्य अथवा अनेक बोलियाँ बोलनेवालों के मध्य संपर्क का माध्यम हिन्दी ही है। यही कारण है कि राजभाषा अधिनियम १९७६ के अनुसार 'क' राज्यों (हिन्दी भाषी राज्य) की संपर्क भाषा हिन्दी ही है। साथ ही 'ख' राज्यों (पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, चंडीगढ़ आदि) की संपर्क भाषा हिन्दी ही है। अन्य राज्यों में भी यह कार्य हिन्दी ने किया है।

संपर्क भाषा की आवश्यकता परस्पर संपर्क बनाए रखने के लिए है। दूसरे संघ से संपर्क बनाए रखने के लिए तथा संघ व राज्य या किसी अन्य भाषा-भाषी से संपर्क के लिए इसकी आवश्यकता होती है।

संपर्क भाषा की दृष्टि से हिन्दी का प्रयोग प्रशासन, आर्थिक गतिविधियाँ, जनसंचार, शिक्षा, सामासिक संस्कृति आदि में किया जाता है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भी माना था, ''एक राज्य से दूसरे राज्य को पत्र व्यवहार अथवा बोलचाल के लिए एक ही भाषा अपेक्षित है वह है हिन्दी। हिन्दी भाषा ही उपयुक्त और उचित संपर्क भाषा बन सकती है।''

आज हम देखते है कि संपर्क भाषा के रूप में पूरे भारत में समाचार माध्यमों, फिल्मों, दूरदर्शन, धार्मिक संघठन राजनीतिक कार्यक्रमों के लिए उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम तक हिन्दी का ही व्यवहार हो रहा है। हिन्दी राज्य, राष्ट्र की सीमा पार कर आंतरर्राष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में उभर कर सामने आई है। विदेशों में कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। वह समय भी अब दूर नही जब संयुक्त राष्ट्रसंघ की भी मान्यता मिल जाएगी। भारत के सभी धर्मों और विभिन्न भाषा-भाषियों ने हिन्दी के विकास में योगदान दिया है। यह किसी विशिष्ट वर्ग, प्रदेश या समुदाय की भाषा न होकर भारतीय जनता की भाषा है। हिन्दी ही भारत की राष्ट्रीय संपर्क की भाषा है, क्यों कि इस भाषा का परिवार ही सब से बडा परिवार है।

४.३.२ राष्ट्रभाषा National Language

राष्ट्रभाषा का अर्थ है राष्ट्र की भाषा। पारिभाषिक दृष्टि से किसी राष्ट्र में प्रचलित अनेक भाषाओं में से वही भाषा राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन हो सकती है जो समूचे राष्ट्र को भावात्मक एकता के सूत्र में बांध सकती है। हिन्दी प्राय: देश के अधिकतर हिस्से में जनसामान्य द्वारा प्रयुक्त होती है । विचार विनिमय, व्यवहार, बातचित जिस भाषा में होती है वही राष्ट्रभाषा बनती है। राष्ट्रभाषा जनता की भाषा होती है। जनता की समस्त अवधारणाएँ, सोच, क्रियाकलाप, विश्वास, व्यावहारिक जीवन, सामाजिक-भावनिक-आदान-प्रदान नीति रीति राष्ट्रभाषा के माध्यम से ही साकार होते हैं। हिन्दी में ये सभी विशेषताएँ होने से संविधान ने हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत किया। जिसे संविधान में संघभाषा (Lan-

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

guage of the Union) नाम से संबोधित किया गया है ।

प्रादेशिक, संचार एवं केंद्र और उसके अधीन राज्यों के बीच संपर्क के लिए राष्ट्रभाषा का होना अनिवार्य है ।

राष्ट्रीय स्तर पर समस्त कार्य में प्रयुक्त होनेवाली राष्ट्रभाषा होती है । जिस देश के लोग एक भाषा के सूत्र में बँधकर रहते हैं उनकी भाषा और विचारों में एकता दिखायी देती है, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एकता बनी रहती है । स्वतंत्र राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा का होना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है । विश्व में प्रत्येक स्वतंत्र, विकसित स्वाभिमानी देश की अपनी राष्ट्रभाषा है । कोई भी राष्ट्र, राष्ट्रभाषा को छोडकर राष्ट्र नहीं कहला सकता ।

आज साहित्य, शिक्षा, व्यापार, न्यायालय, राजकीय सेवाएँ सभी कार्यों में हिन्दी प्रयुक्त होती है । सही अर्थ में यही राष्ट्रभाषा है । देश की संस्कृति तथा उसके आदर्शों और देशवासियों की आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम हिन्दी ही है । अनेक भाषा-भाषी लोगों के बीच संपर्क स्थापित करने की अद्भूत क्षमता हिन्दी में है । राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत, राष्ट्रचिह्न तथा राष्ट्रभाषा स्वाभिमान के प्रतीक हैं । देश की भाषा ही स्वाभिमान, आत्मविश्वास प्रकट करती है । स्वतंत्रता से पहले पूरे भारत को एक सूत्र में बाँधने के लिए एक भाषा की आवश्यकता मानी गयी, हिन्दी अपनी सार्वभौमिकता, व्यापकता, सरलता, सर्वप्रियता के कारण उन लोगों के द्वारा स्वीकृत हुई जो हिन्दी भाषा-भाषी नही थे । अंग्रेजों के शासन से पहले मुस्लिम शासन काल में राजभाषा भले ही फारसी रही होगी पर आम जनता के व्यवहार-विचार और संपर्क-संचार की भाषा हिन्दी ही रही ।

भाषा और साहित्य के स्तर पर हिन्दी का उदय लगभग ग्यारहवी शताब्दी से माना जाता है । राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी स्वीकृत होने से पूर्व उसकी आवश्यकता पर सभी ने बल दिया और इसके लिए प्रयत्न भी किये गये । मध्यकाल में तो भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक यही जनभाषा के रूप में प्रचलित थी । आरंभ काल में उसे हिंदवी, हिंदुई नाम संबोधित किया गया है तथा मध्ययुग में हिंदवी, हिन्दी संबोधित किया गया । धर्म, जाति, वर्ग, प्रदेश की कोई सीमा रेखा इसमें नहीं रही, व्यावहारिक रूप में राष्ट्रभाषा तभी बन गयी। तो आधुनिक काल में हिन्दी भारत की राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बन गई है ।

धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर तो हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के अनेक उल्लेखनीय प्रयास बीसवी शती के पूर्वार्ध तक हुए, राजनीतिक स्तर पर इस दिशा में सबसे अधिक योगदान मिला भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का । इसके सूत्रधार महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करना अपने स्वदेशी आंदोलन तथा राष्ट्रीय कार्यक्रम का अभिन्न अंग बना लिया । हिन्दी और देवनागरी को राष्ट्रीय दर्जा दिलाने में उनके योगदान को भुलाया नही जा सकता । स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष समर्थन करनेवाले असंख्य नेताओं, क्रांतिकारियों, बलिदानी वीरों, लेखकों, कवियों और पत्रकारों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । इसलिए १९४७ तक हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो पायी।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

(क) संक्षेप में उत्तर लिखिए ।

(१) संपर्क भाषा से क्या तात्पर्य है ?

(२) हिन्दी ही संपर्क भाषा कैसे है ?

(३) नेहरूजी का संपर्क भाषा के संबंध में मत लिखिए ?

(४) राष्ट्रभाषा का क्या अर्थ है ?

(५) राष्ट्रभाषा के माध्यम से क्या साकार होता है ?

(६) हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का कार्य किसने किया ?

४.३.३ राजभाषा Official Language

सामान्य रूप से देश का कारोबार चलाने के लिए जिस भाषा का व्यवहार किया जाता है उसे राजभाषा कहा जाता है। संविधान द्वारा सरकारी कामकाज, प्रशासन, संसद और विधान मंडलों तथा न्यायिक कार्यकलाप के लिए स्वीकृत भाषा राजभाषा कहलाती है । समूचे राष्ट्र में प्रयुक्त होने वाली राष्ट्र की भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकृति मिली है । भारत के सभी प्रदेशों की अपनी भाषाओं का अस्तित्व और महत्त्व स्वीकार करते हुए भी समूचे राष्ट्र में पारस्परिक सम्पर्क, आदान-प्रदान, विचार-विमर्श, संचार-संवाद और अखिल भारतीय स्तर पर पत्राचार आदि के लिए एक ऐसी भाषा की आवश्यकता होती है,

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

जिसे अखिल भारतीय भाषा कहा जा सके। वर्तमान में अखिल भारतीय स्तर पर राजकीय कामकाज के लिए माध्यम के रूप में प्रयुक्त होनेवाली राजभाषा हिन्दी है।

राजकीय, प्रशासकीय, सरकारी, अर्द्धसरकारी कर्मचारियों द्वारा राजभाषा का प्रयोग होता है। अर्थात राजभाषा का प्रयोग प्रशासक वर्ग करता है। निर्धारित और मानक रूप में मान्य भाषा प्रयोग की नियमावली का अनुसरण राजभाषा में आवश्यक है। इसलिए राजभाषा औपचारिकता की सीमाओं में बंधी रहती है।

१५ अगस्त १९४७ में भारत स्वतंत्र हुआ। १४ सितंबर १९४९ को हिन्दी संघ की राजभाषा और देवनागरी लिपि राजलिपि के रूप में स्वीकृत हुई। अंग्रेजी के अंकों को अंतर्राष्ट्रीय अंक होने से स्वीकार लिया गया। संविधान के अनुच्छेद ३४३ से ३५१ में राजभाषा हिन्दी के संबंध में किये गये प्रावधानों का स्वरूप स्पष्ट है। जिसका विचार हम हिन्दी की संविधानिक स्थिति में करेंगे।

संविधान लागू होने पर भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की ओर से प्रशासनिक शब्दावली, ज्ञान-विज्ञान की शब्दावली, पारिभाषिक शब्दसंग्रह, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली निर्माण का कार्य किया जाता रहा, कुछ विषयों पर अब भी कार्य हो रहा है। संविधान के अनुसार १९५५ में एक राजभाषा आयोग की स्थापना की गयी। जो कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के बारे में सिफारिश करेगा। अंग्रेजी का स्थान पूर्ण रूपेण हिन्दी अनेक परिस्थितियों के कारण नहीं ले पाई और आज भी अंग्रेजी का वर्चस्व जैसा का तैसा बना है। १९६० में राष्ट्रपति के आदेश से १५ वर्ष के भीतर के कर्मचारियों को हिन्दी सीखना अनिवार्य कर दिया, परंतु सारा कार्य अंग्रजी में ही होता रहा। १९६३ का राजभाषा अधिनियम या १९६७ का संशोधित अधिनियम अनिश्चित काल तक अंग्रेजी की व्यवस्था उसी प्रकार बने रहने के पक्ष में होने से राजभाषा विभाग का वर्चस्व स्थापित नहीं हो पाया। हिन्दी में कार्य करना हमारी राष्ट्रीय नीति में होने के बावजूद सौ प्रतिशत यह राजभाषा नहीं बन पायी।

४.३.४ माध्यम भाषा Media Language

विचार तथा भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा होती है। यह बात अभिव्यक्ति तक सीमित न होकर आदान-प्रदान के रूप में भी मनुष्य के द्वारा की जाती है। ज्ञान, विचार, विज्ञान, अनुसंधान, जिज्ञासाएँ एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक या एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का माध्यम भी भाषा है। अर्थात् जिस भाषा के माध्यम से राष्ट्र के लोग ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, दर्शन, विधि, न्याय का ज्ञान अर्जित करते हैं, उसे माध्यम भाषा कहा जाता है। आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का परिचय अंग्रेजी से प्रारंभ हुआ, इसलिए उच्चशिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रही।

आज हिन्दी में इतिहास, भौतिकी, रसायन, दर्शन, अर्थशास्त्र, जीवविज्ञान, मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र आदि विभिन्न विषयों पर हजारों पुस्तकें उपलब्ध हैं। हिन्दी माध्यम से विश्वविद्यालयों में अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। त्रिभाषा सूत्र के कारण भारत में प्रारंभिक शिक्षा के रूप में हिन्दी, अंग्रेजी और संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित एक भाषा का अध्ययन पूरे देश में हो रहा है। विश्व के सभी भाषाविद एक मत से मातृभाषा को महत्व देते रहे हैं। किसी भी व्यक्ति की अभिव्यक्ति उसकी अपनी भाषा में ही बेहतर ढंग से हो सकती है, जबकि अधिकतर व्यक्तियों का यह मत है कि ज्ञान-विज्ञान की भाषा अंग्रेजी है, वह अनिच्छा से क्यों न हो अंग्रेजी को ही माध्यम भाषा के रूप में अपनाता है। इसलिए आजादी के ६२ वर्षों के बाद भी हिन्दी की पढ़ाई द्वीतीय, तृतीय भाषा के रूप में हो रही है। हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी को माध्यम भाषा के रूप में स्वीकारा गया है। इन प्रदेशों में प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्चतर शिक्षा तक का माध्यम हिन्दी भाषा है। आज हिन्दी भाषा में सभी विषयों की शिक्षाएँ दी जा रही है। ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में हिन्दी को माध्यम भाषा के रूप में अपनाया गया है। विचारों का सम्प्रेषण तथा शिक्षा ग्रहण के अर्थ में समस्त हिंदुस्तानी लोगों के विचारों के माध्यम की भाषा हिन्दी है।

४.३.५ संचार भाषा Communicative Language

संचार भाषा का अर्थ है, वह भाषा जिसका प्रयोग संचार के विभिन्न माध्यमों के लिए किया जाता है। संचार शब्द का अर्थ है - किसी भाव, विचार या सूचना को शब्दों या प्रतीकों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाना। इस कार्य के लिए संचार के विभिन्न - माध्यमों का उपयोग किया जाता है। संचार माध्यमों के तीन रूप दिखायी देते हैं- जैसे

१. मुद्रण माध्यम - इसमें समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें, पम्पलेट, पोस्टर आदि आते हैं। अन्य आधुनिक माध्यमों की तुलना में मुद्रण माध्यम सबसे प्राचीन है।

३. श्रव्यमाध्यम - श्रव्य माध्यम के रूप में रेडिओ, ऑडिओ कैसेट आते हैं।

३. श्रव्य और दृश्य माध्यमों में फिल्म दूरदर्शन, वीडिओ कैसेट आदि आते हैं। इनका मिला-जुला रूप नव इलेक्ट्रॉनिक माध्यम है। जिसमें कम्प्युटर, इंटरनेट, पेजर, मोबाईल फोन, ई-मेल आदि आते हैं।

इनमें प्रत्येक की अपनी भाषा अलग होती है। मुद्रण माध्यमों की भाषा मानक मानी जाती है। श्रव्य तथा दृश्य संचार माध्यम की भाषा बोलचाल की और लोकप्रिय होती है। इसमें उच्चरित शब्द का महत्त्व सर्वोपरि है।

संचार के विभिन्न माध्यमों में हिन्दी भाषा का प्रयोग किया जा रहा है। हिन्दी क्षेत्र व्यापकतर हो रहा है। टेलीविजन माध्यम ने नई हिन्दी को जन्म दिया है। जिसमें अधिकतर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग होता है। विद्वानों ने इसके लिए 'हिंग्लिश' शब्द का प्रयोग क्रिया है। सूचना विस्फोट के इस युग में संचार माध्यमों की अनिवार्य भाषा हिन्दी बन गयी है पर उसका रूप बदल गया है। कार्यक्रम के अनुसार भाषा का रूप बदलता है। वह सभी क्षेत्रो में, सभी माध्यमों में एक जैसी नहीं प्रयुक्त होती। इसके प्रयोग मे विविधता दिखायी देती है। हिन्दी की व्यापक शैलियाँ प्रयुक्त हो रही है।

सूचनाप्रधान कार्यक्रमों में मानक हिन्दी का प्रयोग होता है। बोलचाल की हिन्दी, अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी, कई प्रादेशिक शब्दावली से युक्त हिन्दी आदि कई कारणों से इनमें विविधता मिलती है। सही अर्थ में भाषा वही होती है जिस रूप में वह लिखी जाती है और लिखित तथा मौखिक भाषा के रूप में अंतर होना स्वाभाविक है। हिन्दी का प्रयोग ही संपूर्ण भारत में विद्यमान है। भारतीयता, भारतीय अस्मिता और सामासिक संस्कृति हेतू संचार माध्यमों में हिन्दी के मानक रूप को सुरक्षित रखने की आवश्यकता है। आज पूरा संचार तंत्र हिन्दी माध्यम से ही स्वयं को प्रतिष्ठित करने में लगा है। क्योंकि संचार का अर्थ ही है अधिक से अधिक व्यक्तियों तक पहुँचना। भारत में हर व्यक्ति तक पहुँचने के लिए विज्ञापन, फिल्म, दूरदर्शन, समाचारपत्र चाहे जो संचार माध्यम अपनाएँ हिन्दी का प्रयोग आवश्यक है। इस तथ्य को वैश्विक स्पर्धा में संलग्न विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ समझती हैं जो हिन्दी को अपना चुकी हैं।

कॅम्प्युटर में हिन्दी और देवनागरी का उपयोग साफ्टवेअर के माध्यम से हो रहा है। भारतीय समाचार चैनल, विशेषता निजी क्षेत्र के चैनल हिन्दी (बी.बी.सी.,स्टार न्यूज, सहारा, जी न्यूज) के माध्यम से ही अपने समाचार प्रसारित कर रहे हैं। भारतीय चित्रपट और दूरदर्शन के अधिकांश कार्यक्रम हिन्दी में ही हैं। विदेशी भाषाओं में बने धारावाहिक, कार्टुन, फिल्म, डबिंग के माध्यम से हिन्दी का प्रयोग बढ़ा रहे हैं। प्रायः सभी समाचारपत्रों के इंटरनेट संस्करण दुनियाभर में उपलब्ध हैं।

निष्कर्षत: संचार माध्यम के रूप में हिन्दी आज भारत की सर्वाधिक प्रचलित भाषा है।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ख. संक्षेप में उत्तर लिखिए।

(१) औपचारिकता की सीमा में कौनसी भाषा बँधी हुई होती है ?
(२) राजभाषा दिवस कब मनाया जाता है ?
(३) भारत की राजभाषा कौनसी है ?
(४) माध्यम भाषा किसे कहते हैं ?
(५) श्रव्य माध्यम की भाषा की विशेषता लिखिए ?
(६) माध्यम भाषा और संचार भाषा में अंतर बताइए ?

४.४ हिन्दी का संवैधानिक स्वरूप

संघ की राजभाषा -

अनुच्छेद ३४३

१) संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप, भारतीय अंकों का अंतरर्राष्ट्रीय रूप होगा।

२) खण्ड (१) में किसी बात के होते हुए भी इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि के लिए संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग जारी रहेगा जिनके लिए प्रारम्भ के ठीक पहले उनका प्रयोग होता था, परन्तु राष्ट्रपति उक्त कालावधि में, आदेश द्वारा, संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

हिन्दी भाषा का तथा भारतीय अंकों के अंतरर्राष्ट्रीय रूप के साथ-साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेंगे ।

३) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी संसद विधि द्वारा उक्त पंद्रह साल की अवधि के पश्चात :

(क) अंग्रेजी भाषा का अथवा,

(ख) अंको के देवनागरी रूप का

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेंगी ।

राजभाषा के लिए संसद का आयोग और समिति-

अनुच्छेद ३४४

१) राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारंम्भ में पांच वर्ष की समाप्ति पर तथा तत्पश्चात ऐसे प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर आदेश द्वारा एक आयोग गठित करेगा, जो एक सभापति और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करनेवाले अन्य सदस्यों आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया का आदेश परिभाषित करेगा।

(२) राष्ट्रपति को -

(क) संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी भाषा के लिए उत्तरोंत्तर अधिक प्रयोग के,

(ख) संघ के राजकीय प्रयोजनो में से सब या किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निबन्धनों के,

(ग) अनुच्छेद ३४८ मे वर्णित प्रयोजनों मे से सब या किसी के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक उल्लिखित प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप के,

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच अथवा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच संचार की भाषा तथा उनके प्रयोग के बारे में राष्ट्रपति द्वारा आयोग से पृच्छा किए हुए किसी अन्य विषय के बारे मे सिफारिश करने का आयोग का कर्तव्य होगा ।

(३) खण्ड (२) के अधीन अपनी सिफारिशें करते ये आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का तथा लोकसेवाओं के बारे में अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के लोगों के न्यायपूर्ण दावों और हितों का सम्यक ध्यान रखेगा ।

(४) तीस सदस्यों की एक समिति गठित की जाएगी, जिनमें से बीस लोकसभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्यसभा के सदस्य होगें, जो कि क्रमश: लोकसभा के सदस्यों तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व-पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे ।

(५) खण्ड (१) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करना तथा उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत करना समिति का कर्तव्य होगा ।

(६) अनुछेद ३४३ में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति खण्ड (५) मे निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात उस सारे प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेंगा ।

राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ -

अनुच्छेद ३४५

अनुच्छेद ३४६ और ३४७ के उपबंधों के अधीन रहते हुए राज्य का विधान -मंडल विधि द्वारा उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिन्दी को अंगीकार कर सकेगा । परन्तु जब तक राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा इससे अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के भीतर उन राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी, जिनके लिए इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले वह प्रयोग की जाती थी ।

एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच मे अथवा राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा।

अनुच्छेद ३४६

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

संघ में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा होगी, परन्तु यदि दो या अधिक राज्य करार करते हैं कि ऐसे राज्यों के बीच में संचार के लिए राजभाषा हिन्दी भाषा होगी तो ऐसे संचार के लिए वह भाषा प्रयोग की जा सकेगी।

किसी राज्य के जन समुदाय के किसी विभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में विशेष उपबंध

अनुच्छेद ३४७

तद्विषय मांग की जाने पर यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाए कि किसी राज्य के जनसमुदाय का पर्याप्त अनुपात चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली कोई भाषा राज्य द्वारा अभिज्ञात की जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को उस राज्य में सर्वत्र अथवा उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए जैसा कि वह उल्लिखित करें, राजकीय मान्यता दी जाए।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में प्रयोग की जाने वाली भाषा

अनुच्छेद ३४८

(१) इस भाग के पूर्ववर्ती उपबंधो में किसी बात के होते हुए भी जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करें, तब तक-

(क) उच्चतम न्यायालय में तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में सब कार्यवाहियाँ,

(ख) जो-

(i) विधेयक अथवा उन पर प्रस्तावित किए जाने वाले जो संशोधन संसद के प्रत्येक सदन में अथवा राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुनर:स्थापित किए जाएँ, उन सबके प्राधिकृत पाठ,

(ii) अधिनियम संसद द्वारा या राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित किए जाएँ, तथा जो अध्यादेश राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित किए जाएँ उन सबके प्राधिकृत पाठ तथा

(iii) आदेश, नियम, विनियम और उपविधि इस संविधान के अधीन अथवा संसद या राज्यों के विधान-मंडल द्वारा- निर्मित किसी विधि के अधीन, निकालें जाएँ, उन सबके प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(२) खण्ड (१) के उपखण्ड (क) में किसी बात के होते हुए भी किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयुक्त होनेवाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य में मुख्य स्थान रखनेवाले उच्च न्यायालय में कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकेंगा।

परन्तु इस खण्ड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, आज्ञप्ति अथवा आदेश पर लागू न होगी।

(३) खण्ड (१) के उपखण्ड (ख) मे किसी बात के होते हुए भी, जहाँ किसी राज्य के विधान-मंडल में पुनर:स्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखण्ड की कंडिका (१११) मे निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से अन्य किसी भाषा के प्रयोग को विहित किया है, वहाँ उस राज्य के राजकीय सूचना-पत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी मे उसका अनुवाद उस खण्ड के अभिप्रायों के लिए उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

भाषा सम्बन्धी कुछ विधियों को अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया-

अनुच्छेद ३४९

इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्षो की कालावधि तक अनुच्छेद के खण्ड (१) में वर्णित प्रयोजनों में से किसी के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुर:स्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा तथा ऐसे किसी विधेयक के पुर:स्थापित अथवा ऐसे किसी संशोधन के प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद ३४४ के खण्ड (१) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर तथा उस अनुच्छेद के खण्ड (४) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात ही राष्ट्रपति देगा।

व्यथा निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जानेवाली भाषा अनुच्छेद ३५० प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होनेवाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा शिक्षा की सुविधाएँ-

अनुच्छेद ३५०

(क) प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय पदाधिकारी भाषाई अल्पसंख्याक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

भाषाई अल्पसंख्याक-वर्गों के लिए विशेष अधिकारी-

(ख) (१) भाषाई अल्पसंख्याक-वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(२) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई-अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए उपबंधित रक्षापायों से सम्बन्धित सभी विषयों का अन्वेषण करें और विषयों के सम्बन्ध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निर्दिष्ट करें, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और सम्बन्धित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश-

अनुच्छेद ३५१

संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सकें और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में निर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित्त करें।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ग) एक वाक्य में उत्तर लिखिए।

(१) हिन्दी के साथ-साथ कौनसी सह राजभाषा का उल्लेख हुआ है ?

(२) राज्य की राजभाषा के संबंध में कौनसे अनुच्छेद में प्रावधान है ?

(३) संविधान के किस अनुच्छेद में न्यायालयीन भाषाप्रयोग के बारे में उल्लेख है ?

(४) ३५१ वे अनुच्छेद के अनुसार हिन्दी कौनसी एकता की भाषा हो गई है ?

संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा-

(१२०) (१) भाग १७ में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु अनुच्छेद ३४८ के उपबंधों के अधीन रहते हुए संसद में कार्य हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाएगा।

परन्तु यथास्थिति राज्यसभा का सभापति या लोकसभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिन्दी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को सम्बोधित करने की अनुज्ञा दे सकेंगा।

(२) जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करें तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानों ''अंग्रेजी में ''शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो।

भारतीय संविधान की अष्टम् अनुसूची में समाविष्ट भाषाएँ

१. असमिया ९. पंजाबी सन १९९२ मे विधि द्वारा

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

२.	उड़िया	१०.	बंगला	तीन और भाषाओं को
३.	उर्दू	११.	मराठी	अष्टम अनुसूची में शामिल
४.	कन्नड़	१२.	मलयालम	किया गया
५.	कश्मीरी	१३.	संस्कृत	१. कोंकणी
६.	गुजराती	१४.	सिन्धी	२. नेपाली
७.	तमिल	१५.	हिन्दी	३. मणिपुरी
८.	तेलुगु			

राजभाषा अधिनियम १९६३-

भारत के संविधान में राजभाषा सम्बन्धी किये गये प्रावधानों के अनुसार २६ जनवरी १९६५ के बाद (संविधान लागू होने के १५ वर्षे की अवधि के पश्चात) संघ के सरकारी प्रयोजनों में अंग्रेजी को पूर्णत: हटाकर राजभाषा के रूप में केवल हिन्दी का ही प्रयोग किया जाना अपेक्षित था। संविधान के अनुच्छेद ३४४ के प्रावधानों के अधीन राष्ट्रपति के आदेशानुसार सन् १९५६ में एक राजभाषा आयोग स्थापित किया गया जिसने राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से सम्बन्धित अपनी सिफारिशों समेत विस्तृत रिपोर्टें प्रस्तुत की। परन्तु इन रिपोर्टों के प्रकाशित होते ही अहिन्दी भाषी प्रदेश, विशेषत: दक्षिण भारत में हिन्दी के विरोध में तीव्र आन्दोलन शुरू हुआ। इसलिए १९६३ में एक अधिनियम पारित किया जो ''राजभाषा अधिनियम १९६३'' के नाम से जाना जाता है।

संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ

१. (१) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम १९६३ कहा जा सकेगा।

(२) धारा ३, जनवरी, १९६५ के २६ वे दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबंध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करें और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेगी।

परिभाषाएँ

२. इस अधिनियम में जब तक की प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो,

(क) 'नियत दिन' से, धारा ३ के सम्बन्ध में, जनवरी १९६५ का २६ वाँ दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध के सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबंध प्रवृत्त होता है;

(ख) 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का बना रहना।

३. (१) संविधान के प्रारम्भ से १५ वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी, हिन्दी अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा नियत दिन से ही -

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी; तथा

(ख) संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए;

प्रयोग मे लाई जाती रह सकेगी :

परन्तु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी:

परन्तु यहाँ किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप मे अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहाँ हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ-साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जाएगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

परन्तु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को,जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है, और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

(२) उपधारा (१) में अन्तविष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहाँ पत्रादि के प्रयोजनो के लिए हिन्दी या अंग्रेजी भाषा-

(i) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच;

(ii) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के बीच ;

(iii) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कम्पनी या कार्यालय के बीच ;

प्रयोग में लाई जाती है वहाँ उस तारीख तक , जब तक पूर्वोक्त सम्बन्धित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या निगम या कम्पनी का कर्मचारीवृन्द हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिन्दी में भी दिया जाएगा -

(३) उपधारा (१) में अन्तविष्ट किसी बात के होते हुए भी हिन्दी और अंग्रेजी भाषा दोनो ही -

(i) संकल्पों, साधारण आदेशो, नियमों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञप्तियों के लिए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते है या किये जाते है,

(ii) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गये प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कागज-पत्रों के लिए ;

(iii) केन्द्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञप्तियों, अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा-प्ररूप के लिए प्रयोग में लाई जाएगी।

(४) उपधारा (१) या उपधारा (२) या उपधारा (३) के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले विना केन्द्रीय सरकार, धारा ८ के अधीन बनाये गए नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबन्ध कर सकेंगी जिसे या जिन्हे संघ के राजकीय प्रयोजन के लिए, जिसके अन्तर्गत किसी मंत्रालय, विभाग अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जनसाधारण के हितों का सम्यक ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाये गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के सम्बन्ध में सेवा कर रहे है और जो हिन्दी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण है वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं है उनका कोई अहित नहीं होता है।

(५) उपधारा (१) के खण्ड (क) के उपबन्ध और उपधारा (२) उपधारा (३) और उपधारा (४) के उपबन्ध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक में वर्णित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधान-मंडलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिये जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात ऐसी समाप्ति के लिए संसद के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता।

राजभाषा के सम्बन्ध में समिति

४.(१) जिस तारीख को धारा ३ प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष की समाप्ति के पश्चात, राजसभा के सम्बन्ध में एक समिति इस विषय का संकल्प संसद के किसी भी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित

किया जाने पर गठित की जाएगी।

(२) इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोकसभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्यभाषा के सदस्य होंगे, जो क्रमश: लोकसभा के सदस्यों तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(३) इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करें और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करें और राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद के हर एक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्या सरकारों को भिजवाएगा।

(४) राष्ट्रपति उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस पर राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किये हों तो उन पर विचार करने के पश्चात उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश निकाल सकेगा:

परन्तु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 के उपबन्धों से असंगत नहीं होंगे।

केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

५.(१) नियत दिन को और उसके पश्चात शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित-

(क) किसी केन्द्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का, अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केन्द्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम,अधिनियम या उपविधि का,-हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

(२) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के जो संसद के किसी भी सदन में पुनरस्थापित किये जाने हों और उन सब संशोधनो के, जो उनके सम्बन्ध में संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ-साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाये गए नियमों द्वारा विहित की जाए। कतिपय दशाओं मे राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

(६) जहाँ किसी राज्य के विधान-मंडल ने उस राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित अधिनियमों मे अथवा उस राज्य में राज्यपाल द्वारा प्रस्थापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहाँ संविधान के अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) द्वारा अपेक्षित अंग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त उसका हिन्दी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

उच्च न्यायालयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग

७. नियत दिन से ही या तत्पश्चात किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिये गये किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजन के प्रयोजको के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और यहाँ कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहाँ उसके साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकरण से निकाला गया अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा।

नियम बनाने की शक्ति

८.(१) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, शासकीय राजपत्र मे अधिसूचना द्वारा,बना सकेगी।

(२) इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम, बनाए जाने के पश्चात यथाशक्य शीघ्र संसद के हर एक सदन के समक्ष, उस समय जब वह सत्र में हो, कुल मिलाकर तीस दिन की कालावधि के लिए, जो एक सत्र में या दो क्रमवर्ती सत्रों में समाविष्ट हो सकेगी, रखा जाएगा और यदि उस सत्र के, जिसमें वह ऐसे रखा गया हो या ठीक पश्चातवर्ती सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई उपान्तर करने के लिए सहमत हो जाए या दोनों सदन सहमत हो जाए कि वह नियम नहीं

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात यथास्थिति, वह नियम ऐसे उपान्तरित रूप में ही प्रभावशील होगा या उसका कोई भी प्रभाव न होगा, किन्तु इस प्रकार कि ऐसा कोई उपान्तर या बातिलकरण उस नियम के अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा। कतिपय उपबन्धों का जम्मू-कश्मीर पर लागू न होगा

९. धारा ६ और ७ के उपबन्ध जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू न होंगे।

महत्त्वपूर्ण बातें

(1) सन 1965 के बाद भी हिन्दी भाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी-सहभाषा के रूप में सरकारी प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होती रहेगी।

(2) अंग्रेजी को जारी रखने की कोई निश्चित अंतिम तिथि नहीं होगी।

(3) 1963 अधिनियम उपबंध 3 के अनुसार अंग्रेजी भाषा कानूनी तौर पर बनी रही, साथ ही इसी उपबंध के कारण हिन्दी का स्थान कानूनी रूप से भले ही मुख्य हो गया हो, परंतु व्यावहारीक दृष्टि से गौण हो गया।

(4) सरकारी कार्यालयों में हिन्दी - अंग्रेजी द्विभाषी युग का सूत्रपात हुआ।

(5) संसदीय राजभाषा समिती के गठन का प्रावधान इसमें है।

लोकसभा के बीस तथा राज्यसभा के दस सदस्य इसमें होते हैं।

(6) 1965 के बाद राष्ट्रपति के प्राधिकार के अधीन सरकारी राजपत्र में प्रकाशित हिन्दी अनुवाद ही हिन्दी के प्राधिकृत पाठ हो गए। सभी विधेयकों के प्राधिकृत अंग्रेजी पाठों के साथ साथ उनके प्राधिकृत हिन्दी पाठ देना अनिवार्य हो गया।

(7) राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से किसी राज्य का राज्यपाल उच्च न्यायालय के फैसलों, आदेशों के लिए हिन्दी अथवा उस राज्य की राजभाषा के वैकल्पिक प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है।

राजभाषा अधिनियम १९७६

राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को सरकारी कार्यालयो, केन्द्रीय सरकार के अधीन निगमों, कम्पनियों आदि में अधिक प्रभावी ढंग से किये जाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने १९७६ में, राजभाषा अधिनियम १९६३ (१९६३ का १९) की धारा ३ की उपधारा (४) के साथ पठित धारा ८ द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए निम्नलिखित नियम बनाए हैं। इन नियमों में सरकारी कर्मचारियों के हित को दृष्टिगत रखकर भी कुछ प्रावधान किये गए हैं। यह राजभाषा नियम, १९७६ इस प्रकार है -

१.संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ :-(१) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, १९७६ है। (२) इनका विस्तार, तमिलनाडु राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है। (३) ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

२.परिभाषाएँ :-इन नियमों में जब तक कि सन्दर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-

(क) ''अधिनियम'' से राजभाषा अधिनियम, १९६३(१९६३ का १९) अभिप्रेत है ;

(ख) ''केन्द्रीय सरकार के कार्यालय'' के अन्तर्गत निम्नलिखित भी है,

(i) केन्द्रीय सरकार का कोई मंत्रालय, विभाग या कार्यालय

(ii) केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय, और

(iii) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण के अधीन किसी निगम या कम्पनी का कोई कार्यालय,

(ग) कर्मचारी के केन्द्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है ;

(घ) ''अधिसूचित कार्यालय'' से नियम १० के उपनियम (४) के अधीन अधिसूचित कार्यालय अभिप्रेत है ;

(ड) ''हिन्दी में प्रवीणता'' से नियम ९ में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है ;

(च) ''क्षेत्र क'' से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह एवं दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है ;

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(छ) ''क्षेत्र ख'' से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा अंडमान और चण्डीगढ़ संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है,

(ज) ''क्षेत्र ग'' से खण्ड (च) और (छ) मे निर्दिष्ट राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों से भिन्न राज्य तथा संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है ;

(झ) हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान से नियम १० में वर्णित कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत है ।

३. राज्यों आदि और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि:-

(१) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से ''क्षेत्र क'' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि, असाधारण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते है तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

(२) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से -

(क) ''क्षेत्र ख'' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि मामूली तौर हिन्दी में होंगे और यदि इनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

परन्तु यदि कोई राज्य या संघ राज्यक्षेत्र यह चाहता है कि किसी विशिष्ट वर्ग या प्रवर्ग के पत्रादि या उसके किसी कार्यालय के लिए आशयित पत्रादि सम्बद्ध राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट अवधि तक अंग्रेजी या हिन्दी में भेजे जाएँ और उसके साथ दूसरी भाषा में उसका अनुवाद भी भेजा जाए तो ऐसे पत्रादि उसी रीति से भेजे जाएंगे।

(ख) 'क्षेत्र ख' के किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते है।

(३) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से ''क्षेत्र ग'' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे ।

(४) उपनियम (१) और (२) में किसी बात के होते हुए भी, ''क्षेत्र ग' में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से ''क्षेत्र क'' या ''क्षेत्र ख'' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार के कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।

४. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि -

(क) केन्द्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

(ख) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और ''क्षेत्र क'' में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे सम्बन्धित आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए, समय-समय पर अवधारित करें;

(ग) ''क्षेत्र क'' स्थित केन्द्रीय सरकार के ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खण्ड (क) या खण्ड (ख) मे विनिर्दिष्ट कार्यालय से भिन्न हैं, पत्रादि हिन्दी में होंगे ;

(घ) ''क्षेत्र क'' मे स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और ''क्षेत्र ख'' या ''क्षेत्र ग'' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं ;

(ङ) ''क्षेत्र ख'' या ''क्षेत्र ग'' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो परन्तु जहाँ ऐसे पत्रादि-

(i) ''क्षेत्र क'' या ''क्षेत्र ख'' के किसी कार्यालय को सम्बोधित है वहाँ यदि आवश्यक हो तो, उनका दूसरी भाषा मे अनुवाद पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा;

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(ii) ''क्षेत्र ग'' में किसी कार्यालय को सम्बोधित है वहाँ उनका दूसरी भाषा में अनुवाद उनके साथ भेजा जाएगा :

५. हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर - नियम ३ और नियम ४ में किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में दिए जाएँगे ।

६. हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग - अधिनियम की धारा ३ की उपधारा (३) में विनिदिष्ट सभी दस्तावेजो के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे सुनिश्चित कर ले कि ऐसे दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही में तैयार किये जाये, निष्पादित किये जाये और जारी किया जाए।

७. आवेदन अभ्यावेदन आदि - (१) कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है ।

(२) जब उपनियम (१) में निर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो या उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर किए गए हो तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा ।

(३) यदि कोई कर्मचारी यह चाहता है कि सेवा सम्बन्धी विषयों (जिनके अन्तर्गत अनुशासनिक कार्यवाहियाँ भी हैं ।) से सम्बन्धित कोई आदेश या सूचना, जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक विलम्ब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी ।

८. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय में टिप्पणों का लिखा जाना - (१) कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पण या मसौदा हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है। और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करें ।

(२) केन्द्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी, जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की माँग तभी कर सकता है, जब वह दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति की है, अन्यथा नहीं ।

(३) यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज विधिक या तकनीक प्रकृति की है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा ।

(४) उपनियम (१) में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहाँ ऐसे कर्मचारियों द्वारा जिन्हे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, टिप्पण, प्रारूपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएँ, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा ।

९. हिन्दी में प्रवीणता - यदि किसी कर्मचारी ने

(क) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उत्तीर्ण कर ली है; या

(ख) स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उसमें उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को जो एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया था ; या

(ग) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली है ।

१०. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान - (१) (क) यदि किसी कर्मचारी ने

(i) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उत्तीर्ण कर ली है; या

(ii) केन्द्रीय सरकार की हिन्दी प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या, जहाँ उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग के पदों के सम्बन्ध में उस योजना के अन्तर्गत कोई निम्नतर परीक्षा विनिर्दिष्ट है, जब वह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है ; या

(iii) केन्द्रीय सरकार द्वारा उस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अन्य परीक्षा उर्त्तीर्ण कर ली है ; या

(ख) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसने ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है, तो उसके

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

(२) यदि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से अस्सी प्रतिशत ने हिन्दी का ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यतया यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्य साधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

(३) केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं।

(४) केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उन कार्यालयों के नाम, राजपत्र में अधिसूचित किए जाएँगे।

११. मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया सम्बन्धी अन्य साहित्य, लेखन सामग्री आदि-

(१) केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से सम्बन्धित सभी मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया सम्बन्धी अन्य साहित्य हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषीय रूप में यथास्थिति, मुद्रित या साईक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा।

(२) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्रारूप और शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होगे।

(३) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएँगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होगी,

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह साधारण या विशेष आदेश द्वारा केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्ही उपबन्धों से छूट दे सकती हैं।

१२. अनुपालन का उत्तरदायित्व -

(१) केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह -

(i) यह सुनिश्चित करें कि अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों का समूचित रूप से अनुपालन हो रहा है ; और

(ii) इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जाँच के लिए उपाय करें।

(२) केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों के सम्यक अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय-समय पर आवश्यक निदेश जारी कर सकती है।

राजभाषा नियम १९७६ का सारांश -

(१) राजभाषा नियम १९७६ के अन्तर्गत कुल बारह नियम बनाए गए हैं। ये नियम तमिलनाडु राज्य पर लागू नहीं होते।

(२) राजभाषा नियम १९७६ के अन्तर्गत हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को प्रभावी ढंग से लागू करने के उद्देश्य से पूरे भारत को तीन क्षेत्रों में बाँटा गया है। यथा

-क्षेत्र-'क', क्षेत्र- 'ख', तथा क्षेत्र- 'ग' (Region 'A', Region 'B', & Region 'C')

क्षेत्र 'क' के अन्तर्गत समस्त हिन्दी भाषी राज्य एवं संघ राज्यक्षेत्र का समावेश है। यथा-बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश राज्य और दिल्ली एवं अंडमान-निकोबार द्वीप समूह।

क्षेत्र 'ख' के अन्तर्गत गुजरात, महाराष्ट्र तथा पंजाब राज्य और चंडीगढ़ संघ राज्यक्षेत्र शामिल हैं।

क्षेत्र 'ग' के अन्तर्गत के राज्य तथा संघ राज्यक्षेत्र आते हैं जो क्षेत्र 'क' और क्षेत्र 'ख' मे शामिल नहीं है।

(३) राजभाषा नियम १९७६ में हिन्दी पत्राचार के बारे में स्पष्ट निर्देश दिए गए है।

(४) राजभाषा नियम १९७६ के नियम ५ के अन्तर्गत एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रावधान यह किया गया है कि हिन्दी में प्राप्त पत्र के उत्तर अनिवार्य रूप से हिन्दी में ही देना होगा, चाहे वह पत्र किसी भी राज्य सरकार या व्यक्ति विशेष से आया

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हो । इस नियम से किसी को भी किसी भी प्रकार की छूट नहीं दी गई है ।

(५) नियम ५ के अनुसार यह प्रावधान किया गया है कि सरकारी कार्यालय से जारी होने वाले परिपत्र, प्रशासनिक रिपोर्ट, कार्यालय आदेश, अधिसूचना, करार, संधियों, विज्ञापन तथा निविदा सूचना आदि अनिवार्य रूप से हिन्दी अंग्रेजी द्विभाषी रूप में जारी किए जाएँगे और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी की यह जिम्मेदारी होगी कि वह यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसे दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी द्विभाषी रूप में जारी किएं जा रहे हैं ।

(६) इन नियमों में यह भी प्रावधान है कि कोई भी कर्मचारी हिन्दी या अंग्रेजी में आवेदन या अभ्यावेदन दे सकता है ।

(७) केन्द्रीय सरकार का कोई अधिकारी अथवा कर्मचारी फाइलों में टिप्पणी का प्रारूप हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है ।

(८) राजभाषा नियम १९७६ के नियम १२ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रावधान यह हैं कि प्रत्येक केन्द्रीय सरकार के कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करें कि राजभाषा अधिनियम एवं राजभाषा नियमों के उपबन्धों का समुचित पालन किया जा रहा है और, इनके सुनिश्चित अनुपालन के लिए प्रभावकारी जाँच बिन्दु (स्लव सद्धस्ह्ह-)निर्धारित करें ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि राजभाषा नियम १९७६ से राजभाषा हिन्दी प्रगामी प्रयोग में काफी मात्रा में गति आई तथा केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों को भी हिन्दी में काम-काज करने में निश्चित रूप से प्रोत्साहन मिला ।

राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से सम्बन्धित राष्ट्रपति के आदेश

भारतीय संविधान में राजभाषा के बारे में किए गए प्रावधानों के अन्तर्गत संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से सम्बन्धित राष्ट्रपति ने सन १९५२, १९५५ तथा १९६० में आदेश जारी किए ।

(१) राष्ट्रपति का आदेश १९५२

२७ मई, १९५२ को राष्ट्रपति ने अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा का और भारतीय अंको के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के अतिरिक्त अंको के देवनागरी स्वरूप का प्रयोग संघ के निम्नलिखित राजकीय प्रयोजनों के लिए, अर्थात-

(१) राज्यों के राज्यपालों,

(२) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों और

(३) उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों

की नियुक्तियों के अधिपत्रों के लिए प्राधिकृत कर दिया है ।

(२) राष्ट्रपति का आदेश १९५५ -

राष्ट्रपति ने ३ दिसम्बर, १९५५ को गृह मंत्रालय द्वारा अधिसूचना के रूप में संविधिक आदेश जारी किया जिसके अनुसार संघ के निम्नलिखित राजकीय प्रयोजनो के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा का प्रयोग किए जाने का प्रावधान किया गया -

(१) जनता के साथ पत्र-व्यवहार

(२) प्रशासनिक रिपोर्टें,राजकीय पत्रिकाएँ और संसद को दी जाने वाली रिपोर्टें

(३) सरकारी संकल्प और विधायी अधिनियमितियाँ

(४) जिन राज्य सरकारों ने अपनी राजभाषा के रूप में हिन्दी को अपना लिया है उनसे पत्र-व्यवहार ।

(५) संधियाँ और करार ।

(६) अन्य देशों की सरकारों और उनके दूतों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से पत्र-व्यवहार ।

(७) राजनयिक और कौंसलीय पदाधिकारियों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भारतीय प्रतिनिधियों के नाम जारी किए जाने वाले औपचारिक दस्तावेज ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(३) राष्ट्रपति का आदेश १९६० -

संसदीय राजभाषा समिति सिफारिशों को ध्यान मे रखते हुए राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद ३४४ खण्ड (६) के अन्तर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के कामकाज में हिन्दी को प्रस्थापित किए जाने के उद्देश्य से २७ अप्रैल, १९६० को एक आदेश जारी किया। इस आदेश में निम्नलिखित प्रमुख निदेशों का समावेश है -

(१) शब्दावली -आयोग की जिन मुख्य सिफारिशों को समिति ने मान लिया वे ये में - (१) शब्दावली तैयार करने में मुख्य लक्ष्य, उसकी स्पष्टता यथार्थता और सरलता चाहिए ; (२) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली अपनाई जाए या जहाँ भी आवश्यक हो, अनुकूलन कर लिया जाए ; (३) सब भारतीय भाषाओं के लिए शब्दावली का विकास करते समय लक्ष्य यह होना चाहिए कि उसमें जहाँ तक हो सके अधिकतम एकरूपता हो ; और (४) हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की शब्दावली के विकास के लिए जो प्रयत्न केन्द्र और राज्यों में हो रहे है उनमें समन्वय स्थापित करने के लिए समुचित प्रबन्ध किये जाने चाहिए। इसके अतिरिक्त समिति का यह मत है कि विज्ञान और प्रोद्यौगिकी के क्षेत्र में सब भारतीय भाषाओं में जहाँ तक हो सके एकरूपता होनी चाहिए और शब्दावली लगभग अंग्रेजी या अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली जैसी नहीं चाहिए। इस दृष्टि से समिति ने यह सुझाव दिया है कि इस क्षेत्र में विभिन्न संस्थाओं द्वारा किए गये काम मे समन्वय स्थापित करने और उसकी देखरेख के लिए और सब भारतीय भाषाओं में प्रयोग को लाने की दृष्टि से एक प्रामाणिक शब्दकोश निकालने के लिए एक ऐसा स्थायी आयोग कायम किया जाए जिसके सदस्य मुख्यत: वैज्ञानिक और प्रोद्यौगिकीविद् हों।

शिक्षा मंत्रालय निम्नलिखित विषय में कारवाई करें

(क) अब तक किये काम पर पुनर्विचार और समिति द्वारा स्वीकृत सामान्य सिद्धान्तों के अनुकूल शब्दावली का विकास, विज्ञान और प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में वे शब्द, जिनका प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में होता है, कम-से-कम परिवर्तन के साथ अपना लिए जाएँ, अर्थात मूल शब्द वे होने चाहिए जो कि आजकल अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली में काम आते हैं। उनसे व्युत्पन्न शब्दों का जहाँ भी आवश्यक हो भारतीयकरण किया जा सकता है ;

(ख) शब्दावली तैयार करने के काम में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रबन्ध करने के विषय में सुझाव देना; और

(ग) विज्ञान और तकनीकी शब्दावली के विकास के लिए समिति के सुझाव के अनुसार स्थायी आयोग का निर्माण।

(२) प्रशासनिक संहिताओं और अन्य कार्यविधि साहित्य का अनुवाद -

इस आवश्यकता को दृष्टि में रखकर कि संहिताओं और अन्य कार्यविधि साहित्य के अनुवाद में प्रयुक्त भाषा में किसी हद तक एकरूपता होनी चाहिए, समिति ने आयोग की यह सिफारिश मान ली है कि यह सारा काम अभिकरण को सौंप दिया जाए।

शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों के अलावा बाकी सब संहिताओं और अन्य कार्याविधि साहित्य का अनुवाद करें। सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों का अनुवाद संविधियों के साथ घनिष्ट रूप से सम्बद्ध है, इसलिए यह काम विधि मंत्रालय करें। इस बात का पूरा प्रयत्न होना चाहिए कि सब भारतीय भाषाओं में इन अनुवादों की शब्दावली में जहाँ तक हो सके एकरूपता रखी जाए।

(३) प्रशासनिक कर्मचारी वर्ग को हिन्दी का प्रशिक्षण -

(क) समिति द्वारा अभिव्यक्त मत के अनुसार ४५ वर्ष से कम आयु वाले सब केन्द्रीय कर्मचारियों के लिए सेवा-कालीन हिन्दी प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए। तृतीय श्रेणी के ग्रेड से नीचे के कर्मचारियों और औद्योगिक संस्थाओं और कार्य प्रभारित कर्मचारियों के सम्बन्ध में यह बात लागू न होगी। इस योजना के अन्तर्गत नियत तारीख तक विहित योग्यता प्राप्त कर सकने के लिए कर्मचारी को कोई दंड नहीं दिया जाना चाहिए। हिन्दी भाषा की पढ़ाई के लिए सुविधाएँ प्रशिक्षणार्थियों को मुफ्त मिलती रहनी चाहिए।

(ख) गृह मंत्रालय उन टाइपकारों और आशुलिपिकों को हिन्दी टाइप-राइटिंग और आशुलिपि का प्रशिक्षण देने के

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

लिए आवश्यक प्रबन्ध करें जो केंद्रीय सरकार की नौकरी में है।

(ग) शिक्षा मंत्रालय हिन्दी टाइपराइटरों के मानकी की-बोर्ड (कुंजी पटल) के विकास के लिए शीघ्र कदम उठाए।

(४) हिन्दी प्रचार -

(क) आयोग की इस सिफारिश से कि यह काम करने की जिम्मेदारी अब सरकार उठाए, समिति सहमत हो गई है। जिन क्षेत्रों में प्रभावी रूप से काम करने वाली गैर-सरकारी संस्थाएँ पहले से ही विद्यमान हैं उनमें उन संस्थायों को वित्तीय और अन्य प्रकार की सहायता दी जाए और जहाँ ऐसी संस्थाएं नहीं है, वहाँ सरकार आवश्यक संगठन कायम करें।

शिक्षा मंत्रालय इस बात की समीक्षा करें कि हिन्दी प्रचार के लिए जो वर्तमान व्यवस्था है वह कैसी चल रही है। साथ ही वह समिति द्वारा सुझाई गई दिशाओं में आगे कारवाई करें।

(ख) शिक्षा मंत्रालय और वैज्ञानिक अनुसंधान और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय परस्पर मिलकर भारतीय भाषाविज्ञान, भाषाशास्त्र और साहित्य सम्बन्धी अध्ययन और अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के लिए समिति द्वारा सुझाये गए तरीके से आवश्यक कारवाई करे और विभिन्न भारतीय भाषाओं को परस्पर निकट लाने के लिए और अनुच्छेद ३५१ में दिये गए निदेश के अनुसार हिन्दी का विकास करने के लिए आवश्यक योजना तैयार करें।

(५) केन्द्रीय सरकारी विभाग के स्थानीय कार्यालयों के लिए भर्ती -

(क) समिति की राय है कि केन्द्रीय सरकारी विभागों के स्थानीय कार्यालय अपने आन्तरिक कामकाज के लिए हिन्दी का प्रयोग करें और जनता के साथ पत्र-व्यवहार में उन प्रदेशों की प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करें।

अपने स्थानीय कार्यालयों में अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी का उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग करने के वास्ते योजना तैयार करने में केन्द्रीय सरकारी विभाग इस आवश्यकता को ध्यान में रखे कि यथासम्भव अधिक-से-अधिक मात्रा में प्रादेशिक भाषाओं में फार्म और विभागीय साहित्य उपलब्ध कराकर वहाँ की जनता को पूरी सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

(ख) समिति की राय है कि केन्द्रीय सरकार के प्रशासनिक अभिकरणों और विभागों में कर्मचारियों की वर्तमान व्यवस्था पर पुनर्विचार किया जाए, और कर्मचारियों का प्रादेशिक आधार पर विकेन्द्रीकरण कर दिया जाए ; इसके लिए भर्ती के तरीकों और अर्हताओं में उपयुक्त संशोधन करना होगा।

स्थानीय कार्यालयों मे जिन कोटियों के पदों पर कार्य करनेवालों की बदली मामूली तौर पर प्रदेश के बाहर नहीं होती उन कोटियों के सम्बन्ध में यह सुझाव, कोई अधिवास सम्बन्धी प्रतिबन्ध लगाए बिना, सिद्धांतत: मान लिया जाना चाहिए।

(ग) समिति आयोग की इस सिफारिश से सहमत है कि केन्द्रीय सरकार के लिए यह विहित कर देना न्यायसम्मत होगा कि उसकी नोकरियों में लगने के लिए एक अर्हता यह भी होगी कि उम्मीदवार को हिन्दी भाषा का सम्यक ज्ञान हो। पर ऐसा तभी किया जाना चाहिए जबकि इसके लिए काफी पहले से सूचना दे दी गई हो और भाषा-योग्यता का विहित स्तर मामूली हो और इस बारे में जो भी कमी हो उसे सेवाकालीन प्रशिक्षण द्वारा पूरा किया जा सकता हो।

यह सिफारिश अभी हिन्दी-भाषी क्षेत्रों के केन्द्रीय सरकारी विभागों में ही कार्यान्वित की जाए, हिन्दीतर भाषा-भाषी क्षेत्रों के स्थानीय कार्यालयों में नहीं।

(क),(ख) और (ग) में दिये गए निर्देश भारतीय लेखा परिक्षा और लेखा विभाग के अधीन कार्यालयों के सम्बन्ध ले लागू न होंगे।

(६) प्रशिक्षण संस्थान -

(क) समिति ने यह सुझाव दिया है कि नैशनल डिफेन्स एकेडमी जैसे प्रशिक्षण संस्थानों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही बना रहे किन्तु शिक्षा सम्बन्धी कुछ या सभी प्रयोजनों के लिए माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू करने के लिए उचित कदम उठाए जाएँ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रक्षा मंत्रालय अनुदेश पुस्तिकाओं इत्यादि के हिन्दी प्रकाशन आदि के रूप में समुचित प्रारम्भिक कारवाई करे, ताकि जहाँ भी व्यवहार्य हो यहाँ शिक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग सुगम हो जाए।

(ख) समिति ने सुझाव दिया कि प्रशिक्षण संस्थानों में प्रवेश के लिए अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही परीक्षा के माध्यम हों, किन्तु परीक्षार्थियों को यह विकल्प रहे कि वे सब या कुछ परीक्षा-पत्रों के लिए उनमें से किसी एक भाषा को चुन ले और एक विशेष समिति यह जाँच करने के लिए नियुक्त की जाए कि नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग परीक्षा के माध्यम के रूप में कहाँ तक शुरू किया जा सकता है।

रक्षा मंत्रालय को चाहिए कि वह प्रवेश परीक्षाओं में वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू करने के लिए आवश्यक कारवाई करें और कोई नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग आरम्भ करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त करें।

(७) अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती -

(क) परीक्षा का माध्यम-समिति की राय है कि (१) परीक्षा का माध्यम अंग्रेजी बना रहे और कुछ समय पश्चात हिन्दी वैकल्पिक माध्यम के रूप में अपना ली जाए उसके बाद जब तक आवश्यक हो अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही परीक्षार्थी से विकल्पानुसार परीक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने की छूट हो; और (२) किसी प्रकार की नियट कोटा प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जाँच करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त की जाए।

कुछ समय के पश्चात वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू करने के लिए संघ लोक सेवा आयोग के साथ परामर्श करके गृह मंत्रालय आवश्यक कारवाई करें। वैकल्पिक माध्यम के रूप विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करने से गम्भीर कठिनाईयाँ पैदा होने की सम्भावना है, इसलिए वैकल्पिक माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जाँच करने के लिए विशेषज्ञ समिति नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

(ख) भाषा विषयक प्रश्न-पत्र-समिति की राय है कि सम्यक सूचना के बाद समान स्तर के दो अनिवार्य प्रश्न-पत्र होने चाहिए जिनमें से एक हिन्दी और दूसरा हिन्दी से भिन्न किसी भारतीय भाषा का हो और परीक्षार्थी को यह स्वतंत्रता हो कि वह इनमें से किसी एक को चुन ले।

अभी केवल एक ऐच्छिक हिन्दी परीक्षा-पत्र शुरू किया जाए। प्रतियोगिता के फल पर चुने गये जो परीक्षार्थी इस परीक्षा-पत्र में उत्तीर्ण हो गए हों, उन्हें भर्ती के बाद जो विभागीय हिन्दी परीक्षा देनी होती है, उसमें बैठने और उसमें उत्तीर्ण होने की शर्त से छूट दी जाए।

(८) अंक - जैसा कि समिति का सुझाव है, केन्द्रीय मत्रालयों के हिन्दी प्रकाशनों में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के अतिरिक्त देवनागरी अंको के सम्बन्ध में एक आधारभूत नीति अपनाई जाए, जिसका निर्धारण इस आधार पर किया जाए कि वे प्रकाशन किस प्रकार की जनता के लिए है और उसकी विषयवस्तु क्या है। वैज्ञानिक, औद्योगिकीस और सांख्यिकी प्रकाशनों में, जिसमें केन्द्रीय सरकार का बजट सम्बन्धी साहित्य भी शामिल है, बराबर अन्तर्राष्ट्रीय अंको का प्रयोग किया जाए।

(९) अधिनियमों, विधेयको की भाषा -

(क) समिति ने राय दी है कि संसदीय विधियाँ अंग्रेजी में बनती रहें किन्तु उनका प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद उपलब्ध कराया जाए।

संसदीय विधियाँ अंग्रेजी में बनती रहें पर उसके प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद की व्यवस्था करने के वास्ते विधि मंत्रालय आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश करे। संसदीय विधियों का प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद कराने का प्रबन्ध भी विधि मंत्रालय करें।

(ख) समिति ने राय जाहिर की है जहाँ राज्य विधान-मंडल में पेश किए गए विधेयको या पास किए गए अधिनियमों का मूल पाठ हिन्दी से भिन्न किसी भाषा में है, वहाँ अनुच्छेद ३४८ के खण्ड (३) के अनुसार अंग्रेजी अनुवाद के अलावा उसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया जाए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

राज्य की राजभाषा में पाठ के साथ-साथ राज्य विधेयकों, अधिनियमों और अन्य सांविधिक नियमों के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के लिए आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश किया जाए।

(१०) उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की भाषा -

राजभाषा आयोग ने सिफारिश की थी कि जहाँ तक उच्चतम न्यायालय की भाषा का सवाल है उसकी भाषा इस परिवर्तन का समय आने पर अन्तत: हिन्दी होनी चाहिए। समिति ने यह सिफारिश मान ली है।

आयोग ने उच्च न्यायालयों की भाषा के विषय में प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी के पक्ष-विपक्ष में विचार किया और सिफारिश की कि जब भी इस परिवर्तन का समय आए, उच्च न्यायालयों के निर्णयों, आज्ञाप्तियों (डिक्रियों) और आदेशों की भाषा सब प्रदेशों में हिन्दी होनी चाहिए, किन्तु समिति की राय है कि राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से आवश्यक विधेयक पेश करके यह व्यवस्था करने की गुंजाइश रहे कि उच्च न्यायालयों के निर्णयों, आज्ञाप्तियों (डिक्रियों) और आदेशों के लिए उच्च न्यायालय में हिन्दी और राज्यों की राजभाषाएँ विकल्पत: प्रयोग में लाई जा सकेंगी।

समिति की यह राय है कि उच्चतम न्यायालय अन्तत: अपना सब काम हिन्दी में करें यह सिद्धान्त रूप मे स्वीकार्य है और इसके सम्बन्ध मे समूचित कारवाई उसी समय अपेक्षित होगी जबकि इस परिवर्तन के लिए समय आ जाएगा।

जैसा कि आयोग की सिफारिश की तरमीम करते हुए समिति ने सुझाव दिया है, उच्च न्यायालयों की भाषा के विषय में यह व्यवस्था करने के लिए आवश्यक विधेयक विधि मंत्रालय उचित समय पर राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से पेश करे कि निर्णयों, आज्ञाप्तियों (डिक्रियों)और आदेशों के प्रयोजनो के लिए हिन्दी और राज्यों की राजभाषाओं का विकल्पत: किया जा सकेगा।

(११) विधि क्षेत्र में हिन्दी में काम करने के लिए आवश्यक प्रारम्भिक कदम -मानक विधि शब्द कोश तैयार करने, केन्द्र तथा राज्य के विधान निर्माण से सम्बन्धित सांविधिक ग्रन्थ का अधिनियम करने, विधि शब्दावली तैयार करने की योजना बनाने और जिस संक्रमण काल में सांविधिक ग्रन्थ और साथ ही निर्णयविधि अंशत: हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे उस अवधि में प्रारम्भिक कदम उठाने के बारे में आयोग ने जो सिफारिश की थी उन्हें समिति ने मान लिया है। साथ ही समिति ने यह सुझाव भी दिया है कि संविधियों के अनुवाद और विधि शब्दावली तथा कोशों से सम्बन्धित सम्पूर्ण कार्यक्रम की समुचित योजना बनाने और उसे कार्यान्वित करने के लिए भारत की विभिन्न राष्ट्रभाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विशेषज्ञों का एक स्थायी आयोग या इस प्रकार कोई उच्च स्तरीय निकाय बनाया जाए। समिति ने यह राय भी जाहिर की है कि राज्य सरकारों को परामर्श दिया जाए कि वे भी केन्द्रीय सरकार से राय लेकर इस सम्बन्ध में आवश्यक कारवाई करें।

समिति के सुझाव को दृष्टि में रखकर विधि मंत्रालय (यथासम्भव सब भारतीय भाषाओं में प्रयोग के लिए) सर्वमान्य विधि शब्दावली की तैयारी और संविधियों के हिन्दी में अनुवाद सम्बन्धी पूरे काम के लिए समुचित योजना बनाने और पूरा करने के लिए विधि विशेषज्ञों के एक स्थायी आयोग का निर्माण करें।

(१२) हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए योजना का कार्यक्रम - समिति ने यह सुझाव दिया है कि संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की योजना संघ सरकार बनाए और कार्यान्वित करे। संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी के प्रयोग पर इस समय कोई रोक न लगाई जाए।

तदानुसार गृह मंत्रालय एक योजना कार्यक्रम तैयार करें और उसे अमल में लाने के सम्बन्ध में आवश्यक कारवाई करें। इस योजना का उद्देश्य होगा संघीय प्रशासन में बिना कठिनाई के हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए प्रारम्भिक कदम उठाना और संविधान के अनुच्छेद के ३४३ खण्ड (२) में किए गए उपबंध के अनुसार संघ के विभिन्न कार्यो में अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी के प्रयोग को बढावा देना, अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी का प्रयोग कहाँ तक किया जा सकता है यह बात इन प्रारम्भिक कारवाईयों की सफलता पर बहुत कुछ निर्भर करेगी। इस बीच प्राप्त अनुभव के आधार पर अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी के वास्तविक प्रयोगी की योजना पर समय-समय पर पुनर्विचार और उसमें हेर-फेर करना होगा।

घ) स्वयं अध्ययन के प्रश्न

सही पर्याय चुनिए।

१. १९९२ में विधिद्वारा स्वीकृत और पूर्ववर्ती मिलाकर कितनी भाषाएँ अष्टम अनुसूची में है।

क. १४ख. १५ ग. १८ घ. एक भी नहीं

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

२. राजभाषा अधिनियम १९६३ कौनसी तिथि को लागू हुआ।

क. २६ जनवरी १९६३ ख. १५ अगस्त १९६३
ग. १४ सितंबर १९६३ घ. ३१ दिसंबर १९६३

३. राजभाषा अधिनियम १९७६ के अनुसार हिन्दी प्रयोग को लेकर राज्यों का विभाजन कितने रूपों में हुआ।

१. प फ ब २. क ख ग
३. त थ द ४. अ आ ई

४. प्राज्ञ परीक्षा पास होने का अर्थ है।

क. पढ-लिख गया है। ख. उच्च शिक्षित है।
ग. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है। घ. भाषा पर अधिकार है।

५. २७ अप्रैल १९६० को क्या हुआ।

१. राष्ट्रपति का आदेश जारी हुआ। २. लोकसभा ने आदेश जारी किया।
३. उच्चतम न्यायालय ने आदेश दिया। ४. प्रधानमंत्री ने भाषण दिया।

४.५ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

क.

(१) राष्ट्र के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक के लोग जिस भाषा को समझ सकते हैं तथा जिसके माध्यम से राष्ट्र के किसी भी स्थान पर जाने से वहाँ की जनता से संपर्क स्थापित किया जा सकता है वह संपर्क भाषा होती है।

(२) भारत में हिन्दी एक ऐसी सशक्त, समृद्ध तथा संपन्न भाषा है जो ऐतिहासिकता, भौगोलिक एकता के कारण जन भाषा के रूप में आपसी संपर्क की भाषा है। भारत की अन्य भाषाओं के प्रति भी इसका दृष्टिकोन उदार, व्यापक तथा समन्वयवादी है। एक दूसरे से मिलानेवाली हिन्दी ही संपर्क भाषा है।

(३) संपर्क भाषा के बारे में नेहरूजी मानते थे कि ''एक राज्य से दूसरे राज्य को पत्रव्यवहार-अथवा बोलचाल के लिए एक ही भाषा अपेक्षित है, वह हिन्दी भाषा ही उपयुक्त और उचित संपर्क भाषा बन सकती है।''

(४) राष्ट्रभाषा का अर्थ है राष्ट्र की भाषा। किसी भी राष्ट्र में प्रचलित ऐसी भाषा जो समूचे राष्ट्र को भावात्मक एकता के सूत्र में बाँध सकती हो।

(५) राष्ट्रभाषा के माध्यम से जनता की समस्त अवधारणाएँ, सोच, क्रियाकलाप, विश्वास, व्यावहारिक जीवन, सामाजिक-भावनिक आदान-प्रदान, नीति-रीति साकार होते है।

(६) हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का कार्य स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष समर्थन करनेवाले असंख्य नेताओं, क्रांतिकारियों, बलिदानी वीरों, लेखकों, कवियों और पत्रकारों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का कार्य किया है।

ख.

(१) निर्धारित और मानक रूप में मान्य भाषा प्रयोग की नियमावली का अनुसरण करना आवश्यक होने से राजभाषा औपचारिकता की सीमाओं में बँधी रहती है।

(२) १४ सितंबर राजभाषा दिवस के रूप में मनाया जाता है।

(३) भारत की राजभाषा हिन्दी है।

(४) जिसमें विचार तथा भावों की अभिव्यक्ति होती है, उसे माध्यम भाषा कहा जाता है।

(५) श्रव्य माध्यम की भाषा में उच्चारित शब्द का स्थान सर्वोपरि होता है। इसकी लोकप्रियता अधिक होने से कार्यक्रम के अनुसार भाषा का रूप बदलता है।

(६) माध्यम भाषा में विचार और ज्ञान का संप्रेषण होता है तो संचार भाषा में सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता। संचार भाषा संचार साधनों से संबंधित है। तो माध्यम भाषा शिक्षा से संबंधित है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

ग.

(१) हिन्दी के साथ-साथ सह राजभाषा के रूप में अंग्रेजी का उल्लेख संविधान के अनुच्छेद ३४३ में किया गया है।

(२) राज्य की राजभाषा के संबंध में अनुच्छेद ३४५, ३४६ और ३४७ में प्रावधान है।

(३) उच्च न्यायालय, तथा उच्चतम न्यायालयों में प्रयुक्त होनेवाली भाषा के बारे में अनुच्छेद ३४८ (१,२,३,) में निर्देश दिये गये हैं।

(४) ३५१ वे अनुच्छेद के अनुसार हिन्दी सामासिक एकता की भाषा है।

घ. (१) ग (२) क (३) २ (४) ग (५) १

४.६ पारिभाषिक शब्द / संदर्भ

— देवनागरी अंक - १,२,३,४,५,६,७,८,९,०

— देवनागरी अंकों का अंतरर्राष्ट्रीय रूप - १,२,३,४,५,६,७,८,९,०

— त्रिभाषा सूत्र - मातृभाषा + राष्ट्रीय भाषा + अंतर्राष्ट्रीय भाषा

— मानक- केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत लिपिचिन्ह अंक आदि।

— आशुलिपिक - शार्ट हैण्ड / द्रुत लेखक

४.७ इकाई का सारांश

प्रिय मित्रों, हमने इस इकाई में हिन्दी भाषा के विविध रूपों की सम्यक जानकारी प्राप्त की है। हमने पाया कि हिन्दी के विभिन्न रूप है। सर्वप्रथम रूप संपर्क भाषा का है। जब कोई दो भिन्न भाषाएँ बोलनेवाले लोग आपसी विचार-विनियम, इच्छा-आकांक्षाओं का आदान-प्रदान करते हैं तब दोनों ही अपनी भाषा को छोड़ कर अन्य भाषा को अपनाते हैं उसे संपर्क भाषा कहते हैं। संपर्क भाषा के लिए अंग्रेजी में णस्क्व णीछश्रट्टीश्रल शब्द है। संचार, शिक्षा, संस्कृति, सूचना, धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार गया है। हिन्दी भाषा का दूसरा रूप राष्ट्रभाषा का है। राष्ट्रभाषा वह होती है जिसका प्रयोग राष्ट्र की जनता अपनी अभिव्यक्ति के साधन के रूप में करती है। राष्ट्रभाषा से भावात्मक एकता निर्माण होती है। राष्ट्र में प्रचलित सभी भाषाएँ राष्ट्रीय भाषाएँ है पर जिस भाषा का प्रयोग सर्वाधिक लोगों के द्वारा होता है वह राष्ट्रभाषा होती है। राष्ट्रभाषा का स्थान देश में राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत की तरह सर्वोपरि होता है। गांधीजी ने कहा था ''बिना राष्ट्रभाषा के राष्ट्र गूंगा होता है।'' हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है। महात्मा गांधीजी ने हिन्दी के प्रचार को राष्ट्रीयता का प्रचार माना और स्वदेशी आंदोलन का उसे एक अंग बना दिया। हिन्दी राजभाषा भी है। राजकारोबार के लिए स्वीकृत भाषा राजभाषा होती है। भारतीय संविधान ने सरकारी कामकाज, प्रशासन, संसद, विधिमंडल, तथा न्यायिक क्रियाकलापों के लिए हिन्दी के राजभाषा के रूप में स्वीकारा है। १४ सितंबर १९४९ को भारतीय संविधान ने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया है। ज्ञान-विज्ञान, विचार-अनुसंधान जिस माध्यम में अभिव्यक्त हो वह माध्यम भाषा है। माध्यम भाषा मुख्यत: शैक्षणिक क्षेत्र में प्रयुक्त होती है। अर्थात अध्ययन-अध्यापन का माध्यम है। उच्च शिक्षा में विज्ञान और प्रौद्यौगिकी भाषा का माध्यम अंग्रेजी है। जब कि यहाँ राजभाषा संपर्क भाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी है। माध्यम का दूसरा अर्थ है संचार माध्यमों की भाषा संचार के विभिन्न साधन है। मुद्रित साधन, श्रव्य साधन, दृक-श्रव्य साधन। इसके अलावा प्रौद्यौगिकी के साधन भी आते हैं। प्रौद्यौगिक के अनुरूप भाषा का बोला और लिखा जाना आवश्यक है। संचार माध्यमों की प्रमुख भाषा हिन्दी बन गयी है। कारण आज हिन्दी न केवल देश के करोडों लोगों की सांस्कृतिक और संपर्क भाषा है वरन् समझने और बोलनेवालों की संख्या की दृष्टि से हिन्दी विश्व की दूसरी भाषा है। इसी इकाई में हमने हिन्दी की संवैधानिक स्थिति का भी परिचय लिया है। अनुच्छेद ३४३ से ३५१ के प्रावधान मुख्यत: पाँच बातों को लेकर है। संसद में प्रयुक्त होनेवाली भाषा, विधिमंडलों की भाषा, संघ की राजभाषा, न्यायालयों की भाषा तथा सामासिक संस्कृति के अभिव्यक्ति की भाषा की चर्चा है। हिन्दी के प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति आदेश भी जारी हुए है। १९६३ और १९७६ में राजभाषा आयोंगो ने राजभाषा के रूप में हिन्दी प्रयोगण का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। संविधान की अष्टम् अनुसूचि में भारतीय राजकारोबार के लिए प्रयुक्त संघ राज भाषाओं की भी चर्चा हुई है। इस तरह हिन्दी प्रयोग को बढ़ावा देने के सरकारी प्रयत्न हुए है।

४.८ अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

(१) हिन्दी के विभिन्न रूपों का परिचय दीजिए।

(२) राजभाषा प्रयोग के संबंध में प्रमुख अनुच्छेदों को लिखिए।

(३) राजभाषा अधिनियम १९६३ के अनुसार हिन्दी प्रयोगण के संदर्भ में कौनसी बातें हुई।

(४) राजभाषा अधिनियम १९७६ के प्रमुख प्रावधानों की चर्चा कीजिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई ५

हिन्दी में कम्प्युटर सुविधाएँ

इकाई की रूपरेखा

५.१ प्रस्तावना

५.२ उद्देश्य

५.३ विषय विवरण

५.३.१ कम्प्युटर की संरचना - क हार्डवेअर। ख. सॉफ्ट वेअर

५.३.२ कम्प्युटर के अंग

१. निवेश इकाई

२. निर्गम इकाई

३. केंद्रीय संसाधन इकाई

४. कम्प्युटर के प्रकार

५. साफ्ट वेअर पॅकेज

५.३.३ आँकड़ा -संसाधन

५.३.४ शब्द संसाधन

५.३.५ वर्तनी शोधक

५.३.६ मशिनी अनुवाद

५.३.७ हिन्दी भाषा शिक्षण

पारिभाषिक शब्द

५.४ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

५.५ इकाई का सारांश

५.६. अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

५.१ प्रस्तावना

हमारे दैनिक जीवन में अनेक कार्य आज कम्प्युटर द्वारा सुलभ हो गये हैं। कम्प्युटर अपनी विशेषताओं के कारण आज सब से प्रभावशाली तथा उपयोगी साधन बन गया है। यह एकप्रकार से कैलक्युलेटर, टाईपराईटर और टेलीविजन तीनों का मिला-जुला रूप है। सूचनाओं और निर्देशों के अनुसार वह हमारी सहायता करता है। कम्प्युटर में यदि डाटा (सूचना) एकत्र कर डाल दिया जाए तो कम्प्युटर उसे व्यवस्थित कर वांछित जानकारी में परिवर्तित कर देता है। कंप्युटर सभी प्रकार के कार्य को कम-से-कम समय में स्वयं ही कर देता है। यदि इनपुट डाटा (निवेश)सही हो तो परिणाम भी शत-प्रतिशत सही होता है। कम्प्युटर ढेर सारे डाटा को संचित करता है तथा जरूरत पड़ने पर प्रस्तुत करता है, इस क्षमता को 'स्मृति कोश' कहा जाता है जिसका मापन 'बाइट्स' में होता है। कम्प्युटर विभिन्न इकाईयों का समूह है इसलिए उसे 'सिस्टिम' भी कहते हैं। इसकी संरचना को दो भागों में विभाजित किया जाता है- एक हार्डवेअर, दूसरा सॉफ्टवेअर (यंत्र प्रक्रिया और सामग्री प्रक्रिया)/कम्प्युटर और उससे जुड़े अन्य सभी यंत्र और उपकरण, जिन्हें देखा या छुआ जा सकता है-वे हार्डवेअर कहलाते हैं जैसे मॉनिटर, सेंट्रल प्रोसेसिंग युनिट, की बोर्ड, माउस, प्रिंटर आदि ।

सॉफ्टवेअर यह कम्प्युटर वास्तविक कार्य करनेवाला अंग है। जो प्रोग्रामों का समूह होता है। सभी सूचनाओं के समूह द्वारा कम्प्युटर जो कार्य करता है वह ''सॉफ्ट वेअर'' कहलाता है। दोनों का सम्मिलित रूप कम्प्युटर प्रणाली है।

यह यंत्र दिये गये निर्देश समूह के आधार पर सूचना का संसाधन करता है, निर्देशन समूह को प्रोग्राम कहते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बहुतसी सूचनाओं से मिलकर प्रोग्राम तथा बहुत से प्रोग्राम से मिलकर सॉफ्टवेअर प्रोग्राम बनता है। हिन्दी में अक्षर, शब्दमाला, शब्द रत्न, सुलेख आदि देवनागरी अथवा हिन्दी में कार्य करने के लिए उपयोगी प्रोग्राम है।

कम्प्युटर के प्रमुख तकनीकी कार्य चार प्रकार के होते हैं। डेटा या डाटा (Data) संकलन तथा निवेशन (Collection and Input),डेटा का संचयन (Storage),डेटा संसाधन (Processing) तथा डेटा इन्फरमेशन का पुनर्निर्गमन (Retrieval)

कम्प्युटर में हिन्दी का प्रयोग विभिन्न संदर्भो में संभव हो गया है। कम्प्युटर के मूलभूत प्रोग्रामों में कोई परिवर्तन किए बिना ही उन पर हिन्दी में इनपुट-आऊटपुट संभव है। जिनका परिचय हम लेंगे।

५.२ उद्देश्य

छात्रों, इस इकाई को पढ़ने के बाद आप,

१) कम्प्युटर अंगों से परिचय पाएँगे।

२) हिन्दी में कम्प्युटर की विभिन्न सुविधाओं की जानकारी प्राप्त करेंगे।

३) देवनागरी लिपि हिन्दी में कम्प्युटर की उपलब्ध सुविधाओं से परिचित होंगे।

४) हार्ड वेअर सॉफ्टवेअर का ज्ञान आपको प्राप्त होगा।

५) हिन्दी आँकड़ा संसाधन, शब्द संसाधन, पृष्ठ निर्माण प्रक्रिया की ज्ञान प्राप्त करेंगे।

६) कम्प्युटर में वर्तनी शोधक के कार्य से परिचय प्राप्त करेंगें।

७) मशिनी अनुवाद की प्रक्रिया से परिचित होंगे।

५.३ विषय विवरण

अंकीय कम्प्युटर का अधिक प्रचलन आज दिखायी देता है परंतु भाषिक परिप्रेक्ष्य में भी कम्प्युटर का प्रयोग उसी पद्धति से किया गया है। कम्प्युटर से ये कार्य कैसे होते हैं यह हमने देखा जैसे निवेश, संसाधन,स्मृतिकोश तथा निर्गम इन चारों भागों में कार्य संपन्न किया जाता है। संसाधन क्या है यह हम पहले देखेंगे।

कम्प्युटर में जिन आँकडो (Data) को निवेशित किया जाता है कम्प्युटर उन्हें उसी रूप में ग्रहण नहीं करता, उसे वह अपनी भाषा में ग्रहण करता है। कम्प्युटर की गणितीय भाषा में केवल दो अंक होते हैं दशमलव प्रणाली के १,० अंकों से भिन्न इसमें केवल एक और शून्य दो अंक है। हम कोई भी आँकडा कम्प्युटर के कुंजीपटल से कम्प्युटर में निवेशित करते है तो वह उसे द्विधारी पद्धति से ० और १ के कोड में ग्रहण करता हैं। जब हम मॉनीटर पर देखते हैं तो वह उसी रूप में लक्षित होता है, जिस रूप में हम निवेशित करते हैं। वहाँ ० या १ के कोड नहीं मिलते। इसी प्रकार प्रिंटर से भी हम जो लिखते हैं वही मुद्रित मिल जाता है। कम्प्युटर में यह कार्य केंद्रिय संसाधन (CPU) इकाई द्वारा होता है जो कम्प्युटर का हृदय है। कम्प्युटर का यह भाग अभिकलित्र का कार्य करता है आंकिक गणना और तार्किक निर्णय दोनों करता है। मदरबोर्ड में संसाधक रहता है। सारा डाटा कम्प्युटर के स्मृतिकोश में पहुँच जाता है और फिर वहाँ संसाधित होकर हमारे पास आता है।

कम्प्युटर का जन्म मूलत: गणनाओं की समस्या के हल के रूप में हुआ है। ब्रिटीश गणितज्ञ चार्ल्स बॅवेज (सन १७९२-१८७१) ने सन १८१२ में रॉयल सोसायटी के लिए एक छोटा सा गणक यंत्र तैयार किया, जिसे उन्होंने 'डिफरेन्स इंजन' का नाम दिया था। सन १८५५-१८६० के मध्य उन्होंने एक ऐसे यंत्रिक संगणक का डिजाईन तैयार किया, जिससे प्राय: गणितीय कार्य (मैथेमेटिकल ऑपरेशन्स) किये जा सकते थे। यह डिजाईन जटिल था। वर्ष १९३७ में हावर्ड विश्वविद्यालय के प्रो.एच.आइकेन ने बैवेज का सपना साकार किया। आईकेन ने १९४४ में एक ऐसे यंत्र का निर्माण किया, जिसमे स्वयंचलित ढंग से अंकगणितीय क्रियाओं को सफलता पूर्वक सम्पन्न किया जा सकता था। इस मशीन का 'हार्वर्ड मार्क-१' यह नाम दिया गया। इस यंत्र ने प्रथम आधुनिक कम्प्युटर होने का सम्मान प्राप्त किया।

भारत में कम्प्युटर का आगमन सन १९५५ में हुआ। सबसे पहला कम्प्युटर भारतीय सांख्यिकी संस्थान, कलकत्ता में आया। प्रथम भारतीय कम्प्युटर (आई.एस.आई.जे.यू.) का डिजाईन जुलाई १९६४ में आय.एस.आय. (इंडियन स्टेटिस्टिकल इंस्टीट्युट) कलकत्ता और जादवपुर युनिवर्सिटी ने तैयार किया था। आगामी आठ वर्षों में दूसरी १७० कार्यप्रणाली स्थापित की गयी। उस समय आई.बी.एम. और आई.पी.एल.ही सर्वाधिक जानी-मानी कम्पनियाँ थी। आज भारत में लगभग ४० कम्पनियां माईक्रो कम्प्युटरों का निर्माण कर रही है। इन कम्पनियों ने कम्प्युटर उद्योग में क्रांति की है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

कम्प्युटर की उपयोगिता :

कम्प्युटर ने अपनी उत्पत्ति के कुछ वर्षों के अंदर ही अपनी स्थिति इतनी मजबूत कर ली है कि मनुष्य को इसे लगभग हर क्षेत्र में उपयोग में लाने के विषय में सोचना ही पड़ा। बीसवीं शताब्दी में अनेक वैज्ञानिक अविष्कारों की खोज हुई है। व्यापारिक क्षेत्र, वैज्ञानिक अनुसंधान, संचार-व्यवस्था, अंतरिक्ष क्षेत्र, पर्यावरण, चिकित्सा, शिक्षा, कला एवं सांस्कृतिक इत्यादि क्षेत्रों में कम्प्युटर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

१) उद्योग - जगत : कम्प्युटर आज लगभग हर उद्योग में उपयोग में लाया जाता है, क्योंकि बिना इसकी सहायता के वे इतना विस्तृत कार्य कर ही नहीं सकते। उन्हें अपना कार्य शुद्धता एवं तीव्रता से करना पड़ता है, अत: कम्प्युटर का उपयोग करना ही उनके लिए एकमात्र विकल्प है। दूसरी ओर कम्प्युटर निर्माण एवं साफ्टवेअर विकास भी अपने आपमें एक बृहद् उद्योग बन गया है।

२) पुस्तकालय : पुस्तकालयों को भी आज कम्प्युटरीकृत किया जा रहा है। विभिन्न विषयों की पुस्तकों का विवरण तथा पुस्तकों की लेन-देन विवरण का रिकॉर्ड अब कम्प्युटर द्वारा ही किया जाता है। बहुत सारी अमूल्य एवं अप्राप्य ग्रंथ सामग्री कम्प्युटर द्वारा सुरक्षित भी रखी जा रही है।

३) प्रकाशन : प्रकाशन के क्षेत्र में कम्प्युटर ने क्रांति ला दी है। कम्प्युटर ने इस क्षेत्र में आते ही अपनी तीव्रता एवं शुद्धता के द्वारा प्रकाशन कार्य को बेहद सरल बना दिया है। पहले जहाँ कम्पोजिंग एवं डिजाईनिंग में अत्याधिक समय लगता था वही अब यह कार्य कुछ ही पलों में और आकर्षक ढंग से किया जा सकता है।

४) शिक्षा : कम्प्युटर ने शिक्षा क्षेत्र में भी अपनी सार्थकता स्पष्ट की है। मेडिकल और इंजिनियरिंग के क्षेत्र में तो कम्प्युटर शिक्षा का अंग बन चुका है। मैनेजमेंट, साईंस तथा अन्य विद्या शाखाओं में सूचना तथा डाटा-प्रोसेसिंग द्वारा कम्प्युटर शिक्षा में सहायक हुआ है। भाषा अध्ययन में तो संगणकीय भाषा विज्ञान की नयी शाखा का आगमन हुआ है। अनुवाद कार्य में भी कम्प्युटर मददगार है।

५) कार्यालयीन कामकाज : सरकारी, गैरसरकारी तथा व्यावसायिक कार्यालयों में अधिकांश कार्य कम्प्युटर द्वारा ही किया जा रहा है। इससे कार्य में अचूकता एवं शीघ्रता आ गयी है। रेल, हवाई जहाज, बस अड्डों से लेकर परचून की दुकान तक कम्प्युटर कार्यरत है।

६) संचार क्षेत्र : संचार क्षेत्र में कम्प्युटर ने क्रांति ला दी है। टी.वी. से लेकर इंटरनेट तक का प्रसार कम्प्युटर की ही देन है।

७) वैज्ञानिक क्षेत्र : वैज्ञानिक क्षेत्र में तो कम्प्युटर का उपयोग बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि वहाँ तो गणना या मिश्रण बनाने में दशमलव में भी गलती हो जाए, तो सारी मेहनत पर पानी फिर जाता है। अत: इस क्षेत्र की प्रत्येक शाखा-अंतरिक्ष, जंतु विज्ञान, रसायन - विज्ञान आदि में कम्प्युटर का उपयोग तो मनुष्य की अनिवार्यता बन गयी है।

८) चिकित्सा क्षेत्र : कम्प्युटर ने इस क्षेत्र में इतना अधिक प्रवेश किया है कि आज कल ऑपरेशन तक कम्प्युटर करने लगा है। अब कम्प्युटर डॉक्टरों को निर्देश देता है कि इस कार्य को ऐसे करो। पहले जिन बीमारियों का इलाज उनका सही पता न लगने के कारण नहीं हो पाता था, उनका अब कम्प्युटरीय उपकरणों की मदद से सही पता लगाकर समय पर इलाज होता है।

५.३.१. कम्प्युटर की संरचना :

कम्प्युटर की संरचना के विविध अंग होते हैं, जिन्हे प्रमुखत: दो हिस्सों मे बाँटा जाता है - (क) हार्डवेअर, (ब) साफ्टवेअर।

(क) हार्डवेअर :- कम्प्युटर के कलपूर्जो, मशीनों आदि को हार्डवेअर कहा जाता है। हार्डवेअर को हम अपनी आँखों से देख सकते हैं और हाथों से छू भी सकते हैं। टर्मिनल, सी.पी.यू., प्रिंटर, हार्डडिस्क, फ्लापी ड्राईव, टेप ड्राइव आदि कम्प्युटर के हार्डवेअर है।

(ख) सॉफ्टवेअर :- कम्प्युटर हार्डवेअर को सक्रिय करने अथवा चलाने के लिए जिन विशेष निदेशों की आवश्यकता होती है, उन्हें साफ्टवेअर कहा जाता है। दूसरे शब्दों में साफ्टवेअर उन प्रोग्रामों को कहते हैं, जिन्हें हार्डवेअर पर चलाया जाता है। साफ्टवेअर के बिना कम्प्युटर केवल एक निर्जीव मशीन है। अत: साफ्टवेअर कम्प्युटर की आत्मा कहा जा सकता है। साफ्टवेअर दो तरह के होते हैं - १) प्रणाली साफ्टवेअर (System Software) २) अनुप्रयोग साफ्टवेअर (Application Software)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(१) 'सिस्टम सॉफ्टवेअर' :- ऐसे प्रोग्रामों को कहते हैं, जिनका काम सिस्टम अर्थात कम्प्युटर को चलाना तथा उसे काम करने लायक बनाए रखना है। सिस्टम साफ्टवेअर ही हार्डवेअर में जान डालता है। बिना इसके कम्प्युटर एक बेजान मशीन मात्र है।

(२) 'एप्लीकेशन साफ्टवेअर' :- प्रोग्रामों का ऐसा समूह 'एप्लीकेशन साफ्टवेअर कहलाता है, जो हमारे कामों को संपन्न करने के लिए उपयोगी हो । आवश्यकतानुसार भिन्न-भिन्न उपयोगों के लिए भिन्न-भिन्न साफ्टवेअर होते हैं।

५.३.२.कम्प्युटर के *अंग :*

कम्प्युटर की संरचना या बनावट को समझने के लिए हम उसे मुख्य रूप से तीन भागों में बाँटते हैं-

१) निवेश इकाई (Input Unit)

२) निर्गम या बहिर्गमन इकाई (Out put Unit)

३) प्रोसेसर अथवा केंद्रीय संसाधन इकाई (Processor or Central Processing Unit)

५.३.२.१ निवेश इकाई (Input Unit) :-

कम्प्युटर को दिये जानेवाले निदेशों या आदेशों को अंतर्गतन या निवेश (Input) कहते हैं। इनपुट युनिट कम्प्युटर का वह भाग है, जिसके द्वारा कम्प्युटर को निर्देश या आदेश भेजे जाते हैं। इनपुट युनिट के साधन कई प्रकार के हो सकते हैं-

जैसे - कुंजीपटल (Key Board), माऊस (Mouse)
स्कॅनर, जायस्टिक (Joy stick) लाइट पेन (Light Pen)
पंचकार्ड, मॅगनेटिक टेप,
फ्लापी डिस्क, मैनेटिक इंक करेक्टर रीडर (MICR)
आप्टिकल मार्क रीडर (OMR) आदि।

इन सभी में सबसे अधिक उपयोग में लाये जानेवाले साधन (Devices) दो है - (१)कुंजीपटल और (२) माऊस।

१) कुंजीपटल (Key Board) - कुंजीपटल यह सबसे अधिक प्रचलित साधन है, जिसके द्वारा कम्प्युटर को निर्देश दिया जाता है। यह साधारण टाइप राईटर की तरह होता है। इसमें कुछ बटन या कुँजियाँ टापराइटर से अधिक होती है। हम जो भी टाईप करते हैं, वह हमें मानिटर पर दिखाई देता है। इसमें लगभग १०० से १०५ तक कुंजियाँ होती है। मुख्य रूप से १०१ और १०४ कुंजियों वाले कुंजी-पटल प्रयोग में लाये जाते हैं। कुंजी पटल भी दो प्रकार के होते हैं - १) क्वैटी और २) एजर्टी। ये नाम कुंजीपटल की प्रथम अक्षर कुंजियो के आधार पर दिये गये हैं । कुंजीपटल की कुंजियों से ही कम्प्युटर की सभी शक्तियों और क्षमताओं का प्रयोग किया जा सकता है। ये कुंजियाँ अलग-अलग कार्यादेश देती है इन कुंजियों का परिचय इस तरह से दिया जा सकता है -

१) मुख्य की-बोर्ड अथवा टंकन कुंजियाँ (Main Ke Board or Typing keys)

यह साधारण टाइपरायटर के की-बोर्ड जैसा होता है। इसमें अंग्रेजी अथवा हिंदी के सभी अक्षर, अंक तथा व्याकरण - चिन्ह अंकित रहते हैं। इसमें दो शिफ्ट कुंजियाँ होती है। प्रत्येक कुंजी द्वारा दो प्रकार के अक्षर टाईप किए जा सकते हैं। शिफ्ट कुंजी (Shift Key) को दबाकर अंग्रेजी अथवा हिंदी के बड़े अक्षर टंकित किये जा सकते हैं । अकेली कुंजी दबाने से नीचे लिखे अंक अथवा अक्षर टंकित किये जा सकते हैं तथा शिफ्ट कुंजी के साथ उपर लिखे अंक अथवा अक्षर टाईप किये जा सकते हैं।

२) फंक्शन कुंजियाँ (Function Keys):

कुंजी-पटल पर सबसे ऊपर एक कतार में ये कुंजियाँ होती हैं, जिन पर F1 से F 12 तक लिखा होता है। इन कुंजियों में एक - एक ऐसा आदेश (Command) भर दिया जाता है जिसका हमें बार-बार प्रयोग करना होता है इससे समय की बचत होती है और कार्य में गति आ जाती है। अधिकांश कुंजीपटल में ऐसी १२ कुंजियाँ होती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

३)　संख्यात्मक की-पॅड (Numeric Key Pad) :

कुंजीपटल के दाये भाग में कैलकुलेटर जैसा एक कुंजी समूह होता है । इससे ० से ९ तक अंक, दशमलव बिंदु, धन (+), ऋण (-) की कुंजियाँ होती है । कुछ कुंजियों पर अंक के नीचे कुछ और भी छपा होता है । जैसे १ की कुंजी पर न्छ्ष्ठ , २ की कुंजी पर ( ) आदि । इस समूह की कुंजियों से संख्यात्मक डाटा भरने का कार्य किया जाता है । इस की-पॅड से संख्याएँ टाईप करने के लिए हमें संख्यात्मक लॉक (Num Lock) नामक कुंजी को दबाना पड़ता है ।

४)　कर्सर कन्ट्रोल कुंजियाँ (Cursor Control keys) :

यह चार कुंजियों का एक संग्रह होता है, जिन पर , , , तथा चिह्न होते है । इनसे कर्सर को क्रमश: दाएँ, बाएँ, ऊपर और नीचे ले जाया जा सकता है ।

१) पेज अप की (Page Up Key) : इस कुंजी के द्वारा किसी दस्तावेज के पिछले भाग पर कर्सर को ले जाकर उस भाग को कम्प्युटर स्क्रीन पर लाया जा सकता है ।

२) पेज डाऊन की (Page Down Key) : यह पेज अप कुंजी के ठीक विपरीत कार्य करती है । इससे कर्सर को किसी फाईल के अगले पेज पर ले जाया जा सकता है ।

३) होम की (Home Key) : कर्सर को किसी फाईल के आरंभ में ले जाने के लिए इस कुंजी का प्रयोग किया जाता है ।

४) एण्ड की (End Key) : इस कुंजी के सहारे कर्सर किसी फाईल के अंत में पहुँचाया जा सकता है ।

५) एण्टर की (Enter Key) : कम्प्युटर में इस कुंजी का सबसे महत्वपूर्ण योगदान होता है । यह स्क्रिन टाईप किए गये निर्देशों अथवा डाटा (Data) को कम्प्युटर में भेजने का कार्य करती है । यह कुंजी मुख्य की-बोर्ड एवं संख्यात्मक की-पैड दोनों में होती है ।

६) डिलीट-की (Delete Key) : किसी टाईप किए गये आदेश को हटाने या मिटाने के लिए इस कुंजी का प्रयोग किया जाता है । यह कुंजी भी मुख्य की-बोर्ड तथा संख्यात्मक की-पॅड दोनों में होती है ।

७) प्रिंट स्क्रिन की (Print Screen Key) : इस कुंजी को दबाने से जो भी सूचना या डाटा स्क्रिन पर होता है, वह कम्प्युटर के साथ लगे प्रिंटर पर वैसा ही प्रिंट हो जाता है ।

८) टैब की (Tab Key) : इस कुंजी की सहायता से हम कर्सर को किसी लाईन में पहले से तय किये हुए स्थानों तक कुदाते हुए ले जा सकते है । इसकी सहायता से हम पैराग्राफ, कॉलम आदि बना सकते हैं ।

९) स्पेस बार की (Spacebar Key) : यह कुंजीपटल की सबसे लंबी और बहुप्रयुक्त कुंजी है । इसे दबाने से कर्सर एक खाली स्थान छोड़कर दाई और आगे बढ़ जाता है ।

१०) बैक स्पेस की (Backspace Key) : इस कुंजी को दबाने से कर्सर के ठीक बायी ओर वाला चिन्ह गायब हो जाता है और कर्सर एक स्थान पीछे जाता है । इस कुंजी का प्रयोग टाइपिंग में स्पेलिंग वगैरेह की गलतियों को सुधारने के लिए किया जा सकता है ।

११) एस्केप की (Escape Key) : इस कुंजी का प्रयोग किसी कार्य के प्रारंभ हो जाने के बाद उसे उसी दशा में छोड़ने के लिए किया जाता है । यह कुंजी, कुंजी पटल के बाई तरफ ठीक ऊपर होती है ।

१२) स्क्रॉल लॉक की (Scroll Lock Key) : इस कुंजी के द्वारा कम्प्युटर स्क्रीन पर दिखाई देने वाली सूचना वहीं स्थिर की जा सकती है । सूचना को फिर से देखने के लिए इसी कुंजी को दोबारा दबाना पड़ता है ।

१३) पॉज की (Pause Key) : कम्प्युटर स्क्रीन पर आ रही सूचना को अस्थायी रूप से रोकने के लिए इस कुंजी का प्रयोग किया जाता है ।

१४) संशोधन कुंजियाँ (Correction Keys) : आल्ट की (श्व्न्ह्ल्ए),कंट्रोल की (Control Key) ये दोनों कुंजियाँ पी.सी. के प्रोग्राम के अनुरूप अलग-अलग कार्य करती है । इस वर्ग की शिफ्ट की (Shift Key), कैप्स लॉक की (ढ्ढक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

णद्धत्तब फ्ल्ए) अक्षरों को छोटा-बड़ा करने का कार्य करती है, तो इन्सर्ट की (Insert Key) प्रोग्राम के मध्य में किसी नये कार्य को करने के लिए प्रयुक्त होती है ।

२) माऊस (Mouse) :-

इनपुट युनिट के साधनों में माऊस दूसरा सबसे अधिक प्रचलित साधन है । यह एक छोटी-सी डिबियानुमा होता है, जो एक तार के द्वारा कम्प्युटर से जुड़ा रहता है । इसकी सहायता से हम की-बोर्ड का प्रयोग किए बिना अपने कम्प्युटर को कंट्रोल कर सकते हैं। इसे कम्प्युटर के पास एक स्थान पर रखा जाता है, जिससे आसानी से हाथ से खिसवाया जा सके । इसे एक पैड पर रखा जाता है, जिसे माऊस पैड (Mouse Pad) कहा जाता है । साधारणत: माऊस में दो या तीन बटन होते हैं। कम्प्युटर - स्क्रीन पर माऊस का एक विशेष पॉईंटर या कर्सर होता है, जो ऊपर उठे हुए तिरछे-तीर () जैसा होता है । यह पॉईंटर माऊस की हलचल (Movement) के अनुसार ही हिलता है। जब हमें किसी मेन्यु में किसी पसंद को चुनना होता है, तो हम माऊस को अपने माऊस पैड पर इधर-उधर खिसकाकर माऊस पॉईंटर को उस पसंद तक लाते हैं और बाएं बटन को एक बार दबाकर छोड़ देते हैं । इस प्रकार हम कोई भी पसंद को चुन सकते हैं ।

माऊस का प्रयोग ज्यादातर डेस्क-टॉप-प्रकाशन (Desk Top Publishing) जैसे कार्यों में किया जाता है । विंडोज आधारित ऑपरेटिंग सिस्टमों, जैसे विंडोज - ९५ तथा ९८ में भी माऊस का व्यापक और अनिवार्य उपयोग किया जाता है।

इन दो प्रमुख साधनों के अलावा निम्नलिखित साधनों का प्रयोग अंतर्गतन के लिए किया जाता है । स्कैनर, जायस्टिक, लाईट पेन, पंचकार्ड, मॅगनेटिक टेप, फ्लापी डिस्क, मैगनेटिक इंक, करेक्टर रीडर तथा आप्टीकल मार्क रीडर आदि ।

५.३.२ निर्गम इकाई (Output Unit) :-

आऊटपुट युनिट कम्प्युटर के उस भाग को कहते हैं जिसके द्वारा हम कम्प्युटर द्वारा किये गये कार्यों का परिणाम प्राप्त करते हैं । कम्प्युटर तंत्र में मुख्य रूप से दो प्रकार की निर्गम इकाईयों का प्रयोग किया जाता है - (१) विजुवल डिसप्ले युनिट और (२) प्रिंटर

१) दृश्य-पटल इकाई (Visual Display Unit or Monitor) :- यह सबसे अधिक प्रयोग में लाया जाने वाला साधन है, जो दिखने में एक साधारण टेलीविजन के समान होता है । इसके पर्दे (Screen) पर प्रोग्रामों के सारे परिणाम आदि दिखाई देते हैं । मानीटर श्वेतश्याम और बहुरंगी भी होता है ।

२) मुद्रक या प्रिंटर (Printer) :- यह आऊटपुट का एक महत्वपूर्ण साधन है । कम्प्युटर द्वारा दिये गए परिणामों को कागज पर छपे हुए रूप में संभालकर रखने के लिए प्रिंटर का उपयोग किया है । कम्प्युटर से मुद्रित कागज को कम्प्युटर विज्ञान की शब्दावली में हार्डकॉपी कहा जाता है । गति और विधि के आधार पर प्रिंटर के कई प्रकार है, जिनमें से बहु प्रचलित ये हैं -

१) अक्षर मुद्रक (Character Printer) :- इस मुद्रक में एक समय में एक ही अक्षर मुद्रित किया जाता है। इनका उपयोग थोडी मात्रा में छपाई का काम करने के लिए किया जाता है ।

२) डॉट मैट्रिक प्रिंटर (Dot Matrix Printer) :- यह किफायती प्रिंटर है और इसका उपयोग विभिन्न प्रकार की भाषाओं के मुद्रण के लिए किया जाता है । इसमें अक्षर बिंदु या डॉटस् से छपे जाते हैं । इसकी छपाई साधारण होती है ।

३) लाईन प्रिंटर (Line Printer) :- लाईन प्रिंटर से एक समय में एक लाईन छपी जाती है और उसकी छपाई में इम्पैक्ट विधि का प्रयोग किया है । सामान्यत: लाईन प्रिंटर हर लाईन में १३२ अक्षर छपते है । यह एक मिनट मे ३०० से ३००० लाईने छाप सकते हैं ।

४) इंकजेट प्रिंटर (Inkjet Printer) :- इसमे अक्षर-विन्यास स्याही की दर्जनों बूंदों से किया जाता है और उसकी छपाई की गुणवत्ता भी अच्छी रहती है । गति भी अन्य मुद्रकों की तुलना से ज्यादा होती है । इससे पाठ और रेखाचित्र या ग्राफिक दोनों ही छापे जा सकते हैं । इसमें अनेक नोजल प्रिंट हेड़ रहते हैं, जिनसे अनेक रंगों में छपाई का काम किया जा सकता है ।

५) लेजर प्रिंटर (Laset Printer) :- इस तरह के प्रिंटर हर तरह की छपाई सभी प्रकार के अक्षरों में आसानी से कर सकते हैं । इनके द्वारा सभी प्रकार के चित्र बनाए जा सकते हैं । इनकी गति बहुत तेज और छपाई बहुत साफ होती है । इसकी सम्पूर्ण क्रिया स्वचलित होती है । आजकल पुस्तकों की छपाई मूलत: लेजर प्रिंटरों पर ही होती है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इसके सिवा डेजिव्हील प्रिंटर, चेन प्रिंटर, बैंड प्रिंटर, ड्रम प्रिंटर, पेज प्रिंटर, प्लॉटर प्रिंटर, बफर आदि कई तरह के प्रिंटर्स हैं।

५.३.२ केंद्रीय संसाधन इकाई (CPU, Central Processing Unit) :-

यह कम्प्युटर का सब से महत्वपूर्ण भाग है। दिए गये निर्देशों या आदेशों के अनुसार कार्य करना प्रोसेसर का कार्य है। सभी प्रकार के अंकगणितीय कार्य जैसे जोड़, घटा, भाग इत्यादी प्रोसेसर द्वारा किये जाते हैं।

साधारणत: प्रोसेसर द्वारा सभी कार्य द्वि आधारी प्रणाली द्वारा किये जाते हैं , जिसे बाईनरी सिस्टम कहा जाता है। जिसके अंतर्गत ०और १ अंकों का प्रयोग किया जाता है। छोटे कम्प्युटरों में प्रोसेसर को 'माईक्रो' कहा जाता है और पर्सनल कम्प्युटर (पी.सी.) में भी प्रोसेसर को माईक्रो प्रोसेसर कहा जाता है।

प्रोसेसर या केंद्रीय संसाधन इकाई के तीन मुख्य भाग होते हैं -

(१) स्मृति कोश (Memory)

(२) अंकगणितीय तर्क (Arithmatic Logic Unit - ALU)

(३) नियंत्रण इकाई (Control Unit)

प्रिय मित्रों उपरोक्त इकाईयों का परिचय तथा कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे -

(१) स्मृति कोश (Memory) :- केंद्रीय संसाधन इकाई का यह एक महत्वपूर्ण अंग है। इसे प्राथमिक भण्डारण कहते हैं। प्रोसेसर के इस भाग में सभी प्रकार की सूचनाएँ एवं डाटा (Data) रखा जाता है। इस में सभी प्रकार की सूचनाएँ १ और ० के रूप में संगठित की जाती है, जिसे द्वि-आधारी पद्धति (Binary System) कहा जाता है। स्मृति कोश की 'इकाई' बाईट कही जाती है। एक बाईट में ८ बिट होते हैं, पहले कम्प्युटर के स्मृति कोश को किलो बाईट में बताया जाता था, किंतु आज किलो बाईट के स्थान पर मैगाबाईट का प्रयोग किया जाने लगा है। वस्तुत: कम्प्युटर की क्षमता का परिचय स्मृति-कोश ही है। आज कल सामान्य कम्प्युटर की क्षमता भी १६ मैगाबाईट तक होती है।

स्मृति कोश के दो भाग होते हैं -

(१) पठन - मात्र स्मृति (Read Only Memory : ROM)

(२) यादृच्छिक अभिगम स्मृति (Random Access Memory : RAM)

(१) पठन मात्र स्मृति : इसे संक्षेप में 'ROM' संज्ञा दी जाती है। इसके अंतर्गत साफ्टवेअर निर्माताओं द्वारा स्थायी रूप से कुछ निर्देश भर दिये जाते है, ताकि आपरेटर मात्र उन निर्देशों की सहायता से कम्प्युटर के साथ संवाद स्थापित कर सके। इन्हें मिटाया नही जा सकता, केवल पढ़ा जा सकता है। इसलिए इसे पठन मात्र स्मृति (ROM) कहा जाता है।

(२) यादृच्छिक अभिगम स्मृति : इसे "RAM' की संज्ञा दी जाती है। कम्प्युटर का प्रयोक्ता इसी में अपना डाटा संचित करता है। डाटा जब चाहे मिटाया जा सकता है, संशोधित किया जा सकता है। किलो बाईट या मैगाबाईट में जिस स्मृति का उल्लेख ऊपर किया गया है वह RAM की है। इसी से कम्प्युटर की क्षमता का अंदाज लगाया जा सकता है।

यदि हम कम्प्युटर में संचित डाटा अलग से सुरक्षित रखना चाहते है तो इसके लिए बाह्य अथवा सहायक स्मृति-कोश का सहारा लेना पड़ेगा। फ्लापी डिस्क (Floppy Disk), हार्डडिस्क (Hard Disk), चुंबकीय टेप (Magnetic Tapes) आदि में डाटा संचित किया जा सकता है। इनकी संचयन क्षमता सीमित होती है। अब CD-ROM का युग है। एक CD-ROM में पूरा विश्व कोश ध्वनि और चित्रों के साथ संग्रहित किया जा सकता है। CD अर्थात (Compact-Disk-Read Only Memory) यह रिकॉर्ड प्लेअर पर चलाए जानेवाले प्लास्टीक के लचीले रिकार्ड होती है। इसकी क्षमता ६०० मैगाबाईट तक हो सकती है। इसमें संचित डाटा को केवल पढ़ा जा सकता है। इसे न तो मिटाया जा सकता है और न संशोधित किया जाता है।

(२) अंकगणितीय तर्क इकाई (Arithmatic Logic Unit - ALU) :- इकाई सभी प्रकार के गणितीय - गणनाओं (Arithmatic Calculations) संबंधी कार्य किये जाते हैं। जैसे जोड़ना, गिनना, घटाना, गुणा, भाग आदि। साथ ही तर्क गणितीय शास्त्रीय क्रियाएं जैसे दो मूल्यों के मध्य संबंध निर्धारण, आंकिक अथवा आक्षरिक मूल्यों को सुव्यवस्थित करना आदि कार्य भी किये जाते हैं। यह इकाई नियंत्रण इकाई (Control Unit) के तहत कार्य करती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(३) नियंत्रण इकाई (Control Unit) :- नियंत्रण इकाई अंकगणितीय तर्क इकाई (ALU) द्वारा किये जानेवाले सारे कार्यों पर नियंत्रण रखा जाता है । इस इकाई द्वारा स्मृति-कोश से निर्देश प्राप्त किए जाते हैं और उन्हें सांकेतिक भाषा में परिवर्तित करके कार्यान्वित किया जाता है । इसी इकाई द्वारा सूचनाओं को मेमरी, इनपुट एवं आऊटपुट युक्तियों (Devices) में स्थानांतरित किया जाता है ।

५.३.२.४ कम्प्युटर के प्रकार :

आकार और सुविधा के आधार पर कम्प्युटर मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं :-

(१) मैनफ्रेम कम्प्युटर (Mainframe Computer) : ये आकार में बहुत बड़े और काफी जगह घेरनेवाले कम्प्युटर होते हैं। उन पर एक साथ सैकडों लोग काम कर सकते हैं । इनकी कीमत भी बहुत ज्यादा होने से बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ ही इन्हे खरीद सकती हैं ।

(२) मिनी कम्प्युटर (Mini Computer) : आकार में ये मैनफ्रेम कम्प्युटरों से छोटे होते हैं, परंतु उनकी ताकद मुख्य कम्प्युटर इतनी ही होती है । इस पर एक साथ १०-१२ व्यक्ति काम कर सकते हैं ।

(३) माईक्रो कम्प्युटर (Micro Computer) : सन १९८० के बाद ऐसी तकनीकी आई, जिन से कम्प्युटर का आकार और भी छोटा हो गया तथा उसकी गति भी बढ़ गयी । इसमें माइक्रो कम्प्युटर सामने आये । इनकी कीमत मिनी कम्प्युटरों के मुकाबले बहुत कम होती है और आकार में ये इतने छोटे होते है की एक छोटी सी मेज पर आसानी से आ जाते हैं । इन पर एक बार में केवल एक आदमी काम कर सकता है । माईक्रो कम्प्युटर का दूसरा रूप 'पर्सनल कम्प्युटर' (Personal Computer) है, जिसे संक्षेप मे पीसी (P.C.) कहा जाता है । इस तीन तरह के कम्प्युटरों के अलावा नए कम्प्युटरों में सुपर कम्प्युटर (Super Computer) भी है । ये अकेले कई मुख्य कम्प्युटरों के बराबर होता है । इनका मूल्य भी करोडों में होता है । भारत में 'परम' नामक एक सुपर कम्प्युटर बनाया गया है ।

सॉफ्टवेअर पैकेज (Software Package) :

सॉफ्टवेअर पैकेज कम्प्युटर पर कई प्रकार के कार्य कर सकते हैं । इनमें कई कार्य ऐसे होते हैं, जो लम्बे और बड़े होते हैं और उन्हें हमें बार-बार करना पड़ता है । ऐसे कार्यों को बार-बार लिखने में काफी समय लगता है । ऐसे कार्यों को करने के लिए हम बाजार से बने-बनाए प्रोग्राम खरीदते हैं, जिन्हें सॉफ्टवेअर पॅकेज कहा जाता है । इससे समय और मेहनत दोनों की बचत होती है ।

कुछ बहु-उपयोगी पॅकेज का संक्षिप्त परिचय हम लेंगे -

(१) वर्डस्टार (Wordstar) : आज के पर्सनल कम्प्युटरों में सबसे अधिक प्रयोग किया जानेवाला वर्ड प्रोसेसिंग पैकेज 'वर्डस्टार' है । इसके द्वारा हम हर प्रकार के पत्र (Letter) एवं अन्य प्रपत्र (Reports) आदि तैयार कर सकते हैं । इस पैकेज द्वारा शब्दों के रूप और आकार में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सकता है । कई वर्ड स्टार पैकेजों में स्पेलिंग की गलतियों को ठीक करने की सुविधा भी होती है ।

(२) एम.एस.ऑफीस (M.S.Office) : विंडोज ९५ या ९८ पर आधारित एम.एस.ऑफीस है, जिसका उपयोग प्राय: सभी नये कम्प्युटरों पर किया जाता है । एम.एस. ऑफीस ९७ (M.S.Office 97) सबसे अधिक प्रचलित संस्करण है । आज कल इसका संस्करण एम.एस.ऑफीस २०००(M.S.Office-2000) के नाम से बाजार में आ गया है, जो बहुप्रचलित है । इसके अंतर्गत निम्नलिखित मुख्य कार्य किये जा सकते हैं-

(१) एम.एस.वर्ड (M.S.Word) : इसका प्रयोग साधारण पत्र-व्यवहार तथा डेस्क टॉप पब्लिशिंग (न स) तथा चित्र एवं ग्राफ के लिए किया जाता है । इस प्रोग्राम में मैन्यू (Menu) के अलावा कई प्रकार के टूलबार (Toolbar) होते हैं, जिनकी सहायता से बटनों को दबाकर वांछित परिणाम किया जा सकता है ।

(२) एम.एस.एक्सेल (M.S.Excel) : इसके अंतर्गत डाटा को तालिका के रूप में संग्रहित किया जा सकता है और आवश्यकतानुसार इनका विश्लेषण के अलावा विभिन्न प्रकार के चार्ट, ग्राफ आदि भी इसके द्वारा आसानी से बनाये जा सकते हैं ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(३) पॉवर पॉइंट (Power point) :- इस प्रोग्राम द्वारा सभाओं, प्रशिक्षण इत्यादि के लिए कई प्रकार के पत्र, पुस्तिकाएँ आदि तैयार की जाती है।

(४) एम.एस.एक्सेस (M.S.Access) :यह एक रिलेशनल डाटा बेस (Relational Data Base) पैकेज है। इसके अंतर्गत टेबल्स में सूचनाओं एवं डाटा को इकट्ठा किया जाता है। जिसे स्क्रीन पर देखा जा सकता है और आवश्यकतानुसार छापा भी जा सकता है। विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को आवश्यकतानुसार व्यवस्थित करने की क्रिया को डाटा बेस प्रोग्राम कहा जाता है।

इन पैकेजों के अलावा बहुभाषी वर्डप्रोसेसर (Multi Lingual Word Processor), अनेक प्रकार के वीडियो खेलों के पैकेज आदि के सॉफ्टवेअर बाजार में मिलते है। इनमें से ज्यादातर पैकेज मेन्यु आधारीत (Menu Based) होते हैं। हर मेन्यु में दो या इससे ज्यादा विकल्प दिये जाते हैं, जिनमें से उपयोग कर्ता अपनी जरूरत के अनुसार विकल्प चुन सकता है।

स्वयं अध्ययन प्रश्न

संक्षेप में उत्तर लिखिए।

(१) कम्प्युटर की उपयोगिता सिद्ध कीजिए।
(२) निवेश इकाई का परिचय दीजिए।
(३) प्रिंटर के प्रकार बताईए।
(४) स्मृतिकोश के दो प्रकार कौन से हैं।
(५) एम.एस.वर्ड का परिचय दिजिए।

हिन्दी की दृष्टि से कम्प्युटर प्रयोग

५.३.३ आँकडा संसाधन -

निवेश, संसाधन और निर्गम ये कम्प्युटर के तीन कार्य हैं। निवेश वह है, जो कुंजीपटल के द्वारा कम्प्युटर में भरा जाता है। उसका दृष्य रूप चाहे मानिटर पर हो या मुद्रण द्वारा प्राप्त उसे निर्गम कहते हैं। निवेशित सारी सामग्री को चाहे वह आंकिक हो या आक्षरिक डाटा या आँकडा कहा जाता है जो अन्य निर्देशों के अनुसार संसाधित होता है। संसाधित होने के पूर्व संपूर्ण निवेशित डाटा कम्प्युटर के स्मृति कोश में सुरक्षित होता है, सारा निवेश अंकों में ही होता है। उसे निवेशक के मनोनुकूल संसाधित करने का कार्य करता है। वह भी कम्प्युटर के स्मृति कोश में सुरक्षित रहता है। इसे संरक्षित रखा जा सकता है, निर्गमित किया जा सकता है, फ्लापी या सीडी मे लेकर कम्प्युटर से अलग किया जा सकता है। जब चाहे उसी कम्प्युटर में या अन्य कम्प्युटरों में उसी रूप में प्रविष्ट किया जा सकता है।

हिन्दी में आँकडा संसाधन के लिए रोमन लिपि में निवेश और फिर लिप्यंतरण किया जाता था। भारतीय वैज्ञानिकों ने एक सर्वमान्य कोड पद्धति विकसित कर देवनागरी के लिए नयी कोड प्रणाली विकसित की, इसका नाम इस्की-८ (Indian Standard Code for Information Interchange) है। इसमें रोमन लिपि के सभी अक्षरों के साथ सभी भारतीय भाषाओं के अक्षरों को समाहित कर लिया गया है। जिससे हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं का अध्ययन-विश्लेषण किया जा सकता इसमें एक ही कुंजीपटल द्वारा कोशनिर्माण, थिसारस, सूची निर्माण, संशोधन-परिवर्धन करके पाठ को बोल्ड, इटैलिक, छोटे-बडे रूप में मुद्रित किया जा सकता है।

हिन्दी में डाटा संसाधन संबंधी कार्य करने के लिए हार्डवेअर और सॉफ्टवेअर ऐसे दो विकल्प है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा विकसित हार्डवेअर प्रणाली जिस्ट (Graphics and intelligence based script tecnology) के रूप में मिलती है। जिस्ट प्रौद्योगिकी के अंतर्गत यह सुविधा सभी भारतीय भाषाओं में सुलभ है।

इसके विपरीत सॉफ्टवेअर विकल्प में कम्प्युटर में किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होती। वे पैकेज फ्लापी डिस्क के रूप में उपलब्ध होते हैं। समर्पित सॉफ्टवेअर प्रोग्राम (Dedicated software programme) के अंतर्गत हिन्दी में डाटा संसाधन का एक सॉफ्टवेअर है 'देवबेस' जिसका निर्माण सॉफ्टवेअर प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली द्वारा किया गया है, जो हिन्दी में काम करने के लिए एक अच्छा पैकेज है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

५.३.४ शब्द संसाधन -

टंकण का आधुनिक रूप शब्द-संसाधन है। इसे अंग्रेजी में Word Processing कहते हैं। कम्प्युटर आधारित शब्द-संसाधन की सहायता से हजारो पृष्ठों की सामग्री को संग्रहित किया जा सकता है, उसमें और जोडा जा सकता है, कम किया जा सकता है। जब चाहे संरक्षित किया जा सकता है। अलग-अलग अनुच्छेद की फाईले अलग अलग बनाई जा सकती है। अर्थात् कम्प्युटर पर टंकित पाठ का निर्माण करना ही शब्द संसाधन है। इसकी के विकास से हिन्दी में शब्द-संसाधन शब्द-रूढ़ हो गया है।

भाषा संसाधन का आरंभिक सोपान शब्द-संसाधन है। हिन्दी में भी कम्प्युटर के संदर्भ में सर्वप्रथम शब्द संसाधन का कार्य आरंभ हुआ। प्रारंभ मे रोमन लिपि के माध्यम से ही हिन्दी पाठों का कुंजीयन किया जाता था। अब भारत में और विदेश में शब्द संसाधन के अनेक पैकेज विकसित हुए है, जिनमें हिन्दी में द्विभाषिक रूप में या फिर बहुभाषिक रूप में विभिन्न भारतीय भाषाओं के माध्यम से शब्द संसाधन के कार्य किये जा सकते हैं । इनमें प्रमुख है - अक्षर, मल्टीवर्ड, शब्दमाला, शब्दरत्न, बाईस्क्रिप्ट, आलेख, भारती, ए एल पी, आदि। इनमें वर्डस्टार, वर्ड परफेक्ट, वर्ड माईक्रोसॉफ्ट जैसे अधुनातन वर्ड प्रोसेसिंग पैकेजों में सुलभ होनेवाली सारी सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं।

अकेले शब्द संसाधन से किसी भी भाषा में कम्प्युटर संबंधी महत्त्वपूर्ण अनुप्रयोग पूर्ण नहीं हो सकते। शब्द संसाधन के रूप में संग्रहित सामग्री को मनोनुकूल प्रस्तुत करने के लिए डाटा संसाधन की आवश्यकता होती है। इससे संग्रहित शब्दों को अपने अनुरूप संसाधित किया जा सके।

डाटा संसाधन और डेस्क टॉप पब्लिशिंग ऐसी ही कार्यप्रणाली है। ऊपर आकडा संसाधन के अंतर्गत जिस जिस्ट सॉफ्टवेअर का उल्लेख किया है, उसके अलावा लोटस, डी-बेस III ऐसे ही सॉफ्टवेअर है जिनकी सहायता से हिन्दी में शब्द संसाधन किया जा सकता है।

कम्प्युटर साधित भारतीय भाषा संसाधन की व्यवस्था को देखते हुए यह निश्चित बताया जा सकता है कि आज हिन्दी में शब्द संसाधन और आँकडा संसाधन के ये पैकेज कम्प्युटर की उपयोगिता सिद्ध करने के साथ ही भाषिक अध्ययन का नया रूप भी विकसित कर रहे हैं।

५.३.५ वर्तनी शोधक -

वर्तनी शोधक को अंग्रेजी में Spell Cheker कहते हैं। वर्तनी शोधक का कार्य है किसी शब्द की वर्तनी संबंधी अशुद्धि की जाँच करना। यदि वर्तनी अशुद्ध हुई तो शब्द के नीचे रेखा और आगे प्रश्नचिह्न मॉनिटर पर आ जाता है। जिससे किसी शब्द की अशुद्धि का तत्काल पता काम करनेवाले को चल जाता है।

हिन्दी भाषा की दृष्टि से इस दिशा में मशीनी अनुवाद और वाक्य के धरातल पर शब्द प्रयोगों को ध्यान में रखते हुए अशुद्धियों की जाँच हेतु सॉफ्टवेअर (कम्प्युटर लेक्सिकन) का निर्माण कार्य जारी है। सी-डैक, भारत सरकार के राजभाषा विभाग के सहयोग से इस दिशा में कार्यरत है।

५.३.६ मशीनी अनुवाद -

अनुवादों के विभिन्न प्रकारों में मशीनी अनुवाद कम्प्युटर के कारण प्रचलित हुआ। कारण अनुवाद केवल शब्दों को लेकर संभव नहीं है। कम्प्युटर तो केवल अभिधापरक अनुवाद कर सकता है पर साहित्य का अनुवाद कम्प्युटर द्वारा संभव नहीं है। अनुवाद में भावों एवं विचारों का अनुवाद भी होता है। मशीनी अनुवाद केवल उसमें निवेशित अर्थ को ग्रहण करता है। मशीनी अनुवाद पूर्णतः कम्प्युटर पर निर्भर होता है। मूलभाषा और अनुवाद की भाषा में ज्यादा अंतर हो अर्थात् भाषा परिवार एक न होने की स्थिति में अनुवाद में कठिनाई होती है जब कि समान भाषा परिवार में अनुवाद में आसानी होती है।

मशीनी अनुवाद के लिए पूर्व संसाधित पद, शाब्दिक विश्लेषण, शब्द-संचयन आदि की व्यवस्था होती है। सबसे पहले इसमें स्त्रोत भाषा के वाक्यों का विश्लेषण किया जाता है। इसके बाद दुरूह, कठिन, जटिल वाक्यों को सरल वाक्यों में परिवर्तित किया जाता है। तदंतर स्त्रोत भाषा के व्याकरणिक व्यवस्था के आधार पर निविष्ट वाक्य की पद संरचना की जाती है। व्याकरणिक दृष्टि से सही वाक्यों को लक्ष्य भाषा के अनुरूप मिलाकर देखा जाता है। शब्द संचय उसके द्विभाषिक पर्याय खोजकर अनुवाद संपन्न किया जाता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

मशीनसाधित हिन्दी अनुवाद के क्षेत्र में देश में काफी कार्य किया जा रहा है । मशीनी अनुवाद के रूप में 'अनुवादक'सॉफ्टवेयर, अंग्रेजी हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने का प्रयास है । 'मंत्रा' (MANTRA) नामक अनुवाद प्रणाली का विकास किया गया है । हैदराबाद विश्वविद्यालय, आय.आय.टी. कानपुर, सी-डेक, मुंबई सी-डेक पुणे आदि ने मशीनी अनुवाद की दृष्टि से सॉफ्टवेयर प्रणाली के लिए उल्लेखनीय कार्य किया है । भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान, हैदराबाद हिन्दी मशीनी अनुवाद 'शक्ति' के निर्माण में कार्यरत है ।

कम्प्युटर द्वारा अनुवाद के लिए शोध कार्य सन १९५० से आरंभ हुआ और आज कुछ हद तक उसमें सफलता भी प्राप्त हुई है । भारत में इस दिशा में कई वैज्ञनिकों ने कार्य किया है । प्रो.पी.सी. गणेश सुंदरम के निर्देशन में भारतीय विज्ञान संस्थान, बैंगलोर द्वारा अंग्रेजी, हिंदी, कन्नड, तमिल और रूसी भाषा के सरल वाक्यों के अनुवाद के लिए विशेष अनुवाद प्रणालियों का विकास किया है । तंजौर विश्वविद्यालय द्वारा रूसी से तमिल अनुवाद की प्रणाली विकसित की गयी । राष्ट्रीय साफ्टवेअर विकास केंद्र मुंबई द्वारा अंग्रेजी से हिंदी में सीमित अनुवाद के लिए 'स्क्रीन टॉक'नामक प्रणाली का विकास किया जा रहा है । इस दिशा में सब से महत्वपूर्ण प्रयास आई.आई.टी. कानपुर से किया जा रहा है । इस संस्थान में संस्कृत के पाणिनि व्याकरण को कारक प्रणाली पर आधारित एक ऐसे इंटरलिंक फ्रेमवर्क का विकास किया है, जिसकी सहायता से भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद का मार्ग प्रशस्त होगा । यह कार्य केंद्रीय संस्कृत विद्यापीठ, तिरूपति के सहयोग से हो रहा है ।

सेंटर फॉर एज्युकेशन,नई दिल्ली द्वारा 'अनुवादक' प्रोग्राम तैयार किया गया है । यह प्रोग्राम अंग्रेजी-हिंदी द्विभाषिक अनुवाद के रूप में तैयार किया गया है, जिसमें हिंदी भाषा के व्याकरणसंबंधी नियम भी है । इनकी सहायता से अंग्रेजी के शब्दों / वाक्यांशों का अनुवाद प्रस्तुत किया जा सकता है । इसमें दोनों भाषाओं की वर्तनी भी उपलब्ध है । इनके प्रयोग के लिए समांतर कोश (थिसारस) भी उपलब्ध है । सरकारी पत्राचार में काम आनेवाली शब्दावली / अभिव्यक्तियाँ भी इसमें विद्यमान है । अनुवाद के पूर्व और बाद की स्थितियों से निपटने के लिए चेकर भी है ।

भारतीय रेल्वे में सी.एम.सी. लिमिटेड के सहयोग से टिकटों पर स्टेशन के नामों का मुद्रण, आरक्षण तालिकाओं की छपाई और दिल्ली महानगर की टेलिफोन निर्देशिका की द्विभाषी छपाई आदि का कार्य लिप्यंतरण के विशेष सॉफ्टवेअर की मदद से किया जा रहा है । एयर इंडिया के लिए राष्ट्रीय सॉफ्टवेअर विकास केंद्र, मुंबई द्वारा विदेशी नामों को रोमन से हिंदी मे लिप्यन्तरित करने के लिए विशेष सॉफ्टवेअर का विकास किया जा रहा है ।

५.३.७ हिन्दी भाषा शिक्षण -

आज हम देखते है कि हिन्दी भाषा शिक्षण के क्षेत्र में कम्प्युटर का प्रयोग किया जा रहा है । प्रामाणिक उच्चारण, हिन्दी संरचना को चित्रों के माध्यम से हिन्दी पढ़ना सिखाया जाता है । कम्प्युटर पर हिन्दी वाक्यों, शब्दों का उच्चारण सुना जा सकता है । इसके माध्यम से देवनागरी में लेखनकला भी सीखी जा सकती हैं । इसमें द्विभाषी कोश भी होता है । जो अहिन्दी भाषियों के लिए हिन्दी सीखने के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है। भाषा के शुद्ध उच्चारण तथा प्रारंभीक शिक्षण, प्रयोग की दृष्टि से कम्प्युटर सॉफ्टवेअर की विशिष्ट भूमिका रही है।

कम्प्युटर साधित शिक्षण के लिए संलेखन प्रणाली का प्रयोग होता है । सी-डैक ने कम्प्युटर के माध्यम से हिन्दी सिखाने के लिए एक बहुआयामी सॉफ्टवेअर पैकेज तैयार किया है । राजभाषा विभाग, भारत सरकार ने सी-डैक, पुणे के सहयोग से हिन्दी में ''लीला प्रबोध'' 'ओर' लीला प्रवीण, लीला हिन्दी प्राज्ञ सॉफ्टवेअर तैयार किये हैं । जिन्होंने हिन्दी शिक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । इसके माध्यम से पाठों में आए हुए वाक्य, शब्द, वर्णों का मानक उच्चारण सुना जा सकता है ।

मल्टीमीडिया गुरू भी काफी उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इसमें शब्दकोश भी विद्यमान है । इसके अलावा आओ हिन्दी पढ़े-संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि प्रोग्राम भी उपलब्ध है ।

भारत में सुपर कम्प्युटर के निर्माता सी-डैक पुणे ने कम्प्युटर के जरिये हिंदी सिखाने के लिए एक ऐसा बहुआयामी साफ्टवेअर पैकेज विकसित किया है, जिससे हम न केवल हिंदी की संरचना की बारीकियों को समझ सकते हैं बल्कि प्रामाणिक उच्चारण और चित्रों की सहायता से हिंदी पढ़ना, बोलना और लिखना भी सीख सकते हैं । इस साफ्टवेअर को लीला (LILA) कहते हैं । यह वस्तुत: का Learn Indian Languages Through Artificial Intelligence एक्रोनिम है ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इसकी सहायता से कार्यालयीन कामकाज में हिंदी प्रयोग के लिए सुविधा हो गयी है। 'लीला हिंदी प्रबोध' नामक साफ्टवेअर की सहायता से कर्मचारी और अधिकारी कम्प्युटर की सहायता से प्रबोध स्तर तक की हिंदी सीख सकते है। देवनागरी वर्ण की लेखन विधि ग्राफिक्स के रूप में चित्रित है और देवनागरी के वर्णों की रचना विधि ट्रेसर (स्ट्रोक-बाई-स्ट्रोक) और उसके उच्चारण के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी मिलती है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ इस तरह हैं -

१) ध्वनि तथा उच्चारण की व्यवस्था के तहत शब्दों में वर्णों का मानक उच्चारण सुना जा सकता है।

२) उच्चारण सुनकर अपनी वाणी रिकॉर्ड कर सकते है और मानक उच्चारण के साथ उसकी तुलना कर सकते है।

३) ऑन लाईन कोश की व्यवस्था है।

४) दृश्य-साधन क्लिपिंग के रूप में उपलब्ध है।

५) शब्दों के ग्राफिक्स / चित्र भी उपलब्ध है।

६) मूल्यांकन की व्यवस्था भी है जिससे उसकी संप्राप्ति का वितरण प्राप्त हो जाता है।

इसी पद्धति पर 'लीला हिंदी प्रवीण' भी तैयार कर लिया गया है और 'लीला हिंदी प्राज्ञ' निर्माणाधीन है। यह पद्धति अब सुचारू रूप से काम करती है और डॉस के साथ विंडोज पर भी उपलब्ध है।

स्वयं अध्ययन प्रश्न

ख. निम्नलिखित वाक्य सही या गलत बताइए।

(१) कम्प्युटर की वास्तविक क्षमता स्मृतिकोश ही है।

(२) सी-डैक अंतरीक्ष से संबंधित संस्था है।

(३) शब्द-संसाधन डी.टी.पी. से संबंध रखता है।

(४) वर्तनी शोधक से भूले अधिक होती है।

(५) 'संज्ञा' जादू से संबंधित प्रणाली है।

(६) 'आओ हिन्दी पढ़े' भाषा-शिक्षण कार्यक्रम है।

५.४ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

क. संक्षेप में उत्तर लिखिए

(१) कंप्युटर एक ऐसी इलेक्ट्रॉनिक मशीन है जो जोड़, गिनती, भाग, गुणा आदि गणितीय क्रिया द्वारा डाटा (तथ्य) से सूचना और ज्ञान प्रदान करता है, निर्णय देता है। स्मरण, भंडारण और अनुप्रयुक्त तीनो स्तरों पर कंप्युटर ने मनुष्य का बौद्धिक विकास किया है। उद्योग जगत में स्टॉक, कीमत, डिज़ाईन आदि कार्य शुद्धता और तीव्र गति से करता है। पुस्तकालय की दृष्टि से पुस्तकों का साहित्य विधा के अनुसार वर्गीकरण, उपलब्धता, आदान-प्रदान के साथ-साथ छपी सामग्री का संग्रहण भी हो सकता है। पुस्तक प्रकाशन जगत में पृष्ठ-सज्जा, पृष्ठ-निर्माण, टाईपसेटिंग, रंग-संगति आदि काम पल भर में हो सकता हैं। शिक्षा के अंग में मेडिकल-इंजिनियरिंग, भाषा-समाज शास्त्र में कक्षा का अभिन्न अंग हा गया है। कार्यालयीन कामकाज में पत्रों के मसौदे, फाईलिंग, अनुवाद में योगदान दे रहा है। संचार, विज्ञान, चिकित्सा अंग में कंप्युटर का योगदान महत्त्व पूर्ण है।

(२) कंप्युटर को दिये जाने वाले आदेशों को निवेश कहते हैं। की-बोर्ड की फंक्शन कुंजिया संख्यात्मक की पेड, कर्सर कंट्रोल कुंजियाँ, पेज अप, पेज डाऊन, होम की, एण्ड की, एण्टर की, डीलिट की, प्रिंट स्क्रिन की, टैब की, स्पेस बार, बॅक स्पेस, स्क्रॉल लॉक पोज संशोधन की कुंजियाँ होती है।

माऊस दूसरी इकाई है। एक छोटी डिब्बी के आकार का होता है। माऊस पेड पर रखकर बटन दबाकर बिना की-बोर्ड के काम किया जा सकता है। विंडोज ९५ तथा ९८ में माऊस का प्रयोग व्यापक होता है। इसके अलावा स्कॅनर, मेगनेटिक टेप, फ्लापी डिस्क आदि अंग होते हैं। इन सब से निवेश किया जा सकता है।

(३) निर्गम इकाई का महत्त्वपूर्ण साधन प्रिंटर है। कागज पर प्रिंट करने का काम प्रिंटर करता है। इसे हिन्दी में मुद्रक कहते हैं। अक्षर मुद्रक में एक समय में एक ही अक्षर मुद्रित होता है। डॉट मेट्रिक में अक्षर डॉट्स से छपते हैं। लाईन प्रिंटर में एक लाईन में १३२ अक्षर छापे जाते हैं। इंकजेट प्रिंटर से छपाई सुंदर होती है। पाठ,रेखाचित्र दोनों ही छापे जा सकते हैं। अनेक रंग में छपाई हो सकती है। लेजर प्रिंटर में लेजर किरणों से छपाई आकर्षक तेज गति से साफ होती है।

(४) स्मृति कोश का संबंध केंद्रीय संसाधन इकाई सल से है। स्मृतिकोश का अर्थ है भंडारण क्षमता। स्मृतिकोश की क्षमता बाइट से गिनी जाती है। किलो बाइट ﬓ और मेगाबाईट MB की क्षमता होती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

स्मृतिकोश के दो भाग होते हैं। पठन मात्र स्मृति का C Read Only Memory (Rom) ये निर्देश होते है। इन्हें मिटाया नही जा सकता। दूसरा कोश यादृच्छिक अधिगम स्मृति Random Access Memory (RAM) होता है। यह डाटा मिटाया जा सकता है। KB अथवा भ का संबंध इसी में है।

(५) एम.एस.वर्ड का प्रयोग पत्र-व्यवहार अथवा न स के लिए किया जाता है। चित्र और ग्राफ भी बनाए जा सकते है। टूल बार के किसी भी मेनू को माऊस पॉईंटर से सिल कर कार्य किया जा सकता है। यह एक बहुउपयोगी साफ्टवेअर पॅकेज है।

ख. *उत्तर*

(१) सही (२) गलत (३) सही (४) गलत (५) गलत (६) सही

५.५ *इकाई का सारांश*

कम्प्युटर संरचना

हार्डवेयर **सॉफ्टवेअर**

निवेश यूनिट	निर्गम यूनिट	स्टोरेज यूनिट	प्रयोक्ता विशेषतौर	व्यावसायिक
			लिखित पर बनाया	पॅकेज, एम.एस.
१) की-बोर्ड	१)डिस्पले मॉनीटर	१)फ्लॉपी	गया रेलवे	विंडोज, एपीएस
२)माऊस	२) प्रिंटर	ड्राईव डिस्क	आरक्षण में	टेली, पेजमेकर
३) स्कॅनर		२) हार्ड डिस्क	विल किराया	वर्डस्टार
४) मोडेम		३) टेपड्राइव	में	डी-बेस

प्रिय मित्रों इस इकाई में हमने हिन्दी भाषा के लिए कंप्युटर की सुविधाओं के बारे में जाना। आज का युग ज्ञान-विज्ञान का है। अब मनुष्य अपने दिमाग में दूसरी चीजों को स्मरण में रखना चाहता है इसलिए बहुत सारी बातें कंप्युटर नामक मशीन के स्मरण में संग्रहित करता है। हिन्दी और भारतीय भाषाओं के ज्ञान का संग्रहण और आवश्यकता नुसार अनुप्रयोगण के लिए कंप्युटर का प्रयोग अनिवार्य हो गया है। कंप्युटर की संरचना की जानकारी हमने ली। इसी इकाई में हमने आंकडा संसाधन नीनी Processing शब्द संसाधन, वर्तनी, शोधक, मशीनी अनुवाद और हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए उपयोगी प्रोग्राम तथा साफ्टवेअर तथा उनकी कार्यप्रणाली की जानकारी ली। इससे आपको सैद्धांतिक जानकारी प्राप्त हुई जिसके बल पर आप स्वयं कंप्युटर पर काम कर सकेंगे।

५.६ अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

१) कम्प्युटर की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए। २) कम्प्युटर की संरचना का परिचय दीजिए।

३) माऊस कौनसे कार्य संपन्न करता है। ४) टिप्पणियाँ लिखए। क) आँकडा संसाधन ख) शब्द संसाधन ग) मशीनी अनुवाद घ) हिन्दी भाषा शिक्षण

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

इकाई ६

देवनागरी लिपि

६. *इकाई की रूपरेखा*
६.१ प्रस्तावना
६.२ उद्देश्य
६.३ विषय विवरण
६.३.१ देवनागरी लिपि
६.३.२ देवनागरी का नामकरण
६.३.३ देवनागरी की विशेषताएँ
६.३.४ देवनागरी लिपि का मानकीकरण
६.३.५ केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानकीकरण के नियम
६.४ स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
६.५ इकाई का सारांश
६.६ अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

६.१ प्रस्तावना

लिपि शब्द संस्कृत के 'लिप्' धातु से बना है जिसका अर्थ है लेपना। किसी पृष्ठभूमि पर अलग रंग से लेपन ही लिपि का मूल स्वरूप हैं। धार्मिक प्रतीकों का अंकन, जादू-टोना के लिए खिंची गयी लकीरें लिपि की मूल सामग्री है।

आज लिपि का अर्थ है उच्चरित भाषा के शब्दों को रेखांकन पद्धति से किसी भी माध्यम पर अंकित करना।

भाव के प्रकाशन का औच्चरणिक साधन भाषा है, कारण भाषा मूल रूप में ध्वन्यात्मक है। ध्वनियाँ मनुष्य के मुँह से उच्चारित होती है। श्रोत गुण होने से वे सुनी जाती है। सुन कर श्रोता अर्थ प्रतीत करते हैं। अर्थ तथा अनुभूति को अगली पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखने की आवश्यकता महसूस हुई। उच्चारित भाषा क्षणिक होती है। इसलिए अनुभवों को याद रखने के लिए भाषा को गेय, लयप्रधान और छंदबद्ध किया गया। फिर भी विस्मृति, उच्चारण दोष का भय था ही।

संपर्क की दृष्टि से भी उच्चारित भाषा की मर्यादा है। इसलिए अनुभवों को स्थायित्व देने के उद्देश्य से लिपि की खोज की गयी। लिपि के कारण हम एक समय में असंख्य लोगों से संपर्क कर सकते हैं। लिखा हुआ होने के कारण भविष्य की अनेक पीढ़ियों के लिए सुरक्षित हो जाता है।

भाषा की उत्पत्ति की तरह लिपि के उद्भव के बारे में मतभिन्नता है। विद्वानों का मानना है कि लिपि का उद्भव इ.स.पूर्व १०,००० वर्ष के आसपास होगा। लिपि का व्यवस्थित रूप लगभग ५००० वर्ष पूर्व बना होगा। लिपि के, चित्र लिपि, सूत्र लिपि, प्रतीकात्मक लिपि, भावमूलक लिपि, भावध्वनिमूलक तथा ध्वनिमूलक लिपियाँ आदि विकासात्मक सोपान है।

भारतीय प्राचीनतम लिपियों में ब्राह्मी तथा खरोष्ठी मानी जाती है। ब्राह्मी लिपि की उत्तरी शैली से देवनागरी लिपि का विकास हुआ ऐसा माना जाता है। देवनागरी को नागरी भी कहते हैं। देवनागरी लिपि का प्रयोग हिन्दी के अलावा संस्कृत मराठी और नेपाली के लिए होता है। देवनागरी लिपि भारत की राष्ट्रीय लिपि है।

प्रारंभिक लेखन शिलालेख, ताम्रपट्ट, भोजपत्र, पेडों की छाल आदि पर अंकित था। कागज की खोज और मुद्रण यंत्रों का अविष्कार होने से आज भाव और विचार समय, स्थान-संख्या की सीमा से परे हो गये हैं।

६.२ उद्देश्य -

प्रिय विद्यार्थी मित्रों इस इकाई को पढने के बाद आप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

१- भाषा का लिखित स्वरूप लिपि के विकासक्रम से परिचित होंगे।
२- देवनागरी लिपि की विशेषताएँ जानेंगे।
३- देवनागरी लिपि के मानकीकरण के इतिहास को समझेंगे।
४- देवनागरी लिपि के मानकस्वरूप का प्रयोग कर सकेंगे।

६.३. विषय विवरण

भाषा की तरह लिपि का इतिहास भी अत्यंत प्राचीन है। प्राचीनतम उपलब्ध सामग्री के आधार पर माना जाता है कि ई.सा.पूर्व चार हजार तक लेखन पद्धति का विकास हुआ था।

उपलब्ध इतिहास के आधार पर ज्ञात होता है कि चित्रलिपि ही मनुष्य की आरंभिक लिपि रही है। आदिम मनुष्य द्वारा गुफाओं की भित्तियों पर अंकित चित्र इस बात के प्रमाण हैं।

लिपि का विकास इसतरह बताया जा सकता है

(१) चित्रलिपि (२) सूत्रलिपि (३) प्रतीकात्मक लिपि (४) भावमूलक लिपि
(५) भावध्वनिमूलक लिपि (६) ध्वनिमूलक लिपि।

(1) चित्रलिपि : लेखन के इतिहास की यह प्रथम सीढ़ी है। चित्रों के द्वारा अपने भावों को व्यक्त किया जाता था। प्राचीन गुफाओं की दीवारों पर साथ ही पत्थर, वृक्षों की छाल, मिट्टी के बर्तन इत्यादि पर चित्र मिलते हैं। आज भी यह लिपि किसी न किसी रूप में दिखायी देती है। चित्रलिपि का गुण सर्वबोध्यता है। अनपढ भी चित्र को देखकर समझ सकता है। परंतु चित्रलिपि में कुछ दोष है जो इस प्रकार है। इसमें स्थूल वस्तुओं को चित्रबद्ध किया जाता है पर भावों एवं विचारों को नहीं विशिष्ट व्यक्ति, समय तथा काल की अभिव्यक्ति इसमें संभव नहीं। सभी व्यक्ति चित्र बनाने में सक्षम हो यह भी संभव नहीं। जल्दी के समय पूर्ण चित्र न बना पाने की स्थिति में यह लिपि ही धीरे-धीरे प्रतीकात्मक हो गयी। इसमें प्रतीकात्मक या रूढ़ि-चिह्नों से काम लिया जाने लगा। इन्हें भी याद रखने की आवश्यकता होती है।

(2) सूत्रलिपि - सूत्र लिपि द्वारा भी कई प्रकार के भाव व्यक्त किये जाते हैं। सूत्र यानि रस्सी, पेड़ों की छाल आदि में गाँठ लगाना। जिसका प्रयोग आज भी होता है। रस्सी को रंगकर, कभी एक रंग से, कभी अनेक रंगों से, कभी छोटी, कभी मोटी रस्सी का प्रयोग कर, विभिन्न गाँठों का प्रयोग कर सूत्रलिपि का उपयोग किया जाता है। राखी बांधना पूजा के अवसर पर मोली बांधना, दूल्हा-दूल्हन को गाँठ बांधना सूत्र लिपि के ही अवशेष है।

(3) प्रतीक लिपि - आदिमानव भावों का सम्प्रेषण, ईच्छाओं की अभिव्यक्ति के लिए लिपि न होने से प्रतीकों की सहायता लेता है। प्रतीक लिपि में तरह-तरह की वस्तुएँ, रंगीन कपड़े के टुकडे आदि की सहायता ली जाती है। जैसे रेल के सिग्नल, गार्ड द्वारा लाल-हरी झंडी दिखाना, तिरंगा ध्वज भारत देश का, सिंह मुद्रा - भारतीय शासन का प्रतीक है। व्यापारिक चिह्न भी प्रतीक ही होते है। न्यौता देने के समय पीले चावल, सुपारी या हलदी की गाँठ को दिया जाता है, यह भी एक प्रतीक ही है।

प्रतीक लिपि केवल स्थूल भावों को ही व्यक्त करती है।

(4) भावमूलक लिपि - भावमूलक लिपि का विकास चित्रलिपि से हुआ। भावमूलक लिपिद्वारा हृदगत भावनाओं की अभिव्यक्ति की जाती है। चित्रलिपि में पैर का चित्र पैर का ही सूचक था जबकि भावमूलक लिपि में पैर चलने का भाव भी संकेतित करता है। भावमूलक लिपि द्वारा अल्पसमय में सरलता के साथ भाव प्रकट किए जा सकते हैं।

भावमूलक लिपि की सीमा यह है कि सूक्ष्म भावाभिव्यक्ति और विचारों का प्रकटन नहीं हो सकता।

(5) भावध्वनिमूलक लिपि : चित्रलिपि के विकास की अगली सीढ़ी भावध्वनिमूलक लिपि है। जिसमें चित्रात्मकता (अंकन), भावमूलकता और ध्वनिमूलकता का समन्वय हुआ है। मेसोपोटेमियन, मिस्रि तथा सिंधु घाटी की लिपि भावध्वनिमूलक लिपि के उदाहरण है।

(6) ध्वनिमूलक लिपि : मनुष्य की बुद्धि और अनुसंधानशक्ति तथा प्रतिभा का अद्‌भूत चमत्कार ध्वनिमूलक लिपि है जो लिपि के विकास का प्रमुख पड़ाव है। चित्रों और चिह्नों के माध्यम से विचारों और भावों की अभिव्यक्ती में जब मनुष्य ने

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

असमर्थता का अनुभव किया तब उसने ध्वनि चिह्नों अथवा वर्णों की खोज की। उपरोक्त पाँचो लिपियों का किसी भाषा विशेष से कोई संबंध नहीं था। परंन्तु इस लिपि में प्रत्येक बोली जानेवाली भाषा के ध्वनिचिह्न को सफलता से अंकित किया जा सकता है। कुछ भाषाशास्त्रियों के मत से ध्वनिमूलक लिपि, लिपिविकास की पूर्णावस्था है। इस लिपि के चिह्न भाषा विशिष्ट की ध्वनियों (वर्णों) का प्रतिनिधित्व करते हैं।

ध्वनिलिपि के दो भेद हैं, जो इस प्रकार है -

क) अक्षरात्मक लिपि (ग्रएञ्ब्ञ्ञीास्त्त) : अक्षरात्मक लिपि में चिह्न किसी अक्षर को व्यक्त करता है, वर्ण को नहीं। देवनागरी लिपि अक्षरात्मक लिपि है। देवनागरी लिपि के व्यंजनों में दो ध्वनियों का, व्यंजन + स्वर इन दो वर्णोंका समावेश होता है। जैसे - क लिपिचिह्न में क व्यंजन और 'अ' स्वर है। इस कारण यह व्यवहारपयोगी है।

ख) वर्णात्मक लिपि (श्ञ्ब्ब्सील्न्न्त) : वर्णात्मक लिपि में प्रत्येक वर्ण अर्थात ध्वनि के लिए स्वतंत्र चिह्न होते हैं। वर्णात्मक लिपि वैज्ञानिक दृष्टि से आदर्श लिपि मानी जाती है। इन वर्णों के माध्यम से हम किसी भी भाषा को पूर्ण रूप से लिख सकते हैं और ध्वनि का विश्लेषण भी किया जा सकता है। रोमन लिपि वर्णात्मक लिपि है जो अंग्रेजी भाषा के लेखन के लिए प्रयुक्त होती है। शब्दों की रचना में मात्राएँ अलग वर्ण के रूप में आती है। जैसे दिनेश शब्द देवनागरी में तीन वर्णों में लिखा जाता है। जबकि इसमें द+इ+न्+ए+श्+अ वर्ण आएंगे, इसलिए अंगरेजी में नकुञ्ञं ही लिखा जाएगा।

६.३.१ देवनागरी लिपि

प्राचीन भारत में दो लिपियाँ प्रचलित थी। खरोष्ठी और ब्राह्मी। खरोष्ठी लिपि ब्राह्मी लिपि की तरह अत्यंत प्राचीन है। अशोक के अभिलेखों में खरोष्ठी का उल्लेख मिलता है। ईसा की पाँचवी छठी सदी के बाद इस लिपि का प्रयोग नहीं मिलता। इससे किसी लिपि के विकसित होने का उल्लेख नहीं मिलता।

ब्राह्मी लिपि भारत की राष्ट्रीय लिपि है। ब्राह्मी यह नाम और उत्पत्ति के संबंध में विभिन्न विद्वानों के मत अनुमान पर ही आधारित है।

ब्राह्मी लिपि में ५०० ई.स.पूर्व से ३५० ई. तक के लेख मिलते हैं। ई.स.३५० के लगभग इसके उत्तरी और दक्षिणी दो रूप मिलते हैं। उत्तरी लेखनशैली का प्रचार विंध्यपर्वत के उत्तर में और दक्षिणी का प्रचार दक्षिण में हुआ।

दक्षिणी रूप से तमिल, तेलगु-कन्नड़, ग्रंथ लिपि, कलिंग लिपि, पश्चिमी लिपि, मध्यदेशीय लिपियाँ विकसित हुई।

उत्तरी रूप से गुप्तलिपि, कुटिल लिपि, शारदा लिपि और नागरी लिपि विकसित हुई।

६.३.२ देवनागरी लिपि का नामकरण

देवनागरी लिपि के नामकरण के संबंध मे प्रमुख मत इस प्रकार बताये जा सकते हैं -

गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयोग में लाए जाने के कारण इसका नाम नागरी पड़ा।

कुछ लोगों के अनुसार ललित विस्तार ग्रंथ में उल्लिखित नाम 'नाग-लिपि' ही 'नागरी' है अर्थात नाग से नागर शब्द का संबंध है।

तांत्रिक चिह्न 'देवनागर' से समानता के कारण इसे देवनागरी और फिर नागरी कहा गया। दक्षिण भारत में इसका नाम नन्दिनागरी होने के कारण इसका संबंध किसी 'नन्दिनगर' नामक राजधानी से जोड़ा गया है।

डॉ उदयनारायण तिवारी का मत है कि देवभाषा संस्कृत के लिखने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। अत: उसका नाम देवनागरी पड़ा।

एक मतानुसार मध्ययुग में स्थापत्य की एक शैली नागरी थी जिसमें चतुर्भुजी आकृतियां होती थी। नागरी लिपि में चतुर्भुजी अक्षरों (प,भ,म) के कारण इसे नागरी कहा गया।

डॉ.भोलानाथ तिवारी का कहना है -''ये मत कोरे अनुमान पर आधारित है, अतएव किसी को भी बहुत प्रामाणिक नहीं माना जा सकता।''

उपरोक्त मतों में से डॉ. उदयनारायण तिवारी का मत अधिक समुचित लगता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

देवनागरी लिपि दसवीं शताब्दी से मिलती है। वर्तमान लिपि का रूप बारहवीं सदी में ही तैयार हो गया था। अठारवीं शताब्दी के मध्य से देवनागरी लिपि मुद्रण में आयी।

वर्तमान में देवनागरी लिपि संस्कृत, हिन्दी, मराठी, नेपाली भाषाओं के लिए प्रयुक्त होती है। हिन्दी के सभी रूप तथा बोलियाँ देवनागरी में ही लिखी जाती है। बोलियों की लिपियाँ समाप्त हो चुकी है। कोंकणी, सिंधी, देवनागरी लिपि में लिखी जाने लगी है। इसतरह देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है। राष्ट्रलिपि है और संविधान द्वारा स्वीकृत राजलिपि है। अनेक विद्वानों की मांग है कि सभी भारतीय भाषाएँ देवनागरी लिपि में ही लिखी जाए।

६.३.३ देवनागरी की विशेषताएँ (वैज्ञानिकता)

(१) देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है। क्योंकि इसमें संसार की लगभग सभी भाषाओं की ध्वनियों को उच्चरित करनेवाले लिपि चिह्न विद्यमान है। थोड़ा बहुत परिवर्तन कर देने पर संसार की कोई भी भाषा इसके माध्यम से सफलतापूर्वक लिखी जा सकती है।

(२) देवनागरी लिपि के अक्षरों का वर्गीकरण वैज्ञानिक रीति से किया गया है, वर्णमाला में स्वर और व्यंजनों में ध्वनियाँ बतायी गयी है। स्वरों का ह्रस्व और दीर्घ विभाजन वैज्ञानिक है। (ह्रस्व या दीर्घ स्वरों का अंतर उनकी आकृति में थोड़ासा परिवर्तन करके किया जाता है।) व्यंजनों के उच्चारण के अनुसार वर्गीकरण इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। जैसे -

कंठ्य -	क,	ख,	ग,	घ,	ङ	
तालव्य -	च,	छ,	ज,	झ,	ञ	
मूर्धन्य -		ट,	ठ,	ड,	ढ,	ण
दंत्य -	त,	थ,	द,	ध,	न	
ओष्ठ्य-	प,	फ,	ब,	भ,	म	
अंतस्थ-		य,	र,	ल,	व	
ऊष्म-	श,	ष,	स,	ह		

वर्ण ध्वनियों के उच्चारण स्थान को ध्यान में रख कर पंक्तिबद्ध बिठाए गए है। जैसे ध्वनियाँ कण्ठ्य से शुरू होकर ओष्ठ्य तक संपन्न होती है।

(३) देवनागरी लिपि वर्ण विभाजन की दृष्टि से अत्यंत वैज्ञानिक है। जैसे अघोष -घोष तथा अल्पप्राण एवं महाप्राण की दृष्टि से इसमें वैज्ञानिकता यह है कि, हर वर्ग के प्रथम तथा द्वितीय वर्ण अघोष है तो तृतीय और चतुर्थ घोष है। इसी प्रकार हर वर्ग का प्रथम तथा तृतीय वर्ण अल्पप्राण और द्वितीय-चतुर्थ महाप्राण है ऐसा वर्गीकरण अन्य लिपियों में नहीं मिलता।

(४) अनुनासिक ध्वनि के लिए प्रत्येक वर्ग का पंचम वर्ण लिपि की अपनी विशेषता है। जिससे उसी वर्ग के लिए तय किया गया पाँचवाँ वर्ण ही अनुनासिक बनाने के लिए प्रयुक्त होता है। जैसे क वर्ग के शब्द के लिए कङ्गन, चञ्चल, टण्डन, धन्दा, अम्बर आदि व्यवस्था अत्यंत वैज्ञानिक है।

(५) देवनागरी लिपि अत्यंत गत्यात्मक और व्यावहारिक लिपि है। इसने अपनी आवश्यकतानुसार अन्य भाषाओं के ध्वनिचिह्नों को ले लिया है। मूल लिपि में जिह्वा-मूलीय ध्वनियाँ नहीं हैं। परन्तु आवश्यकतानुसार बाद में अपनायी गयी है। जैसे क़,ख़,ग़,ज़,फ़,ड़,ढ़। अंग्रेजी उच्चारण के लिए ऑ (कॉलेज) इसी प्रकार की ध्वनि है।

(६) प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र लिपि चिह्न इसकी एक और विशेषता है। एक के लिए अनेक चिह्न या अनेक के लिए एक चिह्न अवैज्ञानिकता का द्योतक है। जैसे रोमन लिपि में 'क' ध्वनि के लिए - K,C,CH,CK,Q (King, Cat, Chemistry, Cock, Cheque Queen) आदि प्रयुक्त होते है।

(७) देवनागरी लिपि में वर्णों के उच्चारण निश्चित है। एक लिपि चिह्न से अनेक ध्वनियों की अभिव्यंजना और एक ध्वनि के लिए अनेक संकेतों का प्रयोग यह लिपि का दोष देवनागरी में नहीं है। जैसे रोमन में (यू) u का उच्चारण कभी यू होता है कभी अ (Push, But)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(८) देवनागरी लिपि में जो बोला जाता है वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है वही बोला जाता है । शब्द में प्रयुक्त प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होता है । रोमन में या अन्य लिपियों में ऐसा नहीं है । जैसे - Knowledge इस शब्द का उच्चारण नॉलेज होता है । इसमें प्रयुक्त Kwd ध्वनियों का उच्चारण नहीं होता हैं ।

(९) देवनागरी में छोटे-बड़े वर्ण नहीं होते हैं । न ही उनके रूप अलग-अलग है । इसलिए एक पंक्ति में रखे जाने से समानता दिखायी देती है । रोमन वर्ण -कैपिटल और स्मॉल होने से (AB/ab)उनके अलग-अलग रूप बनते हैं साथ ही कोई वर्ण ऊपर तो कोई नीचे लिखा जाता है । (College)

(१०) रोमन लिपि में एक ध्वनि के लिए दो चिह्नों का योग करना होता है । जिनके उच्चारण भी निश्चित नहीं है । जैसे ख के लिए पँ ऐसी अव्यवस्था देवनागरी में न के बराबर है ।

(११) आशुलेखन की दृष्टि से भी यह लिपि अनुकूल है । देवनागरी में त्वरा और आशुलेखन की क्षमता है ।

(१२) लिपि के वर्ण अत्यंत कलात्मक और सुगठित तथा सुंदर है । इसमें जगह रोमन की अपेक्षा कम लगती है । जैसे देवनागरी में माहेश्वरी लिखने से जितना स्थान लगेगा उससे ज्यादा रोमन में निश्चित रूप से लगता है जैसे [illegible] लगता है ।

(१३) देवनागरी लिपि अक्षरात्मक एवं वर्णात्मक दोनों हैं ।

(१४) देवनागरी लिपि में पर्याप्त चिह्न है । इतने चिह्न होने से अन्य लिपियों की तुलना में यह अलग है । इसे दीर्घ परंपरा प्राप्त है । यह लिपि टंकन के लिए सरल है । देश के बहुत बड़े क्षेत्र में प्रयुक्त होती है । देश की समस्त प्रादेशिक भाषाओं से देवनागरी का पारिवारिक संबंध है । कारण भारत की समस्त लिपियों का उद्भव एक ही स्रोत से हुआ है, यह स्रोत ब्राह्मी लिपि है ।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

क. सही या गलत बताइए ।

(१) देवनागरी लिपि भारत की राष्ट्रीय लिपि है ।
(२) देवनागरी लिपि वैज्ञानिक लिपि नहीं है ।
(३) देवनागरी लिपि अक्षरात्मक लिपि है ।
(४) देवनागरी लिपि में जो बोला जाता है वही लिखा जाता है ।
(५) देवनागरी लिपि चिह्न एक समान नहीं है ।
(६) देवनागरी लिपि की विशेषता शिरोरेखा है ।
(७) भारत की लिपियों का उद्भव का स्रोत ब्राह्मी लिपि है ।

देवनागरी लिपि की खामियाँ

देवनागरी लिपि में कुछ खामियाँ दिखाई देती है जो इस प्रकार है,

1) दो-दो लिपिचिह्न देवनागरी में मिलते हैं । - अ - त्र्प्र - ण - ए, झ - भ, ल - ल
2) देवनागरी लिपि के कुछ चिह्न -रव, (ख), म(भ), घ(ध) संदिग्ध है, इसलिए पढ़ने में दिक्कत आती है ।
3) संयुक्त व्यंजन 'ज्ञ' केवल लेखन में ही है उच्चारण ग्य हो गया है । ङ्, ञ, अनुस्वार चिह्न में परिवर्तित हो गए ।
4) देवनागरी लिपि में श्र (श्र), ऋ (रि), क्ष (क्श), द्य (द्या) आदि स्वतंत्र चिह्न है ।
5) रेफ का विधान भी देवनागरी लिपि में संभ्रम उत्पन्न करता है । धर्म उच्चारण ध+र+म जबकि रेफ म पर आया है।
6) देवनागरी लिपि की मात्राएँ ऊपर-नीचे, दाएँ-बाएँ लगती हैं । जैसे दिन-लिखा जाएगा जबकि वह है - दइन, कूप - (क+ऊ+प), केला (क+ए+ला) ।
7) देवनागरी लिपि का शिरोरेखा विधान भी लिखने में बाधक है । इसके कारण अनेक वर्णों की पढ़ने लिखने में भ्रांति उत्पन्न होती है । जैसे - धोखाधड़ी को धोखाधड़ी पढ़ा जाएगा ।

शिरोरेखा के कारण ही भ, म बन जाता, ध घ बन जाता है ।

8) देवनागरी लिपि मुद्रण की दृष्टि से सुविधाजनक नहीं है ।

इन तृटियों को दूर करने के लिए तथा देवनागरी लेखन में एकरूपता लाने के लिए और मानकीकृत लिपि निर्माण हेतु व्यक्तिगत, संस्थागत और सरकार गत प्रयत्न किये गये ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

६.३.४ देवनागरी लिपि का मानकीकरण

देवनागरी का इतिहास एक हजार वर्ष पुराना होने के कारण यह तय है कि इसके आज का रूप निर्माण होने में समय-समय पर आवश्यकतानुरूप परिवर्तन किये गये । ये परिवर्तन व्यक्तियों द्वारा, संस्थाओं, द्वारा तथा सरकार द्वारा भी किये गये । देवनागरी के एक पूर्ण वैज्ञानिक लिपि होने के पीछे ये सुझाव, सुधार, महत्वपूर्ण है। टंकण, मुद्रण आदि तकनीकी सुविधाओं को भी ध्यान में रखा गया है । देवनागरी में प्रचलित कुछ वर्गों में जो भ्रांति हैं उन्हें दूर करना, हिन्दी-मराठी की समान ध्वनियों के लिए प्रयुक्त भिन्न लिपिचिह्नों में एकरूपता लाना इनका उद्देश्य रहा है । नागरी लिपि के सुधार करने की दिशा में प्रयत्न करनेवाले व्यक्तियों में प्रमुख नाम महादेव गोविंद रानाडे, लोकमान्य तिलक, स्वतंत्रता वीर सावकर, काका कालेलकर, विनोबा भावे, डॉ.श्यामसुंदर दास, डॉ.सुमिती कुमार चार्टुज्या आदि हैं ।

न्यायमूर्ति रानडे ने लिपि सुधार की एक योजना प्रस्तुत की । 1926 में लोकमान्य तिलक ने 'तिलक टाईप' का निर्माण किया । वीर सावरकर तथा काका कालेलकर ने 'अ' की बारह खड़ी का सुझाव दिया । आ.विनोबा भावे ने लोक नागरी का प्रस्तावन किया । बाबु श्याम सुंदरदास ने देवनागरी लिपि ङ,ञ के स्थान पर अनुस्वार के प्रयोग की बात रखी डॉ. गोरख प्रसाद के प्रस्तावानुसार सभी मात्राएँ व्यंजनों के दायी और लिखी जाए । क ु,क ू, कि,की

काका कालेलकर समिति ने ये प्रस्ताव रखे

१) लेखन में शिरोरेखा लगाना आवश्यक नहीं ।

२) प्रत्येक वर्ण ध्वनि के उच्चारण क्रम से लिखा जाए ।

क) जब तक कोई संतोषजनक रूप सामने न आए तब तक 'इ' की मात्रा अपवाद रूप में वर्तमान के अनुसार ही लिखी जाए जैसे कवि.

ख) ए.ऐ. की मात्राएँ वर्ण के ठीक ऊपर न लगाकर दाहिनी ओर जरा हटाकर लिखी जाए- द े वता, अन े क

ग) उ,ऊ, ऋ की मात्राएँ भी दाहिनी ओर हटाकर लिखी जाए र ू , प, या. विदुषी क ृ ष्ण

घ) अनुस्वार और चंद्रबिंदु भी दाहिनी ओर लिखे जाए च ं पा आ ँ ख.

ङ) रेफ भी उच्चारणनुसार लिखा जाए कर्म.

च) संयुक्ताक्षर में द्वितीय 'र' पूरा लिखा जाए - प्रेम प्‍रेम, पत्र पत्‍र

घ) जिन वर्णो में खड़ी पार्ट नहीं है वहाँ हलचिह्न का प्रयोग किया जाए जैसे द्वारा ट,ट्,ट्,

३) 'अ' की बाहर खड़ी का प्रयोग किया जाए - अ,आ,अि,अी,अु,अू,अै,ओ, अं.अः

४) अनुस्वार के स्थानपर चन्द्रबिंदू और अनुनासिक के किए केवल बिंदु का प्रयोग किया जाए। जैसे हँस, हंस अनुनासिक वर्णो के लिए अनुस्वार चिह्न बिंदु का प्रयोग किया जाए। चंचल चंपा आदि।

५) नुक्ता वर्णो के नीचे बिंदु दिया जाए।

६) विरामचिह्न अंग्रेजी के अनुसार प्रयुक्त हो । पूर्णविराम के लिए खड़ीपाई (।) का प्रयोग किया जाए ।

७) र,व, ख, के लिए प्रयुक्त होता है । इसलिए र, को, व में मिलाकर (ख) लिखा जाए।

८) भ, ध, घुंडीवाले रूप ही हो ।

९) त्र्प्र, भ , ए, ल, श के स्थान पर अ, झ, ण, ल, श, प्रयुक्त हो ।

१०) संयुक्ताक्षर 'क्ष' क्‍ष के रूप में लिखा जाए ।

११) मराठी, गुजराती, कन्नड, तेलगु के मूल शब्दों को ज्यों का त्यों लिखने के लिए 'ळ' लिपिचिह्न का ही प्रयोग हो ।

इन प्रस्तावों पर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ने अमल करना प्रारंभ किया ।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

सुनीतिकुमार चॅटर्जी ने सुझाव दिया कि रोमन अक्षरों में नागरी लिपि को लिखा जाए। पर यह सुझाव स्वीकृत नहीं हुआ तथा अ की बारह खड़ी भी मान्य नहीं हुई।

देवनागरी लिपि के सुधार के लिए राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग नागरी प्रचारिणी सभा, काशी और महाराष्ट्र साहित्य परिषद, पुणे ने संस्थागत प्रयत्न किये।

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ने काका कालेलकर के सुझावों का प्रचार-प्रसार करने का कार्य किया। समिति ने अपनी परीक्षाओं तथा पत्र पत्रिकाओं में इसी नीति को अपनाया।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने देवनागरी लिपि में सुधार के लिए देश के विद्वानों एवं संस्थाओं को आमंत्रित किया परंतु पूर्ण सहयोग नहीं मिल पाया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने लिपि सुधार की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया सम्मेलन द्वारा गठित नागरी लिपि सुधार समिति के संयोजक काका कालेलकर ने ५ अक्तूबर १९४१ को सुझाव प्रस्तुत किये। जिसका विवेचन पूर्व में हुआ है।

शिरोरेखा का प्रयोग न किया जाए और अ की बारहखड़ी-जैसे सुझावों को मान्यता नहीं मिली।

देवनागरी लिपि में सुधार हेतु सरकारी स्तर पर भी प्रयत्न हुए। १९४७ में उत्तर प्रदेश सरकार ने आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया, जिसके सदस्य डॉ. धीरेन्द्र वर्मा और मंगलदेव शास्त्री थे। इसी समय १९४८ में केंद्र सरकार ने हिन्दुस्थानी शीघ्र लिपि तथा लेखन यंत्र समिति की स्थापना भी की थी। आपसी विचार-विनिमय के बाद नरेन्द्र देव समिति ने नागरी लिपि हेतु निम्न सुझाव दिए।

1) अ की बारहखड़ी न बनाई जाए।

2) सभी मात्राएँ थोड़ी दाहिनी ओर हटाकर दी जाए।

3) किसी व्यंजन के नीचे दूसरा व्यंजन न लगाया जाए।

4) खड़ी पाईवाले व्यंजनों की खड़ीपाई निकालकर संयुक्त रूप बनाए जाए। जिनमें खड़ीपाई न हो उनके संयुक्त रूप इस चिह्न लगाकर बनाए जाए।

5) अनुस्वार के स्थान पर शून्य और अर्धचन्द्र के स्थान पर बिंदू का प्रयोग हो।

6) शिरोरेखा लगाई जाए।

7) ळ को वर्णमाला में शामिल किया जाए।

8) अंग्रेजी के सब विराम चिह्न स्वीकार कर लिए जाए।

9) क्श, त्र, अ का प्रयोग हो।

1953 में उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों और विद्वानों की एक सभा आमंत्रित की। इस सभा में नरेन्द्र देव समिति के सुझाव स्वीकृत हुए। कुछ परिवर्तन इस बैठक में स्वीकृत हुए, वे हैं-

1) क्ष को स्वतंत्र रूप में स्वीकार किया।

2) र व को ख के रूप में स्वीकार किया।

3) ह्रस्व इ की मात्रा ज्यों की त्यों पूर्ववत रही, अर्थात बाई ओर मात्रा को ही स्वीकार किया।

केन्द्र सरकार ने देवनागरी लिपि लेखन में एकरूपता लाने के लिए केंद्रिय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत वर्णमाला और लिपि लेखन के नियमों को मान्यता दी। जिन्हें शैक्षिक पाठ्यपुस्तकों, प्रेस और अन्य सभी जगहों स्वीकार लिया गया।

६.३.५ केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत हिंदी वर्तनी के मानकीकरण के नियम

१९६१ में भारत सरकार के तत्कालीन शिक्षा मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने अखिल भारतीय स्तर पर देवनागरी लिपि, तथा हिन्दी वर्तनी के मानकीकरण में विशेषज्ञ समिति का गठन किया। इस समिति की रिपोर्ट १९६२ में प्रस्तुत हुई। जिसे केंद्रिय हिन्दी निदेशालय ने १९६८ में ''देवनागरी लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण'' नामक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित की। आज यही मानकीकृत लिपि के रूप में जानी जाती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हिंदी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। आधुनिक काल में मुद्रण, टंकण आदि के कारण शब्दों को लिखने के लिए इसमें कई प्रकार के संशोधन हुए है। वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए मानकीकरण की प्रक्रिया आरंभ हुई। इस संबंध में केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय (संप्रति मानव संसाधन विकास मंत्रालय), भारत सरकार द्वारा हिंदी वर्तनी के मानकीकरण पर महत्वपूर्ण और व्यावहारिक कार्य हुआ है। निदेशालय ने मानक हिंदी वर्णमाला के साथ परिवर्द्धित देवनागरी वर्णमाला का भी विकास किया है ताकि उसके माध्यम से सभी भारतीय भाषाओं का लिप्यंतरण देवनागरी लिपि में हो सके। हिंदी वर्तनी के मानकीकरण में कई नियम बनाए गए है जो इस प्रकार हैं :

१) संयुक्त वर्ण :

(क) खड़ी पाई वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर बनाया जाता है, जैसे - ख्याति, भग्नावशेष, विघ्न, बच्चा, सज्जा, नगण्य, अपनत्व, पथ्य, ध्वनि, अन्न, प्यास,

(ख) क और फ के संयुक्ताक्षर 'पक्का, दफ्तर' आदि में क और फ के दाई ओर की घुंडी को थोड़ा हटाकर बननेवाले मानक वर्ण है। पक्का, दफ्तर,

(ग) ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द, और ह के संयुक्ताक्षर हल् (्) चिह्न लगाकर बनाए जाते हैं : जैसे - लट्टू, गड्ढा, विद्या, चिह्न बुद्ध, द्वार।

(घ) हल् चिह्न युक्त वर्ण से बननेवाले संयुक्ताक्षर के दूसरे व्यंजन के साथ 'इ' की मात्रा का प्रयोग होने पर उसे अपने व्यंजन के तत्काल पहले लगाया जाता है, न कि पूरे युग्म से पहले। जैसे - छुट्टियाँ, द्वितीय, बुद्धि।

२) हिंदी के कारक चिह्न अथवा परसर्ग सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों में प्रातिपदिक से अलग लिखे जाते हैं; जैसे - राम ने, मोहन को, शीला से, घर में। लेकिन सर्वनाम रूपों में ये चिह्न प्रातिपदिक के साथ मिलाकर लिखे जाते हैं; जैसे - मैंने, उसको, आपसे।

— तक, साथ आदि अव्यय सदा अलग-अलग लिखे जाएँगे। जैसे - यहाँ तक, आपके साथ।

(३) (i) जहाँ श्रुतिमूलक य, व का प्रयोग विकल्प रूप में होता है अर्थात ये, यी के स्थान पर 'ए, ई' का प्रयोग होता है ; जैसे- गये गए, गयी गई। इसी प्रकार 'वा' के स्थान पर 'आ' प्रयोग होता है। जैसे - हुवा हुआ।

(ii) जहाँ 'य' श्रुतिमूलक व्याकरणिक परिवर्तन न होकर शब्द का ही मूल तत्व हो, वहाँ वैकल्पिक श्रुतिमूलक के स्वरात्मक परिवर्तन की ज़रूरत नहीं है; जैसे - स्थायी, अव्ययीभाव, दायित्व शब्द मानक और शुद्ध हैं। स्थाई, अव्यईभाव, दाइत्व शब्द अशुद्ध और अमानक है।

(४) जो अरबी-फारसी या अंग्रेजीमूलक शब्द हिंदी के अंग बन चुके है और जिनकी विदेशी ध्वनियों का रूपांतर हिंदी में हो चुका है उनका यदि उच्चारणगत भेद बताना अपेक्षित हो तो उनके स्थान पर हिंदी के प्रचलित रूपों में नीचे नुक़्ता लगाया जाएगा। जैसे : राज-राज़,फन-फ़न।

अंग्रेजी के जिन शब्दों में अर्धविवृत 'ऑ' ध्वनि की भाँति सुनाई पड़ती है, उनमें 'ऑ' या उसकी मात्रा के ऊपर अर्धचंद्र का प्रयोग होगा; जैसे : ऑफिस, बॉल।

(५) क्रियापद से करना, लेना, पीना क्रियाओं के आज्ञार्थक रूप 'कीजिए', लीजिए, पीजिए' को मानक माना गया है।

मुख्य क्रिया के साथ सहायक क्रिया-रूप अलग-अलग लिखे जाते हैं; जैसे - पढ़ा करता है, आ सकता है, खेला करेगा, बढ़ते चले जा रहे हैं।

(६) समस्तपदों में प्रति, मात्र, यथा आदि अव्यय अलग नहीं लिखे जाते; जैसे - प्रतिदिन, प्रतिशत, मानवमात्र, यथासमय।

(७) स्पष्टता के लिए हाइफन का प्रयोग होता है; जैसे -

(क) द्वंद्व समास में पदों के बीच हाईफन लगाया जाता है; जैसे - राम-लक्ष्मण, चाल-चलन, हँसी-मजाक, लेन-देन, खेलना-कूदना।

(ख) सा, जैसा आदि से पूर्व हाईफन लगता है। जैसे : तुम-सा भला, राम-जैसा पुत्र, समुद्र-सा गहरा भू-तत्त्व।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(ग) कुछ जटिल संधियों से बचने के लिए हाईफन का प्रयोग होता है; जैसे - द्वि-अर्थक, द्वि-अक्षर।

(८) हिंदी में 'र' के चार रूप वर्तनी में प्रचलित हैं - र, ्र, र्, ्र (राम, क्रम, कर्म, ड्रामा)'

(क) 'र' वर्ण शब्द के आदि, मध्य और अंत में स्वतंत्र रूप से आता है जैसे - राजा, चरण, कुरूप, हार, गुरू।

(ख) त्र-संयुक्त अक्षर में यह स्वरांत 'र'(अ-सहित) के रूप में आता है। जैसे - क्रम (क्रम), भ्रम (भ्रम), प्रेम (प्रेम), द्रोह (द्रोह)।

यह उल्लेखनीय है कि 'श' व्यंजन के साथ जब स्वरांत 'र' प्रयुक्त होता है तो वहाँ द्वित्व रूप 'श्र' होता है। कुछ लोग 'श्र' की मात्रा भी जोड़कर 'श्र' का प्रयोग करते हैं जो नितांत अशुद्ध है। 'श' के साथ 'ऋ' की मात्रा (ृ) के संयुक्त होने से 'श्र' बनता है। ये दोनों अलग रूप हैं। 'श' के साथ 'र' और 'ऋ' दोनों कभी नहीं प्रयुक्त होते। इसलिए श्रमिक में (श्+र) और श्रृंगार में (श्+ऋ) रूप हैं।

(ग) 'र्' यह हलंत (अर्थात 'अ'-रहित) 'र' है। इसे रेफ भी कहते हैं। यह जिस व्यंजन के ऊपर होता है उससे पहले इसका उच्चारण होता है और यह उच्चारण उसी व्यंजन के साथ मिला होता है। जैसे - कर्म (कर्म), शर्म (शर्म), खर्च (खर्च) यदि रेफ के बाद वाले व्यंजन के बाद कोई स्वर या उसकी मात्रा आ जाए तो यह रेफ उसी के ऊपर लग जाएगा। जैसे - शर्मा (शर्मा), आशीर्वाद (आशीर्वाद), गर्मी (गर्मी), कार्यों (कार्यों)।

(घ) ्र यह ट, ठ, ड, ढ आदि व्यंजनों के साथ लगता है। जैसे - राष्ट्र (राष्ट्र), उष्ट्र (उष्ट्र), ड्रामा (ड्रामा)।

अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियाँ : (क) अनुस्वार (ं) और अनुनासिक ध्वनियाँ (ँ) हिंदी में अलग-अलग ध्वनियाँ हैं। जैसे - हंस, हँस। अनुस्वार व्यंजन-ध्वनि है जो पाँचों वर्णों के पंचमाक्षर ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, के स्थान पर आता है। यह स्वर का अनुसरण करती है अर्थात यह स्वर के बाद आती है। जैसे - गङ्गा चञ्चल, मण्डल, सन्त, परम्परा। इन शब्दों में अनुस्वार ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने से पहले वाले लिपिचिह्न के ऊपर बिंदु के रूप में लगा करता है। ऐसा करने से इन्हें गंगा, चंचल, मंडल, संत, परंपरा आदि की तरह लिखा जाएगा। ऐसे शब्दों में अनुस्वार या नासिक्य व्यंजन किसी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

(ख) यह स्मरण रहे कि अनुस्वार हरेक मामले में नासिक्य व्यंजनों का प्रतिनिधित्व नहीं करता। उदाहरण के लिए, जहाँ दो नासिक्य व्यंजन एकसाथ आते हों या उनका द्वित्व रूप आता हो वहाँ अनुस्वार (ं) का प्रयोग नहीं होगा, वरन दोनों नासिक्य व्यंजनों का प्रयोग होगा। जैसे - मृण्मय, जन्म, निम्न, अक्षुण्ण, अन्न, सम्मान।

(ग) यदि नासिक्य व्यंजन के बाद 'य', 'व' और 'ह' आते हों तो वहाँ नासिक्य व्यंजन ही आएगा न कि अनुस्वार का प्रयोग होगा। उदाहरण के लिए पुण्य, कण्व, अन्य, न्याय, समन्वय, अन्वेषण, कान्ह, साम्य आदि।

(घ) जहाँ 'सम्' उपसर्ग के रूप में य, र, ल, श, स, और ह से पूर्व आता है यहाँ 'म्' अनुस्वार में बदल जाएगा। उदाहरण के लिए :

सम् + यम	=	संयम
सम् + रचना	=	संरचना
सम् + वेदना	=	संवेदना
सम् + शय	=	संशय
सम्+ सार	=	संसार

यह उल्लेखनीय है कि संयम, संरचना, संलग्न, संवेदना, संशय, संसार, संहार आदि शब्दों में 'य' और 'श' तालव्य हैं, 'र', 'ल' और 'स' वर्त्स्य हैं, 'व' दंत्योष्ठ्य है तथा 'ह' स्वरयंत्रमुखी है। इनके साथ अनुस्वार का उच्चारण क्रमश: 'ञ्' की भाँति, 'न' की भाँति, 'म्' की भाँति, 'ङ्' की भाँति होगा। इनमें पंचमाक्षर का सिद्धांत पूर्णतया लागू नहीं होगा।

यह ध्यान में रहे कि सम्वेदना और संवेदना दोनों रूपों में लिखे जा सकते है। 'संन्यास को प्राय: 'संन्यास' लिखा जाता है जो नितांत अशुद्ध है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

शब्दांत में स्वर के बाद अनुस्वार लिखा जा सकता है जो 'म्' का प्रतिनिधित्व करेगा; जैसे - अहं (अहम्), स्वयं (स्वयम्)

अनुनासिक (ँ) व्यंजन नहीं हैं। यह स्वर की विशेषता या अभिलाषा है जो स्वर को अनुनासिकता प्रदान करती है। इसके उच्चारण के समय हवा नाक और मुँह दोनों से निकलती है। हिंदी के सभी स्वर अनुनासिक होते हैं। जैसे - अँ, आँ, इँ, ईं, उँ, ऊँ।

यह स्मरण रहे कि जिन स्वरों की मात्राएँ शिरोरेखा के ऊपर न हों उन्ही पर अनुनासिकता का चिह्न अर्थात चंद्रबिंदु (ँ) लगाया जाता है; जैसे - आँख, ऊँट, और यदि शिरोरेखा के ऊपर मात्रा हो तो वहाँ सुविधा के लिए चंद्रबिंदु के स्थान पर अनुस्वार या बिंदु (ं) लगाया जाता है; जैसे - ऐंठना, पोंछना।

स्वयं अध्ययन के प्रश्न

ख. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए

(१) सूत्र लिपि के आज के उदाहरण बताईए।

(२) भावलिपि चित्रलिपि का विकसित रूप कैसे है ?

(३) अक्षरात्मक और वर्णात्मक लिपि का अंतर बताईए।

(४) नरेन्द्र देव समिति की दो सिफारिशें बताइए।

(५) केंद्रीय हिन्दी निदेशालय के मत से पंचम वर्ण के बदले क्या करना चाहिए।

(६) मिलाकर और अलग लिखने के नियमों के दो-दो उदाहरण बताइए।

6.4 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

(क) सही या गलत बताइए।

(१) सही

(२) गलत

(३) सही

(४) सही

(५) गलत

(६) सही

(७) सही

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में लिखिए

(१) सूत्र लिपि के आज के उदाहरण - रक्षाबंधन, विवाह में या पूजा के अवसर पर मोली का बाँधना।

(२) भावलिपि चित्रलिपि का विकसित रूप है। भावलिपि में ध्वनि, विचार, भाव और वस्तु को प्रकट किया जाता है तो चित्रलिपि में इनका चित्रांकन होता है। इसलिए भावलिपि चित्रलिपि का विकसित रूप है।

(३) अक्षरात्मक लिपि में चिह्न अक्षर को व्यक्त करते हैं, वर्ण को नहीं। वर्णात्मक लिपि में ध्वनि की प्रत्येक इकाई के लिए अलग-अलग चिह्न होते हैं। देवनागरी अक्षरात्मक लिपि है तो रोमन लिपि वर्णात्मक लिपि का उदाहरण है।

(४) नरेन्द्र देव समिति की दो सिफारिशें अ की बारहखड़ी न बनाना तथा किसी व्यंजन के नीचे दूसरा व्यंजन न लगाना।

(५) केंद्रीय हिन्दी निदेशालय के मत से पंचम वर्ण के बदले अनुस्वार का प्रयोग करने के लिए कहा गया।

(६) मिलाकर लिखने के उदाहरण - सर्वनामों में विभक्ति प्रत्यय मिलाकर लिखे जाते हैं - मैने, उसने, उससे, उसको।

अलग लिखने के उदाहरण, प्रतिपादकों में भर, तक, सा-तथा कारक चिह्न अलग लिखे जाते हैं। जैसे राम का, पेट भर, गले तक, आप-सा आदि।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

६.५ इकाई का सारांश :

लिपि का उद्‌भव तथा विकास के बारे में विद्‌वानों के विभिन्न मत मिलते हैं। लिपि के विकासक्रम में चित्र लिपि, सूत्रलिपि, प्रतीकात्मक लिपि, भावमूलक लिपि, भावध्वनिमूलक तथा ध्वनिंमूलक इन छह लिपियों का उल्लेख मिलता है।

भारतीय प्राचीनतम लिपियों में ब्राह्मी लिपि और खरोष्टी लिपि है। ब्राह्मी लिपि की उत्तरी शैली से देवनागरी लिपि का विकास माना जाता है। इसे देवनागरी क्यों कहा गया इसके संबंध में विभिन्न मत है।

नागरी लिपि का प्रारंभ १००० से १२०० ई.से माना जाता है। इस एक हजार वर्ष के कालखंड में अक्षरों के सभी रूपों में परिवर्तन मिलता है।

अन्य लिपियों की तुलना में इसमें कुछ ऐसे गुण है जिससे इसे वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है।

देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है। भारतीय संविधान ने इसे राजलिपि, राष्ट्रलिपि के रूप में स्वीकार किया है। अक्षरों का वैज्ञानिक वर्गीकरण, वर्ण विभाजन, उच्चारण, लेखन, गठन, सरलता आदि अनेक गुण देवनागरी लिपि में पाए जाते हैं। देवनागरी देश की सांस्कृतिक परंपरा के अनुकूल होने से सर्वप्रिय भी है।

देवनागरी के दोष दूर करने के लिए तथा लिपि के मानकीकरण के प्रयत्न अनेक व्यक्ति, संस्था तथा सरकार की ओर से किये गये हैं। इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तथा उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा किये गये। केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक लिपि लेखन के नियम ही आज सर्वमान्य है। मुद्रण, कम्प्युटर में इन्हीं का प्रयोग होता है। इन्हीं प्रयत्नों के कारण आज अधिक से अधिक सुधारित सर्वमान्य देवनागरी लिपि प्रचलित है।

6.6 अतिरिक्त अध्ययन के प्रश्न

(1) लिपि की आवश्यकता बताते हुए लिपि विकास का इतिहास प्रस्तुत किजिए।

(2) देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डालिए।

(3) देवनागरी की परिभाषाएँ देते हुए सर्वश्रेष्ठ लिपि देवनागरी कैसे है ? सप्रमाण सिद्ध की जिए।

(4) मानकीकरण के प्रयासों का परिचय दीजिए।

(5) केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत देवनागरी लिपि के मानक लेखन के नियमों को सोदाहरण समझाइए।

अतिरिक्त अध्ययन हेतु ग्रंथ

डॉ.भोलानाथ तिवारी - भाषाविज्ञान प्रवेश
शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली-12

डॉ.रामेश्वर दयालु अग्रवाल - मुग्धबोध भाषाविज्ञान
साधना प्रकाशन, मेरठ - 2

डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा - भाषाविज्ञान की भूमिका
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली - 02

डॉ.केशवदत्त रूवाली - आधुनिक भाषाविज्ञान
श्री. अल्मोडा बुक डेपो, अल्मोडा-01

डॉ.भारतभूषण चौधरी-संरचनात्मक भाषा-विज्ञान
संजीव प्रकाशन, कुरूक्षेत्र (हरियाणा)

डॉ.सुधाकर कलावडे - भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा
साहित्य रत्नालय, कानपुर

डॉ.कैलाशचन्द्र भाटिया - हिन्दी भाषा का आधुनिकीकरण
तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली - 02

डॉ.राजमणि शर्मा - आधुनिक भाषा - विज्ञान
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली - 02

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

डॉ.लक्ष्मीकान्त पाण्डेय - बोली विज्ञान और हिन्दी की बोलियों का परिचय
साहित्य रत्नालय, कानपुर 01
डॉ.अम्बादास देशमुख - भाषिकी हिन्दी भाषा तथा भाषा शि क्षण
अतुल प्रकाशन, कानपुर - 12
डॉ.विष्णु चतुर्वेदी विराट-राजभाषा हिन्दी व्याकरण
अमर प्रकाशन, मथुरा - 01 (म.प्र.)
डॉ.अनूपप्रतापसिंह भाषाविज्ञान
नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - 02
डॉ.भोलानाथ तिवारी - भाषा विज्ञान कोश
ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी -1
डॉ.सुरेश माहेश्वरी - हिन्दी :राष्ट्रभाषा से विश्वभाषा की ओर
विकास प्रकाशन, कानपुर - 27

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

जैन विश्वभारती संस्थान

(मान्य विश्वविद्यालय)

लाडनूँ - 341 306 (राजस्थान)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

स्नातकोत्तर (एम.ए.) उत्तरार्द्ध

विषय - हिन्दी

सप्तम पत्र : भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा

विशेषज्ञ समिति

1. **प्रो. नन्दलाल कल्ला**
पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)

2. **प्रो. वेदप्रकाश शर्मा**
पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग
महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज)

3. **प्रो. जगमालसिंह**
पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग
मेघालय विश्वविद्यालय, मेघालय (आसाम)

4. **डॉ. ममता खाण्डल**
सहायक आचार्या, हिन्दी विभाग
राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, किशनगढ़ (राज.)

5. **प्रो. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी**
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ (राज.)

6. **प्रो. समणी ऋजुप्रज्ञा**
आचार्या, जैन विश्वभारती संस्थान,
लाडनूँ (राज.)

लेखक

डॉ. सुरेश महेश्वरी

डॉ. शैलजा महेश्वरी

संपादक

प्रो. नन्दलाल कल्ला

कापीराइट

जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं

नवीन संस्करण : 2017

मुद्रित प्रतियां : 500

प्रकाशक

जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं–341 306 (राज.)

Printed at

M/s Nalanda Offset,
G1/232, RIICO Industrial Area, Heerawala Ext., Konota, Jaipur (Raj.)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

अनुक्रमणिका

खण्ड (क) : भाषा विज्ञान

इकाई - 1	भाषा : भाषा विज्ञान	१
इकाई - 2	स्वनविज्ञान	२१
इकाई - 3	रूपविज्ञान और वाक्य विज्ञान	५७
इकाई - 4	अर्थविज्ञान	८२
इकाई - 5	भाषा विज्ञान का साहित्य को लाभ	१०१

खण्ड (ख) : हिन्दी भाषा

इकाई - 1	हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	१०९
इकाई - 2	हिन्दी का भौगोलिक विस्तार	१२६
इकाई - ३	हिन्दी का भाषिक स्वरूप	१४५
इकाई - ४	हिन्दी के विविध रूप	१६४
इकाई - ५	हिन्दी में कम्प्युटर सुविधाएँ	१८६
इकाई - ६	देवनागरी लिपि	१९९

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun